



# रीतिकाव्य के स्रोत



# शीलिकाव्य के स्रोत

[काशी हिन्दू विश्वविद्यालय की पी-एच० डी० उपाधि के लिए प्रस्तुत शोध प्रबंध]

लेखक  
डा० रामजी मिश्र

वार्तिक अनुवचन  
विश्वनाथ प्रसाद मिश्र

**आदर्श साहित्य प्रकाशन**  
वेस्ट सीलमपुर, दिल्ली - 31



# रीतिकव्य के स्रोत

[काशी हिन्दू विश्वविद्यालय की पी-एच० डी० उपाधि के लिए प्रस्तुत शोध प्रबंध]

लेखक

डा० रामजी मिश्र

वार्त्तिक अनुवचन

विश्वनाथ प्रसाद मिश्र

**आदर्श साहित्य प्रकाशन**  
वेस्ट सीलमपुर, दिल्ली - 31



## विषयानुक्रमिका

वास्ति अनुवचन

प्राक्चयन

पहला अध्याय

१७-३५

### रीतिकाव्य स्रोत और सीमा

काव्य परिचय (संस्कृत)—काव्य परिचय (हिन्दी)— सम्प्रदाय विवेचन—रस सम्प्रदाय, अलंकार सम्प्रदाय, रीति सम्प्रदाय, वनाकिन सम्प्रदाय ध्वनि सम्प्रदाय—रीति शब्द व्युत्पत्ति और प्रयोग—नामकरण—रीतिकाव्य का स्वरूप—रीतिकाव्य की मुख्य प्रवृत्तियाँ—शृ गारिक्ता परम्परा शृ गारिक्ता परिवेश रीति निरूपण प्रवृत्ति—रीति निरूपण परम्परा—रीति निरूपण परिवेश—अलंकरण की प्रवृत्ति परम्परा—अलंकरण की प्रवृत्ति परिवेश—मुक्तक रचना की प्रवृत्ति परम्परा—मुक्तक रचना की प्रवृत्ति परिवेश—रीति काव्य के सान्द्र अन्वेषण का प्रस्ताव—स्रोत का अर्थ—स्रोत अन्वेषण उपलब्धि और समावनाएँ—सोध की सीमा ।

दूसरा अध्याय

३६-७०

### रीतिकाव्य की आधार-भूमि

समाज परम्परा—राजसमा, उपवन या राजोद्यान शीटा-मरावर रसिक बग निवास स्थान शयन कक्ष अष्टांगम—हिन्दू मुस्लिम संस्कृतियों का अर्थ-या-श्रयण—राजनीतिक पृष्ठभूमि—कलात्मक पृष्ठभूमि—चित्रकला स्थापत्य कला, संगीत कला—धार्मिक पृष्ठभूमि—साहित्यिक पृष्ठभूमि—वैष्णव काव्याभि-व्यक्ति की शृ गारी परिणति ।

तीसरा अध्याय

७१-१७८

### रीतिकाव्य के उपजीव्य

शास्त्र—कामशास्त्र—कामशास्त्र परम्परा नागरिक-वृत्ति, कुट्टनीमतम—नाट्य शास्त्र—काव्यशास्त्र—का य-पुराण काव्य—श्रीमदभागवत-इतर पुराण—प्रबंध काव्य (संस्कृत)—बाल्मीकि रामायण, कुमारसम्भव, रघुवंश—कालिदासोत्तर महाकाव्य—



विरागात्तु नीय, विगुणात्तु नय, रामायण मंत्रगी विरहोत्पत्तिपरिचय शीतपरिचय,  
 1. पत्रपरिचय—प्रथम काव्य (प्राच्य)—राजगणेश (गुरुवच) गउदराग—परा  
 काव्य (प्राच्य) पउगणेश गउदराग—प्रथम काव्य (हिंरी)—पत्नीश्वरगण  
 विराई वार्ता परमात्त मापगात्त काव्यत्त त रम रान रामपरिचयगाग  
 गुरुगागर गउदराग (प्राच्य)—पत्नीश्वर गउदराग गउदराग तम ग  
 गीतगावि गउदराग (प्राच्य)—गुरुगणेश (गुरुत्तपरिचय) कर्कटपरिचय  
 पउगणेश परिचय पाग परिचय, गउदराग रामन—पत्नी काव्य (प्राच्य) विरहपरिचय  
 रकमणि गी शोभा मारु गउदराग गउदराग (हिंरी) परा रामायण जातरी  
 मगन कविगायत्त गातायत्त शीतपरिचय गीतगावि रामयथायथावी गउदराग मंत्रगी विर,  
 मंत्रगी भगवतोत्त—गुणेश परिचयगा घो भं गउदरागत्त मुतात्त (गउदराग)  
 भगवतोत्त गउदरागत्त शीतपरिचयगा गातायत्त त पउगणेश गउदराग  
 विरह गउदराग परमपरिचय गीत रकन काव्यभूषण गाता गमावत्त गाता—  
 गुणेश काव्य पय—गातापर परिचय—गउदरागत्त मुतात्त (प्राच्य गाताग) —  
 गाता सज्जगी वउदराग प्राच्यपरिचय गउदरागत्त मुतात्त (हिंरी)—विद्वान्ति  
 पत्नीश्वरी एव मैत्रिणी साहित्य गण कविग रक्षीय रगायत्तगी एव गगा तापिका भं  
 शीतवन प्रह्ला तागतगी छीनत्वाभी शीतपरिचय व पय रकन कविग रगातात्त  
 प्रगणितपरक मुतात्त (गउदराग) रात्र दकणपूर मात्र परक विरहोत्पत्ति परिचय  
 प्राणाभरण माव विभाग प्रगणितपरक मुतात्त (प्राच्य प्रगणित) गउदराग प्राच्य  
 पैगलम—प्रगणितपरक मुतात्त (हिंरी) मतात्तपरक मुतात्त (गउदराग हिंरी)  
 नीतिपरक मुतात्त (गउदराग हिंरी) नात्त—गउदरागगावत्ता, भाभिगाता गातात्त  
 विरहोत्पत्तीय मातृविधाभिभिन्न रनायत्ती प्रियपरिचय गातात्त मातात्तमापर  
 हनुमनात्त, कपूर मजरी पउदराग पत्नी काव्य नलपत्नी जीवापर पत्नी गय  
 (गउदराग) वासवदत्ता काव्यवरी ।

चीया अध्याय

शृंगार और उसके प्रमुख पक्ष

शृंगार रस स्वरूप—विभाव मालवन उद्दीपन अनुभाव व्यभिचारि  
 मात्र—शृंगार रस विवेचन—शृंगार भं—मयोग शृंगार गान, सलाप स्था  
 रति श्रीगा—प्राच्यश्रीडाएँ धार्मिगन पुम्बन, तलाप दन तत—रति श्रीडा विप  
 रीत रति—रति रण—गुरुतात्त—विविध विचार पाग श्रीडा उपवन विचार जल  
 श्रीडा दोला श्रीडा शरद श्रीडा अष्टयाम वमवपरक श्रीडाएँ मालमिचोनी मद  
 पान अय श्रीडाएँ—वियोग शृंगार—पूरानुराग मान प्रवास वियोग की कतिपय  
 वरण रुढिया—नायिका भेद हेतु शीत स्वरूप—नारी सामाजिक एव साहित्यिक  
 परिप्रेक्ष्य—नायक-नायिका भेद—वय सधि, यौवनावस्था, रूप सौन्दर्य, रूप चित्रण,

स्फुट भ्रम-वर्णन, भ्रम समष्टि-वर्णन—नेत्रशिक्षण वर्णन—नेत्रशिक्षण और शिक्षणनक्ष—  
 वंग मान जलाट, भू, नत्र प्र-व्यापार कपोल, मुष्ट, हास, नासिका, अक्षर दत,  
 वाणी कठ बाहु कर वशोज रोमराजि त्रिवनी पीठ कटि नितम्ब, उरु, चरण नक्ष,  
 गमन—पङ्कजतु आंग वारहमासा—वसत, शोष्ण वषा, गरुद, हेमन्त, शिशिर।

पाचवा अध्याय

२७१-३१५

### अभिव्यक्ति के उपादान और माध्यम (कला-पक्ष)

अनगर और अग्रस्तुत विधान—अलंकार विधान—उपमा, प्रतीक रूपक  
 अपहनुति उत्प्रेक्षा त्रुटिप्रेक्षा अतिशयोक्ति अत्युक्ति निदाना व्यतिरेक समा  
 सोक्ति श्लेष अग्रस्तुत प्रमासा यानस्तुति आक्षेप असंगति विचित्र, विरोध, यथा  
 मरुप, समुच्चय, कारक दीपक समाधि समायना प्रद्वयण लक्ष तदगुण, अतदगुण,  
 पूवरूप मीलित उत्तर सूक्ष्म, सार प्रश्नोत्तर उत्प्रेक्षा । शब्दालंकार—वीप्सा अनु-  
 प्रास यमक—अग्रस्तुत विधान—मूत के मूत उपमान मूत के अमूत उपमान, अमूत के  
 अमूत उपमान अमूत के मूत उपमान—चित्र योजना—आलम्बन चित्र, अनुभाव  
 चित्र—भाषा—उच्च भाषा परिचय—गद्य पद्य—मुहावरे और लाकावितियाँ, छन्द ।

सहायक ग्रंथ सूची

३१६-३२४



## वार्त्तिक अनुवचन

रीतिकाव्य का अध्ययन बहुत कम होता है। सप्रति और ज्या-ज्यो काल की गति तीव्र होती जा रही है उसमें पराङ्मुख होने वाले ही अधिक दिखते हैं जिस युग में यौन सभ्यता की चर्चा साहित्य अनेक शाखाओं में कर रहा हो और जिस युग में विश्वविद्यालयों में कामशास्त्र की पढाई पर बल दिया जाने लगा हो, उस युग में रीतिकाव्य का अध्ययन-अप्ययन बढ़ना चाहिए था। कामशास्त्र की पढाई आरम्भ हो जाने पर कदाचित् कोई रीतिकाव्य का पीठ (चेयर) स्थापित हो और उसके विशेषण उस पर आसीन कराए जाएं। 'ऐहें बहुरि बसतरितु इन डारन व फूल आशा लगाए मरदलोभी मधुप भभी बठे रहे। मैं जानता हूँ न बहार आने वाली है और न रीतिकाव्य विशेषणों की पूछ (पूछ' नहा) होने वाली है। उसका कारण क्या है? आज 'विज्ञान का जोर है और विज्ञान प्रत्यक्ष या दृष्ट से सबद्ध है। रीतिकाव्य भी पारपरिक काव्य है, प्रत्यक्ष से उसका सबध नहीं है। जो विज्ञान की दृष्टि से रीतिकाव्य को देखेगा वह उसे कामशास्त्र से जोड़े बिना नहीं रहेगा। इधर हिन्दी के रीतिकाव्य में जसी रचनाएँ हुई हैं उनकी परंपरा सस्कृत तक चली गई है। कामशास्त्र 'काम' की शिक्षा देता है। क्या रीतिकाव्य 'काम' की शिक्षा देता है? शास्त्र में लिखा रहता है कि 'ऐसा करो या ऐसा किया जाए। ऐसा तो किसी रीतिकाव्य में नहीं लिखा रहता। इसी से काव्य या साहित्य का उद्देश्य या फल यहाँ 'चतुर्वर्ग फल प्राप्ति ही माना गया है, चतुर्वर्ग की प्राप्ति नहीं 'चतुर्वर्ग फल की प्राप्ति। यदि थोड़ी देर के लिए मान भी लिया जाए कि चतुर्वर्ग में 'काम भी है और कामशास्त्र से उसका सबध जुड़ भी जा सकता है पर 'धर्म का किसमें जोड़ें, धर्मशास्त्र से धर्म का किससे जोड़ें, अधशास्त्र से और माक्ष का किससे जाड़ें, मोक्षशास्त्र से, काव्य का निर्माण कवि की भावना का निर्माण है और भारतीय परंपरा में उनका परवतान रस में है इसलिए वीरे कामशास्त्र से उसे कैसे जोड़ा जा सकता है। काव्यानंद यदि ब्रह्मानंद की भांति विषय निरपक्ष नहीं है तो विषय सापक्ष भी तो नहीं है। वासनानंद तो नहा है। आज हिन्दी का साहित्य साहित्यतन्त्र प्रत्यक्ष जीवन के विषयों की अपेक्षा में बढ़ना जा रहा है। ऐसे युग में वज्ञानिक परिप्रक्ष्य में यदि काव्य या साहित्य का विचार हो तो हा, पर रीतिकाव्य का विचार विगुद्ध वनानिक परातल पर होन से वह उपलब्ध नहीं हो सकती

जिस यथाः तत्रात्रा गये । गो । तत्रत समय प्राचीन या भारतीय परंपरा के काव्य की  
 विभाषण करत समय इस पर ध्यान रखना अस्वाभाविक है ।

यहां कहा गया है कि रीतिशास्त्र में कामशास्त्र का परंपरया मरध ता ठीक है  
 पर साया मर । नहा है । नायिकाभेद निम्न चाल पूर्ववर्ती नायिकाभेद का प्रथम अवस्था  
 पन्त ध कामशास्त्र का रही । नायिकाभेद में विपरीत रति का केवल एक ऐसा वर्णन  
 है जिसमें कामशास्त्र का मरध जुलता है । पर वहां तो रतिव्रथ बहुत स है । एक यह भी  
 रतिव्रथ है । पर यहां उदाहरण देकर यह बताने की अपेक्षा नहीं कि कामशास्त्र में  
 उनका जसा उल्लेख वसा ही नायिकाभेद के प्रथम में भी है । काव्य में तो कातासम्मित ही  
 उपजा हा मरता है अर्थात् उन्नत मही मकेत में ही उससे उचित किया जा सकता  
 है । उसी उन्नत वर्णना रही रानी । नाटयशास्त्र में भी नायिकाभेद का विवरण काम  
 शास्त्राथ प्रयाजन स नहा है । नायक नायिका जब रूपरापरूपक म हात है तो उनसी  
 साज सजा उनका रूपग्रन्थ किम प्रकार का हो इतना ही तो वहा निर्दिष्ट है । फिर  
 रीतिशास्त्र या रीतिशास्त्र नियमों का ज्ञान ही का अर्थाथ या कवि नाटयशास्त्र भी उहा  
 पन्ता था यह तो नाटयशास्त्र में पथक किण मए इम अण का काव्य में वण्य विषय  
 का रूप में ही अथ परवर्ती अथा म ही गणन करता रहा है । किमी न काव्यप्रकाश में  
 किमी न सार्थ यरण म किया जिसान शृंगार तिनक स और किसी ने रममजरी  
 म । अधिकांश रममजरी को सा शर बनाने का ही नियत है । रममजरी नाटयशास्त्रीय  
 प्रयोजन म नहा उपाशास्त्राथ प्रयाजन म बना ता यशास्त्रीय प्रयोजन म बनी है ।  
 ता य क रण विषय के रूप में वहा नायिकाभेद है । वगैरचना में उसका संरथ नहीं है  
 वर्णना में उगता संरथ है । रीतिशास्त्र में रीतिशास्त्र और रीतिशास्त्र का निमाण म कुछ  
 प्रयाजन हीती सांख्य की मरता सी दृष्टि स रिण मए हैं । रीतिशास्त्र में जसा मूल्य  
 विवेचन समुक्त म हा चुना म उमका अपेक्षा रीतिशास्त्र में ता थी । उसका निष्पत्त  
 या निर्णय ही उमारे लिए उपयोगी था । रीतिशास्त्र में रीति वर्णनित  
 शोधिय र मर विचार रानी रण, इमीम कि सख्यन म पर्याप्त विमग हो चुना था ।  
 रति रती म अनुप्रास की उचितता में वकाकिण मक अंतरार ही बनार पडी रही ।  
 शोधिय र मक पते म ममा गया । रम नायिकाभेद क्रतुवर्णन नर्णयिण वारमासा  
 अंतरार रण प्रमथ रूप म रानी का और रीतिशास्त्र का जाता था । ध्वनि व प्रपच म कुछ  
 सांख्य अर्थव्यपन है पर व भी प्रवात म न । रिण मका । कहने र विण रीति म यह  
 भी है रमम मान मर का है रानी हा कह मरत है । उसम संरचना नही थी । रगतिण  
 पाठ्य ममा सांख्य उतर जा मर । अरु ।

रम र रिण रमममिताया सांख्य रनी । नायिकाभेद र रिण रममजरी । अर  
 वार र रिण र वना इववयात । पर नर्णयिण म मरन प्रवात म या नया ।  
 सांख्य मर र रानी रि मूल्यम पुनवाणम र दमता यण किया है । सांख्य म  
 मर म भा व मितता है । पर सांख्य म रानी म । रीतिशास्त्र प्रमांश्याता का मरता  
 न रिण मर रीतिशास्त्र है । रिण म र र र और म म अथा का वर्णन हाता है । जायगी

की पञ्चावत मे पञ्चावती का गिननय ही है। पर मूरत्स तुनसीत्तम मे तो नयशिय आया है। पर म मिर तत्र त्रम मे अगा का वणन हुआ है। तब उह निणय करत पडा और उताहरण के रूप म लोना प्रश्ना का रखता पत्त। तीन प्रकार से वण्य पताने पड—  
दिय निपान्थिय और अन्थिय।

नखतें सिल्लौं वरनिय देवी दीपति देखि ।

गिखतें नखलौं मानुपी केववत्स त्रिसेखि ॥

जग के देवी देव के श्रीहरि देव बरतानि ।

तिन हरि की श्री राखिवा इष्ट देवता जानि ॥

दिय (देवी) और नि पादिव्य (जग के देवी त्रय अवतार) का वणन नय स गिय की थोर और मानुपी (अन्थिय) का गिय स नख की और। फारसी म ब'उल 'सरासा सर म गा (पर) की थार था। वहा कवन मानुपी का अन्थिय वगन ही था। हि ी म नयशिय बन गया। हिंदी म पृथक् रूप स नयशिय ही लिखे गए हैं सिखनख नहीं। श्रीराधाकृष्ण के साथ जुड जागे स नायिका भेत् म यह परिष्कार भी आ गया कि केववत्स ने त्रिविध नायिका—स्वकीया परकीया और सामा या म सामाया की परिष्कार ही कर दिया। त्रिती के रीतिग्रथा म सामाया या वेश्या का वणन तो है पर उसका विस्तार नहीं है। उद्भूत थोड ही उताहरणा मे छुट्टी ल ली गई है। रमिकप्रिया म शृ गार नित्रक का आधार तिया गया है वहा केववा के उताहरणा का बहुत विस्तार है। पातुर के गुन्दव कशपत्स न तसा परिष्कार तिया है यत् भी निम्नरणीय नहीं है।

हिन्दी म कविगिथा और रसिकशिक्षा की दृष्टि स प्रथा का निमाण करने का प्रयोजन था। कोई कविता करना चाहता है तो उसके लिए कदि समय काव्य प्रणानी परम्परा आदि का ज्ञान अपेक्षित था। पर ऐसा न समझ लेना चाहिए कि यह ज्ञान ही पर्याप्त है। प्रतिभा के बिन अत्र सज बेकार है। इनके बिना भी पतिमा बेनाग है। बस त्रिती वाला का पक्ष इतना ही था। त्रिन ससृजत वाला न प्रतिभा का ही सबस्व मान लिया या उहावे उसी त लो नत् कर दिण—सह्या और उताया। उताया म ही निपुणता और प्रयाम को सतिदिष्ट कर तिया। मम्मटाचाय एत आचायधुरीण भी तीना को अनिवाय कहत हैं। काय क लिए प्रतिभा, निपुणता और अग्र्यास को हेतु मानते है अयात तीना के सामत्स्य का एव करके रहत हैं। केशवत्स कुलपति मूरति मिथ आदि आचार्यों न ससृजत प्रथा का पर्याप्त अग्रयन तिया है। नक्षण प्रथा की अपेक्षा निर्माण री ही उस समय महती अपथा थी। नक्षण प्रथा का निमाण तत्त्वत इमी प्रयोजन से कर सागी भारतीय परंपरा को हृयगम करके निर्माण किया जाय पर अमरा तात्पय छुगाळून नहा था। विन्गी नही तग तसा न था। लार साहित्य का रणग रही करेग तमी तार्ई ज्ञान रही री। हिन्दी नापा और साहित्य का उतमव और त्रिकाम को जनता री आवाशा जनभाया की आवाक्षा और जन साहित्य री आवाशा म था। पर तसासन दूमरा का था उनकी भी ससृति थी और उनका भी साहित्य था। पर अपने साहित्य की रीतिकालीन आचार्यों या कविया ने

भारतीय परम्परा से विद्वान नहीं होना स्यात् । ग्लोब भारतीय हा रगा । प्राचाया भी सोच की रती पर दूसरी सस्त्रुति व प्रचुर मी प्रयाह म जा कुछ हा साता था विया । सोत सस्त्रुत का ही रहा धरणी पाग्मी का ग्लान गोजने व तर्हा गण । पर ग्लान सस्त्रुत का मत ही हो रानाण हिन्दी की ही हैं । सगण भन ही प्रधिततर सस्त्रुत व प्राधारभूत प्रयो व सहारे ही लिय गण हा । पर उगाहरण म प्रधितांग प्रय प्रपन रग । जा रीतिवाय व विरोधी भी हैं व भी स्वीकार करत हैं कि रीतिवाय व दान तनि उदाहरण सस्त्रुत म भी नहीं हैं । शृगाराधाय कुछ दृमा प्रय सस्त्रुति व समरग, प्रय साहित्य व समस्तरीय उगाहरण प्रस्तुत करने के कारण । सस्त्रुत साहित्य विाग जनि है । उक्त समभने म उगावा प्रनुहन करन म कनी रिगी स व रि का हो जाना प्रमभन नहीं है । प्रत्युत यह भी कह सतन हैं कि साप्रतिर युग व हिन्दी व प्राचाय तो प्रधित सावधान मान जात हैं । फिर भी उनसे प्-ग्ल भारतीय साहित्य शास्त्र को समभन समभाने म भूने क्या हा रही है । उगाती जितलता व ही कारण । प्रपिनु यह ना कह सकत हैं कि जितनी प्रुटियां आज हुई हैं या हा रही हैं उतनी उनगे तहां हुई हैं । तुना त्मक दृष्टि स उह दगकर कही समीचीन हैं ।

यदि कोई यह कहे कि दूसरी सस्त्रुति स हल भेन उहान क्या बदाया ता इतना ही कह सकते हैं कि जितना उहाने उनस सतग रिया उतना अनियाय था । ससग स दोष गुण दोना हाते हैं । प्रतिशु गारिक्ता का दोष प्राया कही रही तो विरहवेना की वह विनेपता भी आई जिसने घनमानद ऐसा कवि भी सामने रिया । दूसरी सस्त्रुति उहाने पूरी की पूरी मो ही नही ली है । पर वनमान साहित्य तो ग्लान व लिय भारत के बाहर दखता है । निर्माण ही तो वनमान साहित्य का प्रपना कहा जा सकता है पर शास्त्र मी क्या प्रपना है या भारतीय है ? भारत व सगुचित घरे से ता के बाहर निकल गण हैं विषय विराट फलक पर जा खडे हुए हैं । उगाहरण ही तो प्रपने उनके हैं । फलक चाहे जितना विस्तृत हो गया हो पर शास्त्र प्रपना नहीं है । सस्त्रुति ? आजकल भारतीय सस्त्रुति का उदपोष बहुत होता है । पर जा सस्त्रुति उसके नाम पर रखी जा रही है वह कौन मचाई के साथ कह सकता है कि भारतीय है । उस भारतीय सस्त्रुति कहना उस पवित्र सस्त्रुति का बहुत बडा अपमान करना है ।

इस प्रबंध की उपलक्ष्या के विषय म वक्तव्य मी प्रपेक्षित है । क्रमग उसका विचार किया जाता है—

(१) राति-कवियो ने काय के आभ्यतर कम रमणीयता और बाह्य धम प्रल वृति का अपने वाक्य म सम्पक मयोजन किया है । भारतीय परम्परा मे ग्लान और प्रय दोना की सम्मिलित रूप म का य माना गया है । इसलिए रीतिकाय ही पाचीन वान म वास्तविक काय था उमम दोना का सह प्रस्तित्व है । रीतिवाय की उक्तियां जसी अनूठी और रमणीय हैं और परिमाण म जितनी हैं भारतीय क्या कोई भी साहित्य उतनी और वैसी उक्तियां नग ने सका है यह भी सत्य है । इसे प्राचाय रामचन्द्र गुनन न भी स्वीकार किया है जा उस काय व तीखे आलोचक थ ।

(२) रीतिवाक्य का प्रणयन प्रायः शास्त्रस्थिति संपादन के लिए हुआ। अतः उस पर पूर्ववर्ती काव्यशास्त्रीय ग्रंथों का प्रभाव पर्याप्त मात्रा में मिलता है। जिन्होंने रीतिशास्त्र के ग्रंथ लिखे उनके लिए शास्त्रस्थिति संपादन अनिवार्य था। पर यही यह भी ध्यान में रखना है कि उनके उदाहरण मूल्य अनुबन्धन नहीं है। सिद्धांत पक्ष में भी रीतिशास्त्र उल्टा नहीं है। व्यक्तित्व के न उभरने की चर्चा भी होती है। पर किसी धारा में सवर्ण व्यक्तित्व का उभार नहीं होता। व्यक्तित्व की पुकार आधुनिक है। रस संप्रदाय तो साधारणीकरण का उपासक रहा है, असाधारणीकरण का नहीं। व्यक्तित्व के उभार की खोज करते हुए इधर भी दृष्टि रखनी चाहिए। फिर भी कौन कह सकता कि मतिराम और पद्माकर का व्यक्तित्व एक सा है। चिंतामणि और मतिराम माई थे, पर ये दोनों भी एक रूप नहीं हैं।

(३) रीतिवाक्य वगैरे विनोद का चित्र उपस्थित करता है। यह विचारणीय वगैरे भावना भी साम्प्रतिक है। जिस परिवेश में कोई रहता है उसका प्रभाव होता ही है। आज उपासक-कहानियाँ में अधिकतर विशिष्ट वगैरे युवा-वगैरे मध्यम वगैरे, विद्यार्थी वगैरे कथो चित्रित होता है? मिथुन वृत्ति की ही चर्चा विनोद बना रहती है। यह सब रीतिवाक्य में सवर्ण सोद्देश्य नहीं है। आज सोद्देश्य अधिक है। इसलिए वगैरे साहित्य नाम वगैरे भावना वाले ही देने लगते हैं उस।

(४) महाकाव्य और मुक्तक के संबंध में भी यह विचारणीय है कि समय की गति के साथ प्रवृत्ति में मुक्तक की प्रवृत्ति बढ़ रही है। अतः तो मुक्तक और उनमें भी गीतों का ही प्रवृत्ति काव्या में उत्तम कहा जा रहा है। इसी का फल यह भी है कि सूरसागर को महाकाव्य सब कहा जाने लगा है। महाकाव्य और मुक्तक भारतीय साहित्यशास्त्र के पारिभाषिक शब्द हैं। उनका मनमाना प्रयोग नहीं किया जा सकता। सूरसागर को महाकाव्य से उल्लेख रचना काइ कहना चाहते तो कहें पर उसे प्रबंधकाव्य या महाकाव्य नहीं कहा जा सकता। किसी कथा के सहारे प्रबंधकाव्य भी लिखा जा सकता है और मुक्तक काव्य भी, किसी मुक्तक काव्य में किसी कथा की सारी की सारी घटनाएँ आ जाने पर भी वह मुक्तक ही रहेगा। किसी कथा की कुछ ही बातें आने पर भी अभाव-वृद्धता या संधियोजना से वह प्रबंध ही होगा। नपथचरित में विवाह की ही कथा है पर वह प्रबंध है महाकाव्य है। सूरसागर में श्रीकृष्ण का सारा जीवन वृत्त आ गया है पर वह मुक्तक ही है। इन नामों का सचेत स्वरूप विशेष की ओर है। इसलिए सूरसागर को प्रबंधात्मक मुक्तक भी नहीं कह सकते। संपूर्ण जीवन कथात्मक मुक्तक कहिए प्रबंधात्मक मुक्तक नहीं—

बह्विपि स्वेच्छया काम प्रकीर्ण मनिधीयत ।

अनुजिहताथ सबध प्रवधो दुरुदाहर ॥

प्रबंध में अनुजिहताथ मूल्य होता है कथा का। यह सूरसागर में नहीं है। उजिहताथ सम्बंध होने से वह मुक्तक ही है। 'प्रबंध' महाकाव्य भी होता है स्वकाव्य भी होता है। इसलिए ब्रह्म रामायण और कृष्ण गीतावली का भी स्वकाव्य नहीं कहा जा



सजता। अनुभिनाथ मयध का अभाव हाउ स।

भाषा रीतिराव्य की परिष्कृत ह, ही, उमम मय अयाय =। हिन्दी काव्य का भाषा की दृष्टि स दगन पर अाव नए तथ्य सामन आा है। आज क आनाउक उज और मवधी म भए उरा अतत है। पर पहन भाषा क नाम पर प्राणित स्तर पर विकसित सभी भाषाभावा ग्रहण हाता था। दगनित रीतिराउ न भाषाभए समाप्त वरा का प्रयास किया जो भी थाण उहुन दृग्गानर हा उता था। जायमी करीर तुलसीदास केउरगास सभी अणी रचना म प्रयुत भाषा को भाषा या भाषा कहत है। उना स्वरूप म अतर ह। रीतिराव्य न एम दिगा अतर का दूर वरक घटान का प्रयास किया ह। सरसामाय भाषा एन हा यह उम का व का अयाय था। इसका पयास मरिउरान म तुनसीगास न किया और रतिराउ म गय न। मरिउरीगास जा कहत है उमता तातपय समभन ही आवश्यरता ह —

तुलसी गग दुबो भए सुकमि क सरदार।

इनकी काय मे मरिउ भाषा बिविध प्रकार ॥

अत छुटभया की भाषा का दगार रीतिराव की भाषा को अवरिष्कृत या रिचडी भाषा कहना मुसगत प्रनीत नही होता।

डा० रामजी मिश्र उ रीतिराव्य ता सात तो वणी सयणीलता स गोजा है। मैं ता कवल गीत क उत्स की चर्चा उर रहा था और उमने रीतिराव उताआ दारा ग्रहण मगिमा का सवत भर दे रहा है। श्री मिश्र की धमधीनता स बहुत पूव स परिचित था। जब राम ने अयोया स बाहर पर नही रगा था तब स उनकी उतरता स परिचित है। मुझे तो यही प्रसन्नता है कि जिस वगीच म मैं बहूत त्तिना स टहलता रहा हू वहाँ और सज्जन भी टहमने आने लगे हैं और उनकी छटा निहार रहे हैं। श्री मिश्र की दृष्टि बहूत साफ-सुधरी है इसम वह भी दग लिया है जा उभी तब काई नही देख पाया था। उत्तराधिकारी ता प्रश्न प्रत्यन अधिकारी क गम्मुख रहता है। मैं निश्चिन हू कि उत्तराधिकार का प्रमार सम्हालन वाचे मुझे अन्तपूव यत्किच का उपनिघ हो गई है। सयोग है कि डा० रामजी भी मिश्र हैं। अब मुझे राम राम करने की उलभन न होगी और सानद राम राम भी कर सवूगा परिणत वय म। तथास्तु।

श्रीपचमी २०२६ वश्रम

३ विश्वविद्यालय आवास

कोठी रोड उज्जैन

—विश्वनाथ प्रसाद मिश्र

## प्राक्कथन

रीतिकान्य मे शृंगाराधिक्य की जितनी आलोचना की गई है उसकी तुलना में रीतिकालीन काय क साहित्यिक सौंदर्य का उदघाटन और बिस्तरपण कम हो पाया है।

भाषा के बलब के दृष्टिकोण से भी इस काल का साहित्य अत्यंत समृद्ध है। भाषा का अभिव्यक्त स्वरूप काय क निरूपण उपयुक्त नहीं होता। उसमें अभिव्यक्ति की पूर्ण क्षमता शक्य है। इस दृष्टि से अलंकार गुण और रीति आदि कलात्मक बणिष्टय भी अपभ्रंशित है। रीतिकान्य और भी बलवपूर्ण दीर्घगा। यदि समग्र रूप से रीतिकाल की परंपरा प्रेरणा और तत्कालीन स्थितियां पर विचार किया जाय तो उसकी रमणीयता और स्वाभाविक विनयनशीलता पर समुचित प्रकाश पड़ सकता है जिसका परावन रीति कवियां न किया है। इन कवियां ने अवन पूर्ववर्ती काय साहित्य से जो कुछ ग्रहण किया उस और भा रमणीय रूप में उपयुक्त किया। यह जान इसरी है कि त कालीन परिस्थितियां न शृंगार काय के लिए अधिक प्रेरणा दी।

रीतिकान्य की शृंगार धारा और प्रगल्भ धारा का मूल स्रोत बर्दिक साहित्य माना जाता रहा है। लौकिक और पौराणिक काय धाराओं का रीतिकाल तक प्रवाह-नरनय दिग्दर्शने में यह प्रयत्न बराबर किया गया है कि अपने परिवर्तन में प्रभावित परिचित हान पर भी उस काय धाराओं कहीं तक रीति-काय की प्रेरणा की शक्ति बन सकी हैं।

शृंगारी अभिव्यक्ति के क्षेत्र में रीतिकान्य अपना सानी नहीं रखता। नारी और पुरुष की मानवता का और तज्जय विभिन्न चरित्रों को दर्शाना और अपने परिवर्तन क अनुभूति इन कवियां न बनी सूक्ष्मता से व्यापक सदम में अंकित किया है। इसरी पुष्टि क लिए तीसरे और चौथे अध्याय में पर्याप्त सामग्री ली गई है।

काव्य प्रवर्तन की जितनी भी विधाएँ रीतिकाल में पूरे विद्यमान थीं वाणी की जितनी भंगिमाएँ भाव प्रकाशन में प्रयुक्त थीं और काव्य गुण का प्रकृत का जिन रूपों में काव्यान्वय क लिए प्रयोग किया गया था उन सबका सम्यक् नियाजन रीतिकान्य में किया गया है। काव्य की प्रकृति, उसकी व्यंजना और ध्वनि का भी इन कवियों ने पूर्ण ध्यान रखा है।

प० विश्वनाथप्रसाद मिश्र ने बिहारी की भूमिका में काव्य म शृंगार की प्रवृत्ति के अंतर्गत उमके श्लोक का निर्देश किया है। मिश्रसरीदास व काव्यनिर्णय व अनेक छंदों की तुलना संस्कृत प्राकृत आदि के छंदों से की गई है। डा० गणेश न अपने साधक ग्रंथ में रीतिकाल की भूमिका का विवेचनात्मक परिचय देते हुए उमके श्लोक की ओर संकेत किया है पर वह इतना सशक्त है कि उससे रीतिकाल की विभिन्न पक्षा का पूरा उदघाटन नहीं होता। श्री० विवेकानंद ने रीतिकालीन कविता की प्रेम-व्यंजना में उमके कथात्मक का ही उदघाटन किया है। उनकी काव्य परम्परा का अत्यंत सक्षिप्त निरूपण उममें किया गया है। डा० त्रिभुवनसिंह ने अपने 'साधक प्रबंध' में महाकवि मतिराम मध्यकालीन हिंदी कविता में अत्यंत वृत्ति में रीतिकाल की केवल एक प्रवृत्ति अत्यंत वृत्ति का ही विवेक प्रस्तुत किया है। इसी प्रकार डा० शिवनाथ जोशी ने उसकी एतिहासिक पृष्ठभूमि का ही विवेक प्रस्तुत किया है। डा० श्रीम प्रकाश न हिंदी अलवार साहित्य में अलवारों का ही विश्लेषण किया है। हिंदी काव्यशास्त्र का इतिहास रीतिकालीन कविता एवं शृंगार रस विवेक आचार्य कदाचरस 'रजभाषा साहित्य का नामिका भेद' 'मुक्तक काव्य, परम्परा और बिहारी, 'मतिराम कवि और आचार्य आदि ग्रंथ में हैं जिनमें रीतिकालीन साहित्य का परिचय मिलता है। लेकिन किसी ने उसका ब्राह्मण का रूप विश्लेषण किया है तो किसी ने केवल आंतर का ही। अनेक अनुसंधानकारों ने रीतिकालीन कवि आचार्य के कवि कर्म और आचार्यत्व का विवेक विश्लेषण किया है।

रीतिकाल के विभिन्न पक्षा का आंगिक रूप में या लक्ष्य विवरण हुआ है परन्तु समग्र रूप में शृंगारतावद्ध कर्म से उसका अर्थ रूप में एकत्र निरूपण अब तक नहीं किया गया है। इन प्रमुख सदन श्लोकों का व्यापक रूप में मूलभूत ग्रंथों के आधार पर संकलन किया गया है तथा उनके उपयोग, विनियोग और परिष्कार का मौलिक ढंग में विवेक प्रस्तुत किया गया है।<sup>1</sup> अत्रावधि रीतिकाल के श्लोकों का सम्यक विश्लेषण नहीं किया गया। उम और अंगुलि निर्देशों से प्रायः अत्यंत तद्विषयक शोध-ग्रंथ में किया गया किंतु गहरे पठन-रत्नों की उपलब्धि और उनका मूल्य वन नहीं प्राप्त होता। प्रस्तुत ग्रंथ इसी निश्चय में एक प्रयास है।

यद्यपि रीतिकाल के श्लोक निर्देशों में उसकी भावभावित कलात्मकता की परंपरा का भी प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है परन्तु उसका यथोचित विस्तार यहां सम्भव नहीं।

रीतिकाल का प्रभावित करने में अरबी फारसी का पुष्कल साहित्य कर्म महत्वपूर्ण नहीं है, किंतु उसका अनुनामक दृष्टि से सम्यक उपस्थापन समझना या अतः केवल कहीं-कहीं संकेत मात्र करके सतोष करना पडा है। इसी प्रकार रीतिकाल की भाव धारा का परिचालन करने वाली लक्षण का आचार्यविनया का भी स्वरूप परि-

चय मात्र ही दिया जा सका है। उसमें वतमान प्रेरणा बीजों का सम्यक आकलन और निर्देश कर सकना जितना महत्त्वपूर्ण है उतना ही श्रमसाध्य भी।

पौराणिक साहित्य केवल रीतिकान्य के लिए ही नहीं समस्त भारतीय वाङ्मय के लिए उपजीव्य रहा है। प्रस्तुत प्रबंध में उसका पूरा विवरण नहीं उपस्थित किया जा सना है, केवल कुछ प्रमुख पुराणों के कतिपय शृंगाररसपूर्ण स्थलों का उल्लेख मात्र किया गया है।

व्रजभाषा का जो रूप रीतिकान्य में मिलता है उसका विकास तम पूर्णरूप में विवेचित नहीं हो सका। डा० शिवप्रसाद सिंह ने अपने शोध प्रबंध में इस तत्वों का संकेत किया है जो व्रजभाषा के प्रमुख विधायक रहे हैं। उनकी परंपरा भी उन्होंने पूर्वप्रचलित काव्य भाषाओं से स्थापित की है।

रीतिकान्य के उचित मूल्यांकन के लिए उपयुक्त तथ्यों का ध्यान रखना आवश्यक है। प्रस्तुत प्रबंध में इन तथ्यों का सिद्ध करने के लिए पर्याप्त प्रमाण दिए गए हैं और यह स्पष्ट करने का प्रयत्न किया गया है कि रीतिकान्य के अनुरजक तत्त्व अपने में पूर्ण और निर्दोष हैं।

रीतिकाव्य के कवियों का सौंदर्य बोध और कवि काम सामाजिक सदमों से सबंधा विलग और कटा हुआ नहीं है। इसके प्रतिपादनाथ रीतिकाव्य की आधारभूमि का संक्षिप्त परिचय दे दिया गया है।

रीतिकाव्य के स्रोत के रूप में मन्वृत, प्राकृत, अपभ्रंश और रीतिकाल के पूर्व हिंदी की शृंगारपरक काव्यधाराओं का यथासंभव परिचय दिया गया है। स्थान स्थान पर रीतिकाव्य पर पड़े पूर्ववर्ती काव्यों के प्रत्यक्ष प्रभावों का विनिर्देश भी कर दिया गया है।

रीतिकाव्य केवल शृंगारी अभिव्यक्तियों के लिए ही पूर्व परंपरा का ऋणी नहीं है अपितु अभिव्यक्ति के उपांगन और माध्यम के लिए भी वह उनका आभारी है। उसी मन्वृत प्राकृत अपभ्रंश और हिंदी की रसपंगनता ही नहीं अनकृत शैली भी मिली। काव्य चित्रा की विविधता कोमल वर्णों का लालित्य, गान्धर्वकृति या शान्ति याज्ञना और संगीतमयता भी पूर्व परंपरा से प्राप्त हुए।

प्रस्तुत प्रबंध का विषय इतना व्यापक है कि उसके आभोग में पूरा भारतीय वाङ्मय आ जाता है। रीतिकान्य के स्रोत पात अनात न जाने कितने मन्वृत प्राकृत अपभ्रंश और हिंदी के ग्रंथ हैं जिनका सम्यक विवेचन शोध प्रबंध के इस लघु काल में ही संभव नहीं है और उनका आकलन एक व्यक्ति की सामर्थ्य सीमा के संभव परे है। ऐसी स्थिति में जिन प्रमुख ग्रंथों की ग्रंथियों को सुलभाया जा सका है उन्हें ही स्थान दिया गया है। मविष्य में यदि संमद्ध पुस्तकालय और समय का सुयोग मिला तो इस क्षेत्र में और भी प्रगति की जा सकती।

प्रस्तुत प्रबंध में रीतिकाव्य के स्रोत के अन्वेषित मूल्या का सम्यक परिचय और निष्पत्ति उपसंहार में उल्लिखित है। यह काव्य जिन गुणवत्ता, बहुषों और

की प्रेरणा, महायता से सम्पन्न हुआ उनके प्रति आभार प्रदर्शन मेरा प्रथम कृत्य है। आचार्य विश्वनाथप्रसाद मिश्र के 'यकित्तत्व और कृतित्व से लेखक' इस विश्वनाथ की नगरी में आने के पूर्व ही प्रभावित था। यहाँ आन और उषा प्रसाद पाने पर तो और भी अधिक श्रद्धावन्त हुआ। एम०ए० में शैतिकाय को विशेष अयापन के लिए ग्रहण करने पर मैं उनके और भी निकट सम्पर्क में आ गया। उन्होंने अपने अभ्यापन काल में मुझे बराबर प्रोत्साहन दिया और एम०ए० करने के उपरांत 11 घण्टा काय में उहाँ की वात्मल्यपूर्ण प्रेरणा से प्रवृत्त हुआ। उनकी कृपा का सबल मेरी कल्पसाध्य साधना का प्रमुख सहारा रहा है।

श्रद्धेय प० करुणापति जी त्रिपाठी ने जिस स्नेह और तत्परता से मेरा मांग प्राप्त किया उसके महत्त्व प्रकाशन में शक्य असम्भव है। इतने दिनों तक रूग्णावस्था में भी मुझे प्रोत्साहित करते हुए उन्होंने मेरी बढिनाइया का दूर कर इस दिशा में नवीन दृष्टि दी उनकी कृपा का मैं चिर श्रेणी हूँ।

यदि डा० जगन्नाथप्रसाद तामा एम० ए० डी० लिट० अध्यक्ष हिंदी विभाग का असीम अनुग्रह और वात्मल्यपूर्ण भिडकिया यथासमय न मिली होती तो मेरी शोध इच्छा की परिपूर्ति न हो पाती। उनकी उदारता ने मुझे प्रारम्भ में ही हतासाह होने से बचाकर जिस स्नेह का परिचय दिया है उसका आभार प्रदर्शन किस रूप में करूँ।

11 नये द्र के गाय ग्रन्थ के पूर्वाद्धि शैतिकाय की भूमिका ने मेरे अनुसंधान की भूमिका ही नहीं प्रस्तुत की अपितु उचित शिवा का निर्देश भी किया और उनके प्रति मैं हृदय से भा आभारी हूँ।

उनके गुरुजना की संप्रेरणा के बिना मेरा यह कार्य कभी पूणता को प्राप्त न होता। उन सबके प्रति श्रद्धावन्त होकर मैं आशीर्वाद प्राप्त की कामना करता हूँ।

एम अनुसंधान काय में डा० रञ्जितसिंह और डा० शिवप्रसादसिंह ने समय समय पर अपने बहुमूल्य सुभाव देकर सुगम ध्यान में मेरी जती सहायता की है उम व्यक्त नहीं किया जा सकता।

महान् काय की पूणता में महयाग देने वाला का योग भी कम महत्त्वपूर्ण नहीं होता। इस दृष्टि से मेरे अनुग्रह चिन्ता रामजी मिश्र और अनुजवा स्नेहभाजन चिन्ता मुमत्प्रसाद द्विवेदी आशीर्वादाह हैं। अपने व्यस्त समय में से मेरे सहायक के लिए जिन सहाय्य मित्रा ने अपना समय दिया उनमें सर्वश्री अपने सहायी डा० गोमनाथ सिंह के प्रति भी कृतज्ञ जिनकी प्रेरणा से एम ग्रन्थ का प्रकाशन सम्पन्न हुआ। प० काशि चन्द्रजी मिश्र ने भाग्यशरजी गुप्त गभुनाथ राय प० दुर्गाप्रसाद त्रिपाठी प्राप्ति का भी मैं आभारी हूँ। श्री प्रार० एम० चोपन माता प्रकाशन ने जिस तत्परता और परिश्रम से गोथ प्रबंध का प्रकाशन किया है उमके लिए क धन्यवाद प पात्र है।

दिल्ली का पत्र

(दिल्ली विश्वविद्यालय)

पत्र मेरी पत्र, दिल्ली ६

— रामजी मिश्र

## पहला अध्याय

# रीतिकाव्य स्रोत और सीमा

रीतिकाव्य के स्रोत की विवेचना के पूर्व रीतिकाव्य का स्वरूप स्पष्ट कर लेना आवश्यक है। इसका जा रूप आग विरचित हुआ उस दो भागों में सुविधा के लिए विभाजित किया जा सकता है। एक रीति दूसरा काव्य। रीति प्रमुख है और काव्य गौण। यद्यपि काव्य विरोध्य है और रीति उसका विशेषण। रीतिकाव्य के विशेष्य को व्यक्त करता है। रीति स विगिष्ट काव्य की चर्चा मात्र में की जायगी। पहल काव्य का सामान्य परिचय विवक्षित है।

### काव्य परिचय (संस्कृत)

सूत्रन कवि की अपनी प्रतिमा में प्रसूत निपुण वाङ्मय गिल्प को काव्य कहा जाता है, सामान्यतः जिसका ता पय रवि वाङ्निर्मिति स हाता है।<sup>१</sup> इसका आभोग में सम्पूर्ण मुलानित माहित्य—गद्य, पद्य चम्पू सत्र आ जात हैं। काव्य के लक्षण निर्धारण में दो तत्त्वा का विवेचन होता है। एक बहिरंग दूसरा अंतरंग। पहल में काव्य के कवल बाहरी रूप का उसके अवयवा के संघटन का उत्पन्न रहना है और दूसरे में कोई भी विगपना सति त कराने का यत्न किया जाता है जो कवल काव्य में ही पाई जाती है। काव्य और अय काव्य के बहिरंग का व्यक्तन करत है अंतरंग का व्यक्तन रस या रमणीयता से हाता है।<sup>२</sup>

संस्कृत काव्यशास्त्र के आचार्यों ने काव्य के स्वरूप विवचन में मुख्यतः उपयुक्त दृष्टा दा तत्त्वा का विवचन किया है। उनके अनेक अनेक विगिष्ट दृष्टिवाग के कारण काव्य के अनेक लक्षण दिए गए। काव्य का प्रथम महत्वपूर्ण परिचय भरत के नाट्य

१ कवि वाङ्निर्मिति काव्यम् ।

२ ग विवचनापत्रमात्रं मिथ वाङ्मय विमल प० १२

गाम्य म प्राप्त होता है। उदात्त मात्रा का आधार मानकर काव्य का लक्षण किया।<sup>१</sup> आचार्य भक्त का लक्षण काय की बाह्य और आंतरिक विशेषताओं को व्यक्त करता है। इसमें रीति गुण अक्षर और रस का सन्निवेश कर दिया है।

आठवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में आचार्य वामन ने काव्य को अलंकारसहित और दोषरहित होना आवश्यक माना है अर्थात् वामन ने काव्य का अनूठत, निदुष्ट और सगुण रूप ही स्वीकृत किया।<sup>२</sup>

वामन ने काव्यात्मा के रूप में रीति की प्रतिष्ठा की<sup>३</sup> जिसके परिणामस्वरूप रीति सम्प्रदाय का प्रचलन हुआ। आचार्यवर्धन ने गण्यथ समूह को काव्य शरीर मानकर ध्वयथ का उसकी आत्मा के रूप में प्रतिष्ठित किया।<sup>४</sup> आचार्य कुतब वक्रोक्ति को काव्य की आत्मा मानते हुए कहते हैं मणिमायुक्त कवि वापारशास्त्रिणी व्यवस्थित गण्य और अथ गण्यस्य स गण्यममत्रो वा आह्वान्तरनवाची रचना काव्य है।<sup>५</sup> कुतब काव्य को मणिमायुक्त मानते हुए भी पूर्ववर्ती आचार्यों के ही अनुरूप काव्य लक्षण देते हैं।

मम्मटाचार्य वामन के काव्य लक्षण को परिष्कृत रूप में ग्रहण करते हुए अलंकार को अति महत्त्व देना अनुचित समझते हैं। उनका मत है कि अलंकार तो गौण है गुणसहित और दोषरहित होने पर काव्य के रसास्वादन में कोई बाधा नहीं पहुँचती।<sup>६</sup> अर्थात् यदि अलंकार स्फुट न हो तो भी काव्यत्व की हानि नहीं होती परन्तु जैसे मनुष्य शरीर में प्रधान आत्मा के गुण शूरता आदि होते हैं उसी प्रकार काव्य में प्रधान रस के उत्पन्न होने में गुण की स्थिति आवश्यक है।<sup>७</sup> भोज ने भी प्रायः काव्य के इसी लक्षण को स्वीकार किया है।<sup>८</sup>

चन्द्रावतार जयदेव काव्य को दोषरहित लक्षणायुक्त रीति गुण अलंकार रस और वक्ति में समन्वित मानते हैं पर मम्मटाचार्य की उक्ति अनलकृती पुन क्वापि

१ मनुस्मृतिसंज्ञक्य गदत गण्योऽनपुंसुबोधय युक्तिमन्तयोऽयम्।

वक्रोक्ति रममाण सधिम-जानयस्त मभयति शुभकाव्य माटवप्रक्षणाणाम् ॥ —नाटयशास्त्र १६।११८

२ काव्य ब्राह्मणकारात् । सौन्दर्यमन्तार । स दोषगुणानकारहानागनाभ्याम्।

—काव्यालंकारसूत्रवति १।१।१३

३ रानिरात्मा काव्यस्य ।—वट्ट १।२।६

४ काव्यस्यात्मा ध्वनिरिति काव्य समाप्तात्पुन ।—ध्वयथाव १।१

५ गण्यो मन्ति वक्रविव्यापारशास्त्रिणी ।

बोध व्यवस्थितो काव्य सन्निष्ठाकारिणी ॥ वक्रोक्तिजीवित १।७

६ सत्पद्यो शक्यो सगणावनतृणी पुन क्वापि । काव्यप्रकाश

७ ये रमस्याग्निो धर्मा शौर्यान्व द्वात्मन ।

उत्पद्येनकन्द स्वरचनास्थितया गणा ॥—वही ८।६६

८ विवेक गणवद् काव्यमन्ताररत्न हृतम्।

रमन्वित कवि कुतब कानि प्रोदिष दिवति ॥ स० क० १।२

का खण्डन करत हुए काव्य के लिए अलंकार को उतना ही अनिवाय मानते हैं जितना अग्नि के लिए उष्णता ।<sup>१</sup>

काव्य-लक्षण की विवेचना करत हुए विश्वनाथ और पण्डितराज जगन्नाथ ने उसके अंतरंग पर विशेष बल दिया है। विश्वनाथ ने शब्द और अर्थ पर विशेष ध्यान देनेवाले अपने पूर्ववर्ती आचार्यों के मत का खण्डन करत हुए रसात्मक वाक्य को काव्य माना है ।<sup>२</sup> अर्थात् काव्यत्व की प्रतिष्ठा उसकी आस्वादिता में ही है। पण्डितराज जगन्नाथ ने मन को रमान और तमय करने वाले गुण से विशिष्ट वाक्य का निरूपण करत हुए 'रमणीय अर्थ का प्रतिपादन करने वाले शब्द को काव्य' माना है।<sup>३</sup>

जाने अनजाने रीतिकाल में जब संस्कृत साहित्यशास्त्र की प्रेरणा पाकर रीति कवियाँ न काव्य रीतियाँ की चर्चा की तो काव्य का लक्षण भी दिया और उदाहरण स्वरूप काव्य रचना भी की। संस्कृत के आचार्यों की भाँति हिन्दी-कवियाँ में न तो शास्त्र स्थिति सम्पादन की क्षमता ही थी और न आप्रहृ ही। इनका श्रेय इतना ही है कि संस्कृत काव्यशास्त्र को हिन्दी के काव्य रस-ग्राहियों के लिए सरल सुबोध शली में प्रस्तुत कर दिया।

## काव्य परिचय (हिन्दी)

हिन्दी में काव्यशास्त्र निरूपण का सूत्रपात कृपाराम ने किया। इनका रीति निरूपण मौनिक और सवमाय भले ही न हो किंतु हिन्दी साहित्य के लिए उसका ऐतिहासिक महत्त्व अवश्य है। कृपाराम से अधिक मायता आचार्य केशवदास को मिली। इन्होंने जयदेव के ही समान काव्य में अलंकार तत्त्व की अनिवायता सिद्ध की। इनके लक्षण पर लण्डी और उनसे भी अधिक रुद्र का प्रभाव है। चित्तामणि त्रिपाठी का काव्य-लक्षण मम्मट से मिलता जुलता है। इन्होंने सगुण अलंकारसहित और दापरहित शब्द और अर्थ को काव्य माना है।<sup>४</sup> कवि कुलपति ने अलौकिक अर्थ देनेवाले शब्द और अर्थ को काव्य माना है।<sup>५</sup> कुछ अंश में इनका लक्षण पण्डितराज जगन्नाथ से मिलता-

१ निर्गोपा लक्षणवती सरानिगुणभूषणा ।

सांस्काररसादिकवस्तिवर्तिवाच्यनामनाम् ॥

अगोत्रोति य काव्य शब्दाविविनयकृती ।

अमी न भयते कस्मान्नुष्णमननकृती ॥—चंगनीह ११७ ८

२ काव्य रसात्मक काव्यम १—भा ६ ११३

३ रमणीयाथप्रतिपात्क शब्द काव्यम् । र ग १११

४ मगनालंकारन सन्नि दोष रहित जो होइ ।

शब्द अर्थ ताको कवित कहत विषय सब को ॥—कविज्ञानकान्तर ११५

५ जय तें धद्मा मुख मन्त शब्द अर्थ कवित ।

यह लच्छन मैं कियो समुझि अर्थ बहु चित्त ॥—रसरहस्यम्, ११६



मा है।<sup>१</sup> रम्य है।<sup>२</sup> विनाशक रम्यविज्ञान का अनुभव।<sup>३</sup> गरम हृण कला वि गरम घोर क्षय का गार का पड़े घोर रम उम काव्य का गरम गार।<sup>४</sup> रम रम्य करता हृण क्षयकार भूषण रम का प्राण घोर रम का गरीर माता है। रम का महत्ता स्यापित कर। हृण विज्ञान है। वि गरीर का विना भूषण क भी रह गराता है पर विना जीवन क गरीर राग है।<sup>५</sup> मातापुत्र व धर्म का प्राण घोर क्षय का गरीर माता है।<sup>६</sup> प्राणमात्रि भी मातापुत्र की ही बात गराता है।<sup>७</sup>

उपरिनिमित्त काव्य क परिचयात्मक त।ना के अध्ययन में स्पष्ट होता है वि धारायी व वृथा काव्य गार क रूप में गरम घोर क्षय का स्थीकार किया है। उक्त धारायि क का धारा विषय में रम प्रकार का मातृ गती है। तिमो धाराय ने उक्त रम रूप माता का तिमो। रीति का धनकार रम्य। दूसरी प्रकार धरि या कर्तव्य का भी काव्यात्मा र रूप में बटन किया गया। रम मा वमिचय र परिणामस्वरूप धनक सम्प्रदाय का प्राग्भाउ हृषा।

### सम्प्रदाय विज्ञान

धाराय स्या र धनकार गम्य की टीका करता हृण समुच्चय व रम काव्य सम्प्रदाय की विज्ञान की है। गरम घोर क्षय में धनकार पैदा करते या तिन प्रमुख तन्त्र हैं धम व्यापार घोर व्यस्य।<sup>१</sup> उक्त धम की का कोटिया मानी है—एत नित्य धम दूसरा धरिय धम। तिय धम की व्यापार धनकार सम्प्रदाय करता है घोर धरिय धम की विज्ञान रीति या गुण सम्प्रदाय। गरम घोर क्षय में धारायण रम करनाना दूसरा कारण व्यापारमूला है। दूसरा भी शो भेद हैं—यत्रोक्ति व्यापार घोर मानसता व्यापार। समुच्चय व यत्रोक्ति व्यापार क यत्रोक्ति सम्प्रदाय घोर भोजकत्व में रस सम्प्रदाय का प्रयत्न माता है। तीसरे तत्त्व व्यस्य र धरि-सम्प्रदाय की नीव पडी।

सम्पूर्ण काव्य गार रम का विज्ञान सम्प्रदाय व पूणत प्रभावित किया। रीति काव्य का जिन सम्प्रदाय व प्रभावित किया वे धम रम धनकार रीति यत्रोक्ति और धरि सम्प्रदाय है जिनका परिचय सवविन्ति है।

१ रमणाया च मातातरु-दुष्टजनकानगोचरता।—र ग प १ (बी म)

२ काव्य-गार शत्याय का रम र्ता काव्य सुमार।—श २०

३ धनकार भूषण सुरम जोष उत तन माय।

तन भूषण हृ विन त्रिय विन जातन तन राय ॥—शरमापन।

४ व्यस्य प्राण क्षय क्षय पव गत क्षय परिचान।

शाय घोर मन धनकृति दुपनाति उर धान ॥ २० वी० नि ६१६

५ व्यस्य जीवन कति कति को हृदय गु धनि पहिचानि।

गत क्षय कति रम गुनि भय व भूषण जानि ॥—काव्य विज्ञान १११६

६ विनिष्ठी शत्यायो काव्यम्। तद् विनिष्ठीय धमम धन व्यापारमयन व्यस्यमधेति तय प ॥

धाति। धनकार गवस्व टीका (विज्ञान म सारण) प ४।

डा० नगद्वे ने हिंदी रीतिशास्त्र पर इनका प्रभाव निर्देश करते हुए लिखा है कि वास्तव में ध्वनि और रस सिद्धांतों का सम्बन्ध, जिसका आरम्भ अभिनव ने ही कर दिया था इस समय तक आते आते पूर्ण हो चुका था और अब आचार्य नाना में विशेष भेद नहीं करते थे। हिंदी रीति ग्रंथों की जो परम्परा प्राप्त हुई उमम ध्वनि का रस से बहुत कुछ अन्तर्भाव हो चुका था इसलिए हिंदी के आचार्यों ने ध्वनि का साधारण रूप से उल्लेख करते हुए रस का ही विवेचन किया है।<sup>१</sup>

रीति का वाच्य-पक्ष मुख्य रूप से रसात्मक है। अन्वय का याग उसके शाभा वद्वन के लिए ही हुआ है। शास्त्र स्थिति सम्पादन में भी रीतिकान्ति आचार्यों ने रस और अलंकार का ही व्यापक विवेचन किया है। इस प्रकार रीति शास्त्र और रीतिवाच्य दोनों पक्ष रस की महत्ता सर्वोपरि मानते हैं। रस और ध्वनि दोनों का पक्ष के आन्तरिकता का ही उदघाटन करते हैं। अलंकार रीति और वक्रवित उमक वाच्यपक्ष का विप्लवण करते हैं। रीतिवाच्य की आत्मा रस है जिसका मन, बुद्धि और चित्त पर व्यापक प्रभाव ध्वनि के कारण पड़ता है उमका वाच्य रूप अन्वय रीति में मुमुग्धित और वक्रवित से नगिमापूर्ण है।

### रीति शब्द व्युत्पत्ति और प्रयोग

रीति शब्द, जसा कि पहले निर्देश किया गया है 'रीडगती धातु से बना जिसका अर्थ सामा अन् प्रणाली पद्धति गति माग या पथ होता है। मस्त्रत में समय पहल इन शब्द का प्रयोग श्वा गता नी में वामन ने सम्प्रदाय विधिपथ लिए किया। डा० नगद्वे ने लिखा है जसा कि शास्त्रीय पृष्ठभूमि से स्पष्ट है रीति सम्प्रदाय रचना अथवा वाह्याकार को ही वाच्य का सर्वस्व मानकर चला है। सम्भव है आरम्भ में हिंदी में रीति शब्द का मूल सन्त रीति सम्प्रदाय से ही लिया गया हो परन्तु वास्तव में यहाँ इनका प्रयोग अथवा सामा अन् व्यापक अर्थ में ही हुआ है।<sup>२</sup> हिंदी में इसका प्रयोग विशिष्ट लुब्ध रचना के लिए किया गया। एसी रचना चित्तम का शास्त्रीय विवेचन के साथ ऐतिह्य तथा शृंगारिक उदाहरणों की परम्परा मिलनी है। इस प्रकार काय शास्त्रीय विधान के अर्थ में रीति शब्द का प्रयोग हिंदी में अन्वय विधिगता है। एसी बात नहीं कि उस समय में रीति का प्रयोग सर्वप्रथम आधुनिक काल में आनाचक आचार्य शुक्ल ने ही किया है। इसकी प्राचीन परम्परा स्वयं रीतिवाल के कविता में मिलती है। उहाँ वामन की विधिपथ पद रचना के अर्थ में भी रीति का प्रयोग किया और कायशास्त्रीय ग्रंथों के लिए भी। इस और अधि र स्पष्ट करता है कि रीतिशास्त्र और उमके पूर्ववर्ती कवि आचार्यों ने द्वारा विभिन्न अर्थों में प्रयुक्त रीति शब्द का देखा जा सकता है— चिनामणि रीति सु भाषा कविता की<sup>३</sup> कथा वरतत कवि इहि

१ डा० नगद्वे रीतिशास्त्र की भूमिका पृ० ११४-११५

२ पृ० ५०१२८

३ क क त ११६

रीति<sup>१</sup> वरतन पथ अगाध,<sup>२</sup> मतिराम रस रीति<sup>३</sup> देव, कवि रीति<sup>४</sup> भिलारीनास काव्य की रीति,<sup>५</sup> कविताई को पथ,<sup>६</sup> दूनह 'मलकार की रीति',<sup>७</sup> पदमावर रस ग्रथन की रीति,<sup>८</sup> आदि ।

इन उद्धरणों से यह स्पष्ट है कि रीति या पथ का प्रयोग काव्यशास्त्र की विभिन्न शाखाओं के लिए हुआ है । यहाँ यह ध्यान देने की बात है कि रीति या पथ शब्द कभी अर्थ नहीं प्रयुक्त हुए । उनके साथ काव्य, अलंकार छंद रस आदि का प्रयोग यह सिद्ध करता है कि उस समय रीति का अर्थ था शास्त्रीय विधान या शास्त्रीय परम्परा । डा० नगेन्द्र ने लिखा है कि रीतिकाल के उत्तरार्द्ध में 'रीति' शब्द प्रकार प्रणाली के अर्थ में काफी प्रचलित हो गया था । सरदार आदि कवियों के समय में यह शब्द इस रूप में सर्वसाधारण में स्वीकृत था ।<sup>९</sup>

प० विश्वनाथप्रसाद मिश्र ने रीतिकाल के नामकरण प्रसंग में लिखा है कि मिश्रबधु विनोद के अनुसार उत्तर मध्यकाल 'अलंकृत काल' है और हिंदी साहित्य का इतिहास के अनुसार रीतिकाल । मिश्रबधु ने अलंकृत शब्द का यापक अर्थ ग्रहण किया है । अलंकार शास्त्र कहने से संस्कृत में जिस रस अलंकार रीति पिंगल आदि समस्त काव्यांगों का बोध होता है उसी प्रकार हिंदी साहित्य का इतिहास में 'रीति' शब्द का प्रयोग रस अलंकार पिंगल आदि काव्यांगों के लिए किया गया है ।<sup>१०</sup> इस प्रकार प० रामचंद्र गुप्त ने रीति का प्रयोग केवल शास्त्रीय विधान तक ही सीमित न करके एक दृष्टिकोण विशेष के अर्थ में किया है । अर्थात् रीतिकाल से तात्पर्य केवल रीतिकाल के कवियों की उन रचनाओं से ही नहीं है जिनका रचना विधान शास्त्रीय विवेचन पर आधारित हो अपितु उन रचनाओं से भी है जो रीतिबद्ध दृष्टिकोण से रचित हैं ।<sup>११</sup>

## नामकरण

हिंदी साहित्य का काल विभाजन करते हुए प्राचाय रामचंद्र गुप्त ने हिंदी साहित्य का आदिकाल (बीरगाथाकाल स० १०५०-१२७५ वि०) पूर्व मध्यकाल (भक्तिकाल

१ र मि २।२४

२ व मि ३।१

३ र रा २७

४ अलं रसायन

५ का नि १।१२

६ शृ नि ५

७ क कु म १

८ ज वि ५।५

९ रानिवाच्य का भूमिका प १

१० विनारा विश्वनाथप्रसाद मिश्र प २

११ विनय दण्डि, डा० नगेन्द्र रानिवाच्य की भूमिका प १३

१३७५-१७०० वि०) उत्तर मध्यकाल (रीतिकाल १७००-१६०० वि०) एवं आधुनिक काल (गद्यकाल, १६००-१६८८ वि०) में विभाजित किया है।<sup>१</sup> विवेच्य काल का उद्धान उत्तरमध्यकाल या रीतिकाल नाम दिया है किन्तु उनसे पूर्ववर्ती इतिहासकार मिथवधुआ ने इसे अन्तकृत काल माना है।<sup>२</sup> जसा कि पहल लिपिनाया गया है रीतिकाल में रीति शब्द का प्रयोग चल पडा था। यद्यपि मिथवधुआ ने उत्तर मध्यकाल का अन्तकृत काल कहा किन्तु इस काल के शास्त्रीय पद्धति पर विनिर्मित प्रथा व लिंग रीति प्रथ ही नाम दिया। सम्भवत आचार्य रामचन्द्र शुक्ल का इस काल के नामकरण में उक्त मिथवधु विनाद और रीतिकालीन कविनायक रीति नाम के प्रयाग से प्रेरणा मिली है। एसा ही सम्भावना डा० हजारीप्रसाद द्विवेदी ने भी व्यक्त की है।<sup>३</sup>

प० विश्वनाथप्रसाद मिश्र ने उत्तर मध्यकाल का नाम रीतिकाल की अपथा शृंगारकाल रखना अधिक उपयुक्त समझा। उन्होंने यनातया कि किमी साहित्यकाल के नामकरण की उपयुक्तता के दो तत्त्व उपलब्ध पाते हैं। एसा ता सवसामाय प्रवृत्ति का बाधक है। दूसर अतिविभाग का माय मनवर्द्ध रख।<sup>४</sup> एसा दृष्टि से विचार करत हुए उन्होंने लिखा है कि रीतिकाल के समस्त प्रथा की छान जान करन पर शृंगारपरक प्रथ ही अधिक मिलेंगे। एसा में शृंगारका वर्णन जितना विस्तार से किया गया उतन विस्तार से अय एसा का नहीं। नायक नायिका भेद के प्रथता शृंगार के आनवन पर को सामने रखत ही है नखशिख पञ्चानु अलंकार शास्त्रिन आर पिगन के भी प्रथा में सवत्र अधिकतर उदाहरण शृंगार के ही है। विहारी ने यद्यपि अपनी सतमया रीति प्रथ के रूप में नहीं प्रस्तुत की पर उनकी सारा रचना टाकाकारा न शृंगार के आनवन उद्दीपन अनुभाव आदि के भेदोपभोग से खतिया कर रख दी है। प० विश्वनाथप्रसाद मिश्र आगे लिखत है कि यदि टाकाकारा या सग्रहवर्त्ताभा के अनुसार चरता आनम टाकुर घनानन्द आदि की भा रचनाए नायक नायिका भेद के अतगत ही आचकर बठाई जा सकती है। कहन का तात्पर्य यह कि इन कविनायक का माध्य शृंगार या रीति में एकमी कमी साधन का काम अवश्य तत रे। यदि शृंगारकाल नाम रखा जाना तो यह तक देने की भा आवश्यकता न पडता और व तथा उनका आतरिक पुनरुत्पन्न गत में फरे हुए और भी बहुत सके उसका सीमा में आनम आप आ जात।<sup>५</sup> आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने भी इस काल का प्रवृत्ति का अत प्रेरणा एसा की दृष्टि से शृंगारकाल

१ हिन्दी साहित्य का इतिहास रामचन्द्र शुक्ल पृ १  
 २ मिथवधु विनोद भाग १  
 ३ हिन्दी साहित्य का इतिहास रामचन्द्र शुक्ल का उदाहरण जितना उग काल में रीति कवित्त रीति या मुक्ति रीति कहन लग के समवन इ एसा से प्रेरणा पाकर अन्तकृत न इन रीति की रचनाओं को रीति-काल कहा।  
 —हिन्दी साहित्य का इतिहास रामचन्द्र शुक्ल पृ १६५२ प० २६९  
 ४ विहारा विश्वनाथप्रसाद मिश्र पृ ४  
 ५ विद्यापति का वही पृ ६८

बहने में कोई आपत्ति नहीं मानी है।<sup>१</sup> इस प्रकार अत प्रेरणा या सत्रमाय प्रवृत्ति की दृष्टि से इसे शृंगारकाल यन्त्रि कहा जाय तो अतर्विभाग की भी सुविधा स्वतः प्राप्त हो जायगी। प० विश्वनाथप्रसाद मिश्र ने लिखा है 'शृंगारिक रचना रीतिवद्ध थी। रीतिवद्ध वृत्ति उही का नहीं थी जो लक्षण लिप्यार लक्ष्य बनाकर उसमें उसका विनि योज करत थे प्रत्युत उनमें वृत्ति भी रीतिवद्ध ही थी जो लक्षण ग्रथन रचकर रीति का सम्भार तब कर कथल लक्ष्य प्रस्तुत करत थे जैसे गिहारी, रसनिर्माय आदि।'<sup>२</sup> दूसरे प्रकार के कवि हैं जिन्होंने रीतिवद्ध या शास्त्रीय परिपटी से पक्के प्रेम के मानसिक पक्ष के उद्घाटन में दक्षता और रमणीयता प्राप्ति की।

गुलजी का नामकरण यद्यपि रीतिवाल के सम्पूर्ण साहित्य को अपने में समाहित नग करता और इसीलिए घनान्त जमे रीतिभूत कवि फुटकर खाते में जा पड़ परन्तु द्विती में प्रचलित आर सवमाय नामकरण उहाँ का हुआ।

### रीति काव्य का स्वरूप

रीति काव्य का तात्पर्य उस काव्य में है जिसका निमाण रीति निरूपण या शास्त्र स्थिति सम्पादन में उपाहरण-स्वरूप हुआ। उसके अंतगत उन आचार्यों की रचानों आती हैं जो राम अनवार पिंगा आदि के लक्षणों के उपाहरण प्रस्तुत करत हुए काव्य प्रणयन करत थे। इसमें साथ ही उन कवियों का भी रचनाएँ ली जाती हैं जो लक्षण-लक्ष्य की परम्परा में आरम्भ त हाकर कवन लक्ष्य मात्र है। इन कवियों में यद्यपि रीति ग्रथा की रचना नहीं कि परन्तु यदि इनकी सततड नासद या हजारा के दाहा को कोई चा ता शृंगार के विविध पाता के अनुसार वर्गीकृत कर सकता है। बहुत-कुछ संभव है इस कारण आचार्य रामचन्द्र गुकल ने इस परम्परा के प्रमुख कवि विहारी को रीतिवाल के प्रमुख कवियों में रखत हुए लिखा है 'विहारी ने यद्यपि लक्षण ग्रथ के रूप में अपनी सतमई नग लिखा है पर न गीत नायिकाओं पड़कतु न अंतगत उनके सज शृंगारी लोह आ जात है।'<sup>३</sup> इस प्रकार रीतिकाल के आभाग में लक्षणसहित और लक्षणरहित दोनों प्रकार की शृंगारी कविता आ जाता है।

इनमें से प्रथम काल के काव्य को प० विश्वनाथप्रसाद मिश्र ने रीतिवद्ध और द्वितीय काल के काव्य को रीतिवद्ध कहा है।<sup>४</sup> उनके स्वरूप निमाण में परम्परा और परिवेग का महत्त्वपूर्ण स्थान है। कोई भी काव्य अपनी पूर्ववर्ती परम्परा का विकास हाता है। परम्परा के विकास में युग धर्म का योगदान अनुष्ण हाता है। इस युग धर्म को कई

१ वास्तव में शृंगार और वार हटा आरमा का कविता इस बात में है। प्रयान्ता शृंगार की हा रण। इसमें इस बात का लक्ष्य के विचार में कोई शृंगारकाल का भी कथ्यता है।

—श्रीगणेशाय नमः ५ २२३

२ विचार प ११

३ शिवाजी का रीतिग्रथ रामचन्द्र गुकल प २०

४ विचार विश्वनाथप्रसाद मिश्र

दृष्टिकोणा से देखना परचना होता है। आधुनिक समीक्षक इस युग वाद्य या परिवर्ण कहते हैं। परम्परा और परिवर्ण का प्रभाव नायक विशेष की प्रवृत्तियों का निर्माण करता है।

रीतिकಾವ्य का स्वरूप को स्पष्ट करने के लिए परम्परा परिवेश और प्रवृत्तियाँ का अध्ययन आवश्यक है। सम्प्रति रीतिकಾವ्य की प्रवृत्तियों का निरूपण करते हुए उसके निर्माण में परम्परा और परिवेश का महत्व द्रष्टव्य है।

### रीतिकಾವ्य की मुख्य प्रवृत्तियाँ

रीतिकಾವ्य का मुख्य प्रवृत्तियों का ही ध्यान रखकर हिन्दी साहित्य का इतिहास करा—मिश्रबन्धु, पं० रामचन्द्र शुक्ल और पं० विद्यानाथप्रसाद मिश्र ने हिन्दी साहित्य का उत्तर मध्यकाल को विभिन्न नामों से सम्बोधित किया। अतहत रीति और शृंगार काल नाम से रीतिकಾವ्य का ही प्रमुख प्रवृत्तियों का ध्यान होता है। इन्हें क्रमशः शृंगारिकता का प्रवृत्ति रीति निरूपण की प्रवृत्ति और अलंकरण की प्रवृत्ति कहा जा सकता है।

### शृंगारिकता परम्परा

रीतिकಾವ्य में शृंगार की धारा उड़े वगैरे के साथ प्रवाहित होती हुई प्रतीत होती है। यदि पूरे भारतीय वाङ्मय की सुनीव परम्परा पर इतिहास किया जाए तो स्पष्ट हो जाएगा कि रीतिकಾವ्य की यह शृंगारिकता किसी अतिस्मित सयाम के कारण नहीं आई अपितु यह प्राचीन काव्य-भावना के अतिरिक्त विद्यास की स्वाभाविक परिणति है। आगे के अध्यायों में हम देखेंगे कि किस प्रकार केने के पुष्करवा उवती और यम यमी के सवाद सूना से ऐहिक शृंगार के द्वारा निकलकर सस्त्रुत के महाभाष्या नाटिका और मुवतके का या में सर्वाद्धत हुई। कालांतर में कालिकासातर कवियों ने काव्य रूपा में दानवर इन स्वाभाविक और स्वच्छ के अमियकिया का परम्पराद्ध कर लिया। रीति काव्य में वस्तुपथ के स्वरूप का गहिरतापरक इस शृंगार धारा ने काफी प्रभावित किया जिसके परिणामस्वरूप रीतिकಾವ्य ही शृंगारिकता का सुष्ठु स्वरूप मिला।

भक्ति नायक धारा का प्राचीनतम उवना में योने भी बधिक देवताओं का स्तुतियाँ का माना जाता है। कालांतर में इन स्ताना में धीरे धीरे रम रूप के प्रधानता होती गई और पद्मदेवा सातवीं शताब्दी तक ध्यान ध्यान इति शृंगार का स्वर प्रधान हो गया। बलि देवता के स्थान पर पौराणिक देवा निष्ण या नृण गिर और गरित की स्थापना हुई। साथ ही उनके मानवी रूप और नाडाओं का विस्तृत निरूपण किया गया। इन मानवी औडाओं में इन शृंगार की स्वर रमवता उमरने लगी।

कृष्ण और राधा का भक्ति न परवती साहित्य पर नया माड लिया। कृष्ण की कशार लीलाओं में शृंगार के जित तत्त्वा का विकास पुराणा में हुआ मुद्यत श्रीमद भगवत में उसने हिन्दी के पूर्वमध्यकालीन काव्य का विशेष रूप से प्रभावित किया।

रीतिवाच्य में नायक-नायिका व रूप में राधा टूटने की स्वीकृति ने कविता की शृंगार वणन व लिए विंगण व्यापक पृष्ठभूमि दी ।

कृष्ण भक्ति धारा में शृंगार रस का विविध सन्ध में उन्नत रस व रूप में स्वीकार किया गया । गौरीय वृष्णवा की रमायामान घण्टिय शृंगार का निरूपण बड़े व्यापक रूप से किया । इसके अंतर्गत भक्ति व ध्यानन और उद्दीपन का विस्तार नायिकाभेद की प्रणाली पर किया गया । राधाकृष्ण की विविध विहार-नीताएँ — दानतीला, मानतीला छत्रमनीला मोता श्रीहा जन प्राण उपवन बिहार हारी लीला आदि प्रभूत परिमाण में वर्णित हुई ।

इसके प्रतिरिक्त राधा कृष्ण की रूपगामा नगणित अल्प्याम पडकनु आदि व वणन की जो धारा उमड़ी कि ध्यानन का अर्थाधिक्य किनुक्त-गा हा गया ।

रीतिवाच्य में मिलन बाल उपयुक्त वणन पूजन कृष्ण-नाता विहार स ही अनुप्ररित नहीं थे । सस्कृत प्राकृत अपभ्रंश और रीति-युग हिन्दी काव्य में भी एक ऐहिकतापरक वणन भी प्रभूत परिमाण में मिलन है । इनकी चचा भाग व अध्याय में यथास्थान की जाएगी ।

रीतिवाच्य मुक्तक प्रधान है । रीति व मुक्तक की प्राचीन परम्परा अहिकता परक उन गाथागा श्लोक और दूहा से जोड़ी जा सक्ता है जिनका मन्वन सन्ध्यापरक नाम बाल सहस्री सप्तशती गतक पचागिता आदि प्रथम मिलना है ।

इन मुक्तक का अधिकांश शृंगारपरक है । मानवीय प्रणव-व्यापार व नाना रूपा का आभिन उदघाटन उनकी गारीरि व और मानसिक स्थितिया व यज्ञक चित्र इन मुक्तक में प्रभूत परिमाण में मिलते हैं ।

रीतिवाच्य के शृंगार प्रधान मुक्तक में इन पूर्ववर्ती सस्कृत प्राकृत अपभ्रंश आदि के मुक्तक की छाया देखी जा सकती है ।<sup>१</sup>

रीतिवाच्य को प्रभावित प्ररित करनेवाली साहित्यिक परम्परा का सकेत करन व उपराल गास्त्रीय परम्परा पर भी दृष्टिपात करना आवश्यक है । रीतिवाच्य की शृंगारिक प्रवृत्ति को काव्य साहित्य की परम्परा न जितनी प्ररणा दी उससे किसी भी स्थिति में काव्यशास्त्र ने कम प्रेरणा नहा दी । मानव मन में काम की उत्पत्ति और उसके प्राकट्य का वणन विवेचन शृंगार व अंतर्गत किया जाता है । अनन बाल से भारतीय मनीषा मानव की इस मूल वृत्ति काम का विरतपण करती आई है । इस क्षण में कामशास्त्र नाट्यशास्त्र और काव्यशास्त्र का महत्त्व अनुष्ण है । सम्यता और सस्कृति के विकास के साथ ही काम वृत्ति को घम नियन्त्रित करके मात्र ऐंद्रिक लिप्सा से भिन्न उदात्त रूप दिया गया । कामशास्त्र इस अम समर्पित काम का सम्यक विवचन प्रस्तुत करता है । रीतिकाल के पूर्व कालिदासोत्तर सस्कृत साहित्य में शृंगारिक अभि व्यक्तिया कामशास्त्र की परम्परा को आत्मसात करके आगे बढ़ी । रीतिवाच्य की

शृंगार प्रवृत्ति वामनाश्रय से वहाँ प्रभावित है, इसका विवचन आगे किया जाएगा।

नाट्यशास्त्र भारतीय काव्यशास्त्र का समृद्ध भांडार है। भरत मुनि ने वाचिक और आंगिक अभिनय में शृंगार की अभिव्यक्ति का जो माग निर्धारित किया उसका प्रभाव प्रत्यक्ष रूप से नहीं तो अप्रत्यक्ष रूप से रीतिकान्य की शृंगारिकता पर अवश्य पड़ा।

वाच्यशास्त्र में शृंगार का रमणक रूप में प्रतिष्ठा मिली। शृंगार का क्षेत्र इतना व्यापक है कि इसके अंतर्गत अधिक् भ अत्रिक् संचारीभाव विविध विभाव अनुभाव आदि का समावेश हो जाता है। शृंगार निरूपण के अतिरिक्त अलंकार विंगल गत्यगति और गुण दाप के विवचन में भी अधिक्तर उदाहरण शृंगार के ही दिए गए हैं। जितना सबजनसर्वेद्य शृंगार रम रहा है उतना शायद ही कोई अन्य रस हो सका हो।

शृंगारिकता की इस प्रवृत्ति को, जो रीतिकाल के पूर्व नाना रूपों में प्राप्त होती है रीतिकान्य ने रिकय के रूप में प्राप्त किया।

### शृंगारिकता परिवेश

रीतिकान्य का प्रणयन जिस परिस्थिति और परिवेश में हो रहा था उसका परिचय अगले अध्याय में दिया जाएगा। सामान्यतः यह कहा जा सकता है कि रीतिकाल सामंतवादी युग का ह्यासोमुख काल था। रीतिकान्य ऐसे ही विस्तारितापूर्ण दरवारी परिवेश में रचा गया अतः उसमें ह्यासोमुख सामंतो जीवन मूल्यों का पर्याप्त प्रभाव लक्षित होता है।

उस समय जीवन के प्रति गहरी और व्यापक अनुभूतियाँ का नितान्त अभाव था। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने भक्ति काल के रसापासक कृष्ण भक्त कवियों में ही इस जीवन दृष्टि के प्रसार का संकेत करते हुए लिखा है 'भगवान के अमस्वरूप को इस प्रकार कितारे रख देन में उसकी आर आर्कषित हाने और आर्कषित करन की प्रवृत्ति का विकास कृष्ण भक्तता में न हो पाया। फल यह हुआ कि कृष्ण भक्त कवि अधिकतर फुल्ल शृंगारी पदा की ही रचना में लगे। उनकी रचनाओं में न तो जीवन के अनक गभीर पक्षों के मार्मिक रूप स्फुरित हुए न अनक रचना आई।'<sup>१</sup>

रीतिकालीन कवियों में भी कृष्ण के इसी मधुर रूप का चित्रण किया अतः उनमें जीवन की व्यापक और पूर्ण अभिव्यक्ति नहीं हो पाई। भक्तिकाल के रामभक्तशाब्दा में जीवन के प्रति ऐसी सजुचित दृष्टि नहीं पाई जाती। सनातन जीवन के व्यापक उपलब्ध तत्त्वा का अच्छा विश्लेषण किया। डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी ने रीतिकाल में उस जीवन दृष्टि के अभाव में उत्पन्न होनवाली भोगप्रवृत्ति का निरूपण करते हुए लिखा है, इस काल तक आते आते हिन्दी कविता का वह तज क्षीण हो आया था जो पद्महवा शताब्दी के भक्त कवियों में दिखाई पड़ा था। जीवन के सामन कोई और

१ हिन्दी साहित्य का इतिहास रामचंद्र शुक्ल पृ १४६



नया आदर्श नहीं रह गया था। कविता प्रायः पिटिटाएँ रास्त स चल रही थी। सब ओर स अपन को समटकर बंध माग पर चलते रहने की प्रवृत्ति न ब्रजभाषा कविता का माधुप्य और सौकुमार्य तो लिया परंतु तेज और तात्पर्य दीप्ति उसमें नहीं रह गई।<sup>१</sup> कहने का तात्पर्य यह है कि भक्तिकाल में ही उस आदर्श इष्टिकोण का अभाव हो चला था जो रीतिकाल तक आत आत पाय निरूपण हो गया।

रीतिकाल की समुचित जीवन दृष्टि भी किसी न किसी रूप में उन भक्त कवियों के समान ही है जिनको अपनी जाति के पौरुष से हताश होकर भगवान की शक्ति और करुणा का सहारा ढूँढना पड़ा था अर्थात् निराप और नि सहाय मन की विश्रान्ति के लिए भक्ति का अवलंबन ग्रहण किया गया। रीतिकाल में सामाजिक और आर्थिक स्थितियों के जटिल होने पर कवियों को अपाधिक की अपेक्षा पाधिक आत्मन की आवश्यकता पड़ी निराल उच्च दरबारों की शरण लनी पड़ी। दरबारों में भी कलासिक वृत्ति की प्रधानता और अल्पमय जीवन ने उच्च वृत्ति नली नि व समग्र जीवन के आनन्दालास का गान करते। किलासी सामंतव्य अपनी हृत्पौरुष मनोभूमि को नारी की उद्दीपक के आभा से सिंचित करना चाहता था। उनके अनुभव शृंगार रस ही रह गया था जिसमें व आकण्ठ मग्न होकर अपनी पतितावस्था में भी मनोरंजन कर सकते थे। इस वातावरण में पलने और आश्रयगता सी कला प्राप्त करने के कारण रीतिकालीन कवियों में शृंगार ही उच्च स्तर धारा प्रवाहित थी।

रीतिकाल की उच्च शृंगार धारा नतिक काम वृत्ति की महनीयता से समाहित न होकर उसके विनाशमिमुक्त अनतिक परिवृत्ति में ही सीमित है। इसका सचेत हम रीतिकालीन नारी भावना में मितता है। नारी की जिस गरिमा की प्रतिष्ठा भारतीय सस्कृति में है उसका यहाँ अल्पत गौण स्थान है। विदेशी प्रभाव के कारण परकीय की महत्ता विदेश रूप में स्वीकार की गई। फलतः प्रेम की एकाग्र निष्ठा का स्थान पर विनास या रसिकता का उपयोग प्रथा और अनको-मुग्धी वृत्ति का स्थान होत हैं। इसीलिए रीतिकालीन कवियों में प्रेम की तीव्रता का स्थान पर रसिकता की सरलता ही दृष्टिगत होता है।

## रीति निरूपण की वृत्ति

रीतिकाल का बहुनाम रीति निरूपण का फलस्वरूप निर्मित हुआ। रीतिकाल का गौण कवियों ने लक्षण यथा का विभाजन किया। परिमाण में यह प्रथम कविता सत्या में है कि उनका विस्तृत विवेचन स्वतंत्र ग्रंथ की अपेक्षा उपयुक्त है।

रीतिकाल का रीति कविता का नाम नगण। १०० वगैरे विमलता किया है। इनमें मुख्य रूप से तीन का उल्लेख है

१ हिन्दू शास्त्रिक डॉ. हजाराप्रसाद द्विवेदी (१९६२) पृ० ३२६, ६०

२ रीतिकाल का भूमिका डॉ. नगण पृ० १२६

सर्वांगनिरूपक आचार्य, जिहान काव्यागा का साहाय्य विवचन गिया रस निरूपक आचार्य और अलकारनिरूपक आचार्य ।<sup>१</sup> प्रस्तुत प्रबंध में काव्यशास्त्रीय परम्परा के अंतर्गत इसका सन्धि निरूपण किया जाएगा ।<sup>२</sup>

### रीति निरूपण परंपरा

रीति निरूपण की परम्परा का प्रवर्तन किसने किया यह निश्चय रूप से नहीं कहा जा सकता। भारतीय काव्यशास्त्र का सर्वप्रथम निरूपण नाट्यशास्त्र में मिलता है। किन्तु भरतमुनि ने अपने शास्त्र की प्राचीनता और महत्ता सिद्ध करते हुए जिस पौराणिक शैली का समावेश किया है वह बिना किसी पुष्ट प्रमाण के सत्सा विद्वान् करने योग्य नहीं है। उदात्त इस शास्त्र का आदिप्रवर्तक ब्रह्मा का सिद्ध करते हुए नाट्यशास्त्र को पंचम वेद या नाट्यवेद की संज्ञा प्रदान की है। साथ ही उन ऋषियों की सम्मति नामावली दी गई है जिन्हें प्रजापति ब्रह्मा ने नाट्यशास्त्र के विभिन्न अंगों का संवर्द्धन का कार्य शोभा।

भारतीय काव्यशास्त्र की सुसंवद्ध शृंखला भरत के नाट्यशास्त्र से मिलने लगती है जिसका अन्वेषण प्रवाह अठारहवीं शताब्दी तक मिलता है।

### रीति निरूपण परिवेश

हिंदी का रीतिकाल बौद्धिक ह्रास का काल था। रीति निरूपण या शास्त्र स्थिति सम्पादन में भी किसी हिंदी के आचार्य की मौलिक प्रतिभा या सूक्ष्म सूक्ष्म का परिचय नहीं मिलता। किसी भी प्रकार वह शासकवर्ग का ही अथवा गणितवर्ग का वह शक्ति नहीं कि उन समय की सांस्कृतिक या सामाजिक स्थिति में कुछ परिवर्तन ला सकें। व्यक्तित्व का ऐसा ह्रास हुआ था कि कोई भी कवि या आचार्य अपनी रचनाओं में अपने व्यक्तित्व की अमिट छाप नहीं छोड़ सका। इसी मद्देन में एक बात और ध्यान देने की है कि रीति निरूपक आचार्यों ने कवि-जगत् को भी ग्रहण करने लिया था। वे स्वयं ही लक्षण और उसने अनुरूप लक्ष्य की भी रचना करने लगे थे। ऐसा उन्हें युगानुरोध से ही करना पड़ा था। उस समय के सामंतवर्ग को बौद्धिक अनुरजन के लिए कलाओं का पान कराया जाता था। का परला की पूरी कलाशास्त्रीय ज्ञान के इच्छुक रसिक सामन्तों का ऐतिहासिक कवियों के काव्यशास्त्र का परिचय कराया। पदा सामंतवर्ग का शास्त्र की पुनर्गुण को न तो समझना चाहता था और न आचार्यवर्ग उसे समझाने का प्रयत्न ही था। फलस्वरूप रीति निरूपण ही जिस शक्ति का विकास संस्कृत में हुआ उसका निवाह हिंदी में हो पाया। आचार्यत्व के लिए जिस सूक्ष्म विवचन और पर्यायवाची शक्ति की अपेक्षा हाता है उसका विकास नहीं हुआ।

१ रीतिकार्य का सूचिका, पृ. १५४-१५५

२ देखिए टिप्पणी अध्याय।

काव्यागा का विस्तृत विवेचन, तक द्वारा सडन मडन, नए-नए सिद्धांता का प्रतिपादन आदि कुछ भी न हुआ।<sup>१</sup> ऐसी स्थिति में काव्यागा का जसा सर्वांगीण विवेचन होना चाहिए था न हा सका। रीति-कवि आचायत्व का गुण गौरव न पा सका क्योंकि उन्होंने अपने उत्तरदायित्व का पूरा निर्वाह नहीं किया। प० रामचन्द्र गुप्त न लिखा है, उनमें आचायत्व के गुण नहीं थे। उनका अपनापन लक्षण साहित्यशास्त्र का सम्यक बोध कराने में असमर्थ हैं। बहुत स्थला पर तो उनका द्वारा अलंकार आदि के स्वरूप का भी ठीक ठीक बोध नहीं हो सका।<sup>२</sup> सामंती परिवेश में श्रेय-काव्य का तो कुछ आदर भी हुआ दरश-वाक्य नितान्त उपभूत रहा इसीलिए इन आचार्यों ने नाट्यशास्त्रीय विवेचन को अपने ग्रंथों में स्थान नहीं दिया। काव्यशास्त्र में भी शृंगार का जितना विस्तृत निरूपण हुआ उतना श्रेय रमा का नहीं। अलंकार निरूपण में जितनी रचि लिखलाई गई उतनी न ता विगन में न गुण दोष या शब्द शक्ति विवेचन में ही।

इससे स्पष्ट हो जाता है कि उम समय सबसे अधिक रसा उममें भी शृंगार तथा नायक-नायिकाभेद का निरूपण हुआ। यह सामंती की मानसिक विलास तन्त्रि के लिए आवश्यक था। दूसरा काव्याग अलंकार है जिससे रीतिवादी में महत्ता मिला। अविवाश आचार्यों ने अलंकारों का निरूपण किया। इसके द्वारा सामंती का बौद्धिक अनुरजन होता था।

हिन्दी का आचायक दरबारी था। अतः दरवार के ही अनुकूल उसे काव्य रचना और शास्त्र निरूपण करना पड़ता था। जो विषय दरवार में सम्मानित नहीं थे उनकी चर्चा इन कवि आचार्यों ने नहीं की।

### अलंकरण की प्रवृत्ति परम्परा

भारतीय वाङ्मय में अलंकरण की वृत्ति का उभेय वृत्ति साहित्य में ही प्राप्त होने लगता है। भरत के नाट्यशास्त्र में अलंकारों की संख्या बड़ी सीमित है। उन्होंने कुल चार—रूपक, दीपक, उपमा और यमक का ही उल्लेख किया है।<sup>३</sup> सामंतों के वाचालकारों में इनकी संख्या बढ़ी की। फिर दण्डी धनजय मम्मट विश्वनाथ और पण्डितराज जगन्नाथ ने उनका विस्तृत निरूपण किया।

रीतिवादी कवियों ने इस क्षेत्र में जयदेव के चंद्रिका और अण्णय शीतल के कुवलयानन्द में विषय प्रेरणा प्राप्त की। यह तो हुई शास्त्रीय निरूपण की पद्धति। काव्यशास्त्र में अलंकारवाद की मुख्य प्रतिष्ठा न रीतिकवियों का भा प्रभावित किया। वाणी के अलंकार के सत्र में इन कवियों ने अलंकारों का मुक्त प्रयोग किया।

१ प० रामचन्द्र गुप्त हिन्दी साहित्य का इतिहास पृ २१६

२ वही पृ० २१०

उपमा दीपक यमक रूपक तथा।

काव्यशास्त्र में अलंकारों का परिचीनता ॥ —नाट्यशास्त्र १६६

रीतिकान्य की अलंकरण वृत्ति को उत्तरवर्ती सस्कृत काव्या ने भी प्रभावित किया। माघ और श्रीहृष के महाकाव्य की परम्परा में विनिर्मित रत्नाकर के हरविजय कविराज व राघवपाण्डवीय हृमचन्द्र के द्वयाश्रय महाकाव्य एवं कृष्णानन्द के सहृदयानन्द मन्तात कृत्रिम और अलंकार प्रधान शली का आश्रय लिया गया है। प्रत्यक्ष अप्रत्यक्ष रूप से इन महाकाव्या ने अलंकरण वृत्ति का विशेष प्रश्रय दिया। मुक्तकाव्य भी अनेक सप्तशतिका गणक आदि का निर्माण हुआ जिसने सम्मिलित रूप से रीतिकालीन अलंकरण-वृत्ति को प्रोत्साहित किया।

### अलंकरण की प्रवृत्ति परिवेश

रीतिकान्य जिस परिवेश में निर्मित हो रहा था उसमें उक्ति चमत्कार और दूर का कौड़ी लान की विशेष महत्ता थी। इसके परिणामस्वरूप काव्य में गभीरता का गभाव होना लगा। आत्मा में अधिक महत्त्व शरीर का दिया जाने लगा। डा० हजारीप्रसाद द्विवेदी ने इस ओर सचेत किया है। वे लिखते हैं 'य (रीति ग्रन्थ) भी सब ओर से बाधा पाकर सिमटे हुए चित्त को झुलाने का बहाना मात्र है जिसमें उक्ति चमत्कार के साथ भी बहुत ध्यान नहीं किया गया है। इन ग्रन्थों के पाठकों के चित्त में न तो मनुष्य-जीवन के किसी बड़ लक्ष्य को प्राप्त करने की स्फूर्ति संचारित होती है और न काव्य वही व्यापक स्वरूप का परिचय मिलता है। यहाँ सब कुछ उक्ति चमत्कार में ही सीमाबद्ध हो गया है। यहाँ प्रत्येक वस्तुव्य किसी विशिष्ट वचन भंगिमा का आश्रय लेकर काव्य बन सकता है।'<sup>१</sup>

उपयुक्त मुख्य प्रवृत्तियों के साथ ही रीतिकालीन मुक्तक रचना का प्रवृत्ति का भी परिचय पाना आवश्यक है।

### मुक्तक रचना की प्रवृत्ति परंपरा

रीतिकान्य मुक्तक प्रधान है। मुक्तका की परंपरा प्राचीन काल से पाई जाती है। यदि विषयवस्तु की दृष्टि से विचार किया जाए तो इन मुक्तका में सर्वाधिक मुक्तक शृंगार प्रधान मिलेगा चाहें सस्कृत के ही या प्राकृत और अपभ्रंश के। शृंगारी मुक्तका में सयोग और वियोग की नाना चेट्याग्रा और अवस्थाग्रा का बड़ा सुन्दर निरूपण किया गया है। अनेक उद नायिकाभेद के सुन्दर उदाहरण हैं। प्रकृति की उद्दीपक स्थिति का मार्मिक उदघाटन तथा उससे परिचरित मानव मन की भाव-लहरिया के उत्थान पतन का सबदनापूर्ण अंकन इन मुक्तका में मिलता है।

शृंगाररमेणर मुक्तका की भी एक लम्बी परंपरा रीतिकविता को प्राप्त हुई जिसमें वीर प्रगल्भ, नीति और शक्ति का सुन्दर वर्णन मिलता है। रीति रीतिकान्य का इन मुक्तका की परंपरा ने भी पर्याप्त रूप से प्रभावित किया। रीतिसिद्ध काव्या में

१ डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी रीति-साहित्य पृ० ३०७-८

इसके अध्ये उदाहरण प्राप्त होते हैं। इन सभी मुक्तका में अलङ्कृत शब्दी के आश्रयण से उक्ति चमत्कार के साथ भावी नया का भी प्रयास दृष्टिगत होता है। रीतिवालीन मुक्तका में उदात्तक दूरादृष्ट कल्पनाया का सहसा प्रादुर्भाव नहीं हुआ। इसके लिए भी प्राकृत संस्कृत की सप्तशतियाँ, शतक और हम्चन्द्राणि के पुस्तक दाह उत्तरदायी है किन्तु इनकी अधिक्ता का कारण बहुत कुछ फारसी काव्य रूपाँ हैं जिनका प्रचलन तदयुगीन सामंती वातावरण में खूब पाया जाता है।<sup>१</sup>

### मुक्तक रचना की प्रवृत्ति परिवर्तन

रीतिवादी में मुक्तको की प्रधानता का बहुत-कुछ भय उम्र दरवारी परिवर्तन को है जिसमें शक्ति अनुराग का विनाश महत्व दिया गया और प्रथम बद्धमान रस-रंगा को उपक्षित किया गया। छोटे ही समय में अपनी पूरी रसवत्ता से श्रांता या पाठक की मन-शुद्धि का चमत्कार करती वात मुक्तका का सामंती वातावरण में बड़ा सम्मान था। कदा मंत्र प्रवृत्ति इस वातावरण के लिए बिलकुल अनुपयुक्त होत हैं। १० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र ने लिखा है कि दरगारी कविता में प्रभाव जमाने के लिए नाट्य तत्व का होना अनिवार्य होता है अतः रीति कविता में कविन सवया जैसे छन्द का ही अपनी काव्याभिव्यक्ति का माध्यम चुना। लोहा में यद्यपि नाट्य तत्व उतना नहीं जाना पर लक्षण को सौभे में बहने के लिए समे अति उपयोगी यही उक्त सिद्ध हुआ अतः वाक्यान्त निरूपण में यथा उपयोग दिया गया। हमारे जिन हिन्दी कविता की दो पवित्रावाते छोटे आकार के अर का प्राणद्विजा करनी जाती थी व दाहा सामन तात थ और उसमें पूरी नारीगरी दिग्याया करत थ।<sup>२</sup> उनका साहित्यिक परिवर्तन ऐसा था कि उसमें मुक्तक ही उपयुक्त सिद्ध हुए। इन मुक्तका का बला प्रधान और समीत प्रमुख होना अनिवार्य था। उ होने जो अनेक प्रकार की उदभावनाएँ की हैं उसके लिए व समय की गति से विवश थ।

रीतिवालीन मुक्तका के विधापक तत्त्वा में—शास्त्रस्थिति संपादन आनरण वृत्ति ऐहिकतापरक मुक्तका की मुक्त परपरा का आश्रयण और राधा वृष्ण की नायक नायिका के रूप में स्वीकृति अति प्रमुख हैं। जहाँ तक वीर प्रशस्तिया का प्रश्न है अधि वाश रचना प्रवृत्ति में दृष्ट है। जो प्रशस्तिपरक मुक्तक मिलते हैं उनमें आश्रयणता की वीरता नान रूप लावण्य और ऐश्वर्य का वर्णन विशेष रूप में मिलता है।

जिन रीतिकाय की प्रवृत्तिया का यज्ञा मक्षिप्त परिवर्तन दिया गया है उनका विस्तृत निरूपण आगे के अध्यायों में किया जाएगा। यहाँ प्रत्येक प्रवृत्ति के उद्भव और विनाश का समझने के लिए उनकी परपरा और परिवर्तन का समिप्त उल्लेख किया गया है।

१ दक्षिण प्रमुख प्रवृत्ति द्वितीय अध्याय में विवरित पृष्ठभूमि।  
 २ ५ विश्वनाथप्रसाद मिश्र विहार पृ ५३, ५६  
 ३ वही पृ ५६

## रीतिवाच्य के स्रोत अवेपण का प्रस्ताव

रीतिवाच्य का महत्त्व बड़े दृष्टियुक्त स हिन्दी साहित्य के इतिहास-लेखकों ने ध्यान दिया है। सबसे बड़ी बात तो यह है कि पूरे हिन्दी साहित्य के इतिहास में यही वाच्य काल अपनी कलात्मक साधना के लिए प्रसिद्ध है। प० विश्वनाथप्रसाद मिश्र इसकी स्वरूप विवेचना करते हुए लिखते हैं— 'यदि काल की जो सजना साहित्यिक गजलता से युक्त है वह भी विगुद्ध साहित्यिक नहीं कही जा सकती। जिसका साध्य और साधन दोनों साहित्यिक हैं एसी विगुद्ध सजना शृंगार-काल में हुई। उसकी साहित्यगत संपत्ति को अपक्षायित हीन भी कह लिया जा सकता कोई आपत्ति नहीं। मूर और तुलसी अथवा मूय और गीमा की कथा में चाहे शृंगारकाल का एक भी नमूना न पहुँच सके पर विगुद्ध साहित्य की संज्ञा उस काल के प्रत्येक प्रकारांगिक में है इस विमति रखनेवाले लोग चाहते जो दान करते हैं उनमें भारतीय साहित्य परंपरा की दृष्टि तो नहीं ही है।' इस सन्दर्भ में प० विश्वनाथप्रसाद मिश्र ने दो बातें भी स्पष्ट करके कियी हैं—रीतिवाच्य का साध्य और साधन दोनों वाच्य ही हैं और यह भारतीय साहित्य परंपरा का स्वामाधिकारिक विभाग है। अतः भी मिश्रजी ने गीति काल का हिन्दी का अनारोपित वाच्यकाल मानते हुए लिखा है कि 'उममें जितने अधिष्ठित कवि हुए उतने किसी युग में नहीं। शृंगार की एक में एक उत्कृष्ट उक्तियाँ उसमें प्रभूत परिमाण में हैं इनकी अधिक हैं कि संस्कृत साहित्य अथवा समृद्ध होने पर भी उसकी बराबरी नहीं कर सकता।' रीतिवाच्य की इस विशेषता की प्रशंसा आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने भी की है।<sup>१</sup>

## स्रोत का अर्थ

काद भी वाच्यधारा अपने विकास में उन पूर्व परम्पराओं की श्रेणी होती है जो उस विशिष्ट रूप आकार देती है। किसी भी वाच्यधारा के स्वरूप का समझने के लिए उन पूर्व-परम्पराओं का अध्ययन आवश्यक होता है। वे पूर्व परम्पराएँ भी अपने निर्माण में विभिन्न युगों की सामूहिक राजनतिक सामाजिक कलात्मक और साहित्यिक पृष्ठभूमियाँ से प्रभावित होती हुई विरचित होती हैं।

हिन्दी साहित्य के आरंभिक युग में जो साहित्यिक प्रवृत्तियाँ—वीर शृंगार, प्रसस्ति, भक्ति वगैरह आदि की मिलनी हैं उमके लिए पूर्ववर्तिनी पुरानी हिन्दी और अपभ्रंश की (एक संस्कृत की भी) साहित्यिक प्रवृत्तियाँ कम महत्वपूर्ण नहीं हैं। अपभ्रंश में जो शीघ्र और शृंगार की प्रवृत्ति है उमका बहुत कुछ उत्तरदायित्व उन लोक गीतियों पर है जिनसे उसका प्रेरणा प्राप्त की। उसका साथ ही प्राकृत साहित्य का अपरिमेय साहित्य भी कम

१ हिन्दी साहित्य का आरंभिक युग प० विश्वनाथप्रसाद मिश्र भाग २ अनुवचन पृ ६

२ अथावर प्रभावनी मया प० विश्वनाथप्रसाद मिश्र प्रकाशना पृ ५७

३ हिन्दी साहित्य का इतिहास प० रामचन्द्र शुक्ल पृ २१६

सहायता नहीं रहा। भा। या तो प्राणत मार्ग। यद्यप्य मजा शीघ्रता मधुप्रतिग रहा है किन्तु उमता जा मुग्धता मय रम उपाय्य हाता है उम पर उमर पूरावर्ती सौन्दर्य और र्थि व मग्धता मार्ग। य का समित प्रमार मता जा गता है।

रम प्रारं धारि तात र मता का र्द्धता व निम मग्धता प्रातृत्त धरभ ग और पुराती रिग व मार्गिय रा अक्षयत धार गत है। रीतिकार्य की विभिन्न प्रकृतियों को म्मा प्रारं धारि तात और भिन्नतात व मार्गिय म प्ररणा प्रातृत्त करत ही निमित्त हुइ है। रीतिता व र मता व निम पूरावर्ती मार्गियत और माग्धरि रग्धराधा का मग्धत विरतत धारि ता है।

### म्रात अचरण उपरति र और मभावनार्थ

अचारधि हि म मता नाथ प्ररणा म रीतिकार्य व गीत का मरत रिया गया है। मग्धत और प्रातृत्त धरभ ग का हि म पर प्रभाव भी धीत म्मागधानाधा न रियात का प्रयास रिया है। रीतिकार्य का विरतत विरतण तथा रीति ररिया के आचायतत का निरूपण म्माभित नाथ प्ररथ म रिया गया है। १० मनोहरतान गीत न अचर ना। प्ररणा म रिया है। रीतिकार्य व काय का वाक्यमारीय दृष्टि से अक्षयत पर उइ प्रीठ रियाता द्वारा रिया गया है। पर उमता कनागभ अचारधि उतती प्रीठि म विचारित गती हुषा। और वती पम उमता प्ररत है। कता की दृष्टि म उसाता समवयामत मूयारतन होता माहि। १० नक पूर व० विरतनाथप्रसात् ने विहारी की भूमिका म साय म शृगार ती प्ररति व अतगत विहारी के प्ररणा गीत व रूप म सम्भृत प्रातृत्त और मपभ ग र छता रा उदत रिया है। १० वचनसिंह ने रीति काव्य व कनागभ गीत वग्धुप। र अक्षयत व निम प्रातृत्त-मग्धत धरभ ग की काव्य परम्परा का निर्णय रिया है। १० तेम ही अचर गोध प्ररणा म रीतिकार्य व गीत की अचर निर्णय रिया गया है पर अमी तत विमी ने रम रिया म मद्दत्वपूण और ध्यापक प्रयास नती रिया है।

इधर आधुनिक मनात्रचानित दृष्टि से रीतिकार्य की काव्य सम्पत्ति का अक्ष लोकन परतवात आलोचन रमम अरतीनता का नमन रूप देयकर इसे हेय सिद्ध करते हैं, किन्तु यदि रीतिकार्य के गीत का मग्धत अक्षयत रिया जाण तो उस वणन परम्परा स समर्धत ही कह जाणये। १० विरतनाथप्रसात् मिश्र ने स्पष्ट ही लिखा है 'उहाने जो अचर प्ररार ती उद्मावताण की १० उमवे लिए के समय की गति से विवग थे। जान वूभवर काय वा स्वल्प उहाने विरत नती रिया है। रही धोर शृगारिकता की बात सो विपरित रति और गुरतात के वणन ससृत्त और प्रातृत्त की परम्परा म पहले ही

१ डा० मनोहरतान गीठ धनान्त और स्वच्छ वाक्यधारा निवेदन प ३

२ विहारी प विरतनाथप्रसात् मिश्र प ६७७६

३ डॉ० वचन सिंह रीतिकालीन कवियों की प्रेमव्यजना पृ० ४५, ५५

स च न आ रह थ ।<sup>१</sup>

अतः रीतिकಾವ्य के स्वरूप को समझने के लिए उसका स्रोत का अध्ययन आवश्यक है। बिना इसके सम्यक ज्ञान के या तो रीतिशास्त्र का अवमूल्यन किया गया है या अतिमूल्यन। दोनों दृष्टियाँ अनिवाची हैं। वैज्ञानिक दृष्टि तभी प्राप्त हो सकती है जब रीतिशास्त्र के रिक्वे का पूरा परीक्षण किया जाए। इस विज्ञान में गंभीर प्रयास प्रथम महत्प्रयास है। रीतिशास्त्र की प्रेरणा-सीमा बहुत से अनुसंधानियों ने निर्धारित की किन्तु रीति का वाच्यपक्ष अद्यावधि उपेक्षित रहा।

शास्त्रीय परम्परा का निर्धारण कोई दृष्टियाँ से मरल है उसकी बिकान रेखा भी अपेक्षाकृत स्पष्ट है, किन्तु वाच्य परम्परा का विवेचन अनवमुम्भी प्रभावात् स परिचालित होने के कारण बड़ा कठिन है।

प्रस्तुत प्रबंध में संस्कृत प्राकृत अपभ्रंश और रीतिपूर्व हिन्दी-वाच्य का रीति वाच्य पर प्रभाव विवेचित है।

### शोध की सीमा

यहाँ यह स्पष्ट कर देना आवश्यक होगा कि मरे शोध की सीमा क्या है। यद्यपि रीतिवाच्य का अध्ययन बिना रीतिशास्त्र के ज्ञान के असम्भव है। अतः प्रस्तुत प्रबंध में तब तक सम्भव हो सका है शास्त्रपत्र का सहारा लिया गया है। परन्तु अधिकांश निरूपण स्वतंत्र रूप में वाच्य प्रवृत्तियों के आधार पर किया गया है। रीतिकಾವ्य के भाव और कला-गुण को प्रभावित करने में फारसी साहित्य का योगदान बड़ा महत्त्वपूर्ण है। यह वाच्य स्वयं इतना विज्ञान है कि इसके लिए स्वतंत्र प्रबंध की अपेक्षा है। प्रस्तुत प्रबंध में यद्यपि इसका संकेत-मात्र कर लिया गया है।

रीतिकाल की अन्य प्रवृत्तियाँ—नीति भक्ति वराग्य और स्वच्छन्द काव्यधारा तथा रामकायधारा का सम्यक विवेचन नहीं किया जा सका है। वह मेरी गांधी सीमा के अन्दर कोई महत्त्वपूर्ण स्थान भी नहीं रखती अतः उस दृष्टम गतिविष्ट नहीं किया गया है।





से मिल जाता है। रीतिकाल्य माष्ठी माहिय है, इसलिये उसमें सावमगत की प्रपगा सोकरजन साधना ही प्रमुख है। इस साधना के परिणामस्वरूप उसमें जीवन के गत्वर चित्रा के स्थान पर स्थिर चित्र ही अधिष्ठ हैं। वह मुराज प्रधान है। लार-मगत की साधना जन-साहित्य का लभ्य होती है। उसका आचार फतर विम्बुन और परिश्रेष्य तमय जीवन हाता है। महदुदेय स प्रेरित साहित्य साधना महाराध्यात्मन होती है।

रीतिकाल्य की समाज परम्परा र अन्तगत तरकारी प्रवृत्ति आर परिवर्ण का ही अध्ययन प्रस्तुत करना समीचीन हागा।

द्विती भी समाज म मुख्य रूप स दा वग दग्गन का मिलन हैं—एव गासन उग, दूसरा गासिन वग। वमी राजनीतिन कारण स इन ा वगों का अन्तर कुछ कम हो जाता है वमी ज्याग।

रीतिकाल म यह अन्तर बहुत अधिष्ठ बढ गया था। गासिन वग का साग अरम और उन्पादन गामक वग के भाग विनाम म यष ाता था। आउमी-नवी गतानी म ना भारतीय समाज सामन्तशाही आचार पर स्थिन था। महानगिण राउन साठ्यायन न उन समाज का चित्रण करत हुए लिखा है “उम समय की भारतीय मनुदि की वान मुनवर आप गाय सतयुग का स्वार त्मन लगगे और वह उगे इह दम्बुन राम राच था।”<sup>१</sup> पर उस समय भी त्राधिष्ठ वषम्य चरम मीमा को पडुप गया था। सम्पूर्ण समाज का अधिष्ठ नाग विनामो गासना के वैलामिष्ठ उपररणा के जुगान म लच क्रिया जाता था। राहुनजा अषव के अतिम नवाव वाजिदअनी गाह के त्पारण द्वारा अपने वष्य का पुष्टि करत हुए लिखन हैं जिहाने हात के वाजिदअनी गाह तथा दूसरे विनासी दासना के भाग विनास के वार म पना है वह आगानी स समझ सकत हैं कि उग वान के वनोज मान्योउत मार पटना के राजमहला म विनासी भाजन गीकीनी के जन्म मुगलिन द्रव्य आि पर निनना लच होना रहा होगा। इसक अतिरिक्त मामता के भारी लच थ—जण-नाग महल श्रीडा गवन गिहासन, राज-पसग मोरछन चमर और लाखा के हारे भाती, महाष रना के आभूषण राजमहला की मजावट, चित्रवला, श्रीडामग सान के पिजडा म अण गुन-सारिका, लाह के पिजडा म वद केसरी।<sup>२</sup> मुगल दरवार म भी इस प्रकार के विलास और श्रीडा विनाद के साधना की वमी न थी। गाहजहा के गासनवाल म मुगना ना राज-वमव चरमोत्प के पडुव गया था। वह वास्तव म सार जहा का गाह लगना था। डॉ० नगद न लिखा है, गाहजहा का राज्यवाल वमव मार एश्वय से जगमग था। वतियर ट वनियर मनुकी आि विदगी यात्री सभार के दरवार का एवव दखतर स्तव हो गण व। उन समी न मुगल-दरवार की मुक्त कठ म प्रगासा की है।<sup>३</sup> राजवमव की वृद्धि के साथ विलासिता और एवव प्रग्गन की वलि भी वन्ती गई। इसका प्रभाव देगी राजाघा और मनसबदारा

१ राहुन साठ्यायन िने कावधारा भूमिका प० १४

२ राहुन साठ्यायन हि। कावधारा भूमिका प० १४ १५

३ डॉ० नगद रीतिकाल्य की भूमिका प ६१०

पर भी पडा । भाग के साधना की वृद्धि होने लगी । समाज की दयनीय स्थिति को दखने सुधारने का समय न तो मुगल बादशाह के पास था न दंगी राजाभा के पास ही । उनका सारा समय नारी की रूप आराधना और विलास नीडामा म ही व्यतीत हो जाता था । उह चिता थी तो केवल सु दरिया की उह इच्छा थी तो केवल स्वर्ण की और प्यास थी तो केवल सुरा की । जिस राजा या नवाब के अंत पुर म जितनी ही सु दरिया रहती थी वह उतना ही समृद्ध समभा जाता था । य सु दरिया भी विभिन्न दश और जाति की होनी थी । इनकी पार्श्वचारिकाएँ सखियाँ और दूतिया सख्या म इससे दुगुनी और तिगुनी होती थी । विलासिता इस सीमा तक पहुँची थी कि मुगल सेना की सहायता के लिए कामन्ध्व की भी बहल मना चला करती थी । छोटे छोटे अधिकारियाँ और रईसा के सामन भी यही आदश था और उनका भी सारा समय भाग विलास म ही व्यतीत होता था, जिसका विवरण देव और अन्य कविया के अष्टयामा न अत्यंत स्पष्ट रूप म मिलता है ।<sup>१</sup> पूरे सामंत वग व लिए सारा जगन एक सुंदर नीडामान की तरह था और जीवन की साथकता शारीरिक मुनोपभोग म ही कद्रित हो गई थी । गतरज चौसर, शिकार (वन विहार) उपवन विहार जलनीडा और रागरग मही उसका सारा समय व्यतीत होता था।

लक्ष्मी क कृपाभाजन य राजा महाराजा बादशाह और नवाब दस की समस्त जनता के तीन चौथाई भाग की ग्न पसीने की कमाई को अपनी क्लासिक कवितिया के परिताप क लिए पानी की तरह ब्यात थ । राहुनजी रीति-काल स लगभग एक हजार वर्ष पहले की सामाजिक दशा का वर्णन करत हुए लिखत ह स्वयभू और पुण्यदत्त के सेत अंगारनवातिया क मोटे गान और द्राशा नतामा का दखकर आप यह समझने की गलती न कर कि वह उही अंगोरनवालिया क उपभोग क लिए थे । वहाँ सारा सिल्य सारा यवसाय सारी कृषि मट्टीमर आत्मिया क उपभोग क लिए हाती थी । दूसरा को ता सिर्फ जीन और गाने भर का अधिकार था ।<sup>२</sup> समाज की यही स्थिति रीति-काल म भी थी । अकालात्त दकी प्रकोप म पीडित सामाज्य जनता पगुता म भी निम्न बलि पर उतर आई थी । इसकी पुष्टि गाहजहा क समसामयिन लखक अट्टन हामिन् के वात्माह नामा क विवरण स हो जानी है ।<sup>३</sup>

कवि और कलाकार जन्मना निम्न या मध्यम वर्ग क हान थ किन्तु उनका पावन पापण उच्चवर्गीय सामन्ता क आश्रय म हाता था क्योंकि निम्न वर्ग म न तो कलात्मक रुचि होती थी न उनका पाम लभ क लिए समय और धन हा था घत उच्च वर्गम थी पतिया की कारण नता पडनी थी । कवि और कलाकार सामाजिक चतना म गूँय नहा थ किन्तु विरग थ । त्याग प्रथा की पार्श्विक वर्णिया म जराहा निम्न वर्ग कगाहता था फिर भी कवि आश्रयता की प्रार्थना गान क लिए विवग थ ।

१ डॉ नरम शक्तिवाच्य का अमिता पृ १२

२ रीति काव्यशास्त्र अध्याय ५ १८

३ इन्दर एव साधन ए रिया शास्त्र इतिव्यन निरंतर ५० २१

रीतिकालीन कविता न इमोलिए एसी रचना की जिसमें —ह धन और सम्मान मिला। जिस दरवारी परिवर्ण म ब थे उसका वणन उहान पूरी इमानगारी स किया। उनकी वासन सज्जाए वस्तुन मुगल हरम की वगमा की प्रतिरूप हानी रा, जा रत्नत्रटित वस्त्रामूपण पहनती तथा दून की मुर्गा घ से मानक वातावरण गर्जित करती थी। रानि-काव्य म जम भवना का वणन मिलता है व सामाना व भान भवना क ही कानना मम वित चित्र है। य भवन कइ खण्डा क हात थ तथा उनम वातापन और भरावा की भी सस्था काफी हानी थी। सम्भवत भवभूतिक समय म भी एम भरावगार भवन हान र्द हगि जिनम स मत्रिकाया मालती सहक पर घात जान घसन प्रेमी मा ख का दखा करती थी।<sup>१</sup> रीतकालीन नायिका को पावक भर भी भावन हुए विहारी न एम हा किसी भरोवे म दखा हागा। इन महला म भी प्रत्यर खण्ड की बनावट म विगपता और मिन्नता होनी थी। अष्टकालिका का उपरी भाग विगप रूप म घासपक वनुल और सगमरमर का बना हाना था निमकी गौमा पूर्णिमा की गुध्र ज्याम्ता म दूध क फन की तरह नेत्रावजक हानी थी। यही पर खडी नायिकाएँ प्रिय नी प्री ता किया करती थी।

गौगमहल म अनक महाघ रत्ना और गौगा की छग निता सी हानी थी। पर्वों और उत्सवा पर उह विगप रूप स सजाया जाता रा। उस र्तिना विध्व प्रतिविम्ब की आन्वमिचोनी म दृष्टि भ्रमिन हा जाया करनी थी। मभवन एमा ही दृष्टि भ्रम दुर्योपन का हुआ रहा होगा कि उस द्रौपती क उपहास का भाजन बनना पडा। रीति कालीन कविता म एम भवना का यत्र-तत्र विध्वप्रगही चित्र उपस्थित किया है।

रनिवास स प्ररणा ग्रहण करन बाल कवि रानिरान म ही गही हुए और न ता सामानतवा का प्रभाव री तकाल तक ही सीमित रहा। इसका परम्परा बहुत पुरानी है। सामान्तीय परिवर्ण का काव्य म निवद्ध करन म अपभ्रं का भी पयाप्त सफरना मिन चुकी थी। राहुनजी उमवा मारा थये तत्पुगीन सामान-समान का दन हुए नित्त हैं चित्ररार की भाति रवि क सामन काई साकार नमना रत्ना चाहिए। स्वयभू न गष्ट्रकूटा क रनिवास और उक आमान प्रमा का नत्र वि सत्वा रा। वश परवा बिलकुन नहा था इमलिए और सुविधा थी। उमा मौन को उपन रावण और घयाया क रनिवासा के रूप म चित्रित किया है। समनत जहागीर क गगनहात म कनावारा का वाग्गाह क आनरिक जान म प्रवण करन की छूट थी। हरम म भी व जा सफने थ। गहजहा न यथवि इम अनुचित सभमा वा फिर मा अनक दरवार म रत्न बाल पण्डितराज जगन्नाथ का यवनी नवनीनसपनापी क दान पूरी स्वच्छ रता म हान थ। उमी की प्रेरणा के फास्वरूप उहाने भाभिना विनास की रचना की थी।

सामान्तीय विलासिता क उपकारक तत्वा म राजमभा उपवन या राजाद्यान श्रीग सरावर रनिन बलाए और विभिन्न वनामिन कीनाए था।

१ भवभति माननामाधव १।१५

२ हिदा कान्यारा भूमिका ५० ५१

## राजसभा

रीतिकाल तक आते आते मुगल साम्राज्य विपटित हान लगा था। डा० हजारो प्रसाद द्विवेदी ने लिखा है 'सत्रहवीं शताब्दी में मुगलों का विगम साम्राज्य ह्रासामुग हो चला था उस समय दिल्ली के सिंहासन पर सम्राट् 'गाहजगहा' आता था। 'गाहजगहा' का शासनकाल मुगल साम्राज्य का मध्याह्नक था। उसका जीवन काल भी ही गृह में कलह आरंभ हो गया और उदार तथा लोकप्रिय दाराशिकोह का 'दरबार और गजब' सम्राट् बन बैठा था।<sup>१</sup> इसने परिणामस्वरूप अर्थ बलात्कार की भाँति कवि का भी देशी राजा का मनसबदारा नपाया और रईसा की राजसभा का मारण करती पड़ी थी।

पुराचीन काल में राजा गुणवाही और उदार होते थे। उनकी समाज सन्तान - विद्वान कवि भट्ट गायक विदूषक (परिहासक) इतिहास वक्ता और पुराणन स भूषित हुआ करते थे।<sup>२</sup> भोजप्रदय में भाजराज की सभा का विस्तृत वर्णन मिलता है। लगभग पाँच सौ विद्वान और कवि उसका समाज को अलङ्कृत करते थे। स्वयं भोजन यह घाषणा की थी कि यदि मूल ब्राह्मण भी हो तो हमारा नगर स चला जाय और यदि विद्वान कुम्भवार भी हो तो वह भरे नगर में निवास करे।<sup>३</sup> एम गुण राजा की सभा का छोड़ कवि को अर्थ सम्मान और यश की प्राप्ति दुर्लभ थी। धाणभट्ट ने कविया और कुजरा के लिए उचित स्थान अपना धर अथवा राजसभा ही बतलाया है।<sup>४</sup> समस्त इसीलिए पंडितराज जन नाथ शिरीश्वर या जगदीश्वर की उपासना विहित बतलाते हैं। दशो राजा का दरबार में रीतियुगीन रीति का जा सम्मान मित्रा वह उस उज्ज्वल परम्परा का निर्वाह मात्र है जिसकी यश गाथा सस्कृत कविया ने मुक्तमठ से गाई थी।

प्राकृत भाषा के उदय के साथ सातवीं शताब्दी से सस्कृत का सम्पन्न सामाज्य लोक जीवन से विच्छिन्न होकर कथलवग विक्षय तक ही सामित हो गया था। कालिदासोत्तर सस्कृत साहित्य में मिस अस्वाभाविक अनकरण और वृत्तिमय शली में बलाधिक वृत्ति के अनुपप पीरपहीन भावा का वर्णन मित्रता है वह प्राकृत कुछ उग परिवर्तन की उपज था जो परवर्ती राज्याय वग में कविया का प्राप्त हुआ। प्राकृत भी जब लोक सम्पन्न से दूर हो गई (दसवा ग्यारहवीं शताब्दी में) तब उसमें भी जीवित तत्त्व विनुप्त होने लगे

१ हिन्दी साहित्य प २६६ २६७

२ विद्वान कवयो भट्टा गायका परिहासका ।

इतिहासपुराणजा सभा सन्तानसयता ॥

३ एक कथेण पञ्चशतानि शिष्टेषु दरभचि-काण सम्य वेक्षण-रुचिभर-रुचिभर कपूर रिकमय-सन्त विद्या विनो-वीरिन तारेण प्रमया सवशास्त्रविचक्षणा सवपा धीभोजराजममामचक ॥

—भोजप्रदय प ८७

४ वही प ८७ श्लोक ७४।

५ स्थिति कवानामिव कुजराणा स्वमन्दिरे वा नयमन्दिरे वा ।

गदृष्टे नि मणका इवते भवन्ति भूषातविभूषिताया ॥—भोज प्र श्लो १६३।

श्रीर वृत्तिमता आ गई। इसी प्रकार अपभ्रंश और बाद में हिंदी के साथ भी हुआ। यद्यपि हिंदी भाषा लोक सम्पर्क से दूर नहीं थी परन्तु उसकी विविध काव्यधारा समाज में ही प्रवाहित होनी लगी थी।

राजसभा में वाहवाहा पान के लिए कविताकामिनी को भी उनी प्रकार हाव भाव विचरणा और सदसज्जता बनना पड़ा जिस तरह को वगैरे या अतः पुर की राज महिषिया रहनी थी। उम अपनी स्वामाविक अनुता को त्यागकर वाह्य प्रदशन और चमत्कृत करनवाली रजिमा का ग्रहण करना पड़ा। पहल प्राकृतजन के गुणगान में जो गिरा सिर घुनकर पठनाती थी अतः उसी के गुणगान को अपना सौभाग्य मानन लगी। राजसभा के व्यासाह ने कविता का गभीर मगनकारी साधना का दूर करके उम मान मनोरजन और कामोद्दीपन का साधन बना दिया।

### उपवन या राजोद्यान

रीतिकाल में उपवन या राजोद्यान नगर के बाहर खुले वातावरण में भी होने थे और प्रासाद के पाद और वही वही सामन भी। वास्तविक नगर के गृहोद्यान में भी सुगंध और सौन्दर्य की मृष्टि करन वास्तुपुष्पा में मलिनका जानी या नवमानिका जया या कुरट्ट पुष्पा का वणन मिलता है।<sup>१</sup> रीतिकालीन उद्यान में भारतीय-पारसी सम्मिश्रित मिश्रित रूप दृष्टिगन होना है जो न भारतीय पुष्प चरा कनकी उला जुही कुत्त कवनार जया और हरसिगार के साथ पारसी पुष्प गुलाब गुलनाबा, इंस पचा मोगरा आदि भी मिलत थे।

तुजुतु ए जहागीरी (ममायस आफ जहागीर) के अरम में जहागीर के (आगर में यमुना के किनारे पर स्थित) गुन ए आफशा' नामक गाही उद्यान के अनक पुष्पा की प्रशंसा की गई है। जहागीर का पुष्पा से विशेष प्रेम था। उसकी आना से मन्तराम न इसी उद्यान का प्रशंसा में पून मजरी की रचना का थी।<sup>२</sup> उपवन रसिका के मनोरजन के साधन ता यही प्रेमी प्रेमिकाओं के मनन स्थान था। उह पुष्प चयन का सुंदर बहाना भी मिल जाता था। एम उद्दीपक वातावरण में विनासी उत्ति और भी अधिक रमता थी। रीतिकाल में पुष्पोद्यान के वणन और अप्रस्तुत विधान में पुष्पा का महत्त्वपूर्ण स्थान सम्भव है ही उद्यान के प्रेरणा स्वरूप मिलता है। एम ही उद्यान में दोला शीला और शरीवर शीला का भी विधान किया गया है।<sup>३</sup> रीतिकालीन कविता के लिए विभिन्न ऋतुया में परिवर्तनीय प्रकृति का रूप बहुत कुछ इही

१ कामभूत १।६।४

२ तुजुतु पाय जहागीर की नगर आगरे धाम।

पूलन की माना कर मति में कवि मन्तराम ॥ — पूनमजरी ६

३ कामभूत १।६।२

उपजाया या उपजाया म मिताया या । तीहा मरावर भा वितामिता का प्रमुग मायन  
रहा है ।

### श्रीढा सरायर

राजन मारवाया त श्रीढा-मरावर क मरहन का यणत करत दृण निगा है—  
स्वपभू त राट्टकूट धुन धौर उमर उतराभितारी क जण तीहा मरहन म ज्ञा म्णा  
मुना या उगीरा यणन धाना रामायण म जन्नाहा क म्ण मरिया । उम ममय  
सामना क स्नान-न-ड स्नान मरहन उमर मम धौर शिवारा का मरहन करत म जगम  
धौर स्यावर रत्ना का ध्यय त्रि मारकर तिया जात या । सामना की कना का प्रधान  
उह य ह ता या सामोहीया । ' रीतिवान क साम त भी श्रीढा-मरावर म मु रिया  
क साय स्नान धौर उतर धनातून म्ण पाणि क ता करत ५ । विहारी ध्या  
कविया न सरायर क तिर प्रमी प्रमिताया क मिनन का उागुन स्वन ही न  
बनाया धपितु नायन-नायिाराया की तियाविम्याता का उागुना यातावरण भी उह  
यही मित्त । य उपजन धौर मरावर म्णय प्रम्यात क मायन ध धन इनरी मरान  
का विमय ध्यात रया ताता या । यति स्तुछता का पूरा मरयन हाता ता विहारी  
क नायन का धानी प्रयमी का मारा गौर जल क मीतर म कय त्रिनाई वडना ।  
दय धौर विहारा सरीय रगण कविया का कल्पना का महारा दन म दन सरोयरा  
म स्नान करनवाती या त्रिना वठकर माजम-जा करनवाती धयवा धाचन क धीव हाय  
हालार पानी म स निकलन वाती कमत मुगिया का याग क म नहीं है ।

### रसिक वग

रीतिवान का रसिक वग वस्तुतः सामंत वग ही था । यहाँ ध्यान देने की बात  
यह है कि रीतिवान का रसिक बहुत कुछ वास्तव्यायन क नागरक वग का ही संशुचित  
धौर अपरिष्कृत प्रतिनिधि है । वास्तव्यायन का नागरक परिष्कृत रसि धौर चौमठ  
कलाभा से सम्पन्न विद्वज्जन गो ठी मडन होता था । वास्तव्यायन का नागरक सस्कृत  
साहित्य का धारलतिन नायन धौर रीतिवान का रसिक य तीता रसि साम्य के कारण  
बहुत अगा म एक ही वातावरण की उपज थे । इनम विलासिता धलकरणप्रियता धौर  
कलात्मक विनोद की प्रवृत्ति सामान रूप से मिलती है ।

### निवास स्थान

कामभूषण के प्रथम अधिवरण क चतुर्थ अध्याय म नागरकवत पररण के प्र त  
गत उसके निवास स्थान का जैसा वर्णन मिलता है वह रीतिवान के किसी भी  
सम्मानित पेशव्याली सामंत के राजप्रासाद से हीन न था । वह निमल जल से पूण

सरावर लताआ स आवष्टित कुजा स युक्त गृहाद्यान स मुशोभित रमणीय दृश्या से पूष स्वच्छ स्थान पर विनिर्मित होना था ।<sup>१</sup> कई-कई खण्डों के इन भवनो में अन्तपुर और वहि प्रकाष्ठ आदि की समुचित व्यवस्था हाती थी । इन हर्म्यों में ऋतु अनुकूल सुख सुविधाएँ सुलभ होती थीं । रीतिकालीन राजभवनों की चर्चा पहले ही चुकी है । ऐसे ही भवनों में रीति कवियों के आश्रयदानों और रसिक रहने थे ।

### शयनकक्ष

नागरक व शयनकक्ष का जसा बणन वात्स्यायन ने किया है उसे पत्ने के बाद यदि रीतिकव्य के साम्य पर रीतिकान की नायिकाआ व श्रीम मंदिर की कल्पना की जाय तो बहुत-बहुत साम्य मिल सकता है । नागरक के शयनकक्ष में रखे हुए आकष फलक और द्यूतफलक<sup>२</sup> रीतिकालीन रसिकवर्ग के गतरज चौसर आदि की याद दिलाते हैं ।<sup>३</sup>

### अष्टयाम

रीतिकाल में देव जस कवियों ने रसिक सामंता की दिनचर्या का बणन किया है । यह दिनचर्या वात्स्यायन के नागरक की दिनचर्या में बहुत कुछ अभिन्न है । नागरक प्रातः काल शय्या त्यागकर नियतक दानान घूप माना नाना म अजन आदिका प्रयोग करता था । ताम्बूल अलिकनक अगुठी सुगन्धित द्रव्य दपण आदि के प्रयोग द्वारा अपने को शोभन बनाता था । स्नान क्षार व उपरा व पूषाल्ल म भाजन करके शुन-सारिका लावक मष आदि के साथ अपना मनाविनोत् करता था<sup>४</sup> विट विद्रूपक के साथ हास-परिहास में भी कुछ समय व्यतीत करता था । मध्याह्न में विश्राम करने के बाद अपराह्न में गाण्ठी का आवाजन करके शायकना व द्वारा मनाविनोत् और नानान करता था । सायंकाल मंगान गाण्ठा हाती थी । रात्रि में शयनकक्ष का धूपित करके अमिसारिकाआ की प्रार्थना करता था । उनके आन पर मनाहृत् आवाप मडन और मनोरंजन करता हुआ शयन करता था । नाना वा उद्दृश्य भुगोलाभाग ही था । इस जीवन दृष्टि का परिचय स्वयम् ही काव्य में भासितना है ।<sup>५</sup>

१ वात्स्यायन कामसूत्र १।४।४

२ वने १।४।४ १

३ वने १।४।१२

४ अन्तपुर में गतरज चौसर और रजापा के अन्त में मनाविनोत् करना व बाहर निकार या पन बाधा । — डा० नगद रीतिकाल की भूमिका पृ० १०

५ 'तरन्तरह के पक्ष-पक्षी'—कनूनर सान ताप मना आदि के स्वरा से रनिवाम गूँजते थे ।

— डा० नगद रीतिकव्य की भूमिका पृ० १

६ कामसूत्र १।४।१६ २४

७ राहुन मातृव्यायन हिन्दु काव्यधारा पृ० ६५



## हिंदू मुस्लिम सस्कृतिया का अयायाश्रयण

हिंदू और मुसलमान सस्कृतिया पन्द्रहवीं शताब्दी तक गाने गाने एक दूसरे को बांधी प्रभावित कर चुकी थी। दोने इनाही का प्रचारवात्ताद्वारा प्रबन्धन इसका ज्वलन्त उदाहरण है। मुगल दरबार में हिंदूओं को सम्मान और उच्च पद भी मिलने लगे थे। डा० बनीप्रसाद ने लिखा है— इस प्रकार सभी वर्गों में हिंदूओं को राज दरबार में पद इत्यादि प्राप्त हुए थे। वे मुगल दरबार के ऐश्वर्य तथा उच्च शिष्टाचार से प्रभावित होकर अपने सामाजिक जीवन में भी इसी प्रकार के परिवर्तन करने लगे थे।<sup>१</sup> अब हिंदू और मुसलमानों के रहने सहने और वर्णभेद में उतना बंधन नहीं रह गया था जितना पहले था। अब एक नवीन हिंदू मुस्लिम सम्कृति का स्थापना मध्ययुगीन भारत में हुई। मुस्लिम सस्कृति में धर्म तथा साहित्य और विज्ञान इत्यादि सभी क्षेत्रों में हिंदू सस्कृति का प्रभावित विद्यमान है।<sup>२</sup> मंगलकाल में हिंदू कवियों की रचनाओं का अध्ययन से स्पष्ट हो जाता है कि हिंदूओं का सौंदर्य बोध का भी मुस्लिम सम्कृति में दूर तक प्रभावित किया है। विमलानन्द, रसम तथा मलयकाल कवियों का प्रयाग मुसलमान नवाब और दक्षिण राजा दोनों समान रूप में प्रचलित था। मुस्लिम सस्कृति जितनी बुद्धिवादी है उतनी भाववादी नहीं। यही कारण है कि मुगल साम्राज्य का स्थापित हात ही उनमें भागवतों की प्रधानता हो गई। हिंदू भी उनके प्रभाव में आकर पराशर का भय छाड़ प्रत्येक सुरा गुत्तरी और रत्न की उपासना करने लगे। परिणाम स्वरूप पूरे समाज में विलासिता और ऐश्वर्य प्रदान की शक्ति का प्राबल्य हो गया। रीतिवादी नतिक्रम अथवा पतन में इस सामाजिक जीवन में प्राप्त शक्ति और ऐश्वर्य प्रदान की तीव्र इच्छा का योग कम महत्त्वपूर्ण नहीं है। नारायण प्रति उनकी दृष्टि सबदाभास की ही रही पूज्य की नहीं। भारतीय दृष्टि पर फारसी चर्चा लगे हुए था जिसमें परिणामस्वरूप नारी की महनीयता दृष्टि में आभल्य हुआ। स्वकीय की सीमा में सताने करने परकीया प्रथम को अपनी रसिकता का साध्य बनाया गया। यह प्रभाव केवल रीति-कविता तक ही सीमित नहीं था। भक्ति-विद्या में भी परकीया प्रथम को महत्त्व दिया। भक्ति सम्प्रदायों में स्वकीया भाव और परकीया भाव दोनों की उपासनाएँ लिखाई पड़ी और हिंदी काव्य परकीया परत रचनाएँ करके तथा उन्हें गाया कण्ठ से स्रष्टव कहकर सामाजिक गठन में बंध गया।<sup>३</sup> भक्ति का धर्म में परकीया का भावनात्मक स्तर पर स्वीकृत हुआ किन्तु इस्लाम सस्कृति से प्रभावित रीति का शृंगारधारा में उसका रूप व्यापारिक हुआ गया। स्वयं राजाकण्ठ की वामभूषा और सौन्दर्य का वय मुस्लिम सस्कृति का प्रभाव का उदाहरण है। नारायण काव्य में

१ डा० बनीप्रसाद हिन्दू धर्म प्रचार १९४५

२ डा० ताराचन्द हिन्दू धर्म प्रचार इस्लाम धर्म शिष्टाचार १९३७

३ विद्वानाथप्रसाद मिथ विहारा १०५५

पायजामा च्चीदार पायजामा तथा उनी भाट्टरिया पर बढ हुए मुस्ता जन्ति जजीरो म मुमामानी वेगभूपा का प्रभाव स्पष्ट दिगाई दता है। भागवन के नटवरनदनान महा रसिक गवा वन गए हे। मध्यवर्तीन चातावरण का प्रभाव कृष्ण और राधा से सम्बद्ध रूप विषय मायनाग्रा को दबाए हुए है—कृष्ण के रूप चित्रण म सयोजित शृंगार स सम्बद्ध अन्तरण सामग्रा ने कृष्ण को प्राय स्तन बना दिया है कृष्ण और राधा की कनि गीताग्रा म तत्वानीन सामता क हरम क ही चित्र खीचे गए हैं।<sup>१</sup> सम्पूर्ण रीतिकव्य म यद्यपि रतिक चेतना के कारण रात्राकृष्ण का नाम बार बार किया गया है परन्तु कविषा क अक्चनन मरितप्य पर मुस्तिम मस्तिती की छाव इतनी गहरी थी कि उका काय उगम पूजन प्रभावित है। अत रीतिकवा क कवि ने हिंदू मुस्तिम मस्तिनिया क सम्मिगिन प्रभाव क कारण एव साथ ही शैविक और पारशैविक अमिपकित म अयन काय का गान्ध रूप म उपस्थित किया है। रीति कवि की नायि काएँ हरम की वगमा को भी चित्रित करती हैं। १० हजारीप्रसाद द्विवेदी की उक्ति इस मदम का और भी पुष्ट बताती है वस्तुत उसन (शृंगारी कवि क) चित्त म रत्ना की धात्र है। नायिकाग्रा क चित्र को मादन बनाने क लिए उसन आम्परपूण चातावरण और महाध वेगभूपा का सहारा लिया है। उनी नायिकाएँ विद्याल प्रासादो म रहती हैं उा मय की चादन वाली और दूय की उगता का चित्रित करती हैं उनक पायदान म बटूमूल्य मयमन का उपयोग होता है उनकी सेवा म नियुक्त दासियाँ जिन पायदाना इत्रदाना और फूलदाना का व्यवहार करती हैं उनमे सोने चाँदी की बहार रहती है। नायिकाग्रा क परिवान म किमधाव सादन मयमन और अलस क वस्त्र प्रयुक्त हात है। उनकी गाडिया की चिनारी सुवणयचित्त होती है और चारू चूनरा चटनील रगा म सहरदार बनी हाती है। गुग्गा क वस्त्रा का उतना उल्लस नहा है। कभी कभी पाग और पटुका चादर और अम्पर जामा और पजाम की उर्चा आ जाती है पर स्त्रिया क उन्नाभूषण की घटा क सामन इनका सोइ मूय नहीं है। रीति कान की रचनाएँ अन्तारा क अन्वयन का उत्तम साधन हैं। अनेक प्रकार क अगराय उरता पान मिस्मी मन्ग अन्न मन्ग सिद्ध रारी क गुम जावन (महावर) के साथ ही गाय सीमपूत नणपूत तरीना भुमका बसर नय क ई उरा क हार हसनी कठुना हुगा दण गानूर कगत पड़ेकी चूनी अँगूनी मुदरी आम्मी करधनी पाया चित्रा नायिका की गोमा को मौगुनी बनाने रत्त है। गुनात्र और धना क गनरे हूही और अननी नी भीनी भीनी महव चम्पा और मौनसिरी के गुभावन हार बन्दूरी और बसर क अगराय और गेंदा गुनगाउदी गुनात्र गुनावाम गुनगात्रो गुनगादवी गुनगाता की गमक से यह गोमा मन्ग मूर्तिमान मन्ग गनकर प्रवट हाती है।<sup>२</sup>

१ डा नायिका चित्रा अजमापा के कृष्ण भक्ति काव्य म अभिनवचना मिला प १४६ १४७

२ डा० हजारीप्रसाद द्विवेदी हिन्दी साहित्य प ३३८ ६

उपरिलिखित लम्बे विवरण से हिंदू मुस्लिम सभ्यता का सम्मिलित प्रभाव का श्रोतन हा जाता है। नासक शार गामिन दोनों वर्गों में हिंदू और पारसी शलिया का वस्त्राभूषण का प्रयोग होने लगा था। सामंतवर्ग तो पूर्णतः मुसलमानी वस्त्राभूषण को धारण करता था। दूगवा एक कारण यह था कि देशी राज महागान विदेशी वस्तुओं का प्रयोग उस समय अशुभ और फशा का एक अनिवाच्य अंग मानते थे।

इसी प्रकार रहस्य सदन खानपान और शिष्टाचार में भी दाना सभ्यता का समीकृत रूप दृष्टिगत होता है। हुक्का तम्बाकू का प्रयोग दोनों करते थे, यहाँ तक कि बिहारी के लाल भी तमाकू पीने लगे थे।<sup>१</sup> नागरीनास की गोपनीयता तो कृष्ण के लिए 'नजरें ल लेकर आने लगी। कुष्ण मक्का में सहनरिशरण की अलंकार-योजना में उदू और हिंदी का मगम तथा यवन सभ्यता का प्रभाव स्पष्ट लक्षित होता है।<sup>२</sup>

रीतिवाले में हिंदू मुस्लिम सभ्यता के अन्तर्गत अथर्वण में एक तीगरी अ हिंदू अमुस्लिम सभ्यता का जन्म हुआ जिसका तत्कालीन भारतीय समाज पर व्यापक प्रभाव पड़ा। धर्म कला और साहित्य भी उसके प्रभाव से बच न सके।

### राजनीति पृष्ठभूमि

साहित्यिक उन्नति का मूल्यांकन बिना तदनुगीत राजनीतिक पृष्ठभूमि को समझे नहीं किया जा सकता। किसी भी राज्य के स्वल्पनिर्माण में उक्त राज्य काल की राजनीति का स्थान बड़ा महत्त्वपूर्ण होता है।

सम्राट अकबर की समकक्षता दृष्टि न जिस भारतीय राजनीतिक अवस्था का स्वप्न दखा था वह उसने साथ ही साकार होकर समाप्त हो गई। उसका व्यक्तित्व महान था। उसने सम्पूर्ण युग चेतना को प्रभावित और परिचालित किया था। उसके तान्त्रिक मुगल वर्ग में वाद प्रभावशाली व्यक्तित्व नहीं उत्पन्न हुआ। जहांगीर को मुगल और विनाल साम्राज्य विरामत में मिला। उसके सम्पूर्ण व्यक्तित्व मुखोपभोग को छोड़कर दूसरा कतव्य-कर्म तो नहीं रह गया था। उसी दृष्टि में वह उदारता और सत्ताशयता नहीं जिससे अकबर की नीति पल्लवित हानी। वह मंदिर और मन्दिरेणा का ही जीवन की चरम उपलब्धि मान बठा। विलास जबर जहांगीर का हाथ में पडकर शासन सूत्र गिबिल हो गया। शासनवर्ग व्यक्तिगत स्वाध और सुख की चिंता में समाज की उपेक्षा करने लगा। शाहजहाँ के समय में भी लगभग वही स्थिति रही। जसा कि पहले संकेत किया जा चुका है शाहजहाँ का शासनान्तरण मुगल साम्राज्य का मध्याह्न था। उसके समय में साम्राज्य का एश्वय पूण विकास का प्राप्त कर चुका था। देश में शांति और सम्पन्नता चरम सीमा का पहुँच चुकी थी। सामानिक मनोरंजा कला-भाषना और सौन्दर्य साधना का अनुकूल थी। किंतु विनाशिता स्वाधपरता और अशुभ प्रवृत्तियों की

१ घाट नई हामी भगी लगे भोजन की बात ।

सासन बजा न था निधो रिपन तम्बाकू सासन ॥ —विहारी दो १५

२ डॉ. माधिका निहा अत्रभाषा के दृष्टान्त भक्ति काव्य में अभिव्यक्ति का लक्षण १२५

वक्ति ने इस मनोदशा का सम्यक उन्मूलन न होने दिया। कलाकारों में गाही रीति और दबदब की भावना ने आत्मसम्मान का लोप कर दिया था। उच्चादम और महान् उद्देश्य कला-साधना का लक्ष्य न बन सका। अकबर के राज्यकाल में कला साधना ने जिस विकास सीमा का स्वप्न किया था, वह धीरे धीरे पतन की ओर अग्रसर होन लगी थी। जिस प्रकार मुगल साम्राज्य बाह्य से सम्य न कि नु आन्तरिक कलह में खोखला हान लगा था उमी प्रकार अकबर के बाद की कला साधना भी बाह्य से अलङ्कृत किन्तु आन्तरिक मादगाभीय से रिक्त हो चली थी। डा० नम द्र ने इस स्थिति का निरूपण करत हुए लिखा है, "जहाँगीर की मस्ती और शाहजहाँ के अर प्रथ दोना का परिणाम अहितकर हुआ। जिस प्रकार साहित्य के इतिहास में नकिताव्य के चरम बभव के बाद म० १७०० के आसपास ही कविता क्षय प्रसून होने लगी थी ठीक उमी प्रकार राजनीतिक इतिहास में मुगल साम्राज्य भी अपने सम्पूर्ण यौवन को प्राप्त करन के उपरांत ह्यामा मुख हो चला था।"<sup>१</sup>

शाहजहाँ के शासनकाल का अन्तिम दृश्य नतिक-पतन का ज्वलत रूप उपस्थित करता है। रीतिकाल के प्रथम दशक में ही वह बीमार पड़ गया। उसके उत्तराधिकारी उसकी मृत्यु की घोषणा करके राजसिंहासन प्राप्त करने में नतिक अनतिक उपायों का प्रयोग करने लगे। डा० नम द्र ने इस युद्ध को रीतिकाल के आरम्भ की सबसे प्रथम और सबसे महत्वपूर्ण घटना माना है।<sup>२</sup> शाहजहाँ के पुत्रों में सबसे उदार, कलाप्रिय और प्रभावशाली "प्रकित्तवाला दारा दौलत खूनीतिन निष्ठुर और कट्टर सुन्नी और गजेब के द्वारा निदयतापूर्वक मारा गया। अकबर के 'दीने दलाही' का एकमात्र अङ्कुर और गजेब के खूनी परातन रोद डाला गया। यह घटना शाहजहाँ के जीवन के अन्तिम क्षणा की सबसे कारुणिक घटना थी। और गजेब का शासनकाल सामाजिक प्रसार्ति और नतिक अथ पतन का काल था। उसकी धार्मिक गमहिष्णुता ने हिन्दुओं के प्राण सकेट में डाल दिए।

शाहजहाँ ने राजकीय कामचारियों को जागीरें देकर सामन्तवाद को जो प्रोत्साहन दिया, और गजेब ने उनमें भेंट के रूप में ऊँची रकम लेकर उन्हें भी खालसा और हतोत्साह बना लिया था। और गजेब की मृत्यु के बाद मुगल साम्राज्य का पूण पतन हो गया। उसके उत्तराधिकारियों में वह नकिन शय नहीं थी कि इतन बड़े साम्राज्य का मचालन कर सकें। इसके परिणामस्वरूप केन्द्रीय शासन विघटित हो गया। मुगल साम्राज्य के उत्तराधिकारी न तो उचित शिक्षा ही प्राप्त कर सकें न सरकार ही। उनका अधिन समय भोगचया में ही व्यतीत होने लगा। अतः तक और गजेब के आनक से जो दशो रियासतें सम्मन थीं पुन मिर उठान लगी।

शाहजहाँ के समय से ही मराठे जाट, रुहले और अवध के नवाबों में दिल्ली

१ रीतिताव्य की भूमिका प २

२ वही प० २

दरबार में बजीर पद का प्राप्ति में लिए अनेक पडयान और लडाइया होने लगी थी। इस गृह-कलह में अंग्रेजों का अपनी मत्ता व विस्तार का मुअवसर प्रदान किया। पूर्वी प्रांत और अवध व कई जिलों को उहांन अपने अधिकार में कर लिया था।

केन्द्रीय शासन सत्ता निष्प्राण थी और अत्य छोटी बची रियासतों अपने मुसाफ मोग और ईर्ष्या अहकार में डूबी हुई थी अतः राष्ट्रीय चेतना और आत्माभिमान किमी में शेष नहीं रह गया था।

राजनीतिक अयवस्था स्वायपरता और प्रभावशाली यत्नित्व तथा प्रत्यक्ष क्षेत्र में मौलिक प्रतिभा की कमी का प्रभाव रीतिकाल के साहित्य कला और सामाजिक स्थिति पर भी पड़ा।

रीतिकाल की सामाजिक और राजनीतिक पृष्ठभूमि का परिचय पाठन के बाद कलात्मक पृष्ठभूमि का परिचय प्राप्त करना आवश्यक है।

### कलात्मक पृष्ठभूमि

ललित कलाओं का माध्यम में मानव युगा से अपनी अभिव्यक्ति करता आया है। जिस देश काल में कलाएँ पतनी हैं उनका प्रभाव उन पर लभित होता है। साहित्य भी एक विविष्ट कला ही है अतः उस पर पतनवान युग प्रभाव का अध्ययन व पूर्व ललित कलाओं पर युग धर्म का सूक्ष्म स्पष्टन देखना अभीष्ट है। यदि ललित कलाओं और साहित्य का सूक्ष्म अध्ययन किया जाय तो दोनों में एक ही अर्थार्थ प्रवाहित हानी हुई मात्राम पड़ेगी।

कला की समृद्धि देश-काल की समृद्धि से प्रभावित होती है। भारतीय इतिहास का स्वर्णकाल गुप्तकाल माना जाता है। इसकी स्पष्ट छाप तत्कालीन कलाओं पर देखी जा सकती है। गुप्तकाल के पश्चात् मुगलकाल (अकबर जहांगीर काल) में पुनः कलाओं का समृद्ध रूप सामने आता है। अकबर के शासनकाल में ललित कलाएँ जिस उत्साह गरिमा का परिचय देती हैं वह उसके बाद नमग क्षीयमाण हो गईं। अकबर के बाद जहांगीर के समय से कला का धारण विनासिता स्तन अन्वकरण और कोमलता का प्रभुत्व बतन लगा था। शाहजहाँ के समय में वह चरमावस्था को प्राप्त हो गया। १७०० नगेन्द्र के शासन में मुगल वंश का युग कला का वंश का भी युग था। कलाप्रिय मुगल सम्राटों ने पारसी और हिन्दू कला के सम्पर्क मयोग से विनामपूर्ण मुगल कला का निमाण किया जिसकी छाप तत्कालीन स्थापत्य चित्रण आनन्द आदि ललितकलाओं और जवाहरात-माने चीनी व काम, कला युनाई इत्यादि पर भी स्पष्ट अंशित है।<sup>१</sup>

### चित्रकला

मुगल काल की चित्रकला में भारत ईरानी कला का समन्वित रूप दृष्टिगत

होना है। राजनीतिक और सामाजिक अवस्थाओं की तरह चित्रकला की भी सम्बद्धता अक्षर व काल में हुई। जहाँगीर की कलाप्रियता और रंगीनी ने उसे उत्कृष्ट की परनाम्ना तक पहुँचाया और शाहजहाँ ने उसका पूर्णरूप में पापण किया।

अक्षर के दरबार में सत्रह निपुण चित्रकार थे जिनमें बसावन पृष्ठभूमि चित्रण और भाव-व्यंजना में सर्वोत्कृष्ट था। इन चित्रकारों ने अक्षर की प्रेरणा से चगजनामा, रामायण और वृष्णचरित्र से सम्बद्ध चित्र बनाए।<sup>१</sup>

यद्यपि इरानी शैली हुमायूँ के प्रिय चित्रकार मीर सैयदअली तबरेजी और स्वाजा अदुस्समद के साथ भारत में आई और मुगल-वादशाही के संरक्षण में विकसित हुई तथा भारत की विशिष्ट राजपूत शैली देगी राजाओं की छत्रछाया में पल्लवित हुई किन्तु शान्ति में काफी साम्य हो चला था। अक्षर ने धर्म, सस्कृति और साहित्य को जिस प्रकार हिन्दू मुस्लिम विभेदों से दूर ले जाने का प्रयास किया उसी प्रकार चित्रकला की भी। १० कुमारस्वामी ने राजपूत और मुगल शैली में जिस मिनता का प्रतिपादन किया था आधुनिक शाह के परिणामस्वरूप उसका निराकरण हो गया।<sup>२</sup> उन्होंने राजपूत शैली का जमावना और मुगल शैली की सामंती भावना पर आधारित माना था, पर वसी कोर्ट भेत्क रेखा इन चित्र शक्तियों में नहीं पाई जाती। दरबारी वातावरण में पापित शोना शलिया में शृंगारिक अन्वेषणप्रियता की प्रधानता पाई जाती है। नायिका भेत् और राग रागिनिया के भेदाभेदों को लेकर जो चित्र अंकित किए गए उनमें भावात्मक महारई के स्थान पर बाह्य प्रयोग की प्रधानता हो गई। 'जहाँगीर के समय में चित्रकला में अनुदिन स्तनता और बगलार का तत्त्व बढ़ता जा रहा था पुरुषों के वस्त्रों में भी कञ्चुकी का प्रयोग होता था, स्त्री और पुरुष दोनों को जाम पहनाए जाने लगे व उसी प्रकार का चित्रण हमें तत्कालीन काव्य में भी मिला है। कारीगरी और अन्वेषण की प्रवृत्ति का आधिक्य शान्ति कलाओं की शलिया में समान रूप में स्थान पाता दिखाई देता है।'<sup>३</sup>

मुगल शासन वसव की सम्पन्नता में विलासिता की ओर उन्मुख हो गया था। उनमें अपने वसव से सत्कार का चमत्कृत करने का भावना जागृत हो गई थी। अतः उनकी इस भावना से चित्रकला में भी शाही तडक भडक की अभिवृद्धि हुई। राय कृष्णदास ने इसका पूर्ण विवरण उपस्थित करते हुए लिखा है, अक्षर (शाहजहाँ काल में) चित्रों में हृदय में ज्याण्ड रियायत महोनकारी, अत्यधिक नारे रंगों की श्रुती तथा शान्ति शौकत तथा अग प्रशयना—विशेषण हस्तमुद्राओं की लिपाई में बड़ी सफाई और कलम में बही से कमजारी न रहने पर भी दरबारी अन्वेषण-काव्य की जकडवदी और शाही दवदव के कारण इन चित्रों में भाव का सवथा अभाव बतकि एक प्रकार का सनाटा

१ शिवनाथ जोशी रीतिकालीन साहित्य की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पृ० १८४-८५

२ दक्षिण—इपतुण्ड अक्षर इरान में शान्ड इण्डियन कल्चर पृ० २७२-७३

३ डा सावित्री मिहल ब्रजभाषा के कृष्ण शक्ति काव्य में अभिव्यंजनाशिल्प पृ० २

पाया जाता है यही तब कि जी ऊंचा मर्या है।<sup>१</sup>

यह विगति कथन मुगल की ही गीती नहीं थी। ये ॥ राजराज के मर्यात म परराजारी भारतीय चित्र विधा में भी सदगुणीय साम्य की विरासिगत क विपन्न मित्र है।<sup>२</sup> विधा क राजा प्रसूति (१७११ - १७१६) क समय म बुद्धनगर की बसम धरती पूजा की प्रदूषण गई थी। उम समय म क धर्मधाम विधा की मागई धार मतिराम क रगराज की गूरी भिवाणी तथा समीर घोर धार्मिक चित्र यथा वही मर्या म तयार हुए। इतर रम विधात मर्या घोर धारण विरुद्ध भारवर्णित है। पात गुणत म तब रत है।<sup>३</sup> ही मर्या मर्या मुगल मर्या क मर्या मुगल है घोर धार्मिक रगीली।<sup>४</sup> इम प्रकार रीतिराजीय विधा म कलाकार की प्रसूति की सम्भीरणा उतरी नहीं पाई जाती जिन्नी विधा क विधा की प्रसूति।

राज घोर भिन्न कला का प्रभूत साम्य राजस्थानी विधा म मित्रा है। डॉ० सावित्री सिन्हा उम माध्य का भिन्न करत हुए विधा है बनी धरती क विधा म विरह भाव का प्रभाव है त्रिमम कल्प कथा की धारणा क मर्यात ह्रात है। कथा गती क विधा म बल्लभ सम्प्रदाय स सम्प्रदाय विधा का धारणा विधा मया है।<sup>५</sup> राजपूत-गली क विधा म राधा कल्प का कथन रूपान ही रमभाव नहीं है अपितु उनकी मधुर प्रीति का क चित्रण द्वारा कामल भाव की गुण धर्मियति भी हुई है। डॉ० राधाकुमु मर्या की विधा है कि कल्प कथा क धार्मिक योग्य घोर मोक्ष क भवतार राधा घोर कल्प क रूप म मानवीय माधुर्य का सर्वोत्तम धरन राजपूत गली के चित्रा म पाया जाता है। मानवीय रूप का उमा सम्मोह विषय गीति मर्या मर्या घोर कामलता के साथ धर्म्य दृष्टिगत नहीं होता।<sup>६</sup>

पहाड़ी गली म विव क उगत घोर ल्याणारव विधा की मये ता विव पावती क शृ गारव चित्र धर्मि धर्मि हुए। राधाकल्प की विधा म सीताम का भी धरन प्रभूत परिमाण म हुआ। जयव क गीता घोर विधापति क परा पर धार्मिक चित्र शृ गारव वक्ति की परावाष्ठा क धोता है। लभमग पूरे उत्तरी भारत म शृ गार प्रधान धलट्ट गली की प्रमुयता क कारण मुय विधा की धर्म्यता उतरा हुआ सजघन के साथ सामने धरने लग। 'एस हाशिए भी उल्ट्ट दस्तकारी क नमूने हैं। उा पर वेल-बूटे, शिकारगाह वेल-बूटा के बीच-बीच पगु गती व लेम दृश्य, जिनका सम्बन्ध चित्र स हो वा जो चित्र स मल मारत हा बने रहत है।<sup>७</sup> जिम प्रकार धलकार रीतिवाय के साथ्य बन गए थे उमी प्रकार लगता ह इन चित्रा म भी हाणिए ही साथ्य वा गए थे।

१ राय कृष्णदास भारत की चित्रकला पृ ६३ ६४

२ वही पृ ६७

३ डॉ सावित्री सिन्हा ब्रजभाषा के कृष्ण भक्ति काव्य में अभिव्यक्तियाँ पृ २०

४ वही पृ १६७

५ राय कृष्णदास भारत की चित्रकला पृ ६७

उस समय के चित्रों में प्रकृति का आलम्बन रूप में चित्रण नहीं हुआ। उसका जो रूप अंकित है वह प्रायः स्तन और सुलभ मुकुमारता तथा नारी अंगों के साम्य पर आधारित है। अभिव्यक्ति के जो चित्र मिलते हैं उनमें विजली की क्षीणरेखा में लक्षित नायिका का सौन्दर्य तथा मूललाधार वर्षों, सपना, तूफानी झुंझा आदि परकीया की विह्वल कामनाओं का प्रतीक के रूप में अंकित है।

रीतिनाल में काव्य-कला की ही तरह चित्रकला भी भाव शून्य, अभ्यास और श्रमसाध्य अलकरण में युक्त विलास प्रधान स्त्रण कोमलता और सामंती ऐश्वर्य प्रशान की वृत्ति पर आधारित है। यह चित्र चाहे धार्मिक हो या सामंती इनमें सबका एक ही मूल भावना प्रवाहित मिलती है।

### स्थापत्य-कला

चित्रकला का जसा उत्कर्ष जहागीर के समय में हुआ स्थापत्य कला का वसा ही उत्कर्ष शाहनशा के शासनकाल में पाया जाता है। अकबर महान ने अपनी महती आकांक्षाओं का पतहपुर साकरी के लाल पत्थरों से विनिर्मित बुन्द दरवाजे में स्थापित किया। उसके सुन्दर व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति आगरे के दुर्ग पर लक्षित होती है किन्तु उसके परवर्ती मुगल शासकों ने गुञ्ज्योतिष सगमरमर की कठोरता में अपने हृदय की कोमलता में भावनाओं और मूल्य-संज्ञकों को चित्रित प्रशान किया अथवा अकबरकालीन स्थापत्य में जीवन की गहराई और व्यापकता है तो शाहजहा का स्थापत्य जीवन-गण्ड की चमत्कारप्रवण रसिकता का मूल रूप। शाहजहा ने एक ही कला में महाकाव्य (रामचरितमानस) की विराट गरिमा और लिंगित विस्तार माना है तो दूसरे की कला में अलक्षित गान काव्य (विहारी के दोहा) की रसात्मकता और मूल्य-चमत्कार का आधिक्य। आगरे के विमान और सुन्दर किले के ऊपरी भाग पर शाहजहा द्वारा बनवाए गए सगमरमर के नक्काशीदार सुन्दर भवन अकबर के पौष्ट्य और कमठता पर शाहजहा की विनामप्रियता एवं कमव प्रदर्शन की वृत्ति के प्रतीक हैं।

शाहजहाँ ने अनेक भवन, राजप्रासाद दुर्ग, उद्यान और मस्जिद आगरा दिल्ली, लाहौर काबुल, काश्मीर कांधार अजमेर और अहमदाबाद आदि स्थानों पर बनवाई जिनमें ताजमहल सर्वोत्कृष्ट है। हजारा मजदूरों के बर्षों के निरंतर श्रम और तीन करोड़ रुपयों के व्यय से शाहजहा की प्रेमिका मुमताजमहल की कब्र तयार हुई। शाहजहाँ के शासनकाल की दूसरी प्रसिद्ध कलाकृति मयूरसिंहासन (तख्त-ताऊस) है। इस काल के भवनों के विषय में सिन्धी साहित्य में बहुत इतिहास में स्पष्ट विवरण मिलता है — सगमरमर के बनावट में महाराज मूल्यवान पत्थरों की जटाई, परिष्कृत सज्जा तथा मूल्य-अनकरण शाहजहा द्वारा विनिर्मित भवनों की मुख्य विशेषताएँ हैं। दीवाने आम, दीवाने खास खास महल शाह महल, मुमामन बुज तथा मच्छीभवन शाहजहा द्वारा बनावे



गई मुख्य इमारत है। इन सभी की आत्मा शृंगारिता है। गुण गम्भीरारी चित्रनिमित्त सी सजीवता गुहाले तथा रगीन रतम्भ इन सभी मण्डल विनागरर, एव्यप्रधान जीवन दृष्टि का परिचय मिलता है। मा गी मदन, रीग मदन, रगमहल, गहरे बहिस्त तथा साहजुज नाम ही इस तथ्य की पुष्टि व लिए यथष्ट है।<sup>१</sup>

धौरगजेव का समय बनागत भवसातता का समय रहा है। उगन धामिन भाषना स प्ररित कुछ मस्जिद और मकररा का निर्माण कराया जिगम मूनागा धोर प्रस्तता का ही अभिव्यक्ति हुई है। राजपूता की कुछ इमारतों--वारमिट बुदेता का विनाल महल, जोधपुर दुग धौर राजप्रासाद धामर व मन्त धौर भजमर के भील व मवन अपनी मव्यता और गीनता का निग उन्नम्य है।

### सगी-तकला

अय रीतिवालीन कलाभा की भाति संगीत रता पर भी युग धम की गति विधि के प्रभाव स्पष्ट लक्षित होते हैं। अरबर के राजत्व कान म अय कलाभा व साथ संगीत की भी उन्नति हुई। उस समय ग्वालियर के महाराजा मानसिंह न ध्रुपत जसी मय्य संगीत-शाली उपस्थित की। तानसन और पुणरीर विद्वान जैसे श्रेष्ठ कलाकारों न संगीत का चरम विकास किया। जहाँगीर के समय म दामोदर न संगीत को प्रौढ और सुव्यवस्थित रूप देने के लिए 'सगीत दपण' जैसे शास्त्रीय ग्रथ का प्रणयन किया।

शाहजहाँ के समय म अय कलाओं की भाति इसम भी अलकरण और बलासिक बतिया का प्रभुत्व बढ़ा। तानसन की गुण गम्भीर गली म आतकारिक गितकारिया का योग इसी समय की देन है। शाहजहाँ ने अय संगीतज्ञों के साथ हिंदू संगीतज्ञों को भी आश्रय दिया। उसकी मत्यु व वाद औरगजेव की कट्टरवादिता ने संगीत-कला को भी भारी क्षति पहुँचाई। कलावती के द्वारा संगीत की अरथी निकाले जाने पर उसे देखकर औरगजेव ने उसे जमीन म मूत्र गहरा दफनाने को कहा था।<sup>१</sup>

बीकानेर नरेग अनूपसिंह जैसे गुणन राजा के दरबार मे रहकर भावमदृ ने इसी समय अनेक ग्रथा का निर्माण किया किंतु इनम मौलिक उद्भावना और उन्नत बतित के स्था पर गतानुगतिकता की प्रधानता पाई जाती है।

मुहम्मदसहाह रगीले न अपनी रसिक बतित के अमिरजा हेतु दिल्ली दरबार म पुन संगीतज्ञों और रसिक कलाकारों को जुटाया। दरबार का सारा वातावरण अक्षरग सदारग के खाल से प्रतिध्वनित हा उठा। ठुमरी दात्रा टप्पा और खाली जसी नाजुक राग रागिनिया स पूण गायन शली का अपूव विकास हुआ।

भारतीय संगीत का गरिमामय इतिहास फारसी प्रभाव म पढकर अनुरजनप्रधान हो गया। उसका साध्य विलासबतित का परिपोषण मात्र रह गया। ख्याल म तो शृंगार

१ हिंदी साहित्य का बहत इतिहास पृष्ठभाग प २४ २५

२ एच एच गोवेन ए हिंदी भाषा इन्स्टीट्यूट लिटरेचर पृ० ५१२

का पूरण से प्रभुत्व पाया जाता है। उसका मजमून केवल नारी की प्रणय वामना या विरहानुभूति का वणन होता है। चतुरंग गली म रयाल तराना, सरगम और त्रिपट (मदम के बाल) व सम्मिश्रण से चमत्कारपूर्ण वचन्य का अदभुत सजन किया गया। भावराहित्य का प्रमाण इस काल की संगीत शैलियों में अर्थहीन शब्द 'ताना दे,' देना, 'दानी' तोय, आदि का प्रयोग-बाहुल्य है।

### धार्मिक पृष्ठभूमि

रीतिकाल में क्या धर्म क्या राजनीति क्या उलित कलाएँ सबमें महान व्यक्तित्व चिन्तनकी मौलिकता और अनुभूतिया का गहराई की कमी परिलक्षित होती है। धर्म में तो उदात्त वक्तिया का सर्वथा लोप हो गया था। हिन्दू और मुसलमान दोनों धार्मिक आडम्बर, आपसी द्वेष और स्वेच्छाचार व शिकार हो गए थे। डा० नगद ने डा० तारा चंद के साक्ष्य पर लिखा है कि हिन्दी प्रांता में शास्त्रीय धर्मों में इस समय भ्रष्टत वैष्णव धर्म की शाखा प्रशासाग्रा का प्रचार था और उनमें भी सत्रस अधिक प्रचलित थी वृष्ण भक्ति शाखा क्योंकि वही युग की प्रवृत्ति का अनुकूल थी। वृष्ण सम्प्रदाय में भी इस समय तक कई उपसम्प्रदाय आविर्भूत हो गए थे और विभिन्न स्थानों पर उनकी गढ़िया विद्यमान थी। वाग म गढ़िया का स्थापित हो जाना से इन लोगों पर भी देश की तत्कालीन लाकृचि का प्रभाव पड़ा। वभव का अभिगाप से य भी अछूत नहीं रह पाए। धर्म का तात्त्विक विकास एकदम रुक गया था और उसके स्थान पर भक्ति का बाह्य विलास अत्यन्त समृद्ध हो गया था।<sup>१</sup>

आचार्य शाङ्किल्य ने भक्ति की व्याख्या करते हुए ईश्वर का प्रति जिस परानुरक्ति या उत्कृष्ट प्रेम की प्राप्ति भक्त का परम लक्ष्य सिद्ध किया था<sup>२</sup> कालांतर में वही भक्ति भाव तत्त्व से विहीन होकर स्थूल काम चेष्टाग्रा की अभिव्यक्ति का साधन बन गई।

श्री सम्प्रदाय के प्रमुख आचार्य रामानुज ने विणिष्टाद्वत की स्थापना करते हुए चित् अचित और ईश्वर तीन तत्त्वा का स्वीकार करके प्रपत्तिवाद या दास्य भाव की भक्ति का प्रचार किया। उहा की शिष्य परम्परा में आनवाल रीतिकालीन सतनामी लालदासी नारायणी आदि सम्प्रदायों के शिष्य अपनी अपनी गढ़िया में विनास और वभव की आराधना करते लगे। अग्रदास के—ध्यानमजरी अष्टयाम, कुडलिया तथा पदावली आदि ग्रंथों में रीतिकालीन ऐहिकतापरक शृंगार का प्रभाव स्पष्ट पाया जाता है।

वदावन के निम्नार्काचार्य ने वृष्णभक्ति की जिस मधुराधारा को प्रवाहित किया केशव कादगोरी ने जिस मद्वातिक पीठिका प्रदान की और श्रीमट्ट ने जुगल सतक में उसे साहित्यिक रूप दिया, वह कालांतर में ऐहिक भावनाग्रा से पूण हो गई।

१ रीतिकव्य की भूमिका पृ १५-१६

२ सा परानुरक्तिपरक। —शाङ्किल्य भक्तिमूढ म ३

हितहरिवंश ने राधावल्लभ सम्प्रदाय में जिस निकृज रस-साधना या सवा पद्धति की बड़ी ही गूढ़ और उच्च आदश भूमि पर प्रतिष्ठा की और श्रुति-स्मृति के विधि निषेधा से सबथा परे आनन्द श्रीकृष्ण की अनन्य प्राण बल्लभा निकृजेश्वरी श्रीराधारानी के चरणारविन्दा की निरंतर उपासना और उनका बलि निकृज की चाकरी करना भक्तों का परम कर्तव्य माना था वही रसोपासना अधिनारी भक्ता की दमित वासना के प्रकाशन का माध्यम बन गई। परमाराध्या राधा का अपार रसपारावार के रूप में और श्रीकृष्ण का उस विहार करने वाले मीन के रूप में चित्रण स्पष्ट ही राधा को प्रमुख और कृष्ण को गौण स्थान देता है। राधावल्लभ सम्प्रदाय के भक्त कविया ने ऐसे ही अनन्य दृष्टान्तों से राधा का प्रामुख्य प्रतिपादित किया है। रीतिकाल के रसिक भक्तों को इस सम्प्रदाय ने रसात्मक अभिव्यक्तियाँ के लिए पर्याप्त अवकाश दिया।

माध्व सम्प्रदाय में ब्रह्म और जीव का जो सनातन सम्बन्ध अनन्यानुभूति और मोक्ष का साधक था वही कालांतर में गौडीय कृष्णव भक्ति के प्रभाव में आवर लौकिक प्रेमी और प्रेमिका के सम्बन्ध का आलम्बन बन गया। माध्वबन्ध पुरी से लेकर रूप गोस्वामी तक मधुराभक्ति का जा नावात्मक और शास्त्रीय विकास हुआ, वह बहुत कुछ रसरज शृंगार के निकट आ गया। रसकाटि में मधुराभक्ति और शृंगार तत्त्व एक ही है। डा० हजारीप्रसाद द्विवेदी ने लिखा है वस्तुतः काव्यशास्त्रियाँ का शृंगाररस और भक्तिशास्त्रियाँ का मधुररस मनोवचनानिर्गम्य दृष्टि से एक ही है। दाना को पथक मानन का आधार आध्यात्मिक है वचनानिक नहीं। लौकिक शृंगार में रति काममूला है और मधुररस की रति प्रेममूला है। प्रथम जड विषयक अनुराग है और द्वितीय भगवदविषयक।<sup>१</sup>

बुदावन के चतुर्थमतानुयायी गोस्वामिना ने अपनी रसमयी कृतिपा से जिस भाधुयधारा का पोषण किया वही रीतिगत र विलास जत्र रसिक जन के लिए विश्राम स्थल बना।

वल्लभाचार्य ने यद्यपि भगवान् कृष्ण की बात नीला को ही अपनी भक्ति साधना का केन्द्र बनाया पर एसी बात थी नहीं। कभी कभी भ्रमवशात् एसा साचा जाता है कि श्रीकृष्ण के बात रूप में उपासक ज्ञान के कारण वे उनकी शृंगार लीलाया के विराधी थे। भागवत की अपनी सुराधिना टीका में भी (१०-२२-२६) श्रीवल्लभाचार्य ने इस बात का स्पष्ट बयन किया है कि भगवान् श्रीकृष्ण ने कामशास्त्रीय विधि के अनुसार भी गोपियाँ के साथ रमण किया। वस्तुतः सम्भव है कि अष्टाश्रय के महाकवि गुरुदास और नन्ददास ने महाप्रभु के रसोपासना के अर्थ में व्याख्या में श्रवण ग्रहण करने हल आनन्द नायिका के सम्बन्धी प्रथा की रचना की है। कालांतर में अनेक भक्त कवियाँ रसमी आशर पर

१ मध्यकालीन धर्म-साधना डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी पृ० २१३

२ डॉ० राधेकान्त आचार्यना सत्या १० पृ० २ मन् १६२४ पृ० ७६-७७

अनक शृ गार प्रधान ग्रंथा की रचना की। राधा-वृष्ण व अष्टयाम, भूता, होली, भोग-राग और रति केलि स सामंती भाग विलास का साम्य स्थापित किया जाने लगा।

रीतिकाल म पूर्ववर्ती मन्त-कविया की रचनाया का पिष्टपयण ही हुआ फिर भी गली और भाव दाना ही क्षेत्रा म युगानुसार परिवर्तन हुआ है। शृ गार के क्षेत्र म स्थूलता के साथ ही उद् के प्रभावस्वरूप उद्दान फारसी काव्य का आशिकी रग-दग भी दिखाया है। उत्तर मध्य युग म वृष्णमस्ति-काव्य म दाशनिकता के नाम पर केवल बाह्याडम्बर ही शेष रह गया। राधावल्लभ और सखी सम्प्रदाय के सिद्धान्ता म दाशनिकता ने विवृत रूप धारण किया। रास की आध्यात्मिक अनुभूति मन्ता द्वारा स्वीकृत धारण करके स्वांग करन तब ही सीमित रह गई।<sup>१</sup>

डा० हजारीप्रसाद द्विवेदी ने मन्ता की ऐसी साधना म आंतरिक प्रेम निवदन की भावना के साथ ही साथ बाह्य उपकरणों म भी स्वी भाव, वश भूषा और हाव भाव का अनुकरण साधना पत्र के हास का चातक माना है।<sup>२</sup>

संक्षेप मे रीतिकव्य की धार्मिक पृष्ठभूमि भी ऐसी सुदृ और कालुष्यहीन नहीं रह गई थी कि समान म व्याप्त अंधविश्वास स्वायपरता और नतिक दुबलता को दूर करनेवाले कबीर या तुलसीदास व समान प्रतिभावान और प्रभावशाली व्यक्तित्व का निर्माण करती।

इम सदम म रीतिकालीन वृष्णव मन्त म मधुरोपासना म उत्पन्न होने वाली ऐहिक भाग भावना का किंचित परिचय यहा दिया गया है। रीतिकव्य मे 'राधिका क'हाइ को सुमिरन के व्याज स काय-साधना करन की परम्परा का विकासक्रम समझने के लिए वृष्णव का धार्मिकता की शृ गारी परिणति का ऐतिहासिक अध्ययन आवश्यक है। प्रस्तुत प्र व म इसका उल्लेख यथावसर किया जाएगा।

### साहित्यिक पृष्ठभूमि

जसा कि पहले लिखा जा चुका है साहित्य पर समाज और संस्कृति का पूरा प्रभाव पड़ता है। रीतिकाल का साहित्य अथ ललितकलाया की भांति सामंती परिवेश मे पूणत प्रभावित है। रीतिकालीन कविया का सौंदर्य बोध मुगलकालीन बमव तथा विलास से प्रभावित था। राजपूत राजाया तथा सामंती की विनासवृत्ति के प्रतिविम्ब रीतिकाल के साहित्य का मुख्य विशेषता ह। एमी स्थिति म भारत क शासक पण्डित और कलाकार विदेशी शासन के आतक और नास के कारण विकास करना म जागरित हुनूहल को लेकर कायानुरजन व माध्यम स माम्नीय की साधना करने लगे। परिणाम यह हुआ कि रीतियुग म पदुचकर साहित्य की त मयकारी शक्ति व द्वारा कलास्वादन की प्रवृत्ति का प्राय विनापन हा गया और उमके आसन पर आसनाखंड हुइ आतक

१ डा सावित्री मिश्रा प्रभाषा व वृष्णमस्ति-काव्य म धर्म यज्ञा शिल्प

२ हिंदी-साहित्य पृ० २१२

समुचित हृदय की शरणकामना करनेवाली येनकेनप्रकारेण आरक्षातुर मनोवृत्ति जा अपने ही आडम्बर में विभ्रात हाकर समययापन करती हुई सताप प्राप्त करना चाहती थी। आत्मविमोह कर देनेवाली भावना की सहज गहराई को छोड़कर भौतिक वासना से उदभाविता बौद्धिक अनुरजन के प्रयाम में पड़कर वही मनोवृत्ति नारी को अपनी सकेत दासी समझने लगी। उसके अगा की कोमलता को, हृदय की स्नेहाकुल मज्जुलता को तथा अग चेष्टाओं की सहज भावप्ररितता को अपनी विलास तप्या का सतपण मानने लगी। अतएव हृदयगत वासना की भूख अस्वस्व प्राणी की रोगज तप्या से असयत हो उठी थी, अमर्यादित हो गई थी। तत्कालीन काव्यशास्त्र के आचार्य अपने अनुरजनशील बुद्धि बमव द्वारा उस सतप्त करने के प्रयास में लग गए थे। बौद्धिक विश्लेषण और वैलासिक वर्गीकरण का प्रभाव लेकर इस युग में अपने कालानुमादित पाण्डित्य का सुंदर प्रदर्शन किया।<sup>१</sup> उपयुक्त उद्धरण में प० करणापिजी ने रीतिवालीन कविता की सम्पूर्ण विशेषता की ओर सुस्पष्ट और मार्मिक सकेत किया है। जसा कि पहले उल्लेख किया जा चुका है राजनीति घम और कला के क्षेत्र में प्रभाववाली व्यक्तित्व का अभाव रहा है। साहित्य के क्षेत्र में भी उसी प्रकार मौलिक और युग प्रवर्तक व्यक्तित्व का अभाव था। इस आर सकेत करत हुए प० विश्वनाथप्रसाद मिश्र ने लिखा है यकिन विशिष्ट्य का जसा विनास उपशित था वह न हो सका वह विगपता कविराज न ला सक जिसके द्वारा प्रत्येक की रचना पथन की जा सकती। रीतिबद्ध कविया की रचना में से यदि छाप निकाल दी जाय तो स्मृति गक्ति के आधार पर भले ही कुछ पाथक्य किया जा सके अथवा व्यक्ति विशिष्ट्य के आधार पर भेद करना कठिन ही नहीं असभव है।<sup>२</sup>

अथ कलाया की भाति साहित्य का धन भी समुचित हो गया था। उसमें न ता प्रकृति की ध्यापकता थी और न जीवन तथा जगन की व्यापक समस्याओं का कोई समाधान ही। इसकी पुष्टि प० रामचन्द्र गुप्त के कथन से साहा जाती है कि वह (कविया की दृष्टि) एक प्रकार से बद्ध और परिमित सा हो गई, उसका क्षेत्र समुचित हो गया। वाग्धारा बधी हुई नालिया में प्रवाहित हान लगा जिससे अनुभव के बहुत से गोचर और अगाचर विषय रस सिन्त हानर सामन ग्रान से रहे गए। दूसरी बात यह हुई कि कविया की व्यक्तिगत विगपता की अभिव्यक्ति का अवसर बहुत ही कम रह गया।<sup>३</sup>

विषयवस्तु का एसा सनाच प्रवचन के समय में नया था। उस समय कवि का व्यक्तित्व उन्मुक्त और यापन चनना में समविन था। रीतिराज में कलात्मक परिवेग के सकोच के कारण साहित्य की सीमा भी समुचित हो गई। दूरारूप कल्पना और बर जता प्रत्यान का व्यामाह एसा फना कि काव्य का नय्य कवन राजगमा में वर्णन पाता

१ प० करणापिजी त्रिपाठा समृत्त में नायिका भू और रविन जावनम् नायरी प्रचारिणी पत्रिका (स० २ १९) प० ११४

२ विहारी प० २८

३ हिन्दी साहित्य का इतिहास प २२

ही रह गया। अधिकांश कवि देगी विदेशी राजाआ-नवाबा की दरबारदारी करने लगे। इन दरबारों में पण्डित और प्रवीण, विभासी सामंत या राजा की वृषा की कामना करने वाले छोटे छोटे ताल्लुकदार और रहस ही रह गए थे जिनकी बुद्धि अन्तारा के चमत्कार और मन विलामानुप्रेरित रसिकता से परे नहीं जा सकता था। ऐसी दशा में साहित्य भी अथ ललितकलाआ की भांति मात्र मनोरंजन ही रह गया था। फारसी सम्प्रदाय ने भारतीय रहन सहन वेश भूषा संस्कृति और कला के साथ साथ साहित्य को भी प्रभावित किया। अदब कायदे की पाव दी फारसी काय में विशेष रूप से पाई जाती है। मुगल दरबार का एक खास अदब था जिसके अनुसार दरबार में सम्बद्ध लोगों को चलना उठना बैठना और बोलना पड़ता था। इस अदब में भी वाग्शाही रीत और आभिजात्य का परिचय मिलना है। कवि और कलाकार उस दरवारी अदब से पूर्णतः प्रभावित थे। राजा महाराजाओं के दरबार में विदेशी गिण्टता और सम्प्रदाय के व्यवहार का अनुकरण हुआ और फारसी के लच्छेदार शब्द वहाँ चारा आर सुनाई देने लगे। अतः माट या कवि लोग आयुष्मान् और 'जयजयकार ही तज अपन को कैसे रख सकते थे?' वे भी दरबार में खड़े होकर उमरराज महाराज तेरी चाहिए पुकारने लगे।<sup>१</sup>

विदेशी यात्रियों के साक्ष्य पर कहा जा सकता है कि मुगल वादशाही की सेवा में नियुक्त दास और दासिया भी कोई ज्ञान अलङ्कृत शली में ही रहती थीं। ममय की सूचना देने वाली दासिया को उनका उनका चमत्कार ही अनुसार पद और पुरस्कार दिये जाते थे। यही बात दरवारी कवियों के विषय में भी कही जा सकती है। चमत्कार पूर्ण उक्तियाँ की उस समय ही ही लग जानी थीं जब हिन्दी के कवियों को देशी दरबारों में संस्कृत के कवियों और विदेशी दरवारों में फारसी या उर्दू कायों से मोर्बा देना पड़ना था। अपनी उक्ति का प्रभावशाली और वातावरण के अनुकूल प्रदान के लिए इन कवियों को शृंगार या नायक नायिका भेद की रचना प्रस्तुत करनी पड़ती थी। इमोलिए वष्य-वस्तु का सकोच स्थूल एवं तिन प्राण अलकरण की अविभक्त काय की नमनिक कोमलता और व्यापकता का समाप्त करनी जा रही थी। फारसी काय में भी वह आत्मवल और जहागीर और गहजहा के समय में नहीं रह गया था जो अकबर के समय में था। यद्यपि जहागीर हिन्दी कविता का प्रमीया और हिन्दी कवियों को पुरस्कार भी देता था किन्तु अकबर की तरह उसका शासन-काल में कोई भी कवि अपनी काय प्रतिभा के बल पर महान न बन सता।

फारसी कवियों में प्रेम के बंधे बंधाएँ विषय को छोड़कर आग बढने की प्रतिभा न थी। उनका फज केवल गुनोतुलबुल शीरी फरहात् और लता मजनु के प्रेम प्रधान आख्याना का ही पूरी रगीनी में पश करता था। 'कसी' में तो राजाआ की अत्युक्तिपूर्ण प्रशस्ति के अतिरिक्त और कुछ भी शय न रहा। रीतिकवि भी इससे

१ प० रामचन्द्र मुखर्जी हिन्दी साहित्य का इतिहास प २२२

२ हिन्दू आफ मुस्लिम कल प० ४८

प्रभावित होकर अनेक प्रगल्भ काव्या की रचना करने लगे। स सृष्ट के अंतिम प्रकाण्ड विद्वान पंडितराज जगन्नाथ क काव्य म दरबारी परिवेग का पूरण से अकन मिलता है। उन्होंने शृगारी रचनामा के अतिरिक्त प्रगल्भ काव्या की भी रचना की। औरगजेव ने अथ कताकारो की भाति कविया को भी भुगत दरवार से बहिष्कृत कर दिया था।<sup>1</sup> औरगजेव की मृत्यु के बाद तो साम्राज्य की गति का पूणत विकीकरण प्रारम्भ हो गया। रहे-सहे कवि और कलाकार भी देशी नरगा सामता और नवाजा के दरवार म बिलसने लग थ। औरगजेव के उत्तराधिकारी मुहम्मदशाह के समय म साहित्य और कला को पुन दिल्ली दरवार म प्रथम मिला, किंतु बादशाह की अत्यंत विलासिता और रसिकता न साहित्य की अनुरजनकारी प्रवृत्ति का ही प्रोत्साहित किया।

आम क अथाया म रीतिकालीन कविया की अमिषजना शली और अग्रस्तुत विधान पर तदयुगीन दरबारी सत्कृति और विष्ण प्रभाव का सकत किया जाएगा। जहाँ तक रीतिकाल की साहित्यिक प्रवृत्तियो का प्रश्न है उसका निष्पण प्रथम अथाय मे ही 'रीतिनाथ की मुख्य प्रवृत्तिया के अतगत सम्भेप म कर दिया गया है।

### वृष्णव काव्याभिव्यक्ति की शृगारी परिणति

रीति-काव्य ने शृगार रम के आलम्बन रूप मकना के आराध शीवृष्ण और राधा को ग्रहण किया। राधा-वृष्ण के प्रति युगो स जन मानस का वृद्धमूल धृढाभाव रीतिवाच्य म आकर रतिभाव के रूप म परिवर्तित हो गया है। यह परिवर्तन कोई अप्रत्याग्नि सयोग नहीं था अपितु भारतीय ससृष्टि के विलासो-मुख कर्मिक विकास का परिणाम था।

विष्णाना का मत है कि प्राचीनकाल म भारत म द्रविड ससृष्टि थी। उस समय यहाँ गव साधना का प्रचार था। गव गाधना म लिए पूजा और गाकन साधना म मुग्ध का महत्त्व मा य था। वान म आय आय और उनके साथ वस्त्र त्वता इत्र वरण वायु उपस और पूषा की कमवाण्ड प्रधान उपासना आइ। आभीरा का भारत म आगमन एन भावना मक शान्ति का कारण हुआ। डा० हजारोप्रसाद द्विवेदी प्रभृति विष्णाना का कथन है कि गोपवधारी वृष्ण इ ही आभीरो के त्वना थ। नव आगमन के पूर्व द्रविडा का साण्ड जगा रीद्रम प्रथन पावनी का नात्य जगा कामल शृगारि नत्य भारत म प्रचलित थ किंतु आभीरा क आगमन म वृष्ण आर उनके साथ समस्त रसाग्नि लनित नृत्य आय।

भारतीय चिन्ताधारा क कर्मिक विकास का त्वन हुए एना अनुमान दिया जा

1 As for the arts Yu Jan zeb was a thorough gone Philistine Painter, to him savored of idolatry poetry was a pand ring to effeminacy and music was an abomination

सत्ता है नि पहले मुख्य रूप से दो धाराएँ थी। एक धारा विधि निर्वेधा की माननवादी धारों की थी जिसमें मयाग के अनुकूल परम देव विष्णु की उपासना विहित थी, दूसरी धारा स्वच्छ इ प्रेम विलास को लेकर प्रवाहित होनेवाली आभीरा की थी जिसमें कृष्ण और गोपियों की प्रेम गीत की प्रधानता थी। इन दोनों की कुछ-कुछ प्रमाणावधि श्रीमदभागवत में दृष्टिगत होती है जो धारों के देवता विष्णु की भक्तिधारा का सजसे प्रबल और गीता के बाद सबसे अधिक प्रचारित प्रसारित ग्रथ है। श्रीमदभागवत में कृष्ण का मधुर रूप मुखरित है। श्रीमदभागवत के बाद गीतगाविद में आप और आभीरसंस्कृतिया का मिलित रूप दृष्टिगोचर होता है। राधा और कृष्ण की मधु शोभा का पूज्य आत्मसात करके उस भक्ति की चामनी में लपेट कर उपस्थित कर का काम पीयूषवर्षी जयदेव ने किया।

जयदेव का गीतगाविद संस्कृत साहित्य की एक परम्परा से अलग जननीतिया के आधार पर लिखा गया गीतात्मक खण्डकाव्य है। उसमें आभीरा के द्वारा गाए जानेवाले लोक प्रचलित रागा-कृष्ण विषयक प्रेम श्लोक के गीता की सुव्यवस्थित नास्त्रीय परिपाटी में निबद्ध करके का प्रथम ज्ञान प्रयास दृष्ट हाता है।

गीतगाविद में पूर्व शृंगार भक्ति का उभा यामुनगाय सगम किसी साहित्यिक कृति में प्राप्त नहीं होता।

अद्यावधि उपलब्ध साहित्यिक विवेचन परीक्षण में यह निष्कर्ष निकलता है कि वैदिक काल से लेकर गीतगाविद तक साहित्य की दो धाराएँ थी—एक धारा आध्यात्मिक शक्तियाया देवी-देवताओं के श्रद्धा प्रेममय रूप का विकसित करवाली स्तोत्रा की थी, दूसरी लाभिक मानवीय प्रणय यापार के स्थूल रूप को विकसित करनेवाली। भक्ति-काव्य के विकास का सम्यक् चर्चित स्तोत्रा से माना जा सकता है। ऋग्वेद के ऋषिया ने अपनी धार्मिक भावना को काव्यात्मक रूप देकर देवताओं की प्रशंसा और प्रायना की बाद में वैदिक देवताओं के रूप में परिवर्तन आन लगा और उनके स्थान पर नए देवता प्रतिष्ठित हुए तथा गुणक कर्मकाण्ड के स्थान पर व्यक्तिगत और भावात्मक पूजा पद्धति प्रचलित हो गई। धीरे धीरे दृष्ट की धारा में मनोवैज्ञानिक भाषा का योग हुआ फिर वैदिक देवताओं से भय और सत्ता के स्थान पर नए देवताओं से प्रेम भाव किया जान लगा और देवता भी भक्तवत्सल रूप में चित्रित किए गए। इस भावाच्छ्वसित आराधना के परिणामस्वरूप भगवान् जन भावना और जन-जीवन के अधिक निकट हो गए। वैदिक देवता लौकिक साहित्य में कालान्तरिक न रहकर जीवित सत्य हो गए।

वैदिक युग का आनन्दवाद परवर्ती जीवन में नहीं लिखा हुआ। उनके स्थान पर कर्म और पुनर्जन्म में विश्वास में निराशावादी जीवन स्थिति को व्यक्त किया और अपने शरण्य की कामना से आराधक न श्रवणारवाण की कल्पना की। मानव की सम्पूर्ण इच्छा और भावना शरण्य भगवान् के प्रति अर्पित हो गई।

परवर्ती स्तोत्र साहित्य नई परिस्थिति में नूतन भाव भूमिया का सजक सिद्ध



हुआ। जन और बौद्ध भी अपनी दु रावाणी गावाया के कारण ही दुआ की शरण्य कामना के अधिा निरुत्त आ गए। इन स्तोत्रा का विस्तार डा० सुगीलकुमार दे के अनुसार महावाच्या और पुराणा म भी दृष्टिगत होता ह। उहाने स्पष्ट लिखा ह कि कठोपनिषद और श्वेताश्वतरोपनिषद तथा विष्णु ब्रह्माण्ड मानण्डेय पदम स्कन्ध भागवत् ब्रह्मववत और देवीभागवत को ऐसे स्तोत्रा का भाण्डार कहा जा सकता ह।<sup>१</sup>

पुराणों और उपनिषदा के अतिरिक्त तथा म प्रपच सार छद्रयामल, विश्वसार शारणातिलक महानिर्वाण और तत्र सार तथा वाक् के साम्प्रदायिा उपनिषदा— नारायण कबल्य तथा गापात्र तापनी म कुछ साहित्यिक स्तोत्रा क नमूने मिलत हैं। डा० गोपीनाथ कविराज ने श्रीकृष्णमाल गौतमीय तत्र सनकुमार संहिता, आलव दार संहिता सुदरीतत्र आदि प्रागम ग्रंथो का प्रभाव श्रीकृष्ण और राम विषयक लीला साहित्यो पर माना है। उ हाने श्रीकृष्णलीला का त्रिपुरमुन्री की उपासना क साथ घनिष्ठ सम्बध की और भी सक्त किया है।<sup>२</sup>

इस विवेचन से यह स्पष्ट हो जाता है कि परवर्ती राम और कृष्ण की शृगारिक लीलाया क मूल सान मदेन भावित के स्तोत्र माने जा सकते हैं जिसकी ठखला वेदिक स्तोत्रा से जुडती है।

पूर्वोत्तिरित भक्ति साधना की प्रभावित करनेवाली भारतीय धिताधारा की दूसरी शाखा का क्रम विकास जा मूलत एहिक ई द्रयोपभोग को लेकर प्रवर्तित हुआ — वेदिक प्रेमपरक मास्थाना से निरूपित किया जा सकता ह। डा० दन इसका प्राचीन और मूल उत्स वेदिक सवाद सूक्तो की माना है जो ऋग्वेद क दशम मण्डल म निबद्ध हैं। यह सवाद मत्य पुरुरवस और अभरा उवगी — के म प्रुमा माना जाता है।<sup>३</sup> भारतीय साहित्य को इस प्रणय सवाद ने दूर तक प्रभावित किया और कालिदास की प्रसिद्ध कृति विनमोवगीयम मे हपायित हुआ।<sup>४</sup> दूसरा प्रमास्थान ऋग्वेद क दशम मण्डल म ही यम और यमी के सवात् सूक्ता मे ब्यक्त हुआ ह।<sup>५</sup> मृष्टेक आदिम मानव की बलवती काम बुभ्रसा का ज्वलत उदाहरण यमी की अपने भाई यम स प्रणय याचना है। प्रथम सवात् सूक्तो म पुरुष की असफल प्रणय याचना है और दूसरे म नारी की। इस प्रकार दोनों विप्रलभ शृगार के ही उदाहरण है। विद्व साहित्य म प्रेमररर सवपदम पद्य होने के कारण इन सवाद सूक्ता का महत्वपूर्ण स्थान है। समोग शृ गार के उदाहरण सूर्या सूक्त की दाम्पत्य प्रेम विषयक उक्तियाँ मानी जा सकती हैं।

वेदिक साहित्य म प्राप्त ऐसे प्रणय सवात् इस धारणा को पुष्टि करत हैं कि

१ डॉ एच के दे एस्पेन्स भाव मसूत निठरवर प १०२१३

२ डॉ गोपीनाथ कविराज (प्रदिका) रामभक्ति म रविक सम्प्रगम प० ७

३ ऋग्वेद १०।६५

४ डॉ० मु कु दे ए [भाई० ई एंड ई० एच पृ १

५ ऋग्वेद १०।१०

प्राचीनकाल में भी ऐसी न जाने कितनी प्रणय कथाएँ प्रचलित रही होंगी जिनके अवशेष इस रूप में सुरक्षित रह सकें।

वास्तव में आदिम जातियों में सगानोपादन और समीप सुख का कारण हान के कारण धीरे धीरे काम की महत्त्व मिना होगा और उसके परिणामस्वरूप उसे पुष्पार्थों में गृहीत किया गया होगा। वदिक साहित्य में काम भावना की महत्ता को स्वीकार करने योग्य यथादि को यौन प्रतीका से सम्बद्ध किया गया है।<sup>१</sup>

काम भावना को उत्तरोत्तर सर्वाधिक शक्तिशाली भावना के रूप में मायता मिलती गई और अंत में इस एक देवता के रूप में मानवीकृत करके पूज्य घोषित किया गया। यद्यपि इसके पूजन अचन का उल्लेख काम या प्रेम शक्ति व परम देवता के रूप में नहीं मिलता। ऋग्वेद में एक अमृत रूप में 'काम' का उल्लेख मिलता है। हा प्रसिद्ध नासदीय सूक्त में 'काम' या इच्छा का उल्लेख ब्रह्म के मन में सर्वप्रथम उदभूत विकार के रूप में हुआ है।<sup>२</sup> अथर्ववेद में काम को सर्वसे शक्तिशाली देवता माना गया और इसी समय अग्नि से की गई है। साथ ही उसके शक्तिशाली वाणों का भी वर्णन है जो हृदय वेधने में परम सक्षम हैं। परवर्ती काया में सम्भवतः पुष्पार्ण धारी कामदेव का अवतरण इसी वदिक देवता का विकसित रूप है।<sup>३</sup>

ब्राह्मण साहित्य में यद्यपि प्रेम कथाओं का अभाव है तथापि पुरूरवा और उर्वशी तथा दुष्यंत और शकुन्तला की प्रेम कथा का क्षणपथ ब्राह्मण में सर्वाधिक उल्लेख मिलता है।<sup>४</sup>

ब्राह्मण साहित्य की ही तरह बौद्ध जीवन दर्शन में भी प्रेम या कामभावना के विकास की भूमि उबर नहीं थी तन्नाम लोकगीता की प्रचुर राशि में से केवल एक प्रेम गीत शीव निकाय में संगृहीत रह गई जिसके आधार पर डा० द न उसकी विपुल राशि में हाने की कल्पना की है।<sup>५</sup>

१ दे० डा० मिथिलेश काशिक सिन्धी शक्ति शृंगार का स्वरूप (१९७२) पृ० ६७

२ ऋग्वेद १०।१२२।४

३ "One of the spells already quoted above (Atharv III 25) mentions the arrows with which the disquieting pierces hearts arrows which are winged with pain barbed with longing and has desire for its shafts He is the forerunner of the flower arrowed god of love, whose appearance names and personality were established in the Epics and became fully familiar in later classical literature

—Dr S K De AIS & EL p 6

४ वही पृ० ८

५ The only pretty love song which breathes freely the atmosphere of human sentiment is the one called the Question of Sakka in

वदित् साहित्य म काम को धार्मिक दृष्टि स महत्त्व दिया गया और धार्मिक क्रियाओं की तुलना काम क्रियाओं स करत हुए ममोगादि का भी धार्मिक कृत्य व रूप म स्वीकार कर उस यवस्थित किया गया । धार्मिक कृत्या म आवृद्ध काम भावना बहुत कुछ कतव्य बुद्धि स अनुशासित हा चुकी थी किन्तु प्रणय कथाओं क माध्यम स स्वच्छन्द विकास की परंपरा भी जीवित रही । उसक धार्मिक विकास का एक रूप हम परवर्ती धार्मिक संप्रदायों म पाते है । धार्मिक सम्प्रदायों म काम भावना का विकास मूलतः शृ गारारंभक रहस्यवाद क रूप म हुआ जिसका सम्बन्ध मानसिक और ऐंद्रिक विषय वस्तु के अधिक समीप दिखाई पत्ता है । इसकी कुछ चर्चा पहले की जा चुकी है । शृ गारारंभक मन्त्रि प्रधान स्तोत्रों ने मध्यकालीन मन्त्रि को एक नया मोड़ दिया । इनके परिणामस्वरूप गाकर स्तोत्रों की गभीर दाशनिकता के स्थान पर कामवृत्ति प्रधान शृ गारिकता को अधिक उम्कृत वातावरण मिला और धार्मिक भावना ऐहिक भावना क अधिक निकट आ गई ।

भक्ति आन्दोलन म कृष्ण के पौराणिक शृ गार प्रधान जीवन का विशेष प्रथम मिला । उसम शृ गार का मयादिन और उन्मूलन पत्र गृहीत हुआ । बाद म मध्ययुग की गोपी-कृष्ण सम्प्रदायी प्रणय-कथाओं या शृ गार प्रधान लीलाओं को ग्रहण करके भक्त कवियों ने गिव या बुद्धि की अपेक्षा कृष्ण-लीलाओं म यौवन और तज्जय शृ गारी भावनाओं का विशद गान किया । वष्णव सम्प्रदाय म ऐसी भाव भक्ति की विवृत्ति को प्रधानता मिली । डा० दे क अनुसार कृष्णपरक प्रणय कथाओं न वष्णव भक्ति म शृ गारपूण अभियन्तियों की धारा पवाहित की । हरिवंश और विष्णुपुराण की अपेक्षा श्रीमद्भागवत की वष्णव-वस्तु कृष्ण की शशव और यौवन काल की लीलाओं चेष्टाओं तक ही सीमित है । कृष्ण क प्रति गोपी की भावमयी तमयता ब्रह्म और जीव के मिलन का प्रतीक बन गई । इस प्रकार की लीलाओं का विशेष निवास पद्मपुराण और ब्रह्मवैवर्तपुराण म दृष्टिगोचर हाता १ ।

परवर्ती भक्ति कायाम रामायण महाभारत और पुराणों के देवी देवताओं का अवतरण हुआ । महाभारत और रामायण म शृ गारिक वृत्ति को उतना अवकाश नहीं मिला जिनना पुराणों म । इन पुराणों म भी शृ कृष्ण का ही प्रणय-लीलाओं का विस्तार मिलता है अन्य देवी-देवताओं का नहीं । महाभारत म श्रीकृष्ण की शृ गारिक

the Digh Nikaya This exquisite little love song is like a little oasis in the immense and arid tract of Brahmanical and Buddhist literature of many centuries but it is also a sure indication that in the popular gathas, of which this is the only surviving specimen love must have been an important theme

—Dr De AIE & EL p 9-10

लीलाग्रा का विस्तार नहीं है। समवन सबसे पहले विष्णुपुराण में श्रीकृष्ण और गोपी की प्रणय गीता का उल्लेख मिलता है। इसमें कृष्ण की शाय और परापवार प्रधान लीलाओं के साथ उनके माधुर्य के उदघाटक तत्वा का भी संज्ञा किया गया है। विष्णुपुराण के तरहवें अध्याय में रासलीला का वर्णन है। चौबीसवें अध्याय में गोपिया मयुरा में आए हुए बलराम को कृष्ण के कठोर आचरणा के लिए उपालभ देती है। यद्यपि इस पुराण से कृष्ण की प्रणय गीलाग्रा का उल्लेख करते हुए कवि अधिक भयमित और मयादिन है किन्तु गोपी विरह में गोपिया के प्रसंग की उक्तिया उनके अभयमित भावोद्देश के पूर्णरूप से अभिव्यक्त करती है। हरिवंशपुराण में रासलीला का वर्णन प्राप्त होता है जिसमें गोपिया की रति प्रियता तथा कृष्ण के साथ उनके रमण का उल्लेख किया गया है। इसमें आलिंगन रति रात्रि मिलन और नृत्यादि का सागोपाग निरूपण रीति परंपरा के अनुबूल हुआ है।<sup>१</sup>

पद्मपुराण के उत्तर खण्ड में कृष्णलीला का संक्षिप्त वर्णन मिलता है। इसमें अष्टयाम लोचनीडा मधुपान, जलनीडा धूपनीडा अभिसार आदि का सागोपाग निरूपण मिलता है।<sup>२</sup>

ब्रह्मवदनपुराण में यद्यपि श्रीकृष्ण और राधा के देवत्व का संकेत दिया गया तथापि उनकी लीलाग्रा में स्थूल मासलता की कमी नहीं।<sup>३</sup> कई स्थला पर तो एम वर्णन हैं कि उनके समग्र रीतिकाल की स्थूल शृंगारिकता भी मर्यादित-सी लगती है।<sup>४</sup>

परवर्ती संहिताग्रा में गग संहिता श्रीकृष्ण लीला का जिस रूप में उपस्थित करती है वह रीतियुगीन विनासिता के काफी निकट है।<sup>५</sup> कवि ने प्रस्तुत महिता में मयाग और वियाग का रुद्धिबद्ध वर्णन किया है। वियाग-वर्णन में जो रुद्धियाँ रीतिकान्य में प्रयुक्त हैं उनकी पूर्ण विवक्ति संहिता में मिलती है।<sup>६</sup>

उपयुक्त पुराण में कृष्ण की वृंदावन लीलाग्रा का जसा वर्णन मिलता है उसके आधार पर धार्मिक सम्प्रदाया में शृंगारात्मक रहस्यवाद का प्रचलन हुआ। पौराणिक राधा-कृष्ण की प्रणय कथा अपनी समग्र शृंगारिक लीलाग्रा के साथ भक्ति साहित्य की एक महत्वपूर्ण उपनद्वि सिद्ध हुई। इस प्रकार धर्म में इन लीलाग्रा ने शृंगार को महत्वपूर्ण स्थान दिया। इसमें एक और तो मानव की शक्तिशाली वक्ति को उज्ज्वल रूप मिला और दूसरी ओर धार्मिक जीवन में स्वामाधिक मानवीय भावना और सौंदर्य बाध को भी स्थान मिला जिसमें उसकी नीरस कमजाण पद्धति और साधना पद्धति

१ हरिवंशपुराण २।२०।१५ ३५

२ पद्मपुराण पानाल खंड ७२।१६ ८३।१०५

३ ब्रह्मवदनपुराण ४।३।१५ ४।१।१८ ४।१।१४ १६१ ४।२।१।८४ १८६ ४।२।१।७२ ७६ ८८ ८९

४ बरी ४।२।६ ४।२।१८

५ गग संहिता २।१२।२४ ४।३।३

६ बनी १।१।१ १।१।२२

मे भी परिवर्तन हुआ।<sup>१</sup>

साहित्य में प्रारम्भिक निर्माण काल में ही प्रेम-सत्त्व की मर्यादित विज्ञति मिलती है। इसका विकास असंयमित आत्माभोग के लिए नहीं हुआ। इसीलिए काम को धर्म का अनिवाद्य अंग स्वीकार करने हुए उस नास्त्रीय नियम में संयमित और परिपुष्ट किया गया। वाद में व्यक्तित्व भावनाओं को कलात्मक रस का रूप दिया गया। मक्ति-साहित्य में हम कलात्मक रस रूप का दर्शन हाता है। भक्ति सम्प्रदाय का विनाल साहित्य प्रेम के समुज्ज्वल और मनोवर्णनार्थ आधार पर प्रतिष्ठित है। पं० वरणापति त्रिपाठी ने स्पष्ट शब्दों में लिखा है— कृष्ण भक्ति की समस्त प्रेमापासना— बालकृष्ण का माध्यम कालाभाव या प्रेयोभाव की भक्ति, युगल सरकार की रागमयी उपासना, गोपीभाव सहचरी भाव सखी भाव सख्य भाव और सवक भाव की भक्ति दृष्टि भी प्रेम के ही उत्पन्न दिव्य और श्रद्धाजुष्ट रूप को लहर चली। इस प्रकार राग सवलित प्रेमाश्रित कृष्ण भक्ति की ममस्त ललित और मधुर उपासनाएँ जिनमें लीला और कलि विलास का मधुमय प्रवाह बहता दिखाई देता है सभी प्रेम के ही विवरण हैं। प्रेम शृंगार की इस भावना का कृष्ण कवियों ने रसशास्त्र के आधार पर पल्लवित किया। कृष्ण और राधा की लीला परस्पर आकषण प्रेम मिलन विरह मान आदि का समग्र साहित्य रस सिद्धान्त पर आधारित है। लीलाओं के वर्णन में कवियों ने रसशास्त्र का ही नहीं अपितु अलंकारशास्त्र का भी आधार ग्रहण किया। साहित्यशास्त्र और कामशास्त्र में मानवीय भावों का वर्णनार्थ वर्गीकरण उनके हेतु और परिणामों की सम्यक विवेचना करके ही निर्धारित किया था। इसी वर्णनार्थ पद्धति का विकास परवर्ती वर्णन सम्प्रदाय और सिद्धान्त में पूरा मधुरता के साथ पाया जाता है।<sup>२</sup> डॉ० शशिभूषणदास गुप्त ने लिखा है— अप्रकृत बालक धाम के श्रीराधाकृष्ण की नित्यलीला को साहित्य में रूपायित करते हुए वर्णन कवियों को मनुष्य का दृष्टान्त और मनुष्य की भाषा को ही अपनाना पडा है। राधाकृष्ण प्रेम भी इसीलिए मानवीय प्रेमलीला के समीप वर्णन माधुर्य में प्रकट हुआ है। अलंकारशास्त्र समेत नायक नायिका

१ डॉ० एस० क० दे एस्केप्टम प्राध्यापक मस्तर लिटरेचर प० १२६१

२ प० वरणापति त्रिपाठी रसरत्न विभागीय प्राध्यापक प० १३

3 The technical analysis and authority of the older Poetics and Erotics had already evolved a system of meticulous classification of the ways means and effects of the erotic sentiment and established a series of rigid conventionalities to be expressed in stock poetic and emotional phrases analogies and conceits To all this the neo Vaisnava theology and theory of sentiment added a further mass of well defined subtleties and elegancies

के मन्त्री प्रचार के भेदा पर विचार करते कृष्ण और राधा को ही मन्त्रश्रेष्ठ नायक-नायिका सिद्ध किया है। राधा रजिन अनुभावादि का वणन किया गया है और रतिरूप स्थायी भाव का व्यभिचारी भावादि वर्णित हुए हैं उनके अन्दर भारतीय अलंकार गान्धर्व और कामशास्त्र का मिश्रण हुआ है। भारतीय कामशास्त्र में एक श्रेष्ठ नायिका में जाह्नवधम और मनोधम वर्णित हुए हैं हम उन मन्त्री को राधिका के ही अन्तर्गत हैं। वात्स्यायन के कामसूत्र में नायिका के जिन गुणों का वणन किया गया है, उज्ज्वलनीलमणि की नायिका के वणन में हम प्रकारांतर से उसी की प्रतिध्वनि सुनते हैं।<sup>१</sup> रूपगोम्बाम्नी न मधुररम का शास्त्रीय विवेचन करते हुए इसे कृष्णविषयक शृंगार माना है। एक अन्तर्गत कृष्ण तथा कृष्णप्रिया हैं। उद्दीपन मुरली निस्वनादि, अनुभाव नयनकाणस दग्धता और श्मित आदि व्यभिचारी आनन्द, उग्रता के अतिरिक्त अथ सब तथा स्थायी भाव मधुरा रति है। विप्रलम्ब तथा समोग इन्में दो भेद हैं और विप्रलम्ब का अंतर्गत पूर्वगण मानप्रवास आदि भेद किए गए हैं। इमसे यह निश्चित होता है कि मधुररम शृंगाररस का ही भक्तिपरक नाम है। डा० आनन्दप्रकाश दीक्षित न मधुररम के सिद्धांत और स्वरूप का विश्लेषण करते हुए निष्कप रूप में लिखा है 'उज्ज्वलनीलमणि' के मधुर भक्तिरस का विस्तार शृंगार की अनेकानेक दशाध्यातक है मयाग वियाग की मिश्रित अवस्था भी उसके ही अंतर्गत आती है। वस्तुतः वह दशा तो समभन मात्र के लिए है। यदि गण सम्पूर्ण वणन कृष्णपरक अर्थों में न दखा जाय तो शृंगार का ही वणन है उमक भेदोपभेद में आवश्यक अनेक स्थितियाँ का विचार करते भिन्नता का प्रदर्शन किया गया है।

चतुर्थ वणनवाने भक्ति को सर्वाधिक महत्त्व दिया और इमें पंचम पुरुषार्थ माना। यद्यपि भक्ति की प्राचीन धारा का स्फीत प्रवाह पुराणा में मिलता है तथापि श्री रूपगोम्बाम्नी ने वह पथ प्रदर्शित किया जिसमें भक्ति को भी रस-कोटि की प्राप्ति हुई। भक्ति धारा में पहल भगवान् का जिस रूप का भावन किया जाता था उसमें ऐश्वर्य की प्रधानता थी किन्तु रूपगोम्बाम्नी ने उनके जिस लीला विलास वाचने रूप का उद्घाटन किया उसमें जन अनुरजन की प्रवृत्ति प्रधान थी। इस रागानुगा भक्ति में रसशास्त्र की व सारी मायनाएँ प्राप्त होती हैं जो किसी भाव को रसशास्त्र तक पहुँचाने में पूण समर्थ होती हैं। मन्त्रा का भावाच्छवाम केवल रसशास्त्रानुवर्ती ही नहीं अपितु अलंकार-शास्त्रानुवर्ती और नामशास्त्रानुप्रेरित भी सिद्ध हुआ।<sup>२</sup> भक्ति कवि विद्यापति ने राधा-कृष्ण के जलरजस रूप का चित्रण वडा ही मामल हुआ है। इसीलिए विद्यापति मन्त्रा रति की अपेक्षा शृंगारी कवि ही अधिक सिद्ध होते हैं। भक्त कवियों में उनके रम रूप का ही प्रहण हुआ जिसके कारण भक्तों में भाव लालित्य की प्रधानता लक्षित

१ डा शशिभयनराम गण्ड श्रीराधा का क्रम विवाम प २२५ २२७

२ डा आनन्दप्रकाश दीक्षित रससिद्धांत स्वरूप विश्लेषण प २८०

३ डा एम के डे एम्बेनट्टम आप सस्कृत चिह्नरेखर प १२१

हाती है। १० विष्णुनाथप्रसाद मिश्र की लिखा है 'शृणु मन्ना ने भगवान् क एतय रूप का ग्रहण नहीं किया सम्पूर्ण का ही ग्रहण किया। उन्ही श्रीशृणु की द्वारा सीता महाभारत की नीति धार्मिक धरणा प्रयोजन की रखा। यथावा का हंगना-मूलता रूप ही ग्रहण किया।'

राधावन्तम सम्प्रदाय क सम्पादन लिहरियन न राधा शृणु क पौराणिक रूप को उतन ही धरणा म ग्रहण किया है जिना उन्ही धरणा प्रमाणाना क लिए आवश्यक था। सवाजी न श्रीहरियन क उपासना माग न ग्रहण करा क धरने कारण को बतलाया है 'गैने मत्र धरणा का भवत करन रूप किया है किन्तु उन्ही प्रीति का प्रमाण उतना न हात क कारण मत्र का धरुन धारण नहा हाता।' इमीलिए मन्ना सम्प्रदाय म मधुरामन्ना न स्थान वि। ए मन्त्ररूप है। इमम जिनना विविधता है उतनी न तो गान्धभाव म है न शक्य न सम्प या वात्सल्य म ही है। तथ्य यह है कि मधुरामन्ना या प्रेमभणना मन्ना का स्वरूप विराम बहुत कुछ रमराज शृगार क स्थायी भाव रति क उन्नत रूप पर आधारित है। धन शृगार की पूरी रस-माग्नी इस मन्नामग म शृहीन हुई। डॉ० शक्तिभूषणनाथ गुप्त ने स्पष्ट किया है कि राधा प्रेम का आनन्दन करके वारहवी मन्ना स जो धरणा कविता लिखी गई उमस वारहवी मन्ना और उमस शृणुन पहन की लिखी पार्थिव प्रम-कविता का साम्य राधावन्त की उत्पत्ति और प्रमविकास क इतिहास म एन दिना स विशेष तात्पर्यपूर्ण है। हमने देखा है कि वारहवी मन्ना के जयन्त के धरणा दूमेरे समी कवियों की लिखी राधा प्रम की कविता और वारहवी मन्ना क शृणुन पहन लिखी राधा प्रम की कविता एव समसामयिक पार्थिव प्रेम कविता एव ही सुर म प्रगिन है।<sup>१</sup> मन्ना सम्प्रदाय म स्वीकृत शृगारिक प्रसगा का निरूपण करत हुए भवत आचार्यों न दस प्रतीकात्मक शय देने का प्रयास किया है। शृगारपरक काय को आत्मा परमात्मा की मिलनोत्कंठा भावात्मक योगसाधना और आत्मसमपण आदि मानकर समभाने का प्रयत्न किया गया है। डॉ० दे ने स्पष्ट ही लिखा है कि भवत कविया ने यद्यपि राधा शृणु का धरण किया है किन्तु इस भीन आवरण के अन्त उन्हांन अपने ही भावा आगा और मय ह्य और अवसाद का धरण किया है।<sup>२</sup> एस का य म सीता 'गुव' का कर्ण-नर्पाश्रित महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है। उक्त शय म अनव छ्मा म मन्नापरक गीता का सशुद्धीत किया गया है। यह

१ ५ विश्वनाथप्रसाद मिश्र हिन्दी साहित्य का अन्तर्गत भाग १ ५ ३१

२ 'नलिताचरण गोस्वामी' का हरिवन्त गोस्वामी सम्प्रदाय और साहित्य पृ ८७

३ डॉ० शक्तिभूषणनाथ गुप्त श्रीराधा का प्रम विकास पृ १७७ १७८

४ 'The Devotee poet speaks indeed of Radha and Krishna but under this thin veil he speaks of his own feelings of his own hope and fear of his own joys and sorrows

कण्ठपरक स्तोत्र-काव्य है। इसमें कण्ठ के जीवन और उनकी लीलाया का वर्णन नहीं अपितु मन्त्र के भावोच्छ्वसित हृत्पथ के उद्गार वर्णित हैं। कण्ठव सिद्धांत को निम्न-लिखित श्लोक में बड़े कोटन से निरुद्ध किया गया है—

स एष वासुदेवोऽसौ साक्षात् पुरुष उच्यते ।

स्त्री प्रायम इतरसव जगदब्रह्मपुर सरम ॥<sup>१</sup>

अर्थात् वह वासुदेव ही वेदों साक्षात् पुरुष है और सम्पूर्ण जगत् स्त्रीवत् उससे सम्बद्ध है। लीलागुरु ने इसी गायोभाव में भगवान् के कपाकटाक्ष की याचना अनेक श्लोकों में की है। उक्त ग्रंथ का कर्त्तव्यता माधुय के कारण ही महत्त्व नहीं अपितु मध्यकालीन भक्तिभावना के प्रतिनिधि काव्य के रूप में भी है जिसमें शृंगारिक रुचिया की धम के परिवर्तन में स्थापना की गई है।<sup>२</sup> लीलागुरु के कण्ठ वर्णामृत की ही तरह अनेक स्तान-भाष्या की रचना हुई। जयदेव का गीतगोविन्द यद्यपि स्तोत्र काव्य नहीं है तथापि यमन भक्ति के दूसरे रूप का उत्थापित किया है जिसका वर्णन पहले हम कर आए हैं। जयदेव के गीतगोविन्द ने मध्यकालीन साहित्य और धर्म-साधनाया का पूरा प्रभावित किया इसमें दो मत नहीं। इसीलिए उक्त ग्रंथ का जितना समादर भक्ति के क्षेत्र में है उसमें धर्म साहित्य के क्षेत्र में नहीं।

एक कवि या एक भक्त के रूप में जयदेव ने इस ग्रंथ की रचना किसी भक्ति पद्धति के आधार पर नहीं की थी। सम्भवतः ऐसा लीलागुरु ने भी नहीं किया कि किसी कण्ठव पद्धति का आधार लिया हो। उसमें कर्त्तव्यता के अतिरिक्त भी फिर भी भक्ति तत्त्व को गौण स्थान इसमें नहीं दिया गया।<sup>३</sup>

एक बात और ध्यान देने की है कि सर्वप्रथम अपने गीत की अन्तिम पंक्तियों में अपना नाम स्तन की प्रथा का प्रारम्भ जयदेव ने ही किया, जिसे 'भणित्ता कहते हैं।<sup>४</sup>

१ श्री एष के रूप में कण्ठव सिद्धांत के अतिरिक्त ५० १३४

२ वहाँ प १२६

३ As a poet as well as a devotee, of undoubted gifts Jayadeva could not have made it his concern to compose a religious treatise as perhaps Lilasuka also never did according to any particular Vaisnava dogmatics he claims merit as a poet and his religious emotion or inspiration should not be allowed to obscure his proper claim

Ibid p 154

४ The rhymed and melodious metric metres with their refrain are hardly akin to older Sanskrit metres, while the last line gives what is called the Bhanita—a method not found in earlier





अनुयायी रूपगोस्वामी का पूरा भक्तिवाच्य वृष्ण की शृंगारी भावनात्मक भक्ति का पोषक है जिसका मूत्रपात चतुर्वर्ण ने किया था। उन काया म प्रेरणा से अधिक शास्त्राभ्यास वास्तविकता से अधिक अलंकरण विस्वास में अधिन गद भण्डार और मानवीय भावसम्प्रेषण की अपेक्षा कलात्मकता अधिन है।<sup>१</sup> राधा वृष्ण की शृंगारपूण व दावन लीलाभ्या से सम्पन्न रूपगोस्वामी व लगभग साठ स्नात्रा गीता और विह्वलवर्णिया का बहद सग्रह 'स्तवमाला' का नाम से श्री जीवगोस्वामी ने प्रस्तुत किया है।

मध्यकालीन भक्ति शृंगार का चरम विकास हिंदी-साहित्य की वृष्णभक्ति शाखा में प्राप्त होता है। वृष्णभक्ति का सम्पूर्ण साहित्य उपलब्ध नहीं है फिर भी खोज विवरणों में ऐसे गताधिक प्रथा का उल्लेख मिलता है जिनमें वृष्ण राधा की विकास लीलाभ्या का वर्णन भक्ति भाव से समन्वित किया गया है। राधावल्लभ सम्प्रदाय में प्रेमलक्षणा भक्ति की स्वोद्यति ने इस साहित्य का दूर तक प्रभावित किया। डा० विजयद्र सातक ने रसरूप राधाशरण की भक्ति व विधायक तत्त्वा का विश्लेषण करते हुए लिखा है 'प्रेम की एहिक और आमुष्मिक महत्ता प्रदर्शित करते हुए इस सम्प्रदाय की वाणिया में इसका जा विशद यापन वर्णन हुआ है व इस बात का प्रमाण है कि प्रारम्भिक साधना व सिद्धांतव्या भक्ति का भा प्रेम के आग काइ महत्त्व नहीं दिया गया है।'<sup>२</sup> विभिन्न वर्णव सम्प्रदायों में प्रेम की स्वीद्यति का विश्लेषण करते हुए डा० स्नातक ने लिखा है 'तात्त्विक दृष्टि में इस सम्प्रदाय में प्रेम निय मिलन ने साथ अमि न सम्पन्न रखनवाला एक स्थायी भाव है जा विद्या भी रस में आनन्दरहित हानर क्षण भर भी नहीं ठहरता। गौडीय सम्प्रदाय में विरह की भावना पर आश्रित प्रेम का प्रधानता देता है। परकीया भाव के कारण विरह भावना का उमम स्वत महत्त्व हा जाता है।'<sup>३</sup> निम्बाक सम्प्रदाय स्वकीया भाव का समर्थक है अतः वहा मिलन में ही रस-मृष्टि समव है। बल्लभ सम्प्रदाय में गोपिया के विरह की स्थिति को प्रेम की उत्कण स्थिति कहा गया है।<sup>४</sup> यद्यपि प्रेम लक्षणा भक्ति का वाह्य रूप लौकिक शृंगार व विधान पर आधत है, पर उसकी भाव दशा सवथा भिन्न है। डा० स्नातक ने दाना का अंतर स्पष्ट करते हुए लिखा है "शृंगार

१ 'As they are deliberately meant to illustrate the many menaces of erotic emotional worship of Krishna made current by the Chaitanya movement they have more learning than inspiration more rhetoric than reality more wealth of words than fervour of faith more artistic than human appeal

—Dr S K De Aspects of Sanskrit Literature p 145

२ डा विजयद्र स्नातक राधावल्लभ सम्प्रदाय मिडल और साहित्य प १३४ ३५

३ सगमविरहविरहविरह वरमि विरह न सगमस्तव ।

एक स गव सग विरहविरहविरह तमय विरह ॥ —रूपगोस्वामी पदावला

४ डा विजयद्र स्नातक राधावल्लभ सम्प्रदाय मिडल और साहित्य प १३४ ३५

और प्रेम के सांसारिक चिन्ता के माध्यम से उद्धान (स्वर्गोत्वाभी न) हरिमन्त्रि का उज्ज्वल एवं दिव्य रूप खडा करके शृंगार की भोग वृत्ति का मन्त्रीभाति परिमाणन भी किया। मन्त्रि के क्षेत्र में जिस शृंगार को चतुर्थ सम्प्रदाय के आचार्यों ने अन्तर्हित किया था उसका कृष्णभक्ति-परक परवर्ती सभी कृष्ण सम्प्रदायों पर गहरा प्रभाव पडा और उसमें शृंगारमयी शैली से रसोपासना प्रवर्तित हो गई। रसिकाचार्यों ने प्रेम और शृंगार का वणन करके जा शली ग्रहण का उसमें प्रेम के प्रतिपादन में काम, मनाज आदि शब्दों का प्रचुर परिमाण में प्रयोग हुआ। साथ ही भाववस्तु के लिए भी स्थूल काम चेट्याद्या का सागोपाग वणन किया गया है।<sup>१</sup> एतद् वणन सामान्य पाठकों की दृष्टि से स्थूल एन्द्रिय बोध से समन्वित माने जाए तो अस्वाभाविक नहीं उठा जा सकता। इस परिणाम से मुझे आलोचक प० रामचन्द्र गुप्त अतिरिक्त न थे। उद्धाने वणन काया भिन्न-भिन्न की शृंगारी परिणति की और संकेत करते हुए लिखा है कृष्ण के जिस मधुर रूप को लेकर ये भक्त कवि चले हे वह हास विदाम की तरफ से परिपूर्ण अन्तर्गत सौन्दर्य का समुद्र है। उस सावभौम प्रमालम्बन के सम्मुख मनुष्य का हृत्पथ निरान प्रम लोभ में फूला फूला फिरता है। अतः इन कृष्ण भक्त कवियों के विषय में यह कह देना आवश्यक है कि ये अपने रंग में मस्त रहनेवाले जीव थे तुलसीदासजी के समान जोर सग्रह का भाव इनमें न था। समाज विधर जा रहा है। हम वान की परवा ये नहीं रखते थे यहाँ तक कि अपने भगवत्प्रेम की पुष्टि के लिए जिस शृंगारमयी लावण्य छटा और आत्मोत्सव की अभिव्यञ्जना से उद्धान वनता को रसोपासना किया उसका चारित्रिक स्थूल दृष्टि रखनेवाले विषय वासनार्ण जीवा पर कथा प्रभाव पडागा इगही और उद्धाने ध्यान न दिया। जिस राधा और कृष्ण के प्रेम का अन्तर्गत मन्त्रि ने अपनी गूढातिशूत चरम भक्ति का व्यक्त बनाया उसका चरम भाग के कविता में शृंगार की उद्धानकारिणी उक्तिया से हिंदी काव्य का भर लिया।<sup>२</sup>

मोटे तौर पर रीतिशास्त्रीय धार्मिक पृष्ठभूमि के अन्तर्गत जिन कृष्ण सम्प्रदायों की चर्चा की गई है सबमें रसोपासना का प्राधान्य ही गया था। मन्त्रि ने शृंगार-संबन्धित हास जिस माहि यथागत को प्रशस्ति दिया उसमें पावन भक्ति द्वारा निरामाव और लौकिक शृंगारद्वारा का प्रादुर्भाव हुआ। रीतिशास्त्र में राधा कृष्ण के नाम के साथ उनकी व सारी नीनाएँ भी आ गइ जा चतुर्थमय चरमिण अभिव्यक्ति में सहायक हुई।

१ डा० दिवेन्द्र स्तान्द राधाशान्ति सम्प्रदाय विद्यालय और माहि पृ १६१

२ वं रामचन्द्र गुप्त हिंदी काव्य का इतिहास पृ १२१

## तीसरा अध्याय रीतिकाव्य के उपजीव्य

### शास्त्र

हिंदी रीतिकाव्य भारतीय वाङ्मय में चिरंतन काल से निरन्तर शृंगार-वर्णन की परम्परा का स्वाभाविक विकास है। शृंगारिक उक्तियाँ आदिनायक से लेकर अब तक प्रभूत परिमाण में पाई जाती हैं। साथ ही शृंगारिक मनावृत्ति का विस्तार भी प्रचीन ऋषियाँ से लेकर आधुनिक मनोवैज्ञानिक और साहित्यिक आलोचकों तक न बड़ मनायोगपूर्वक और वैज्ञानिक पद्धति पर किया है। यद्यपि भारतीय साहित्यशास्त्र का बहुलाश अद्यावधि अनुपलब्ध है, फिर भी आ कुछ ज्ञात है उसी का आधार पर भारतीय आचार्यों की मौलिक विवचना का अनुमान लगाया जा सकता है।

रीतिकाव्य का उपजीव्य शास्त्रों में तीन बाँटि का प्रथम भाग है—कामशास्त्रीय नाट्यशास्त्रीय और काव्यशास्त्रीय।

### कामशास्त्र

शृंगार का रसशास्त्रीयान आदिरस का रूप में और उमरी मूढवृत्ति काम का प्राचीन मनीषिया ने पुस्तकार्यों में स्थान देकर उसके महत्त्व का स्वीकार किया है। सृष्टि का मूल आधार होने का कारण नशास्त्र में भी काम और शृंगार का महत्त्वपूर्ण स्थान दिया गया है। विधि निषेधा में मयादित और समयित करने के लिए आचार्यों ने कुछ नियमों का निर्माण करके उसके शास्त्रीय आधार को पुष्ट बनाया। ऐसा प्रथम पात प्रयास महर्षि वात्स्यायन का कामसूत्र है। हिंदू सस्कृति में कामशास्त्र का महत्त्व केवल यौन वृत्तियों की परितृप्ति में याग देने के कारण ही नहीं अपितु ऐहिक और आधुनिक मुख्य शक्ति का साधन का निर्देशन के कारण भी है। उसका मुख्य उद्देश्य अविच्छिन्न का परम्परा का निर्वाह तथा कलात्मक और परिष्कृत वृत्तियों का मार्ग निर्देशन है।

### कामशास्त्र परम्परा

विद्वानों का मत है कि ब्रह्मा ने सृष्टि के आदि में मानव के पथ प्रदान के लिए

एक बहु प्रथ का निर्माण एक शास्त्र सम्पाद्यः म रिया या त्रिमय धम एव धौर काम व सिद्धाता का विस्तृत विष्णण रिया गया था । शशा व पुत्र मा । धम मत्त चम्पति । धम गह धौर ताी (घरर व बाल) । मातर मा मूत । रुमि काम का मर हज़ार सम्पाद्यः म सम्पन्न विष्णण रिया ।<sup>१</sup> तत्त र धौरा । तत्त र वरिष्य (पाप) दत्तक, मुष्णराम धात्रमुष्ण धात्रि धात्रायी । उमर रिति र वधायया र विष्णु ध्यास्या प्रस्तुत का ।<sup>२</sup> उममु का धात्रायी र वध मत्प्रति रमंगीय ।

जिस समाज का भीत कामगूत्रा म भिन्न है य सामाजिक धारित धौर राजनीति मुख्यवस्था स मंगला रहा होगा । वा म्यायत र कता धौर विधान का का प्रष्पयन प्रस्तुत रिया उमम उतपु का गाम्त्राय यथा व धारितरिवा वत्तमात गागरका का जीवन चर्चा भी वम गहायन र रही गाय । वा म्यायत व घर म आर्याय गा रिय प्राचीनज्ञान स ही प्ररित हाता र्या है । रतिरिवा का गी वर हाता म त्त कामगूत्रा ता जा कुछ भी महत्त्व रहा हा विष्णु परवर्ती ररियत गागय का मष रया धौर कतामर रचिया व विस्तरण म इनम पर्याप्त गहायता ग्य । मन्त्रयि माध रता म्यरा मत्त उल्लरा रिया है ।<sup>३</sup>

भारतीय साहित्य रित्तारारा का दूसरी गताया व म प्रथ न पयात प्रभावित रिया । हिन्दू व मध्यराजात साहित्य का तता तात सामाजिक धरम्भा व धात्रुत निमित परवर्ती कामगाम्त्राय प्रथ न प्रवन्ध हा प्रभावित रिया हाता म्या डरि० त्त्राय प्रसाद द्विवनी का मत है । उगात रिया है य उतरकाजान प्रथ न रतिता रीतकवि व आदग य । नाभिरा व भद म नायक रारिराभा व व्यधगर रभायाधन शृंगार उष्ण धौर दनित काय मगूह हहा प्रथा स चारिता री र्थ थ । यी रत धारर नागर का बह पुराना धात्रा (उसका धरिरेवन वितासमय रीत) विम धिमातर गागारण मुत्स्थ व रूप म परिणत हा गया था ।<sup>४</sup>

रीतिकान्ध म जिस धामिजाय का रित उपाध हाता है उमरी मून प्ररणा कामशास्त्र म वर्णित नागरर वत्ति हा है । रतिरात्र व सामन्त धौर रीतिकान्ध र नायक (श्रीरृष्ण) मूलत वात्स्यायन व गागरव की सन्तुति है । रीतिकान्ध जिस ससृष्ट काय परम्परा से प्रभावित है उसम नागरत्व का पूरा परिचय प्राप्त होता है । श्रीहृप ने दमयती की सगिया की विराम श्रीडाभा का रणत करत म उतर हात शृंगार रचना कामपत्र-लेखन चित्र रचना रति चिह्न मात्य म्ब पत्रभगीर रता गागरर श्रीडा

१ महाभानुचरक मन्दा सहस्र पाछ्यापाता पृथराामम्ब प्राशय ।

वात्स्यायन कामगूत्र (त्रोग्मा वाली) १।१।८

२ कामगूत्र १।१।६ १७

३ सीत्वतानि भणिन वरुणोक्ति रित्तधमुक्तामत्रमवचरिति ।

हासभूषणधायक रमण्य कामगूत्रपन्ताभुपत्रम् ॥

-शिशु० १ १०५

४ हिंदी साहित्य की भूमिका पृ० १२४

आदि का जसा वणन किया है वह कवि के कामशास्त्रीय कलाशास्त्री के सम्यक् ज्ञान का परिचायक है।<sup>१</sup> वसी प्रवार कुट्टनियों का भी प्रयोग कामशास्त्रीय आधार पर किया गया है।<sup>२</sup> नल के अतः प्रकाष्ठ और शैया का जसा वणन श्रीहृष ने किया है उसे कामसूत्र में वर्णित नागरक के अतः प्रकाष्ठ और शया रचना से तुलना करने पर पर्याप्त साम्य दृष्टिगत होता है।<sup>३</sup> इस ही अतः प्रकाष्ठ का वणन श्राकठचरित में भी मिलता है।<sup>४</sup>

### नागरक वृत्ति

गाण्ठी साहित्य (कनास लिटरेचर) के आधार कलाविदग्ध, एस्वयशाली नागरक का निवास स्थान, भवन शयनकक्ष, गहोद्यान त्रीश बिलाम, अष्टयाम रचि अरचि आदि का जसा परिचय हम कामसूत्र में प्राप्त होता है उसका प्रतिबिम्ब सस्कृत और हिन्दी के दरवारी काव्य में आसानी से देखा जा सकता है।

राजसदर न आध्र क शातवाहन सम्राटा की सम्पन्नता और विलास प्रियता का चित्रण किया है। उनके आश्रय में पलने वाले कवि भी रीतिकालीन कविता की तरह उस वातावरण से झूठ न रह सक। उनका भा जीवन स्पन्दन स्वच्छन्द वातावरण की अपेक्षा दरवारी विलासिता से ज्वाप्त हो गया था। सस्कृत के महत्त्वदी (किरात० गिशुपा० न० प० ७०) में इस प्रकार की विनासिता का वणन प्राप्त होता है।

रमिक महत्त्वा न प्रकृति क सौन्दर्य में भी जहाँ तक नारी मुनम कामलता आर विलास है उस आह्व माना है। रसात्मक काव्यों में नारी के आगक और मानमिक सौ दय स्था पुष्पा की प्रणय नीलाग्रा और उनकी बलासिक अभिव्यक्तिया की अधिकता मिलती है। स्वयं भरतमुनि ने नाट्य कला में कामकला का याग महत्त्वपूर्ण माना है। उनके अनुसार नाट्य या काव्य में कामशास्त्रीय पद्धति पर उपचार विधि हानी चाहिए। सान अधिकरणा क्ष युक्त वात्स्यायन का कामसूत्र रमिक सामता का प्रिय ग्रथ हो गया। उनकी बर्नामिक वृत्ति के परिष्कार के निष्ठ सामाजिक और दैनिक आमोत्सव प्रमादा से लेकर राजसिक उत्सवा तक का पूरा विधान उन्हें कामसूत्र में सुलभ हो गया। रति त्रीडा की विदग्धता गूढ भावनाओं के परिचान अवस्थानुसार अवस्था-वस्था के समीप दूती सप्रपण अभिसरण और चेटित इगित का सम्यक् अवराधन आदि के लिए एकमात्र यह ग्रथ ही उनका आदान बन गया।

कामसूत्र के द्वितीय अधिकरण में वर्णित साम्प्रयागिक कर्मों का काव्य में कभी व्यग्य और कभी वाच्य रूप में प्रयोग होने लगा। मुक्तक में अमरक ने यजिता और परमम्भोगदु खिता के चित्रणा के व्याज से इनकी मफन व्यजना करा है। विलास कला

१ नपथ० ६१६ ७१

२ वही ६१७ ८२

३ वही १८१ २५

४ श्राकठचरित १५१२ ६

व रीतूहन ने मतपण और हरिश्चरणा व निग ताभ्य साध ता वरा सने गीतागर्वितार जयदेव ने ध्यान माधन का नामाला बदन्य धरिता वरा विरापति मूत्राम और तपाम परवर्ती रीति रविद्या व निग रामास्त्रीय वरा वरा ता मा प्रगत रर िया ।

रीतिवालीन रविता धर्मानन गुमान उगाधन दंत ता मडा सान्ध्यवता ही नही विपरीत रति म भी वामास्त्र म प्रया न गी ३ उास्वर्ती महृति व वाय प्रया के माध्यम से प्रयय प्रभावित हई ।

वाक व वामास्त्रीय प्रया र विभिन्न प्रररणा में परिवर्तन-परिवृद्ध होना गया । रीत पंडित ने रतिरहस्य म 'नागरा' ता उक्त नही धारा जावि नागरव वग की समाप्ति ता मूरत है । एग री विरातास्य्या म रतिरवग ही सीमा वरत मामता और अभिजातवग तत्र ही थी । सामान्य जाता जीविताराता म उनी व्यस्त थी वि उस न तो राधरना और न विरात प्रीता ता ही अवतर मित जाता था । रति रहस्य व पन्हें परिच्छे म जिन धीपधिया ता उत्तरत है उगम काम भावता व उतात्त एग का धीरे धीरे लोष भी घोषित हाता १ । पत्रहवा गाराता र गाय म रति रहस्य की हरिहरवृत्त गृणारवेणीगिता नागर टीका म उतिरवित मत्र धार प्रीपधिया का विस्तार सामाजिक दुबलता का चोतर है । इस व प्रतिरता दवराम ॥ रतिरत्न प्रदीपिका अनगरम ज्योतिरीश्वर ठापुर के पत्राण व वचना के रतिरानुरजनम धरिता प्रया म ववल उही धारा की ग्रहण रिया गया जा सरनतापूर्वक रतिता व व्यावहारिक जीवन म चरिताय हो सके ।

रामास्त्रीय प्रया की चर्चा करते हुए डा० वच्चनमह न निगा १ चौहवी गता ३ ईसवी स ही इस देग म बौद्धिक चितन की वभा ियाई पन्न उगनी है । वाक म पहल के निर्णति गता की धारण करने की क्षमता भी नि णप हा गई । अस्वस्थ सामतीय वातावरण स और आगा भी क्या की जाती ? इस ह्लासो मुगता र नारी ३ प्रति दृष्टि काण म जो परिवर्तन रिया उक्ता स्पष्ट आभास रीतिवाच्य व कुछ कविद्या व वामास्त्रीय प्रया मे दियाई देता है । इस सम्बन्ध म आनन्जन कोरमजरी विगप रूप स उत्तरनीय है । इसका रचनाकाल स० १७६१ है । यह ग्रथ चारह सर्गों म समाप्त हुआ है । इसम नरणी स्रगण गति भन् काम समय और आगना ता विग वणन ह । उक्त कवि के आधारभूत ग्रथ रतिरहस्य पत्राण आदि है ज वामास्त्र की पिउली परम्परा म चलत है ।<sup>१</sup>

हिंदा क म-प्रवाल म साहिर अरमन् मुकुंदास रामराइ (सागरा) दसगीन लोपकवि आन द कवि श्री गावि द आदि क वामास्त्रीय प्रया पर सामुद्रिक शास्त्र का भी प्रभाव रानित होना है ; य ग्रथ वामास्त्रीय परम्परा की अंतिम कडी है । ममात्र मे ज्या या सामतधानी परम्परा दृ होती गई नर वगत गप और नागरव वति की प्रधानता होती गई काव्य म भी उनके अनुकूल विपय वस्तु प्रस्तुत वरन की

विवशता बढ़ती गई। शृगारपरक माहित्य व विनाम म कामगास्त्रीय नागरका का योगदान महत्वपूर्ण है। डा० सुशीलकुमार न त्रिवा है कि केवल दरजारी वातावरण ने ही नहीं अपितु नगर म रहनेवाले अथ परिष्कृत रचि व नागरका न भी इस साहित्य की प्रोसाहित किया। वे कीथ के साक्ष्य पर कहत है कि जिस प्रकार ब्राह्मण और उपनिषद ग्रथा की धर्मोपदेशक और दागिनिका न प्रोत्साहित किया उसी प्रकार नागरका न धर्मोप दगक और दासनिक शृगारपरक काय का प्रासाहन दिया। व अग कहत ह कि वात्स्यायन के प्रसिद्ध ग्रथ म जिन प्रेम श्लोका और प्रणय-व्यापारा की विवचना एव प्रतिष्ठा है उनका एव रसगास्त्र का आधार ग्रहण करके ही शृगारपरक काया की रचना हुई।<sup>१</sup> अत समसामयिक और पूर्ववर्ती कामगास्त्रीय ग्रथा स रीतिकालीन कविया ने पयाप्त प्रेरणा ग्रहण की इसम न-र नही। जिहारी और दव की रचनाया म नाम शास्त्रीय प्रभाव पयाप्त माना म पाय ता है। आग व उध्याया म इनक प्रभावा का यथास्थान निर्देश किया गया है। महा कामगास्त्रीय परम्परा म आनेवा न दामान्तर गुप्त के कुट्टनीमतम की चचा अपक्षित है।

कुट्टनीमतम रीतिकालीन काव्य परम्परा का प्रभावित करन वाल नाम शास्त्रीय ग्रथा म काश्मीर क शासक जयापीड (७७८-८१-८०) के प्रधानमंत्री दामान्तर गुप्त के उक्त ग्रथ का महत्व अनुष्ण है। रीतिकाल म गणित या सामाया का निरूपण प्राय सभी रम और नाटिका भेद निम्नक ग्रथा म किया गया है। एसी नाटिका के वणन म वगिक शास्त्र का योगदान तो ह ही साथ हा शृगार क विविध पथा व निरूपण म भी इसका स्थान महत्वपूर्ण है। युवक और युवतिया न यौन सम्बन्ध स्थापन म कुट्ट निया का विगिष्ट स्थान है। रीतिकाल की दृष्टिया म कुट्टनियो क गुण धर्मों का समा वश हो गया था। नागरक-वृत्ति म भी इन कुट्टनिया म पयाप्त सहायता ली जाती थी। प्राचीन साहित्य म किसी न किसी रूप म इनकी चर्चा अवश्य पाइ जानी है। वित मात्रो पाधिक अणय होने स च-याया की काम चेप्याया का रसगास्त्र अपन आभोग व वाहर चाह करदे कि तु काय-ग्रथा में रसिकता का जो रूप मिनता ह उसम काम लिप्सा और वासनान्तर प्रेम की चर्चा बहुत कुछ बरयाया की उक्त चेप्याया स अनुप्राणित है।

कुट्टनीमतम' क शृगारिक वणना का रीतिकव्य क स्रोत क रूप में ग्रहण किया जा सकता है।

कुट्टनीविकराला मालती के रूप की प्रशंसा करती हुई यद्यपि नखानव के परम्परित उपमाना का प्रयाग करती है तथापि उनका सयाजन उहुन ही रमणीय है।<sup>२</sup> इस अय में मानती का विरह-पया<sup>३</sup> तथा गीतोपचार की व्यथता<sup>४</sup> और सौन्द्य तथा

१ डॉ राम क दे क आई० १० एनई एल पृ १८-१०

२ दामान्तर गुप्त कुट्टनीमतम् प्रकाश ४४-५७

३ महा शतो० ६६ १००

४ अपसात्यपनगार कुह हार दूर एव कि कमन

अनमलमात्रिमणालैरिति वन्ति त्रिनिगि वाला ॥



उसके उद्दीपक प्रभावा का विस्तृत वर्णन है। मालती को विलास चेट्टा की गिरावट की हुई बिकराता कहती है 'वर्गिक को थाड़ा बिना प्रयत्न के अपनी वास उतर, बाहुमूल दाना रतन प्रकट दिखाकर भ्रष्ट उसरी आगोस ओझन हो जाना। बिहारी आदि रीतिकालीन कविया न नायिकाप्रा की उक्त विलास चेट्टा का अच्छा चित्रण किया है।<sup>१</sup> रतिनीडा म जिन जिन चेट्टाआ और उपाया स मालती का बगिन म बामादीपन करने की गिरा देती है रीतिकालीन कविया न उन उन चेट्टाआ का प्रसंगानुसूल उपयोग किया है।<sup>२</sup> नायिका के रूप वर्णन म कवि ने श्लेषानुप्राणित विरासनास का जसा निवाह किया है रीतिकाल क चमत्कारप्रिय कविया क भी ऐसे वर्णन पर्याप्त मात्रा म मिलते है।<sup>३</sup> सखी के नायक क प्रति उक्त रीतिकाल की सघन बरानेवाली दूतिया की उक्ति म प्रतिध्वनित भी होती है।<sup>४</sup>

रीतिकालीन चेट्टाआ का विस्तृत विवरण प्रस्तुत करते हुए दामादर भट्ट न रीतिकालीन कविया क लिए सम्मोह शृंगार वर्णन म चेट्टाआ क निरूपण की पर्याप्त प्रेरणा दी होगा ऐसा अनुमान किया जा सकता है।<sup>५</sup> मानिनी को समझता हुई सखी कहती है 'अरी मानिनी परो पर गिरे प्रिय को उठा हूँ प्रेम का बधन भी अधिक खीचन पर टूट जाना है।<sup>६</sup> प्रिय क बिना यौवन यौवन के बिना प्रिय और रीतिकालीय रति मुख क बिना यौवन और प्रिय दाना पथ है।<sup>७</sup> इसी प्रकार इसम उपवन बिहार जल बिहार बलासिक चेट्टाआ 'भ्रमर और पुष्प पर की गई अयोक्त्रियाँ<sup>८</sup> सबर माग म प्रिय से असम्भवादि टक्कर 'सुरत सुरताप'<sup>९</sup> आदि क वर्णन शृंगार वर्णन परम्परा की महत्त्वपूर्ण कड़ी है जिनका निर्वाह रीतिकाल म मा किया गया है।

## नाटयशास्त्र

रीतिकाल के शास्त्रीय आधार ग्रन्थ म नाटयशास्त्र का स्थान रस और अलंकार

१ कृष्णनामम १३६ तुलसीय—बिहारी २६६ ३२४

२ वही १५४ ५७

३ वही २२४ ६६

४ वही २०५ २६

५ वही ५७१ ७६

६ उपायय मानरमयित बरणावनिपति नृणम् ।

घनाच्छ त टवनि मुग्धमणि प्रमदधन मद ॥

—कु म ६७२

७ कु म ६७७ तुलसीय—

सरमित्र बिन सर सर बिन सरमित्र की सरमित्र बिन मूर ।

जौवन बिन नन नन बिन जौवन की जौवन गिर दूर ॥

—वि प १२१२

८ कु म ६६२ ७६ तथा ६०८ २७

९ वग ७१३ १६ ७२५

१० वग ८२२ सुरताप—बिहारी १४१

११ कु म ७६ २

दोना के मून प्रेरणा-म्योन होन क कारण महत्वपूर्ण हैं। भरतमुनि न रसविकल्प और भाव-रजना क अन्वयन रम और भाव क स्वरूप और उनक पारस्परिक सम्बन्ध तथा रमा क बर्णों और दयताप्रा का निर्देश किया है। सातवें अध्याय म रम के उपाया की अभिव्यक्ति रगमच पर किस प्रकार हो इसका विवरण उपस्थित किया गया है। आठवें अध्याय से नजर सत्रहवें अध्याय तक अभिनय मे प्रयुक्त होन वाली विविध आगिर चेट्याया का बणन है। मन्त्रहरेण अध्याय म वाचिक अभिनय के अतगत अलंकारों का निर्देश किया गया है। तर्हमें अध्याय म वर्णित आभूषणा म सङ्कृता का प्रयोग रीति कान तक आत आत सुप्त हा गया था फिर भी कुछ आभूषणा का बणन पाया जाता है। चौबीसवें अध्याय म सामा अभिनय क अतगत सत्त्वा का विवेचन किया गया है। इसी म दम म नारी पौन्य की अभिवृद्धि करन वाले अगज सहज और अयनज अन्कारों की व्याख्या की गई है। भरतमुनि न नारी की शारीरिक कमनीयता भाव हाव और हला आदि का बणन अभिनय की दृष्टि म किया है किन्तु परवर्ती रस निरूपक आचार्यों न सामा यत नायिकाप्रा के उद्दीपक तत्त्वा क रूप म और कुछ आचार्यों ने आलम्बन के रूप म विवेचन किया है।<sup>१</sup> चौबीसव अध्याय म नायिका की दम विरह रगाप्रा शीतोपचार, दूतिया और आठ प्रकार की नायिकाप्रा का बणन किया है।

भरतमुनि के द्वारा प्रस्तुत रमावपयक मामग्री का ही परवर्ती आचार्यों ने उसी का विश्लेषण विवेचन किया। रस शास्त्रीय प्रयास के फलस्वरूप रस, भावादि का पूण विवेचन हुआ। भरत ने नाट्य तत्त्वा म रम को प्रमुख माना। अगिनय (सात्विक वाचिक और आगिक) को उमका व्यञ्जक या उपस्कारक सिद्ध किया है। धीर धीर यही नाट्यरस का यशास्त्र म स्वन्त्र विषय के रूप म स्वीकृत हो गया।

समाज म उन्नास्वान्न की प्रवृत्ति विलासिता और कामुकता की वृद्धि के साथ ही आचार्य भरत क द्वारा निरूपित नाट्यशास्त्रीय नायिकाप्रा का स्वन्त्र रूप से अस्त्य भेदा म विकास हुआ। दारूपककार न नाट्यधमानुमार ही नायिकाप्रा का विवेचन किया है किन्तु शृगारतिलककार न अध्याय के अतगत इसका स्वतंत्र विवेचन किया है जिसम रीतिगुणीन नारी के सहज गुणधम—बेमलता रमणीयता कामिनीत्व निवृत्ता और विवशता के प्रारूप मिलत है। ५० कठणापत्ति त्रिपाठी के शब्द म 'शृगारतिलक म इसी विनासानुप्राणित शृगारी मनारजन का राग अधिक प्रथर और प्रमुख लिखाई दता है। इस प्रेरणा के फलस्वरूप ही काय म रस निरन्तरता (शृगार रस की पुष्कलता) को प्रमुखता दी गई जिसके त्रिना काय विद्वदगोष्ठी म उवान वाला हो जाता है।<sup>२</sup> वात् म स्पष्टत नायिका भन् के उद्देश्य म पूण परिवर्तन

१ शृगार चतुर्थ अध्याय शृगार और उमक विविध दश।

२ तस्माद्यन्मन वतब्ध का य रमनिरतरम।

अध्याय शास्त्रविद्यापट्टया तत्स्यात्पुन्यैगाम्यम ॥

—शृगार तिलक १।८

संस्कृत म नायिकाप्रा और रसिकजीवनम ना प्र ५ २ १६ अ २ पृ ११४

हो गया ।<sup>१</sup>

रत्नमट्ट ने शृंगारतिलक में शृंगार की महत्ता का प्रतिपादन करने में पहले दृश्य काव्य में तत्त्व का श्रेष्ठ काव्य में विवचन करने का सन्तुष्ट किया है ।<sup>२</sup>

नाट्यशास्त्रीय परंपरा में शारदाजनय का भावप्रकाशना महत्त्वपूर्ण ग्रंथ है । इसमें महत्त्व का प्रतिपादन करते हुए रामास्वामी शास्त्री ने लिखा है कि 'नाट्यशास्त्र और दशरूपक के मध्य शताब्दियों में कात्तल मानसुप्त हुए, सुवधु और दूसरे प्रसिद्ध नाट्यशास्त्रियों के विज्ञान साहित्य के उद्धरण भावप्रकाशन के अतिरिक्त जिन वही नहीं मिलते ।'<sup>३</sup>

भावप्रकाशन में भरत के परवर्ती नाट्यशास्त्रीय कोहल इत्यादि का शैली के शास्त्रीय निरूपण मिलता है । इसमें भरत के नाट्यशास्त्र का संप्रति विवेचन और उन परवर्ती आचार्यों ने मना का निरूपण किया गया है । धनजय ने अपने दशरूपक में भरत के उक्त अध्यायों का विवेचन प्रस्तुत किया है जिनका मीमांसा सवध नाट्य और रम्य रहता है जबकि शारदाजनय त्रिदशाय और गणभूषण ने उनकी अपेक्षा विस्तृत दृष्टि का अपेक्षा किया है । शारदाजनय ने भावप्रकाशन में नाट्यशास्त्र के छठीस अध्यायों की विषय वस्तु का चार विभागों—भाव रम्य शान्ति सवध और रूप रम्य में समाहित कर दिया है । नाट्यशास्त्रों में प्रभावा का अंग भी निर्देशित किया जाएगा । यहाँ लिखा मात्र कर लिया गया है ।

### काव्यशास्त्र

काव्यशास्त्रीय परंपरा और हिंदी रीतिकव्य पर उसका प्रभाव अनेक विद्वत्तापूर्ण ग्रंथों द्वारा निरूपित हुआ चुका है । प्रस्तुत सम्बन्ध में विष्टापण से बचने के लिए उमरा उल्लेख अत्यंत संप्रति रूप में प्रथम अध्याय के प्रारंभ में ही कर लिया गया है फिर भी शृंगार रम्य और उसके विविध पंथा के विवेचन में काव्यशास्त्रीय आधार का समुचित निर्देश अंग के अध्याय में किया जाएगा ।

रीतिकाल के उपनीत्य शास्त्रों का उल्लेख करने के उपरान्त प्रमुख काव्यों का विवरण उपस्थित किया जाएगा । जमा कि पूरे बनाया जा चुका है रीतिकाल का काव्य पंथा उपस्थित रहा है । मग्नित सन्तुष्ट प्राप्त अपेक्षा और रीतिकाल के पूरे की हिंदी काव्य धाराओं का रीतिकव्य के भाव और कलाओं के संबन्ध में विवेचना यापन रहा है जमा में उनमें उल्लेख किया जाएगा ।

१ 'श्रेष्ठ' शब्दों के अर्थ में लिखा है 'शृंगार रम्य' ।

२ शरीर का प्रतीकात्मक चरित्रों के अर्थ में ।

दशरूपक में लिखा है 'काव्य प्रति निरूपण' । पृ. ११५

३ 'इ' रूप 'शास्त्रशास्त्री' शब्दों के अर्थ में लिखा है । पृ. ७

## काव्य

रीतिकान्य के उपजीव्य यथा में वे पुराण और मन्वन्त प्राकृत अथवा आदि मापाया व महाकाव्य लब्धनाय मुक्तक ही नहीं अपितु गान्क चम्पू और कथा कृतियों का भी उल्लेखनीय महत्त्व है। सामान्यतः कोई भी कवि साहित्य ऐसा नहीं जिममें शृंगार रस का प्रबन्धना धारा या कर्म से उभय रममिकन लीटे न हा।

## पुराण काव्य

भारतीय साहित्य को प्रेरणा प्रदान करनेवाले प्रमुख ग्रंथों में श्रीमद्भागवत और अथ पुराण एवं संहिता का महत्त्व गण्य है। भक्ति का समय साहित्य तो इन पुराणों और संहिताओं से प्रभावित है ही उसकी मधुरतापासना वाली धारा पर भी इनका प्रभाव पाया जाता है। उच्च भक्तिधारा का विकास और मत्तन में श्रीमद्भागवत और अथ वष्णव पुराणों का योगदान महत्त्वपूर्ण होने का कारण उन्नीचका वष्णव कायामि यक्ति की शृंगारी परिणति का अंतगत पहल ही विस्तारपूर्वक सी जा चुकी है। सप्रति शृंगार रस के उभय विनास और रीतिकान्य का स्वाना के रूप में इनका परिवर्ण दिया जाएगा।

यहाँ ध्यान में है कि सभी पुराणों और पौराणिक साहित्यों का समावेश करने का अर्थ के कर्तव्य में अनावश्यक अतिविस्तार हो जाएगा अतः कुछ प्रमुख पुराणों का संक्षिप्त सन्दर्भ मात्र करके संतोष किया जाएगा। संहिताओं में यद्यपि पाचराज एवं सात्वत संहिताओं का महत्त्व शृंगारपरक अथि यक्तिया की दृष्टि से कम नहीं है फिर भी महा कव्य गणसंहिता का ही परिचय दिया जा सकता है। प्रवृत्ति निर्देश के लिए यहाँ कुछ विशिष्ट पुराणों का परिचय द्रष्टव्य होगा।

## श्रीमद्भागवत

भारतीय साहित्य का श्रीमद्भागवत प्रमुख उपजीव्य रहा है। इसका आधार पर अनेक काव्य ग्रंथों की रचना हुई। पं० वनदेव उपाध्याय ने लिखा है 'भारतीय धर्म का विकास में भागवत का व्यापक प्रभाव किसी भी विद्वान्मालोचक से छिपा नहीं है परन्तु भारतीय काव्य का कोमल विकास तथा प्रचुर प्रसार में भी भागवत का नितांत महत्त्वपूर्ण प्रभाव आलोचकों की दृष्टि से ओभन नहीं हो सकता है। यह तो निर्विवाद है कि भारतीय साहित्य में जो मधुरता सरलता तथा हृदयव्यवस्था है वह वष्णव धर्म की दंत हरेमा व स के प्रत्यक्ष निरक्षणभूत रीतिवैशारमाणि श्यामसुन्दर की कलित लीला तथा लावण्यमय विभूत का मय आकांक्षी करवाना यह भागवतपुराण भारतीय साहित्य का गीतिकाव्य तथा प्रगीत मुक्तक का अथय स्वात है जिसकी माधुर्य भावना का ग्रहण कर वृष्णमन्त्र कविता में अनेक काव्य में लातिल्य सरलता तथा हृदयानुरजना का पुनः देकर उन्हें शोभन तथा हृदयव्यवस्था बनाया है।' श्रीमद्भागवत का दशम स्कन्ध तो

शृंगार वणन का उत्कृष्ट उदाहरण है ही जयदेव की कोमलशांत पञ्चवर्णियाँ श्रीमद्भागवत के ही आधार पर निर्मित ही जगती हैं। शृंगारवचन श्रवण ने भक्ति का परिवर्णन में शृंगार की छटा का दान इंगी ग्रन्थ में किया हुआ। इसमें राधा का उल्लेख नहीं है। समस्त यह गोडीय वाणवो की दान है। गोपी कृष्ण की प्रियसलीला जनश्रीदा और शरद ऋतु की उद्दीपन छटा का वणन करने का उपरान्त गोपक यथाया का वचन वणन किया गया है<sup>१</sup> जिसमें प्रतिश्रवण भक्तिकाल और रीतिशाल का काव्य में पूर्वागुरागजय अभिलाष दान का अवन में मिलत है।<sup>२</sup>

श्रीकृष्ण को परब्रह्म और गोपिकाओं को यागिया और श्रवणियाँ या अन्तर भन ही माना जाय परन्तु यहाँ उनका जो म्यून रूप सामन आता है वह रीतिज्ञान की नायिका के कामिनीत्व का प्रतिनिधित्व करता है। श्रीमद्भागवत की यागिया या विरह रीतिशालीन विरहणिगिया (यापिनपतिश्राया) का समान ही है। उनके स्मृति मन्त्रों<sup>३</sup> की छाया विहारी की मन ह्व जान अजो रहे वा यमुना का तीर पाली उन्नत में पाई जाती है।

इन प्रेम विह्वला गोपिकाओं की अभिलाषा को श्रीकृष्ण ने जिस प्रकार पूण किया वह सयाग शृंगार का अच्छा उदाहरण है।<sup>४</sup> द्वारिका के कृष्ण का वणन सामन्ती वानावरण से पूणत प्रभावित है।<sup>५</sup>

श्रीमद्भागवत के शृंगार और उसके विविध पदों का निरूपण स्थलो का रीतिगुणीन कविता न आने परिके का अनुसार अनेक प्रसगा में वणन किया है जिसका उल्लेख अगले अध्याय में यथास्थान किया जाएगा।

## इतर पुराण

श्रीमद्भागवत के अनिरिकत हरिवंश पुराण और विष्णु पुराण का महत्त्व प्राचीनता की दृष्टि से माय है। इन पुराणों में वर्णित श्रीकृष्ण के लीला विहारी रूप का सवद्ध न अष्टउप और अय भक्ति सम्प्रदायों के कविता की कृतिता में विशेष रूप से उभरकर सामने आया है। गोपी कृष्ण की मधुमयी नेष्टाया और लीलाया का कृष्ण भक्ति सम्प्रदाय में और भी यापकता मिली। उनके स यागकालीन हाव भाव अष्टयाम रासलीला दानलीला और अनेक प्रकार की छदम लीलाओं का वणन भक्ति माय भावित कविता ने विस्तार का साथ किया है। रीतिकालीन कविता के मुक्तक छटा में

१ भागवत १।२६।४६ १।३३।२४

२ वही १।२२।४

३ गणसहिता २।१३।१६ २६ शल्प नायक १।१४ मूल्यम मूल्यगार १।७८१ ८३  
भा का ४।१३३ स्त्रीम वरवना थ ११ मतिराम रमराज ६३

४ भागवत १।४६।२१ २२

५ श्रीमद्भागवत १।३२।५६

६ भागवत १।२३।२१ २२ १।६।७११ १।३३।१२

यत्र-तत्र एमी चेष्टाम्ना एव त्रीनाम्ना का निर्देश मिलता है। सयोग वणन म कृष्ण की पुराण-अर्णन य लीलाए रति सी हो गई थी। इसी प्रकार वियाग वणन म भी गोपिया की रत्ना का जमा निरूपण वन पुराणा म है रीतिवालीन कविया के लिए व्यापक पठ-भूमि क रूप म गृहीत हुआ।

पद्मपुराण के उत्तर खंड म कृष्णलीला का सश्लिप्त वणन मिलता है पर वह अय त परिचयात्मक है। ७०वें अध्याय म एग तपस्विन्या का वणन है जा तप के फल स्वरूप कृष्ण की सभिया हुए। इन नागान तपस्या की अवधि म कृष्ण की जिस मूर्ति का ध्यान विया वह धार श्रु गारिक थी। उन्हाहरणस्वरूप हरिधाम मुनि का ध्यान विया जा सकता है व रम्य व दासन म माववा मठप म सुन्दर पल्लावा के विस्तर पर लटे हुए कृष्ण ना ध्यान करा ठे जा वभी वामान होकर रक्तनवा बलमिया व वशोज द्वय से अपन विपुत्र उर का आच्छादित किए हुए तप्त आठास उनक वपोल चूमत हैं और हाम एव हृष स समर्पित होकर प्रिया को बाहुम्ना म भर लते है।<sup>१</sup>

पद्मपुराण म उ दा ग नारन्जी कृष्ण की अष्टयाम लीला के विषय म पूछते हैं। उ दा उनम रागा क द्वारा प्रात बाल पात्र निर्माण का वणन करती है। श्रीकृष्ण स्नानानि स निवत्त हो भोजन करत हैं। भोजनापरात व गाया को लेकर वन म चराने जान हैं। वन म पट्टचकर गविया के साथ थाडी दग त्रीडा करत हैं। तदुपरात उन्हें धोखा दनग प्रिया को देखन की लालमा स सकेत-मथल की आर चल दत है। इधर राधा भी कृष्ण का वन म गया हुआ जानकर अपने गुम्फा स पूजा के लिए पुष्प लाने क व्याज स अनुमति लेकर प्रियमिलन की अभिलाषा स वन म आ जाती है। राधा और कृष्ण दोला क्रीडा करत हैं। वहा उनकी वगी कही गिर जाती है और सखियाँ उस चुरा लेती है।<sup>२</sup> इस प्रकार वमत क मान्य वातावरण म श्रीकृष्ण और गोपिया हास परिहास करती है। उम समय के अनुकूल अनेक त्रीडामा का आनन्द लेते हुए वे थक जाते हैं। थकान का मिटान के लिए कृष्ण मधुपान करत है। मधुमत्त हाकर श्रीकृष्ण वाम के वगीभूत हा जाते हैं और रमण की इच्छा म वृज म प्रवेश करत है। वहा से उसी प्रकार त्रीडा करत है जैसे हथिनिया म गजराज करता है। तदुपरात जल-त्रीडा के लिए सरोवर म जाते हैं। जल-त्रीडा क बाद क फल, ताबूल आदि ग्रहण करते हैं। राधा भी कृष्ण का उच्छिष्ट भाजन करके शया निवेन में जाती है और चर्चित ताबूल का चवण करती है। थोड़ी

१ श्रुयो वन्तवनरम्य माधयो मन्पे प्रभुम ।

रत्नानशायिन चाह पल्लवास्तरणोपरि ॥

कन्त्रि निवामानवन्त्या रक्तनत्रया ।

कन्त्राजयगमा छाय विपुवार स्थन मुहु ॥

सचुम्बमान मन्त्रानस्तप्यमानवन्त्रुदम ।

कलयन् प्रिया दोम्प्री कन्त्राम समुत्पन्नमनस ॥ -पद्म पातान खन्, ७२। १६ १६

२ पद्मपुराण पातान खन् ८।४ ५

देर निद्रा गुग प्राप्त करने के पश्चात् कृष्ण विष्य भ्रामन पर उत्तर श्रुत प्रीति करत हैं। चुम्बन और भ्रामन की बानी नगती है।<sup>१</sup> यथा कृष्ण व श्रावण वग धारण कर राधा त नाम गुग्गुह म जात वा भी उन्नत है।<sup>२</sup> माधुनी-वना में कृष्ण राधा का लवर वी वजात हुए घर लौटत है। रात्रि म भोजन धानि त नियत वा श्रीकृष्ण समागृह वा जाते हैं। राधा की सगिया उनका मदन करत प्रिय त पाग भ्रमिगण करती हैं।<sup>३</sup> यहाँ भवमर व अनुकूल राधा गुता या कृष्णामिगारिका व योग्य वस्त्राभूषण धारण करती है।<sup>४</sup> वहाँ राधा और कृष्ण दो वाम रात्रि ता विविध प्रकार से विहार करते हैं। भ्रत म सगिया स रोचिन वे लनागृह म गुग्गुवृक्ष सोत हैं।<sup>५</sup> ऐसा अनुमान है कि उनत राधा कृष्ण श्रीटा सम्प्रधी भग प्रीति है। कुछ भी हो पता ता निश्चित है कि मध्यकालीन भक्ति आन्दोलन व पूर्व ही समी रणा हुई हागी।

श्रीमदभागवत म कृष्ण के प्रमी स्वरूप त पूण प्रतिष्ठा प्राप्त की। पून पुराणा म जिन शृंगार प्रवण लीलागा वा सक्त मात्र है उनका इम पुराण म सविम्वर निरूपण किया गया है। साथ ही अनेक नवीन प्रसगा की उदभावना द्वारा इस भग को सर्वांग पूण बनाने वा भी प्रयास किया गया है। श्रीमदभागवत म आए ऐसे प्रसगा की चर्चा अग्रव की जाएगी।

ब्रह्मवतपुराण म श्रीकृष्ण की वदावालीला वा विस्तत उल्लेख किया गया है। यद्यपि इसम श्रीकृष्ण और राधा के देवत्व वा स्पष्ट सकेत है तथापि उनकी लीलागा में स्थूल मासलता की कमी नहीं है।

अनुकूल नायक की भाति श्रीकृष्ण राधा व साथ जल श्रीटा करत हैं उनका वणीग्रथन अलक्तकरजन उनके लिए मानाग्रथन तथा उनक द्वारा चवित ताम्बूल वा चवण भी करत हैं।<sup>६</sup> श्रीकृष्ण वा विरजा व साथ विपरीत रति वा भी वणन किया गया है।<sup>७</sup> राजा सहस्राक्ष के वलासिक प्रसगा में अपनी रानी व साथ उनका विपरीत रति,

१ पदमपुराण पाताल खड ८।५ ७१

२ वही ८३।७८

३ वही ८३।८ ६७

४ सितकृष्णनिशायोग्यवेपा याति सधीयुता । पद्म ८३।६६

५ पद्म पाताल खड ८।१ १५

६ जलश्रीटाप्रकुचत राधया सह कुत्तचित् ।

राधिकावबरीभार कुवन्त कुत्तचिन्वने ॥

कुत्तचिन्वाधिकापाते दन्तवन्तमलकाकम ।

राधाचवितताम्बून गल्लान्त कुत्तचिन्मगा ॥

पश्यत कुत्तचिन्वाघा पश्यन्ती वरचणया ।

दत्तवन्त व राधाय कत्वा मानाव कुत्तचित् ॥ ब्रह्मवत ५।२।१।८५ ८६

७ ब्रह्म ५।३।१५

नवभक्त और दत्तभक्त श्राद्ध का वणन किया गया है।<sup>१</sup> राधा-वृष्ण के परस्पर चर्चित लाभून व श्रादान प्रदान और अक्षय पान का ही वणन इस पुराणकार न नहीं किया है अर्थात् नवदत्तभक्त व वरुणी का विगारना पुन मन्त्र करना राधा का वृष्ण की मुस्ती छीना और विपरीत रति श्राद्ध का भी वणन किया गया है।<sup>२</sup>

रासश्रीडा व अनगत वृष्ण और गोपिया व सयाग शृगार का विस्तृत वणन हुआ है।<sup>३</sup> इग प्रमग म बवन राधा के साथ ही श्रादिगन चुम्बन और रतियुद्ध नहीं हुआ अर्थात् अय गापिकाशा वी भी उद्दीपक चणाम्रा का प्रमाण वणित है।<sup>४</sup> पुराणकार व म्म स्वयं रीतिवाच्य की विनासिता को भी पीछे छाड़ दत हैं।<sup>५</sup>

इन पुराणा व अतिरिक्त गगसहिता म भी राधा-वृष्ण की विलास-स्त्रीलाभो का विस्तार के साथ वणन मिनता है। यमुना-तट और कुज का उद्दीपन वणन<sup>६</sup> भाडीरवन म श्रीवृष्ण द्वारा राधा का शृगार किया जाना<sup>७</sup> नलिता विशाखा का गीत्यवम<sup>८</sup> वृष्ण द्वारा चित्रावन राधा का वृष्ण का चित्र लिखानर उह वृष्ण व प्रति अनुरक्त करना,<sup>९</sup> राधा का स्वप्न म वृष्ण का दयना<sup>१०</sup> पूर्वानुराग<sup>११</sup> प्रत्यभक्षण<sup>१२</sup> राधा की दूती का वृष्ण स राधा का विरह निवन्न करना<sup>१३</sup> आदि म्म अनक प्रतगा की उद्भावना सन्तितार न की है जिनस राधा वृष्ण की शृगारिक लीलाभा का विस्तार मिला है। वृषभानु व शृट आराम की लताभा पुणो और पना का जसा वणन यहाँ है रीतिवाच्य

१ ब्रह्म ४।१।१८

२ वनी ४।१४।१४ १६१

३ अन्विततर तत्र मराम मुगतीम्यु । मुष्याय राधया साथ रतिवलेमनादरे ॥  
शृगागाष्टप्रकारव विररीतात्कि विभ । नवभक्तपुराणाव प्रद्वारव यथाचितम ॥  
कामशास्त्रे य यथाय चम्बनाष्टविध परथ । कामिनीना मनाहृदि चकाररमिनेरवर ॥  
अगरगानि प्रत्यग प्रयगानि स्मरातुरा । चकाराशनेपण नत्र कामुकीना मुष्यावहम् ॥  
शृगारकुमनी ती तु कामशास्त्रे मु पडितो । रतियुद्ध विरामरव न बभूव द्वयोरपि ॥

-ब्रह्म ४।२८। ७२ ७६

४ मन्मिन सकाटाभ व मखवत्र स्नानालनम् । काचिच्छाणि मुनतिना दमयामासकामन ॥  
प्रणो स्वामिने कामान् प्रमवधत हेतवे । काचित्ताकिनमाकथ्य मनात्तत्वा तु कामन ॥

-ब्रह्म ० ४।२८।८८ ८९

५ ब्रह्म ४।२८।९-१४ ४।२९।७ ८ १८

६ गगमन्ति २।१२।२४ २।१६।४४ ४६

७ गगमहिता २।१६।४९

८ वनी २।१२।९ १ ३४ ३६

९ वनी २।१२।११ १३

१० वनी २।१२।१४

११ वनी २।१२।१५ १६ २

१२ वनी २।१२।१६

१३ वनी २।१२।२५ २७



क रिण लय गत प्ररणा एव गिञ्ज हा मान है।<sup>१</sup> गता वा भूमा<sup>२</sup> क ग श्या  
 राधा वा भूमा<sup>३</sup> शौर राधा द्याम ग वा वा भूमा<sup>४</sup> भा भूमिग है।<sup>५</sup> गगर्ग हा क  
 रथिया गगगायन क पून गता शौर रवि गीतिया क भा गगन प्रगत हा है। उता  
 राधा क मा<sup>६</sup> गति र विर राधा है शौर कभादी।। गता<sup>७</sup> हा वा पुताया क  
 माय यगा रिया है।<sup>८</sup> राधा क र्ग गगन शौर उगत यता वा यगा र गीतियररा  
 क धनुतु र ह्या है। गीताया म क गराधा क यगा प्रगत म एव प्रगत वा यगा  
 प्रभूत परिमाण म पाया गता है विगत गतिरहा वा पाताया गेरी म यगा। यमि गित  
 यर की प्रा<sup>९</sup> ग, पु प्राय म परा<sup>१०</sup> है। यी राधा भी एव प्रगत वा धनु<sup>११</sup> हा रगी है।<sup>१२</sup>  
 गतिया क माय कृष्ण री १२३३८ वा यगा र रिया वा शिव रियन रगी<sup>१३</sup>। गतिगार  
 ग मी इमता उ रग रिया है।<sup>१४</sup> गता हा गता गतिगार भी कृष्ण वा मु। पुम्बत  
 यर री है।<sup>१५</sup> राधा हा गगन की प्रम गती मिर री है। उताही म गता वा यगा यगा  
 यही रिया गया है। मता ही यगा रीतरा नीत परि विहारी क भी रिया है।<sup>१६</sup> रवि र  
 राधा की विरहागि क उपासन क रिण गीतियार वा यगा र रिया है।<sup>१७</sup> रवि र राधा  
 की रिहागि शौर वियाग कथा वा रविहाग यगा र रिया है।<sup>१८</sup> यगा भा गाररर  
 गितार की मुधि गता है पर कयण एम गिठुर हा गग रि राधा की तुति नी री  
 ला है -

व्याधोऽपि हृत्वाहि भूमान स्मरति स्वरमालुर ।  
 बटाश स्वप्रियाट्टरवा निमोहो न स्मरवहो<sup>१९</sup> ॥

- १ गगर्गिता २११११३ १८
- २ वही २१७११ १६
- ३ वही २१११३ २१११३८ २१११३६ २१११३७ २११११६
- ४ वही २११८३४
- ५ वही २१११८ २१ ११ ५
- ६ वही २१२०१६ ११
- ७ वही २१२१६ ३०
- ८ वही ४१३३ तुलनीय- शीङ्गभागवन १ १२२१६ तथा रहीम ध ना भ ८ ११  
 मतिराम रगराज छ ५
- ९ गगमहिता ४१४१०
- १० वही ४१४११
- ११ राधा पत्र सगहीत्या शिरो नेत्र तथा च हन् ।  
 निघाय वाचयित्वा तत्समावा तत्प्राप्तपत्रम् ॥ गगमहिता ४१४११  
 तथा-कर ग वमि बदाय मिर उर यगाय भुज भटि ।  
 रहि पानी गिय की लघति बौचरि धरति गमटि ॥७६॥ विगार
- १२ गगमहिता ४१४१३
- १३ वही ४१४१८ १
- १४ वही ४१७३५ तुलनीय-धनात्म धन धान-ववित्त छ ६३

सयोग म जिस नुत्र म कथन क माय राधा विहार किया करती था म्र उगी की क्या बाना मे मुनती है।<sup>१</sup> करि न राधा क अमिताय जिना गुणधन आदि विगुण-आभा का विगड वणन किया है।<sup>२</sup> माहित्य म विगु का अर्वा-ओपता का वणन म्बित प्रयुक्त हाता रहा है। गुराणार र मी यहाँ उसका वणन करन सारी म्दिया का पावन किया है। रीतिकान्य म साहित्य-परपरा र अनुसार रिखी या विगुणगी की पत्र नयन मे असमयता वर्णित है। प्रम्नुत संहिता म भा गापी क पम-नयन की मतापनता की प्रहार वर्णित है।<sup>३</sup> आगतपतिता क रूप म गाभा के मावा का उसकी गारीरि चप्टाआ और हर्षोल्लास तथा गुमयुचर गुना का वणन कविषा का प्रिय विषय र्ता है। सहितार ने यहाँ आगतपतिता का वणन परपरा के ही अनुसार किया है।<sup>४</sup>

इन प्रकार काय माहित्य क सयोग और विषाण-वणन की र्णिया का निवाह गापी कथन की लोना का उनर अनोक्ति करि का वणन रगनवात पुगण और सहिताआ म भी लगभग उसी रूप म प्राप्त है जसा कि परवर्ती रीति काय्य म। इन स्थता क विवेचन म यह स्पष्ट हा जाता है कि हिंदी क रीतिकान का शृ गार वणन उन समस्त काय्य र्णिया और परपराआ म अनुप्रग्नि है जिंका विन्तार र्णिक माहित्य स लवर पौराणिक और नैतिक साहित्य तक पना हुआ है। यं उन य-का सम्यन विरलपण किया जाय ता उसम शृ गार रस और उमक विविध प तान वणन पर्याप्त माया म मिलेंगे। प्रम्नुत प्रवच की सीमा इतनी व्यापक है रि उसक आसाम म पर्याप्त साहित्य आ जाता है।

सप्रति सम्बत क उन काय की आर सकत किया जाग्या जिनका रीतिकालीन शृ गारि वणन क विकास म महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है।

### पदध-वाच्य (सस्कृत)

सस्कृत प्रवच-वाच्य म, मूल रूप स विरसनगील महावाच्य म, शृ गारधारा कुछ विगरी हुई मिनती है, किन्तु यं ध्याया णिया आय तो स्पष्ट हो जाग्या रि परवर्ती महावाच्य की र्णिया र पररूप सिमी न विगी रूप म इरम भी रिखमान ह। मभेप म यहा कुछ महावा या का परिचय णिया जाग्या जिंम मातवाप मूत्र वनिषा का विशद विवेचन मिनता ह।

### वात्मीकि रामायण

आन्विकान्य इन रे कायण सप्यरण की भारतीय वाच्य म क आन्विको म माना जा सनता ह। मन्मभारन म पौराणिक रली की प्रधानता जाने म शृ गार का वसा रूप

१ मगगणित ११७३६

२ ५१७३१० १८ ५१७५१४

३ वह ५१७५१२

४ वही ५१७६१८ १६

वही मिलता जसा अलंकृत महाकाव्या में मिलता है। रामायण काय की उम श्रेणी में आती है जिसे मकडानेल महोपाय के अनुसार अलंकृत महाकाय कहा जा सकता है। इसमें कथा की अपेक्षा शैली को विनाय महत्त्व दिया जाता है और काव्यगत आकृति की इसमें प्रधानता होती है। उहान रामायण को रामाटिक गली का सच्चा महाकाव्य माना है।<sup>१</sup>

रीतिवालीन शृ गार धारा का मूलस्रोत अपन आन्तिम स्वरूप में इस महाकाव्य में पाया जाता है।

यद्यपि कालिदास की तरह वाल्मीकि ने अधिकांशतः प्रकृति का वणन आलम्बन के रूप में किया है किन्तु अनेक स्थानों पर राम और सीता के विरह को उद्दीप्त करने वाली ऋतुओं का चित्रण प्राप्त होता है। रामायण-काल में भी रीतिवाली की तरह वन विहार आदि हुआ करते थे जिसका सन्तत प्रस्तुत ग्रथ में मिलता है।

अरण्यकाण्ड में सीताजी को देखकर रावण उनका सौम्य का वणन परपरित उपमानों के प्रयोग द्वारा करता है।<sup>२</sup> कवि ने इसी काण्ड में विरही राम के द्वारा सीता का जैसा गुण वणन कराया है वसा रीतिवाच्य के प्रवसित नायक का द्वारा भी कराया गया है। विरही राम की वदना बड़ी ही व्यापक है। जिस प्रकार वे चराचर प्रकृति से सीता के विषय में पूछते हैं, उसी प्रकार परवर्ती संस्कृत साहित्य में अनेक नाटका और प्रमात्याना के नायक अपनी खोई हुई प्रिया का पता पूछते हुए पेश जाते हैं। यद्यपि राम का विलाप हादिक वरणा से श्रोतप्रोत है फिर भी उनका सर्वोद्यन और रूप-सौंदर्य का उपमान रूढिग्रस्त है।<sup>३</sup> किष्कि-वासाण्ड में कवि ने प्रकृति का उद्गापन रूप को उपस्थित करने के लिए जिन अग्रस्तुता का विधान किया है वे अधिकांशतः परपरित है।<sup>४</sup> वसी काण्ड के ३०वें सर्ग में प्रकृति का विरहादीपक चित्रण करते हुए राम की विरह-शशाप का बड़ा मार्मिक रूप प्रस्तुत किया गया है।<sup>५</sup>

लकाधिपति के अंत पुर का चित्र भी दृशनीय है।<sup>६</sup>

१ Ramayana belongs to the class called Kavya or artificial epic in which form is regarded as more important than the story and poetical ornament (Alankara) is abundantly applied. The Ramayana is a real epic of the romantic type and being homogeneous in plan and execution — A. A. Macdonell Encyclopaedia of Religion and Ethics Vol. X page 574

२ रामायण अरण्यक सर्ग ४६।११-२३

३ वही सर्ग ४६।४ ६।१२-२४ ३१

४ वही किष्कि-वासाण्ड सर्ग १।१ १।३ २३ २५ २६ ३ ४०-७२

५ वही ७-२ ४५ ४६ ५६ ५६

६ रामायण सुन्दरकाण्ड सर्ग ५-७, ६।१-५-७

सीता के 'गुणसूचक' नय आदि के पङ्क्तियों का तथा तज्जय हय का वणन रीतिकालीन आगतपतिकाम्या के वणन का पूर्वरूप सा लगता है।<sup>१</sup>

हनुमान का दौत्यरुम परवर्ती दूतकाया की साहित्य परंपरा का आन्तरिक माना जा सकता है।<sup>२</sup> हनुमान की उक्ति कि 'तुम्हारे वियोग में वे (राम) न सुस्वादु पदार्थों का भोजन करते हैं और न मधुपान। तुम्हारे ध्यान में वे इस प्रकार लीन रहते हैं कि शरीर से जगली कीड़ मकाड़ा को भी नहीं हटाते। रात को सात भी नहीं यत्नि नींद आ जाती है तो तुम्हारा नाम लेकर तुरंत उठ जाते हैं—तुम्हारे वियोग में अत धारण करके वे तुम्हें प्राप्त करने का प्रयत्न करते हैं।'<sup>३</sup> इस प्रकार के वणन में रीतिकाल में परिवर्द्धित हान वाले विरह निवेदन के बीज छिपे से लगते हैं।

समुद्र-तट पर विरही राम का विलास<sup>४</sup> परवर्ती प्राकृत अपभ्रंश और हिंदी के वियोगा नायक नायिकाया के कर्मग विलास का स्मरण लिखाता है। अशोक वाटिका में सीता और राम का विलास वर्णित है। इस उपवन के वणन में कवि ने पुष्प, वक्ष, दीधिका और उसमें विकसित वपल चत्रचार आदि का उल्लेख किया है<sup>५</sup> जो परवर्ती रीतिबद्ध महाकाव्या और रीतिकाल के उपवन वणन से मिनत जुगत है। यहाँ सामंती वातावरण का विकसित रूप दृष्टिगत होता है। राम के साथ सीता का मरेय मधुपान और सुस्वादु पदार्थों का ग्रहण करना वास्त्यायन के नागरक वक्त से काफी साम्य रखता है। राम और सीता का जसा बलासिक चित्र यहाँ अंकित है<sup>६</sup> उसकी प्रतिच्छवि रीतिकालीन सामंती बलासिक जीवन में पाई जाती है।

डा० कामिन गुप्ते ने इस प्रसंग का उल्लेख करते हुए लिखा है 'प्रचलित वाल्मीकि रामायण के उत्तरकांड में राम के अशोकवन का वणन मिलता है और राम सीता के विहार का उल्लेख भी किया गया है। आग चलकर इस प्रकार के शृंगारिक वणना का अधिक स्थान दिया गया है। वास्तव में शृंगार रस की बन्ती हुई व्यापकता विकास के द्वितीय सापान के राम कथा साहित्य की विशेषता है।'<sup>७</sup>

उपरिलिखित सदर्भों से स्पष्ट है कि आन्तिकवि ने प्रस्तुत कति में शृंगार के सयोग और वियोग दोनों पक्षा का पूण वणन किया है।

रामायण में काव्याली के सभी गुण प्रारम्भिक रूप में विश्रमान हैं अन

१ रामायण सुन्दर कांड २६। ८

२ मण्डूक २।२८

रामायण सुन्दरकांड मंग २६।४ ४७

४ न म दुःख प्रिया दूरे न म दुःख हृतेति च।

एतन्वानुशासामि वयास्या ह्यति वतन ॥ रामायण सुन्दरकांड ५।२

५ रामायण सुन्दरकांड ६२।२ १२

६ वग ६२।१६ २८

७ डा कामिन वक रामकथा उत्पत्ति और विकास प ६८२

दों० शम्भूनाथमिह ने रामायण का विद्यमान-गीत घोर घनका मन्त्रात्मक क जीत की कड़ी माना है।<sup>१</sup> परवर्ती महाकाव्य पर रामायण का प्रभाव विगत रूप में पाया जाता है। रामायण के बाद क महाकाव्य पर सामंती शासनकाल का शासनिक विचारों का रूप में घनत्व पायी जाती है। एम महाकाव्य में घनकार प्रतिता घनत्व रचना है किन्तु 'उनमें से सादगी और तादृशी कथा प्रसार जाता क विविध धातुमत्ता की अभिव्यक्ति मजी हुई और प्रवाहमत्ता भाषा महार उद्भव महान् चरित्रा की अवतारणा प्राप्ति बार्ने जा महाकाव्य का शीघ्रजीवी और प्राणवात् रनात बानी होता हैं, समुचित रूप में नहीं पाई जाती है। कानिदासीय महाकाव्य में समग्र जीवन का सतुलित और बहिष्कृत घनत्व मित्रता है। उनमें रचित र विंग शीघ्रबाध और व्यापक परिवेश की भीरी मित्रता है वह परवर्ती रुद्रिप्रद महाकाव्य में परिचित नही हाती। कालिदास के काव्य में शृंगार का जो रूप मित्रता है वह भाषीय रचिताने उदात्त और परिष्कृत भावभूमि पर स जाता है एम काव्य अथा पूर युग का मन्त्रा प्रतिनिधित्व करत हुए सस्कृति और सभ्यता का उच्च धारण प्रस्तुत करता है। उनका वणन चमत्कार प्रदशन क विंग नही प्राप्ति स्वस्य जावन मूषा क अवेपण क विंग होता है। कालिदास के बाद क महाकाव्य रुद्रिप्रद और सत्कुचित जीवन दृष्टि का लहर चले। उनमें रीति निर्वाह का आग्रह प्रमुख हा गया। २।० मित्र धारणा गती का प्रवर्तन छठी गताली स मानत है। उन्ने रचना के वि रण्डो न रणाकुमारचरित में यमक श्लेष आदि की जा अतिगमता रियाई है क इमरा पमाण के वि वस्तुत छठी गताली का युग ही एसा था जिसमें साहित्य अधिक घनकति कालित्य प्रदान का चातुय और कल्पनातिरेक कथावस्तु की उपभा और वस्तु-व्यापार-वणन की घनावयव स्फीति के कत्रिम साधना से आत्रान्त हा गया था। कथा शान्यापिना और महाकाव्य रना म यही प्रवृत्ति पायी जाती है।

सप्रति कानिदासीय महाकाव्य का शृंगार वणन की विवचना की जाणगी।

कुमारसम्भव—प्रस्तुत ग्रंथ के द्वितीय सग में पावती का रूप वणन और अष्टम सग में शिव पावती के सभोग शृंगार का वणन मित्रता है। गिन और पावती का जो रूप इस सग में चित्रित किया गया है वह पारलौकिक न होकर लौकिक है। पावती की चेट्टाएँ बहुत कुछ रुद्रिप्रद-सी ह। उनका मुग्धात्व मनावजाति है किन्तु उनकी चेट्टाएँ परपरानुसार हैं। मुग्धा स लहर प्रीति तक नायिका की विनास चेट्टाआ का त्रमिक विवास प्रस्तुत सग में निबद्ध है।<sup>३</sup> साथ ही इसमें मयाम शृंगार की विविध विनास लीलाआ का जसा विवरण उपस्थित किया गया है वह कामगास्त्रानुमोत्ति है।<sup>४</sup>

१ डा शम्भूनाथ मिह द्विती महाकाव्य का स्वरूप विनास प १४१

२ वही प १४४

३ कालिदास कुमारसम्भव ८।१।१४

४ वही ८।२७ ६३ ८३ ६१

रघुवग रघुवग क आठवें सग म अज विलाप बहुष कुछ वाल्मीकीय रामायण क विरही राम के विलाप क अनुररण पर वर्णित है। नवें सग म वगत ऋतु का बहा ही उद्दीपक वणन किया गया है। रवि कालिदास की विवेचना प्राकृतिक उगादाना पर मानवीय भाव, का आरापण है। उहने अत्र शृगारी चपटाप्रा का प्रवृत्ति पर आरापण करत हुए उमका उडा ही अलङ्कन वणन किया है। वगत ऋतु म दाना शीत का जमा वणन कालिदास न किया है वमा उनक परवर्ती महाकाया म प्रचुर परिमाण म मिलता है। शीत ऋतु म जन विहार का भी वणन मिलता है। रघुवग का अग्निवण नागरक वृत्ति का सच्चा प्रतीक है। उसरी विनास नीचाए राशिनीन गामता की याद दिलाती हैं।

### कालिदासोत्तर महाकाव्य

यद्यपि महाकवि कालिदास न शृगारी प्रमगा का वणन यून कुछ गाम्नीय परिपाटी क अनुराण हा किया है। फिर भी उनका सौन्दर्य-वाध परवर्ती अन्विष्ट मया काया के वणना म उह भिन्न सिद्ध करता है। उहने तिन शृगारिक प्रमगा का वणन किया है व प्रसंग व्यापक परिप्रेक्ष्य म हान क आरण जीवन की गहराई और सच्चाई को उदघातित करत हैं। शृगारिकता उनका साध्य नहीं है अन्विष्ट मया उद्देश्य क साधन म एक महाकफ तत्व है। कालिदास क काव्य म अन्विष्ट मया काव्य की का प्रवृत्ति किया उमम न ता जीवन की उत्तरी यापकता हा उमर पाई आरन जीवन का परम साथ ही स्फुट हा सता। अनुररण प्रियता और चम हा प्रमगन की वृत्ति न परवर्ती मयाकाया की वणन-वस्तु का यून कुछ अस्पष्ट कर लिया। भाव और कला के समन्वय द्वारा जीवन की मार्मिक अभिव्यक्ति न हा सती। महाकाव्य की कलवर-वृद्धि म काव्य कृदिया का आश्रय अधिक किया गया जिसक परिणामस्वरूप मौलिकता का नमन ह्रास हाता गया।

कालिदास और उनक परवर्ती कविया म विषयवस्तु की दृष्टि स जो परिवर्तन हुआ वह युगतमन क काव्य विघटित गामन सता और सामाजिक अन्वयस्था का परिणाम माना जा सता है। प० कल्याणपति त्रिपाठा क मतानुसार, गुप्तकालीन साम्राज्य व्यापक गामन परिशीलन क साथ साथ धमव आन्वविरित अभिजातवर्गीय रमिता और विनासिता की स्वच्छन्द नीचा—साहित्य और कला क क्षय म—बड़ी तात्रगति स चन पटा था। हगउद्धन क युग म तथा पञ्चाशद्वर्ती गता श्या म मार्मिक माध्यम म विनास-वृत्ति के तपण और कलात्मक अनुरजन की अवृत्ति निरन्तर वता जा रहा थी पर उन त्तिना साहित्यिक अनुरजन म सवना की गहराई ना आग्रह रमिता का आवार माना जाता था। उम युग का अभिजातवर्गीय महान गामाजित काव्य और

१ रघुवग ६।२२ ५५ ३० ५६ ५७

२ बहा १६।५ ५६



ही ममय मे कवि रति दान, दया और दमन जसे जीवन क मह उद्देश्या से छात्रर विलामानुरजन की आर उभुग हो गई थी, जिनपर परिणामस्वरूप महाराजा म भी योवन और विनास क ही चित्र अधिप आण और नारी का गरिमामयी मूर्ति निराहित हो गई ।

भारवि और उनके परवर्ती महाकविया न नारी क जिस रूप को महाकाव्या म उपस्थित किया वह बहुत कुछ मुगल हरम की बगमा और रीतिरात्रीन नायिकाआ क समान भागवत्ति का परितोषक बन गया । अधिराग महाकाया म नारी की विविध शृंगारिक चरणों विस्तार क साथ निरूपित हान लगी । प्रणय नीना क अनन उस प्रसगा की उभावनाए इस महाराव्य म की गई है जा परवर्ती कविया की प्रेरणा यान बन गद जम किसी नायक का स्वय माता गू यत्र किमी परकीया क गन म पहना र्ना और जल क नारण भीगी हुई भी उस माता का उसक द्वारा परित्याग न किआ जाना ।<sup>१</sup> एमी ही चष्टा विहारो की भी नायिका करती है ।<sup>२</sup>

अधिराग महाकाव्या म शोषम क्रनु म रा विहार क अन तर जनकीया करती हुइ रमणिया रा चित्रण उनरी शृंगारिक चष्टाएँ जल म धुना हुया उनरा रूप सौम्य एव तावक या मयी द्वारा उनवा मत्न पु पावचप और दोनाकीडा आदि का बणन पाया जाता है । ऐम छायाजन यमन क्रनु म भी किण जान र जिसरा सकत वात्स्यायन क कामसूत्र म मिलता है ।

किराताजु नीय क आठव, नवें और दसवें सग म तदयुगीन सामंती जावन क यत्नामिन् चित्र अक्षित किय गय हैं । य प्रसग वास्तव म मुन्नक क है िनम वनामिक विवाद के खण चित्र अक्षि है । इस महाकाय म रात्रिमदता इतनी अक्षि ह कि जहा कही प्रकृति का चित्रण किया गया है उअम नमगिन सौ दय के उदघाटन की अथवा अलकार चमत्कार का प्रदशन हा अधिक है ।

## २ शिगुपालबध

आदिकवि वाल्मीकि से लेकर माघ तक की काव्य परंपरा का यदि अनुशीलन किया जाय तो स्पष्ट हो जाएगा कि किस प्रकार वह स्वभाविकता से आन्ध और आन्ध स रति या कृत्रिमता की ओर दानी गई । माघ म महाकाव्य की बणन रूपियाँ अधिक कलात्मक और प्रौढ है । मानवीय मधु रीडाआ का उघाटन करन म भारवि

१ त्रियेण मग्नय्य विपलमन्निधावपाहिता वपमि पीवगस्तने ।

यत्र न काचित्त्रिहो जत्राविना बगति नि एम गथा न वन्दुत ॥—परान ८।१७

२ तीव्रपरव गीतिल सत्र भूपन वमन सरीर ।

सव मग्नत्र मुहु करी र्णा मरगजें चीर ॥२७८॥—विहारी

वियमोत्तिल दधन र्ण अणन हिय तें नार ।

किरत मवन म इहृहा उहै मरगत्री मान ॥४६२॥—विहारी



की अप्रथा माघ का अति संपन्नता मिला। डॉ० विन्स्टनिल्ड न लिखा है 'माघ की अभित शृंगार व क्षत्र म निहित है। त्रिगी भी प्रचार भारतीय कवि का शृंगार का वणन उसम रहने वाली युवतियां का मा दन उणा व मिला गता वर सारत। व श्रुंगारा स या और प्रात ताल ता वणन वेवन इस्लाम परत ह रि सभी प्रमिताया व विमानाया के वणन का मौका मिल। हमारा कवि इन सखा वणन उहात्मन मी म करता है।<sup>१</sup> इसका मुख्य कारण यह है कि भारतीय की अप्रथा माघ व समम म समाज और भी अधिक वितासोनुग हा गया था। उमम उवाल्स की भावना ता पूणा तार हा गया था।

कवि ने ऋतुभावा ता वणन उहीपा रिमाव व श्रतगन किया है।<sup>२</sup> वृष्णवदन व प्रसंग म नायिका की अनावत नाभि मयनी उतर की भीसा स प्ररणा प्राप्त करव निहारी न सम्भवत दहडी धरने हो तत्पर ताभिता का ममा हा विषण किया है।<sup>३</sup>

महाकवि माघ न वन विहार से यसी हई यादव रमगिया ता तन विचार वणन पररणा के अनुसार किया ह रि तु भारतीय न जननीया औ तन्मतर शृंगारिव चष्टाया का जता वणन किया ह उसरी वपक्षा माघ का वणन अधिर नागर और तामगास्त्राय ह।<sup>४</sup>

माघ शृंगार रस क अतुभावा और हावा के चित्रण म जितने सफ्त हैं सचारिया के चित्रण म नही। वास्तव म कादिनाग गौर कादिनागतर काव्य प्रवत्ति का यह मूल अतर ह। कादिनाग ने प्रम व सारािया के चित्रण म सफतता प्राप्त की और माघ न प्रेम कला क अतगत नवशिव नायिका व हाव गाय और अतुभावो के चित्रण म कौशल प्रदशत किया ह। क्षणिक चमत्कृति उत्पन्न करने वाले माघ को यदि रीतिकालीन कविया का आजाय कहा जाय तो अत्युक्ति न हापी।

### ३ रामायणमजरी

भारतहवी शताब्दी के कश्मीरी कवि शमद ने प्रस्तुत महाराय म अनव शृंगारिक प्रसंगा की उत भावना की है। कवि न रामायण म प्रमगानुगत शृंगारिक वणन को अधिक विस्तार स उपयस्त किया व। कारणतार म हेम न ऋतु या उहीपत वातानरण विरही राम की यथा द्विभुजित कर केता ट।<sup>५</sup> अभी प्रचार यमा ९ वर्षा और शरद ऋतुभावा ता भी उहीपर वणन मिनता ह।

१ डॉ० तम विन्स्टनिल्ड न लिखी काव्य विचार पर माघ पृ० ५६

२ विश्वामय ६१० ३० ६ ४० ५५ ३४ ३३

३ वग ३१ ३ तनाय विरगी २६

४ भारतीय विमान ६१ ५ ३८ १ १६ ११ तथा माघ विश्वामय ६१३ १३ १०१ ६८ ६

५ रामायण मजरी भारण्यव वती ६८४ १ ५ ६९२ ९४ ७० ६५

६ वगे ११ ६ ११५८

७ वग मुन्तराद जनाह १ ५७

रावण के अ नगुर विलास का विररणात्मक चित्र अंकित करत हुए धमन्द्र ने राक्षसा की मुरति आदि या भी वगन किया ७।<sup>१</sup>

#### ४ विश्वमाकदेवचरित

महानत्रि विह्वण न प्रस्तुत महाकाव्य म विश्वमाकन्द ती घोरीता या अजरुत गती म वगन किया ह। पूव उर्तिरामत मगना या ती भाति इमम भी वमन और दोलाभीन<sup>२</sup> रूप और नगपिग<sup>३</sup> मयाग और विषाग<sup>४</sup> या विहार पुण्यावचय जनविहार<sup>५</sup> गात्रि म वृष्णाभिसा<sup>६</sup> या ज्यान्ता मुरारान प्राप्त काल हान पर खडिवा और मानिगिया व मयोमाया का निरूपण नायिका मन्त आनि का परंपग्नि वणन पाया जाता ह।

प्रस्तुत महाकाव्य के अध्ययन न स्पष्ट होता है कि इसका अनराठ विलास नाटाया और शृंगार क विविध पभा क विस्तृत निरूपण न आपूण है।

#### ५ श्रीकठचरित

मधुर (वारह्वी गती) न प्रस्तुत महाकाव्य म त्रिपुराह का वणन गिगुपान वय की शली म किया ह। पूर्वोक्त महाकाव्या की भाति इमम भी कलाग पवत वमन दवागनाया और गरर-यावती की दाना नीडा पुण्यावचय जलनाडा सया चद्रोदय, रूपम-या, पानकनि गनि नीवा और प्रमान वर वणन मिनता ह। छठे मग स लकर सातह्व मग सग उपयुक्त वणना का सनिवग करक मनुकाव्य क बलवर म पवाप्त वद्धि की गई है। मूलकथा १०<sup>७</sup> मग स लकर चौबीस<sup>८</sup> मग तर ही निरुद्ध है। पूर एक मग म कनि न वमत गामा और ऋतु-मुलभ विलास-नीलाया का वणन किया ह।<sup>९</sup> दसती प्रमग म दवागनाया की विरह-व्यथा का भी परंपग्नि वणन प्राप्त होता है।<sup>१०</sup> मलयानिल की आरु रुपा म उपदेशा की गद ह।<sup>११</sup> अत शिहार करत हुए पावती और गरर की शोला श्रीज का भा वगन किया गया है।<sup>१२</sup> प्रेमा नीडा म थकी हुई पावती क सोदय का वणन

१ मुद्ररान शनाक ६४ ८१

२ विह्वण विश्वमाकन्देवचरित ७।८ ६२

३ वग ८।४ ८८

४ वग १०।३४ ६ ७।३ ६२ ६।६ ४

५ वगे १ ४१ ४८ ४० ४६ ७८ ८२।

६ वगे ११।२ ०४ ६२ ४३ ६७

७ वग ११।७६ ८३ ६ ७८ ८३ ६३ १२।७२-७३

८ आरुठवग्नि ६।८ १४ १६ ३ २४ १७ ४२ ४

९ वग ७।१६ ३१

१० वगे ७।६० ४२

११ वग ७।४४ ६६

करने के उपरान्त पुष्पावचय के प्रमग म नाया नायिका की विनाग चेष्टाया का वणन किया गया है।<sup>१</sup> पुष्पावचय म मंडित पावनी क र्मा मो न्य का वणन भी परम्परित है। उपयुक्त महाना या की भाति इसम भी जनकीडा शौर प्रकृति तथा मानव की मधु त्रीडाया का सु तर वणन प्राप्त हाता है।<sup>२</sup>

सूयास्त और चन्द्रोदय वणन के उपरांत उनर उद्दीपक वातावरण म अग्नि सारिकाओ का वणन किया गया है।<sup>३</sup> विरहाद्दीपा च द्र चापनी आति का रुडिग्रस्त वणन यहाँ भी प्राप्त होता है।<sup>४</sup> सयागिया र उपकारक चद्र की प्रसमा भी की गई है।<sup>५</sup> देवागनाओ क मौ दय प्रसाधन का वणन जसा कवि न किया है वह बहुत कुछ सामन्ती वातावरण को द्योतिन करता है।<sup>६</sup> रत्नजति मणिप्रा की प्रमा के कारण दुखली पतली नायिका मामल दिखती है।<sup>७</sup> एसी ही उक्ति विहारी ने भी निबद्ध की है।<sup>८</sup> सर्वांगभूषिता नायिकाया का मधुपान वणन करने हुए मद को मानरूपी दृढ तनु को वाचनवाला करपत्र (गारा) सिद्ध किया गया है। रीतिवाच्य म भी मान लज्जा और मय आति के निवारक मधुपान का वणन मिलता है।<sup>९</sup> देवागनाओ क अन्त प्रकोष्ठ की समद्वि एफ आर धात्स्यायन के नागरक के अत पुर की याद दिलाती है दूसरी ओर रीतिवालीन सामन्ती वातावरण का पूवरूप उपस्थित करती है। केलि गह के उद्दीपक वातावरण का अकन करत हुए कवि ने सयाग शृंगार का ब्योरेवार विवरण उपस्थित किया है।<sup>१०</sup>

प्रस्तुत महाकाय की शृंगारिक वण्यवस्तु की तुलना रीतिवाच्य की वण्यवस्तु क साथ करने स दोना म काफी साम्य मिलता।

जसा कि पहल लिखा जा चुका है बालिदासीत्तर महाकाया की बहप्रयी (किराताजु नीय शिशुपाल वध और नयधचरित) म जिन प्रवक्तिया का क्रमश विहास

१ शीकठचरित ८।१।४५

२ वही ८।५४

३ वही ८।२५ ३१ ४४

४ वही १।२ ६ ११।४ ६ ३३

५ वही ११।४५ ६३ १२।६ १ ३२ ३३

६ वही ११।६४ ७३

७ वही १३।२ १८ २४ २६ ३१ ३५

८ धनगन्धर्वगीरघोषक-माधमया

मन्त्रिभिरणनरतरवटमासलत्वम् ।

तनवरमणि धामो नागवाच्यमनातां

नयित्ति कथचित्कन्यामनामनाथ ॥ १।१४६

९ विहारा दा म १

१ मयक शीकठचरित १४।६ तुलनीय-विहारी ३५४ ५

११ शीकठचरित १५।३ ५

नितिसाई नहा है उसका सामने व्यापक रूप नरी गतानी उत्तराध व कवि रत्नाकर व हरविजय म मितना जा गार र गिगुपान व व धनुस्तरण पर किया गया है। त्वि न प्रस्तुत प्रवचन म अपन नीति-शास्त्रीय और काम शास्त्रीय पाठ्य या प्रयोग किया है।<sup>१</sup> पाठ्य प्रयोग की हम प्रति व कारण वही रही कवि का साहित्यगत बड़ ही कुशल रूप में उपस्थित हुआ है। प्रनायक आग्रह व कारण कवि का ज्योतिष व्याकरण राजनीति कामशास्त्र ज्ञान यागक्रिया आदि न अपन अप्रस्तुत विद्यान म पयाण सहायता सी है।

नीतिशास्त्र की बसी और पाठ्य प्रयोग की वृत्ति व कारण महाकाव्य की एक दूसरी गामा विवर्धित है जिसमें कथा ध्वनन व साथ साथ व्याकरण अन्वय आदि व प्रयोग भी निरन्तर किया गया। इस गती का मम्मवत प्राचीनतम काव्य मट्टि का रावणवध है। भौमव (७वा गती) का राघवाजुनीय धनजय (१०वी गती) का विमघान हरिश्चन्द्र (१०वी गती) का धम्माम्मुत्थ कविराज (१ वा गती) का राघवपाठ्याय और हम्बद्र (१२वी गती) का द्वयाधय काव्य इसी गती म निबद्ध है। राघवपाठ्याय म रामायण और महाभारत की कथा द्वयचर गली म वर्णित है जिसमें लय और कृत्रिम चमत्कार ही अधिक है रमणीयता नहीं।<sup>२</sup>

## ६ नैपथरित

प्रस्तुत चरितकाव्य म आनकारिक गती का चरम परिपाक पाया जाता है। इसमें गार्हिक चमत्कार छन्दचिन्त्य अन्वयानाम और पाठ्य प्रयोग की प्रमुखता पाई जाती है। डॉ० विट्गन्तज न इस आर सक्त करते हुए लिखा है अन्वयशास्त्र की सभी कथाका प्रयोग छन्दशास्त्र की कृत्रिमता का चरम निर्यान और बदन धमशास्त्र का ही नहीं अपितु कामशास्त्र पर भी अपने पूण अघिकार का प्रयोग करना इनका मुख्य ध्येय था।<sup>३</sup> वर्तमान जीवन का काई भी सबय स्थल इनसे अदूता नहीं रह

१ It closely imitates Magha's Sisupalavadha in point of artificiality and informativeness. The author discloses his knowledge of Nitisāstra in cantos 8-16 and of the Kamasāstra in canto 29.

—H D Velankar Prosodial Practice of Sanskrit Poets  
J B R A S Vols 24-25 (1948-49) p 61

२ Raghava pandviya is a poem in 13 cantos with a double application to the stories of the Ramayan and Mahabharat. It is naturally fully of Slesa and is written in a very artificial style.

—H D Velankar Prosodial Practice of Sanskrit Poets  
J B R A S Vols 24 25 (1948 09) p 61

३ Whose (Sriharsas) sole aim is to apply all the arts of Alamkarsāstra to surmount all the difficulties of metrics, and to

गया था। रीतिवादीन कवियों की भांति दास भी शृंगारिक कथना में कुछ घातोरत।  
 त अस्वीकृता या दोषाशेषण किया है।<sup>१</sup>

भारति श्रौत माधव त राध्या म प्रभुता सभा कथा रुद्रिया वा। पथ म ताप्य  
 म प्रयाग मिलता है। उक्त महाकाव्य की भांति दमरी भी कथारम्भु बट्टा जाती ह  
 कि तु शृंगारिक प्रसंगा व विस्तृत निरूपण व कारण कथार की धीमाय बदि  
 हुई है।

नपथयगित म नत्तानिग उपवनमिहार<sup>२</sup> विरह वणन<sup>३</sup> अत पुर व हाग-परि  
 हाग श्रौर वभव<sup>४</sup> सयाग<sup>५</sup> ता घोत्त शृंगार घाति<sup>६</sup> ता कथा विस्तार म किया गया<sup>७</sup>।

श्रीहृष त अत पुर की रमणिया ता म सुरवाणा भना व गा त्वनामुता य रा  
 सलिया की शृंगार रचना की ता विनागाति हाग ताग पत्र सया वित्र रचना मान्य  
 एव पत्रमगी रचना गतरज नीला श्रौर रति चित्त ममचित रमणिया वा कथा तर  
 अमिजातवर्गीय अन्त पुर वा सतीव चित्र उगस्थित किया है।<sup>८</sup> गी प्रहार अटारहनें सग  
 म वर्णित नल वा अत पुर वामगूत्रा म उल्लिखित नागरर व अत पुर वा सपत्र  
 प्रतिनिधित्व करता है। समकत रीतिवाच्य व अत पुर व प्रतासिक जीवन व चित्रा की  
 इन कथना स पर्याप्त प्ररणा मिली हागी। त्नात्मक विनोद श्रौर विलास वीडाघ्रा ता  
 विस्तृत वणन करक महाकवि त परवर्ती कविया व तिए रस दगा म माग प्रस्त कर  
 किया था।

नल न अपनी सम्पूर्ण गोपनीय रस-लीला वा दमयंती की सखी व सम्मुख वणन  
 करके जिस छिछले स्तर की रसिवता प्रकट की है वसी रीतिवाच्य म भी बहुत कम  
 मिलती है।

## प्राकृत

प्राकृत साहित्य की याप्ति ६०० ई० पू० स १८०० तक मानी जाती है। इस

show off not only his thorough knowledge of mythology but also  
 his mastery of the Kamsastra

—Dr M Winternitz Indian Literature Vol III p 64

१ Dr A B Keith A History of Sanskrit Literature p 140 and De  
 and Dasgupta A History of Sanskrit Literature p 330

२ ग्रन्थ नपथयगित १।१।२। २।१। ३। ३। ७। १०। १। १। १५। १। ८

३ वही १। ८ १। ८

४ वही १। ८ ५। २ १। ७ १। ८ ३। १ १। १५ ५। ५ १। ८

५ वही ६। ५। ८ ५। १। ५। ३। ३

६ वही १। ८ ३। ६। ८ ५। ८ ५। १। २ २। १। १। १। ३। ५। ५। २ १। १। १। ५

७ वही १। ५। १। ५। ५। १

सुविधा के लिए तीन भागां में विभक्त किया जाता है—प्रारम्भिक रूप पालि, मध्य-कालीन रूप प्राकृत तथा उत्तरकालीन रूप अपभ्रंश है। पालि विशेष रूप में बौद्धों के धर्म प्रथा की भाषा होने के कारण रसात्मक या शुद्ध साहित्य से हीन है। यदि इसमें कुछ रसात्मक साहित्य का निर्माण हुआ भी हो तो आज प्राप्त नहीं है। डॉ० शम्भूनाथ सिंह ने पालि साहित्य की चर्चा करते हुए लिखा है 'सम्भवतः पालि केवल धर्म की भाषा समझी जानी थी तभी अश्वघोष को अपना महाकाव्य सम्वृतन म लिखने की आवश्यकता पड़ी। पाचवीं शताब्दी में अटठकहा के आचार पर ही मिहल के इतिहास से सम्बंधित दा प्रथ दीपवश और महावश निर्मित हुए। विद्वान्मित्र ने इन्हें ऐतिहासिक महाकाव्य की शताब्दी दी है। इनमें महावश को राजतरंगिणी की तरह का ऐतिहासिक शैली का महाकाव्य कहा जा सकता है। इसमें भाषा और छन्द की पूर्णता भी अनूठत काव्या जैसी है।'<sup>१</sup> प्राकृत में अनेक प्रबन्ध-काव्यों की रचना हुई जिनमें विमलभूरि का पञ्चमचरिय सबसे प्राचीन है। इसमें राम का चरित्र ११८ सर्गों में वाल्मीकि रामायण से मिलन शैली में वर्णित है। दूसरा महत्त्वपूर्ण महाकाव्य सेतुबन्ध महाराष्ट्री प्राकृत में पाया जाता है। सेतुबन्ध परवर्ती अलङ्कृत शैली में लिखा गया है। इस पर सामंती वातावरण का पूरा प्रभाव दृष्टिगत होता है।

कालांतर में संस्कृत की तरह प्राकृत का भी सम्बंध सामान्य जनता से विच्छिन्न होकर राजदरबारा में स्थापित हो गया। इसके परिणामस्वरूप उसकी स्वाभाविक रमणीयता लुप्त होती गई और उसके स्थान पर संस्कृत काव्य परम्परा की कृतियां स्थान पान लगीं। दरबारी वातावरण और नागर सम्यता में पले हुए कवियां न, चाहे वे संस्कृत के कवि हाया प्राकृत के, अलङ्कृत काव्य शैली अपनाईं।<sup>२</sup> यह प्रभाव वाकपतिराज के गडडवहा (७वीं शताब्दी) में और भी व्यापक रूप में पाया जाता है।

हैमचन्द्र के द्वयाश्रय महाकाव्य में अंतिम आठ सर्गों को कुमारपालचरित नाम से एक स्वतंत्र महाकाव्य माना जाता है। इसमें अणहिलवाड या पाटण (गुजरात के राजा कुमारपाल का पराक्रम वर्णित है।

अठारहवीं सदी पूर्वार्द्ध के कवि रामपाणिवादे का महाकाव्य कसवहो २३३ छन्दों का महत्त्वपूर्ण महाकाव्य है। इसमें नगर का वर्णन अलङ्कृत शैली में किया गया है।

उन महाकाव्यों के अतिरिक्त कुछ अन्य अलङ्कृत शैली के रसात्मक काव्यों का उल्लेख मात्र मिलता है। जैसे पादलिप्ता की तरगवई सबसेन का हरिविजय, वाकपति का मधुपयविजय, आनन्दवन का विषमवाणलीला और मारकण्डेय का विलासव ईसत्तन आदि। प्राकृत महाकाव्यों में अलङ्कृत और रसात्मक शैली में विनिर्मित होने वाले सेतुबन्ध और गडडवहो प्रसिद्ध हैं।

१ डॉ० शम्भूनाथ सिंह इतिहा महाकाव्य का स्वरूप विज्ञान पृ १६३ ६४

२ वही पृ १७०

मरति उत नो ज्ञानात् त के श्रुत्यादि नयन कारिणिर् विरथा रिता  
जाणया।

### रावण का (मनुष्य)

राजा प्रवर्णना विीय (वीरका स्था) प्राय १५ पाठवागका म विरथिवा यह  
वि जाणया मयाथाय है। प्रस्तुत ५५ त मया क का म १ वि प्राणत भाग म मया  
वाय्य विगा वा परमया क गुणधार प्रवर्णना ।। मय ती विरथा म वाक्यविगार न  
दमी मयाथाय क वाणार पर मयुत ।। वी र का की।

प्रस्तुत मयाथाय म गुणां विरथा मयका क मयनीय म ।। वा गा की मय कया  
मर ५ ५ मयाथाय धारि का विरथादीना मया मिरथा है। मया ही मया  
रमनिवा का विनाम उतरी श्रुत्यादि ५ मया धारि का भी विरुग मया किया  
मया है।

मयाय क वृत्तवा का धारि प्रस्तुत प्रवम म भी कवि जहाँ कदा श्रुत्यादि  
मया का निपात्रा कर मका है उगया विधि, उगया पूरा मयमया म किया है। रावण  
की धन्य पुरवपुमा क मयागतावि १५ म ।। म का विरथा मरी कु विगा मयुत है।  
ह्रीं० राधागोवि मयाय क मयुमाय मयु क विरथा म मयुगा म मयुगा मयुगा मयुगा  
रा म मयुगा श्रुत्यादि भावा म म मयुगा मयुगा मयुगा मयुगा मयुगा मयुगा मयुगा  
धी। कवि न उतरी श्रुत्यादि मयुगा का विरथा मयुगा किया है।

### मउडवहा

महावि वाणनिगज (८५० गता । १०) । प्रस्तुत प्राणत मयाथाय की  
रका मनीज त मयाराय मयायर्मा का मया म ही था। विरथा म यह उपनय है  
हमम कवि का मयाय मयुगा का क का ही मयाय मयुगा मयुगा मयुगा मयुगा  
कवि इस पूरा न क मया। प्रस्तुत मय उग कया की मय मया मय है।

कवि न मय देवताया की मनुति क मय काय की भी मया की है विमम

१ It may be said in passing that Pravarsena was the path finder  
in composing epics in Prakrit. Later on Vikramaditya wrote his  
Gudvaho epic in imitation of the name and content of Pravarsena's work.  
—Dr R Bhasik Ravana Vaho p १५

२ रावणकने मयाथाय १ मयाय १७ ३५ तथा ५१ १

३ वही मनीज १ । ३ । ७७

४ वही मयिका ५० १३

स्पष्ट होता है कि कवि ने काम और काम भावना का भी उचित महत्त्व दिया है।<sup>१</sup>

यद्यपि प्रस्तुत महाकाव्य अथर्वत ज्ञी का चरितनाव्य है फिर भी इसमें वार वधुष्मा व माघ जननीडा, मद्यगान और ग्रीष्म ऋतु के 'यतीत करन व' सामंती-साधना का जगन किया गया है।<sup>२</sup> इसमें प्रगस्तिनाव्य के ममा गुण मिलत है।<sup>३</sup> अन्त पुर वणन के प्रसंग म कवि ने ग्रीष्मनाल म सामंत रमणिया की स्थिति और उनकी शृंगारिक कष्णाग्रा का अच्छा वगन किया है।<sup>४</sup> वषाकाल म यगोवमा व विलास का वगन राज-यवग की वृत्तिया का उल्घाटन करता है।<sup>५</sup> नारी रूप वगन म मुकुमारता, आमिजात्य और ललितलीलाप्रा ना उन्नय' रीतिनालीन कविया की वगन शरी की यान् दिलाता है। शृंगारिक प्रसंग का लहर नवि की उपेक्षा उमक शृंगार-वगन की निपुणता की द्योतित करती हैं। मद्य स्नाता शक्तिनिषा व मौ-दय और मपन का वगन रीतिनालीन नायिकाप्रा व वगना स बहुत पुछ साम्य रखता है।<sup>६</sup> गिशिर ऋतु के प्रात काल म सुरत कलात नायिकाप्रा का सूक्ष्म चित्रण पर्यती कविया का प्रेरणा स्रोत कहा जा सता है।<sup>७</sup> कवि ने वसंत ऋतु में यगावमा का उपवन विहार भी वर्णित किया है।<sup>८</sup> इस तरह के वगन मस्क त महाकाव्या में भी पयाप्त मात्रा में पाए जात हैं। नायिकाप्रा की साथ कालीन चेष्टाएँ शृंगारिक वानावरण ना और भी तीव्र बना देनी हैं।<sup>९</sup> परम्परा के अनु-सार रात्रि म कष्णाभिगायिकाप्रा की साज सजा का भी वगन किया गया है। इसके अतिरिक्त मुदिता, खिन्ता मुग्धा और मानवती आदि के चित्रण प्रभावपूर्ण हैं। कवि ने सुरत और सुरतात का भी वगन किया है।<sup>१०</sup>

इस महाकाव्य की विशेषताग्रा का उल्लेख करत हुए डा० शम्भुनाथसिंह ने लिखा है 'या भी इसमें कथावस्तु नहीं के बराबर है और अत्यंत अलङ्कृत वणना दूरारूढ कल्पनाग्रा विद्वत्तापूर्ण सदमों तथा अनावश्यक वस्तु व्यापार वणन से काव्य का कलेवर स्पीत हो गया है। बाकर्पतिराज ने इस काव्य में बाणभट्ट के हृषिकेश और प्राकृत क छ दावद कथाकाया की गली का समावय किया है और साथ ही परम्परावद्ध गास्त्रीय महाकाव्य की रूढ़िया का भी अप्रासंगिक वस्तुव्यापार-वणना क रूप में पालन

१ गउडवहो ५०

२ गउडवहो ६२ ६६

३ वही २१२ २६६

४ वही ३५५ १०

५ वही ३५३ ६६५

६ वही ७११ ७७६

७ वही ७७७ ८

८ वही ७५६ ८७

९ वही ७५८ ६५

१० वही ११२२ ३१

११ वही ११३६ ६२



रिया है।<sup>१</sup>

यद्यपि यहाँ केवल शृंगार प्रधान रचना ही ही रचना की गई है किन्तु यदि समय रूप से इन महाकाव्यों में रचनेवाले के युग धर्म का विवेचन करत हुए प्रमुख वाच्य प्रवृत्तियाँ का विश्लेषण किया जाय तो मनी निम्नलिखित बातों का विवेक (मुख्यतः छठी शताब्दी से ग्यारहवीं शताब्दी तक) में वीरता धर्म और शृंगार की भावनाएँ प्रधान थीं। समाप्तवग वीर और धर्म प्रिय या साथ ही उत्तम शृंगार भावना की भी प्रवृत्तता थी। डॉ० शम्भूनाथ सिंह ने लिखा है 'इस काल की साहित्यिक प्रियागीलता और कला प्रेम की प्रवृत्ति भी कम महत्त्वपूर्ण नहीं है। इस समय साहित्य की रचना या तो राजदरबारों में रहने वाले कवियों द्वारा हुई या राजाओं के स्तुति गायक और वक्तावली रक्षक चारण भाण्डों द्वारा अथवा धर्मभावना से प्रेरित कवियों द्वारा जाया तो मठा मन्त्रियों में धार्मिक संप्रदायों के आश्रय में रहने वाले या सदा और राजाओं के मंत्रियों के आश्रित थे।<sup>२</sup> इससे स्पष्ट होता है कि इस युग में तीन प्रकार की रचनाएँ होती थी— (१) सामन्ती विलास वृत्ति के अनुकूल शृंगारी रचनाएँ (२) सामन्ती गीतों के वर्णन में वीर प्रशस्तियों की रचनाएँ (३) धार्मिक या भक्तिपरक रचनाएँ। संप्रति केवल शृंगारिक रचनाओं का ही परिचय दिया गया है। प्रशस्ति, भक्ति और नीतिपरक रचनाओं का संक्षिप्त परिचय आगे दिया जाएगा।

### अपभ्रंश

अपभ्रंश का महाकाव्यों में शृंगार और उसके विविध पक्षों के विकास और उसके स्वरूप की विवेचना के पूर्व यह जान लेना आवश्यक है कि अपभ्रंश भाषा में वाच्य प्रणयन किस रूप में और कब से प्रारंभ हुआ। या तो विद्वानों का मत है कि ईसा की दूसरी शताब्दी से ही लोक भाषा का विकास प्राकृत अपभ्रंश भाषा के रूप में प्रारंभ हो गया था और छठी शताब्दी तक इसने पूर्ण प्रभुत्व स्थापित कर लिया था। संस्कृत की तरह अपभ्रंश भी साहित्य की मातृ भाषा बन चुकी थी। ईसा की आठवीं शताब्दी से अपभ्रंश साहित्य में पूर्ण प्रौढ़ता आने लगी थी। १६वीं शताब्दी तक इस भाषा में साहित्य का निर्माण होता रहा किन्तु इसका उद्वृष्ट का काल आठवीं शताब्दी से तेरहवीं शताब्दी तक ही माना जाता है। इसके उपरान्त यह जनियों की धर्मभाषा होने के कारण अत्यंत सीमित रूप में ही उपलब्ध होता है।

अपभ्रंश के महानाय यद्यपि संस्कृत और प्राकृत के शास्त्रीय या रीतिवद्ध महाकाव्यों से भिन्न है फिर भी इसके पौराणिक और रोमांचक शैली के महाकाव्यों में शृंगार के विविध पक्षों के वर्णन की रूढ़ परम्परा का प्रयोग मिलता है। इन चरित्कथाओं में संस्कृत के नपथकचरित या विक्रमांकदेव चरित की शास्त्रीय शैली का अनुसरण

१ डॉ० शम्भूनाथ सिंह हिन्दी महाकाव्य का स्वरूप विनायक पृ १७१

२ वही पृ २०६

नहीं किया गया है।<sup>१</sup> इनमें राग विराग का पृथक् पृथक् और विस्तृत निरूपण मिलता है। इन काव्य ग्रन्थों का मूल प्रतिपाद्य विराग या गान्तरम ह अतः म भी पात्र जिन घम को स्वीकार कर घर-द्वार त्याग दत्त है त्रिन्तु उसकी पृथगीकृत धार शृंगारी एव एहिक है। डा० गम्भूनाथ सिंह ने अपभ्रंश महाकाव्य की विवचना करते हुए किया है 'यद्यपि य सभी पौराणिक विषयों पर लिखे गए धार्मिक काव्य हैं पर इनमें शृंगार और युद्ध का वर्णन भी मिलता है। कथा के मातल अक्सर मिनत ही कविया न प्राकृतिक वस्तुओं—सध्या प्रमात चन्द्रमा नग सागर, पतत आदि—का मुन्तर चित्रण किया है।'<sup>२</sup> डा० हरिवंश कोष्ठ का मत है कि सस्तुत और प्राकृत की तरह अपभ्रंश में धमभावना निरपेक्ष एहिकतापरक महाकाव्य नहीं लिखाई पन्त। मभवत एस महाकाव्यों की रचना जनेतर कविया द्वारा हुई जा सुग्धा व अभाव म कालवलिता जा गई।<sup>३</sup>

अपभ्रंश में सबसे प्रथम महत्त्वपूर्ण महाकाव्य स्वयम्भू का पञ्चचरित या पञ्चम चरित है।

पञ्चमचरित—प्रस्तुत महाकाव्य में रामकथा का जन रूपांतर उपलब्ध होता है। इसमें ऋतुओं का वर्णन अनेक उपमानों के द्वारा मुन्तर शली म किया गया है। पावस वर्णन में कवि न पावसराज का श्रीराम राज पर आक्रमण के मागल्पन द्वारा कवि-परम्परा का निर्वाह किया है।<sup>४</sup> रीतिकाल में भी एस अनन्य छन्द मिनत है जिनमें पावस का राजा के युद्ध वरूपक म वर्णन किया गया है। त्रिन्तु उसका प्रभाव मिनत है। वहाँ नायिका का गवाही जानकर उस कल्प दन क निग वादला का घुमडना गरजना और बूँद गर का प्रसार करना नाति वर्णित है। वहा प्रकृति का उद्दीपक रूप स्पष्ट है।

कवि ने जनश्रीडा में महामाजुन और उनकी रातिया की जिन चण्डाला का वर्णन किया है वह मन्त्रन व गान्त्रीय महाकाव्यों की शली पर आवारित है।<sup>५</sup> इनमें एन्वय और विलासिता का रूप अधिक स्पष्ट होकर आया है। वसति ऋतु का वर्णन भी परंपरित है।<sup>६</sup> प्रस्तुत महाकाव्य में पवजय का अजना सुदरी के लिए विलाप<sup>७</sup> विश्वमो वशीय के पुरुषवा विलाप स मन्त्रेरा विलाप<sup>८</sup> तथा कुमारमभव के रतिविलाप स मिलता जुलता है।

कवि ने सीता क रूप वर्णन में परंपरित उपमानों का प्रयोग किया है।<sup>९</sup> प्रकृति

१ डा० गम्भूनाथ सिंह लिखी महाकाव्य का स्वरूप विकास प १८६

२ डा० हरिवंश कोष्ठ अपभ्रंश माण्य प० ५२

३ स्वयम्भू पञ्चमचरित २८।२३

४ वग १५।६

५ वही ७१।१२

६ वही १६।१३

७ वही ७६।१

८ वही ८।३

यगत में कवि का अग्रस्तुत विधात<sup>१</sup> बाणभट्ट की काव्यशैली की गान विधाता है। सागरसिमसुग विधाता का कविता प्रियतम म मिलत जा ती हूँ<sup>२</sup> रमणा क रूप र यगत विधाता है। स्वयभू त भा उग परिधाता का पाता विधाता है।<sup>३</sup>

महापुराण—पुराण का यह धारणा प्रसिद्ध महाकाव्य है। अगम भी वीर और शृंगार रसा का विस्तृत और गानावाग यगत विधाता है। विन्तु मयरा पतनमात सात रम म ही हाता है। कवि १। उगार क विधि ग ११-मयाम घोर विधाता-१ गाय नाविजा क सोप्य घोर उगारिग ता पर्याय यगत विधाता है।<sup>४</sup> भविष्यतपुराण म धनपात ने प्रस्तुत कथा क सीत मया म यमग शृंगार वार घोर गान रसा का यगत विधाता है। दमम कमरभी की रमणाभा<sup>५</sup> तागे का उगारिग धारि का यगत कवि पम्परा के अनुसार ही विधाता है।<sup>६</sup>

## हिन्दी

हिन्दी क महाकाव्य वा प्रब ध काव्य मगृत प्राकृत और अग्रध न क प्रब ध काव्या की ही पिछनी कही मान जा मता है। यद्यपि हिन्दी क धारिवाची महाकाव्य बहुत-बहुत भाषाभाषा प्रमाणाना घोर वीर वीरा म प्रभावित है विन्तु उम गारुषीय महाकाव्या क तत्व पूजा विन्तु उनी हूँ<sup>७</sup> उम राजा या मामन की प्राप्ति क साध ही उक्त रूप-गो-दय मर्याम उगार विगार जेन वाता धारि क यगत मिलत है। इसी प्रकार धारिवाची गगातरासा बीगतरासा घोर पृथ्वीराजरासो म यद्यपि प्रमुग रस वीर है फिर भी शृंगार घोर उम क विधि गता का विन्तु यगत मिलता है। स्वय च-यराई ने अवन पत्रकी कविता त प्रति कृतपता गापित करत हूँ अघनी रचना की उगता उच्छिष्ट कहा है।<sup>८</sup>

पृथ्वीराजरासो—यद्यपि रासा की गणा वीररसात्मक मगताव्य। म की जाती है पर वीररस शृंगाराश्रयी होकर प्राया है इमविण इमम शृंगार क विधि उपायना-सयोग विधाता रूप चित्रण<sup>९</sup> क उग यगत धारि का यी रूप मिनता है जिगरी परम्परा रीतिकाल म विधिसित हई। प्रस्तुत प्रब म उगार ती प्रधानता वात हूँ डा० विपिन विहारी त्रिवेदी कहत है, रासा म गती प्रधानता वार घोर रीत रसा की पाई जाती है

१ स्वयभू पउमचरिउ १।४

२ वही १४।३ महापुराण १२।६ पासना चरिउ १।२

३ महापुराण ५।१७ २।६।१७ ५।२।२ ५ २०।१३ ७ १६।११

४ भविष्यतपुराण (गायकवाड धो० मि १६०३ ई ) प ५

५ वही प २३ ३३ १५।१।७ प १ ६

६ कवी किलि किली उकती मरिण्यो ।

तिर्न की उचिष्टी कवी चद भववी ॥

—पृथ्वीराजरासो समय १ छ १

७ पृथ्वीराजरासो २५ २६ ३ ६

बहुत कुछ वही हान शृंगार ता । बीर स्वभाव रति प्रेमी पाए गए है । विभी की रूपवती कथा का समाचार पाकर अधरा कथा द्वारा उन अपन माता पिता की इच्छा क विपरीत आकर वरण करने का मन्त्र पाकर, उन कथा का अपहरण कर उमक पशवाता से भयकर युद्ध और इम युद्ध में विजय प्राप्त करत कथा का पाणिग्रहण तथा प्रथम मिलन आदि क वगना में हम विद्याग और गद्याग क चित्र मिलत है । नायक और नायिका क परम्पर श्रवण मात्र में अनुराग और तज्जनित विभागकष्ट क वगन काम पीटा क प्रताक है ।<sup>१</sup>

पृथ्वीराजरासा में अत्युक्तिपा का सहारा लेकर पृथ्वीराज के अनक युद्ध और सन्ने मूल में मूलत कथाहरण का लेकर अनक संगोग विद्यागात्मक चित्रा का सम्पुजन किया है । चन्दरदाइ का प्रस्तुत महाकाव्य में युद्ध और विवाह की शृंगला उपस्थित करने में पर्याप्त सफनता मिली है । हर युद्ध के वगन था-व्युत अंतर क साथ ग्वस ही है । हर बार काई पथिर या गदगजाह्व विभी राजा का रमणीय कथा का रूप-वगन करता है जिस मुनकर पृथ्वीराज की दगा प्रमान्यानक वाक्या क नायक की सी हा जाती है अर्थान् वह पूर्वानुरागजय विरह का अनुभव करने उगत है । दूसर ही क्षण कथाहरण के लिए वाहिनी सजनी है । कवि बंधी बंधाई गनी में सना गना प्रस्थान युद्ध और गनु सना की पराजय का वगन करता है । अधिकांश नायिका का हरण विभी दवस्थान में ही हाता है । संगोग क कवि अभिलाषपूर्तिजय नायिका क रूप और प्रथम गानजय सवाचादि का वगन करता है । कथाहरण क वात् संगोग शृंगार क अनगत आने वाली रुढ चप्टाआ का सतिप्त उगन किया जाता है ।

जहां तक शृंगारिक प्रसगा का प्रश्न है प्रस्तुत महाकाव्य में उसक दोता-सयोग<sup>२</sup> और विद्याग<sup>३</sup>-प ता का वगन गान्त्रीय पद्धति पर किया गया है । कवि ने रानी हुआवती आदि की बय सधि एवं पांडग शृंगार और द्वांश आमरण का भी वगन किया है ।<sup>४</sup> अत सस्कृत प्राकृतादि साहित्य की परम्परा का आग वगन में प्रस्तुत महाकाव्य का महत्त्वपूर्ण स्थान है । गान्द्र रासो की विगपता का उल्लेख करत हुए चन्दरदाई को काव्य रीति क प्रति निश्चित ही सवधान मानत है । उहांत किया है कि पृथ्वीराज रासो के शृंगार चित्रा में अनक चित्र एम मिल जात है जिनमें रूप क उपमाना का बहुत कुछ उसी प्रकार रीति में जकडकर उपस्थित किया है जसा रीतियुग में हुआ है ।<sup>५</sup> पृथ्वीराजरासो में पढरुनु कथा गरद आदि क वगन कई स्थला पर आग है ।<sup>६</sup> कवि

१ का विपिनविहारी त्रिवेणी चन्दरदाई और उनका काव्य प० १५६

२ पम्बाराजरासा ६२।११ १ २ ६६।१ ३ १५

३ वहा ६६।६ १ ६४५

४ वहा ३६।१५५ १८३ ४६।८ ४३।२३ १८ ४८।८५ १०

५ डॉ नगण रातिकाव्य का भूमिका प १८६

६ पम्बाराजरासो २५।२५ ४५ ६१।६-७२ २५।३७ ४४ ४६ १ ७ ८, ५७।१३८ ४२

ने अधिकांश वणन काव्यरूढ़ि के अनुसार ही किए हैं। सयाग शृ गार के वणन में वात्स्यायन के कामसूत्र का प्रभाव स्पष्ट लक्षित होता है। अनेक नायिकायाँ व भेदा-स्वाधीन पतिका, परकीया, स्वकीया<sup>१</sup> अभिसारिणा मुग्धा नवाढा<sup>२</sup> आदि के अतिरिक्त कामशास्त्रीय—पद्मिनी, चित्रिणी गविनी और हस्तिनी का भी उल्लेख किया गया है।

पृथ्वीराजरासो में अनेक युद्धों और विवाहों के वणन बहुत कुछ एक ही तरह के होने के कारण उबास पदावर देते हैं। जगता है बिना किसी मुनियोजित कथानम के कवि ने अनेक घटनाओं का सङ्गठन मात्र कर लिया है। यही कारण है कि इसमें प्रमाणावधि नहीं है और पृथ्वीराज को छाड़कर और किसी का चरित्र उभर नहीं सका है। डा० शम्भूनाथ सिंह ने नारी पात्रों के चरित्र का विश्लेषण करते हुए लिखा है

रासो में स्त्री पात्रों में किसी का भी यत्नित्व बसा महत्त्वपूर्ण नहीं है जसा महाभारत में द्रौपदी, कुंती और रामायण में सीता कवयी और म दोन्नी आदि का है। सामंती वीरयुग की संस्कृति के अनुरूप रासो की सभी स्त्रियाँ भोगविलास के साधन के रूप में हैं अतः सभी एक जसी हैं।<sup>४</sup> रीतिकालीन नायिकायाँ व प्रति भी यही बात कही जा सकती है।

छिताई वार्ता—नारायणदास कृत छिताई वार्ता (२० वा० सं० १५०० वि०) में प्रेमाख्यानक काव्य परम्परा के अनुसार नायिका का नखशिख और शृ गार के सयाग और वियोग पक्षों का सम्यक निरूपण किया गया है।

मुल्तान अलाउद्दीन के द्वारा भोज गण चित्रकार दशगिरि के राजा रामदेव के नवीन भवन में नल दमयंती की प्रणयकथा का मन्त्राचार और पद्मिनी, चित्रिणी हस्तिनी और गविनी नायिकायाँ के मनोहर चित्र भित्ति पर अंकित करते हैं।<sup>५</sup> इससे प्राचीन प्रणय गाथायाँ और कामशास्त्रीय विनास व प्रति लोच रचि का मन्वत मिलता है।

कवि ने रूढ उपमानों द्वारा छिताई का रूप एक नखशिख वणन किया है।<sup>६</sup> छिताई का नवोद्भात मनोवर्णन आधार पर वर्णित है। फिर भी उसमें परम्परा का महत्त्वपूर्ण योग लक्षित होता है।<sup>७</sup> वियोग वणन में भी वणन रूढ़ियाँ—प्रकृति का उद्दीपकत्व कामदेव के प्रति उपालम्भ आदि का सम्यक निर्वाह पाया जाता है।<sup>८</sup>

पदमाघत—मलिक मुहम्मद जायसी कृत पदमाघत हिन्दी का प्रेमाख्यानपरक

१ पृथ्वीराजरासो ७।३१ ३२

२ वही ३६।२३१

३ वही ६१।२५५२

४ डा० शम्भूनाथ सिंह हिन्दी महाकाव्य का स्वरूप विभाग प ११

५ छिताई वार्ता (ता प्र म) छ १२६ ६

६ वही १५० १८ ५४४ ४८

७ वही १६० ६६

८ वही २२२ २३ ३१६, ४०८ ११ ४१२ ६१८

महाकाव्य है। प्रेमप्रधान आम्बान पर आधारित कथावस्तु के कारण इसमें शृंगाररस की प्रधानता है। शृंगार व आनन्दन रूपलावण्य का वणन कवि न विम्वृत और परम्पराभूक्त उपमाना के प्रयोग द्वारा किया है। आचार्य रामचन्द्र गुप्त न लिखा है जायसी व वणन अधिकतर परम्परानुगत है।<sup>१</sup> इससे उनमें कवि समय सिद्ध उपमान ही अधिक मिलते हैं और इन परम्परामुक्त उपमानों में कुछ नम अवश्य हैं जो प्रथम व अनुक्त भाव का स्पष्ट करन में सहायक नहा हान।<sup>२</sup>

प्रस्तुत महाकाव्य में रूप-वणन मञ्जन के शास्त्रीय महाकाव्या में वर्णित नायिकाप्रा व नयनिय की याद दिनाते हैं। कवि न रूप व अवनन में अस्तुप्रेक्षा हेतुप्रेक्षा और फलोप्रेक्षा व अनिरिक्त रूपसतिगयोक्ति सागरपर, व्यतिरेक आदि का प्रयोग किया है। बहुत कुछ यह यदि परम्परा व अनुसार ही है।<sup>३</sup>

रासो की भाँति पदमावत में भी पद्मावती की सात्र सज्जा-वर्णन व प्रथम में उसका दारह आभरण और सोनह शृंगार का वणन किया गया है। कवि न सम्भवतः भ्रमवत् सोनह शृंगार का बारह आभरण कह दिया है।<sup>४</sup> यद्यपि सूफी प्रेमकव्यानक की परम्परा व अनुसार प्रस्तुत महाकाव्य में वियाग शृंगार की पूर्ण विवक्ति है तथापि मशगल वणन में भी कवि का पूर्ण सफरता मिली है। ऐम अवसर पर पदमावती का परिहास<sup>५</sup> मतिराम पद्माकर आदि रीतिकालीन कवियों व द्वारा वर्णित नायिकाप्रा व परिहास की याद दिनाता है।<sup>६</sup>

कवि का मभोग मुरति व वणन में भी सफरता मिली है। आचार्य गुप्त न हावा की सम्यक याजना न कर सकन व कारण कवि द्वारा वर्णित मभोग-मग की खामिया का निर्दोष किया है। पदमावती व ममागम की कुछ पत्रिया अश्लील भी हो गई हैं पर सवत्र जायसी न प्रेम का भावात्मक रूप ही प्रधान रखा है। मभोग विनाग का वणन कवि न यहा कुछ व्यौर के साथ किया है पर इस विनासिता के बीच बीच में भी प्रेम का भावात्मक स्वरूप प्रस्फुटित दिखाने पडता है।<sup>७</sup> कवि ने खामिया का तप्त-परिहास मुरत चिह्न ममचित्ता पद्मावती का रूप एवं पडकृतु आदि का वणन संयोग शृंगार व अतगत किया है।<sup>८</sup> नागमती वियोगवणन में बारहमासा व आधार पर आपाठ मास सं प्रारम्भ करके ज्येष्ठ मास तक की उद्दीप्त विरह-वेदना का वणन किया है।<sup>९</sup>

१ आचार्य रामचन्द्र गुप्त जायसी प्रधावती भूमिका प १७

२ पद्मावत मिहलनीप वणनखंड दो ७८ १४ जमखन दा ६

३ वही पद्मावती रतनमन भेंदखंड प ६७

४ वही १७

५ मतिराम रमराज छ ३७२ पद्माकर जगन्नीन छ० ४५५

६ आचार्य रामचन्द्र गुप्त जायसी प्रधावती भूमिका प ५२

७ पद्मावत पदमावती रतनमन भेंदखंड दा २८ ४१ पद्मकृतु वणनखंड प ७० ६१०

८ पद्मावत नागमती वियोगखंड दो० १६

रूप और नवशिल्प वणन व प्रसंग अनक स्थला पर आण है। रासा ही भाँति यहा भी कवि ने कामगास्त्रीय नारा भद्र का वणन किया है।<sup>१</sup> कहा कहा कवि ने अत्युक्ति व द्वारा कामगार प्रशान किया है। पद्मावती का वणन म एम स्थला की चर्चा करते हुए आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने लिखा है सुवुमारता की एमी अत्युक्तियाँ अस्वामाविकता व कारण बवल उहा द्वारा माना या परिमाण व आधिक्य की व्यजना के कारण कई रमणीय चित्र सामन नही लाता।<sup>२</sup> जग श्रीवा की कामलता और स्वच्छता<sup>३</sup> और युद्ध व लिए गमनायत वादल का पीठ फेरे दरदर उनना नवाला वधू की उत्प्रक्षा आदि व वणन<sup>४</sup> हास्यास्पद लगत है।

जायसी व पद्यावत म भारतीय कथावस्तु और सूफी शली का विचित्र सम्मिलित रूप नियाई देता है। डा० गम्भूनाथ सिंह न इस और यान गावपित करत हुए लिखा है 'सूफी मत म प्रेम की गीर और सौ दयज य आन न को बहूत महत्व निया गया है और इनना वणन सूफी कवि बहुत बग चडा कर करत है। हि दी प्रमारयानक काव्या म प्रेम की महिमा विरह वटना और सौ दय की महत्ता का जो दतना अधि और अनिगयोक्तिपूण वणन मिनता है वह फारसी काय धारा का प्रभाव यत करत है।<sup>५</sup>

प्रस्तुत महाकाय म वारहमासा का वणन लासगीना की परम्परा की याद दिनाता है। रीतिकान म भी षडशतु और वारहमासा व प्रथ प्रभूत परिमाण म मिलते है।

माधवानल कामदला—भारतीय प्रेमगायनक का य-परम्परा म गणपति-वृत माधवानल कामदला (२० का० सं० १५८४ वि०) एक महत्वपूण रचना है। इसम सोर-नया गीत व तत्त्वा का सुन्दर मयाजन है। कामदला व विरह<sup>६</sup> योवनागम, मुग्धात्व<sup>७</sup> नसगिख<sup>८</sup> मयोग<sup>९</sup> एक शृ गारिक चंटाआ आनि का वणन परम्परानुगत है।

प्रस्तुत प्रथम म कामदला व विरह का वणन करता हुआ कवि बया व्यवसाय का वणन विस्तारपूर्वक करता है<sup>१</sup> जिसस पना चलता है कि मालहरी सत्रहरी

१ पद्यावत न नागमती विषाय खड १४

२ माधाय रामचन्द्र शुक्ल जायना पद्यावत प ६२

३ प्रति तदि टीक पगे निनि रखा। पू ट जा पाव लाव सब लधा ॥

पद्मावत ६११४ नवनीय -विहाग १२८

४ पद्मावत ५२६

५ डॉ गम्भूनाथ सिंह दिना महाकाय का स्वल्प शिान प ६१६

६ गणपति माधवानल कामदला १५६६ ८

७ बदा ११३ तुननाय-राम बग नापिता न छ ३

८ बदा २११ ७१

९ बदा २१११ १२ १०६१२८

१० बदा ६१६ २६

शनादी म वेश्यावृत्ति गूत्र जारा पर थी। विरह की अवस्थाका वा वरण भी परम्परित है जिसम गुण कीतन, उमाद शीतापचार प्रताप धार प्रिय मितन की आगा से प्राण धारण आदि वा वरण किया गया है।<sup>१</sup> कामरदला विरहा मान म गूत्र अगिल चद्र जल, चातक मयूर कोकिला और रात्रि का उपग्लम्भ दता है।<sup>२</sup> वह बारहमासा शना म फागुन म माघ तक के प्रत्यक्ष मही का कोमली हुई अपनी विरहानुभवा का वरण करती है।<sup>३</sup> वह पवन और पत्र क द्वारा सन्देश प्रेषण का भी उपक्रम करती है।<sup>४</sup>

माधवनल और कामरदला क सयाग शृगार का भी वविध्यपूर्ण चित्रण किया गया है।<sup>५</sup> प्राकृतिक पृष्ठभूमि का उद्दीपन वणन पङ्क्तु की परम्परा म किया गया है।<sup>६</sup> कवि को फागुन और हाली क उल्हासमय वातावरण का चित्रण करन म अधिक सफलता मिली है। कामरदला की सखी उसक स्वाभाविक सौंदर्य और मीठुमाय का वणन व्याज-स्तुति के माध्यम से करती हुई उसे कपाल पर कस्तूरी का तिल लगाने का भी मना करती है।<sup>७</sup>

इस प्रकार माधवानन कामरदला म शृगार के संयोग और वियोग नाना पक्षों का विस्तृत वणन लोक-गीति शली म किया गया है।

रसरतन—प्रेमानुभवका म सामान्यतः शृगार रस का पूरा परिपक्व पाया जाता है। जसा कि पहले हम देख आए हैं कि इन आनुभवाना म वियोग से संयोग का आर कथा का विकास होता है। बीच बीच म नगणित वय मधि पूर्वानुराग बारहमासा पङ्क्तु सयाग विविध विहार आदि का सधाजन किया जाता है। इनम शृगार क उभय पक्ष—सयाग और वियोग का परिपुष्क रूप सामन आता है। पुहकर कवि क रसरतन (२० का० लगन १६७३ वि०) म उक्त वणन वृत्त कुड परम्परा क अनुसार ही मित है। कवि ने अलङ्कृत शली म रसात्मक स्थाना का पूरा विस्तार क साथ वर्णित किया है।

प० कर्णापति त्रिपाठी न कवि पुहकर की शृगारी वृत्ति का निरूपण करते हुए लिखा है प्रेम के स्वरूप और गति व्याप्ति और प्रभाव महाराई और सीमा क साथ साथ पुहकर उसकी नाना रूपिया से—प्रेमवागिनी क आध्यात्मिक गृह्यपूर्ण और अतीतिक तथा अभिजात्यवर्गीय वलासिकता म भीतर-बाहर आर्द्राङ्गन और भोगनण्याप्रधान, रीतिकानीन भौतिक स्थूल रूप से—पूणत परिचित और प्रभाविन थ। शृगार परिवि क विविध प रा और आयामा क जात कितने सरस और चटकील सन्निपत् और प्रभाव

१ वही ६।१६० २२४ २६८

२ वही ६।३६ ३०४

३ माधवनल कामरदला ६।१० ५२८

४ वही ६।६० ०४ ६३ ३१

५ वही ८।१२

६ वही ८।१६

७ वही ८।१८६



गाली कल्पना चित्रा का पुनरन मजीब मान लिया है। परन्तु गाय माग मृदि प्रभावित और प्रनरारगवनिा एमी उतिगो भी रमरता म कम १। ई जिाी धारा ससुत १ नृहरया निर्माणान या उमर नृह पूर १ हा अतएणप्रभाा वाया नाया, १या आन्यायिराया आदि म अविच्छिन रूप म उता नया भी और तिगर प्रमाय न मूर और तुलसी जस महाराजि भा अपन का पूण मुता न तर मक।<sup>१</sup> इस वस्तव्य म स्पष्ट हा जाता है कि शृगार की परम्परा भारति म नर मध्यराय तर नमभय एव सी चली आती है। रीतिवाल म उमरी गति और भा तीव्र हा जाता है। पुनर रीति वान क पूववर्ती तितु वेगवनाम क परवर्ती कवि है। उता भारति म नर अपन समय तक की शृगारपरर अतटुत काव्यधारा की सारी उपनधिया ना मपने अय रसरतन म सजोया है साथ ही परवर्ती कायधारा का सम्भावित परिणति का भी मकत लिया है।

रसरतन म गहांगीर की प्रगस्ति<sup>१</sup> क उतरान वय मधि<sup>२</sup> वियोग<sup>४</sup> सन्धीगिा<sup>५</sup> नगगिख एव रूप ती त्य<sup>६</sup> सयोग<sup>७</sup> वियोग वारहमागा<sup>८</sup> सण प्रपण<sup>९</sup> वन विहार<sup>१</sup> आदि का परम्पराभुक्त वणन किया गया है।

डा० गिनप्रसाद सिंह न प्रस्तुत ग्रंथ की भूमिका म रागा और रसरतन १ साम्य दिखलात हुए सिद्ध किया है कि रसरतन म भी रस भाव वस्तु वणन छ<sup>२</sup> तथा उप स्थान सम्बन्धी हृतिया का निवाह पृथ्वीराजरासा क समान ही किया गया है।<sup>३</sup>

रीतिकव्य म शृगार के सयोग और वियोग का अवस्थाया नायिका क रूप सोत्य हाव भाव और सखी दूती ऋतू एव ऋतूस्ववा क वणन बहुत कुछ इन भारतीय प्रेमाख्यानवा से अनुप्रेरित लगते है। अत रीतिकव्यने उपगीय यथा म इनका महत्वपूर्ण स्थान है। यद्यपि इन प्रमकथाया म मूफी प्रभाव क कारण नोकिर प्रम स अनोकिर प्रम की याना कराई गई है किंतु शृगारी प्रसगा क वणन म बहुत कुछ शास्त्रीय और लोक परम्परा का निर्वाह उसी प्रकार इनम पाया जाता है जसा परवर्ती रीतिकव्य म। मध्य

१ विभागीय प्राक्खन रसरतन प २ २४

२ रसरतन आदि घड छ २६ १५

३ वही आदिघड १६२ २ ६

४ वही स्वप्नघड १४७ २१८

५ वही विजयपालघड ५६ १३०

६ आदिघड ६ ३५ विलखड १६२ ६६ विजयपालघड २१ १७ अणाराघड ६७ ७१

मपावती घड २४२ ४८ स्वयवरघड २५ ६६ २६६ ३ २

७ वही अणारा घड ८ १७१ स्वयवर घड २७४ ६४ १६६ ६ ७८ घड घड ३ ३४६

८ वही घड घड ८ ६५

९ वही युद्ध घड १० १६६

१० वही घड घड १८ २ २

११ देखिए—रसरतन की भूमिका प० १५२ १६५।

कानोन हिन्दी साहित्य में शृंगार रस की धारा को विकसित और परिवर्तित करने में इन प्रेमायानका का योग बड़ा हो मूर्च्छपूर्ण रहा है।

रामचरितमानस—प्रस्तुत प्रपञ्च-नायक में राम के आत्म चरित्र की अन्तारणा की गई है फिर भी प्रमथानुगम में राम और सीता का शृंगार का गद्यादित निरूपण किया गया है। राम के रूप बणन में गागीरिख मोक्ष्य के साथ साथ उक्त अनाविष्य योग्य का भी उदघाटन किया गया है। उसमें रीतिनालीन विनागी गामतवग की कामन गुन्तरता और प्रथमप्र पीढा के लिए अयत्ना नहीं है। सीता और राम का प्रथम बणन उदात्त, मणि प्ल साहित्यिक और मर्यादित है।

शृंगारिक प्रथम की अन्तारणा में जनक वाटिका में प्रथमैकपत्नीप्रति का बणन मिलता है। कवि का सीता की उत्कृष्टा और लज्जा का चित्रण चरित और 'मगीत' शब्दों के प्रयोग से किया है।<sup>१</sup> ताकिरा के आभूषणों की झलक का बणन परम्परा के अनुसार कामादीपन किया गया है।<sup>२</sup> सीता का निमाण भी कवि के अनुसार सौन्दर्य सार और ब्रह्मा की रचना निपुणता का चरम निष्पन्न सिद्ध किया गया है।<sup>३</sup> जिसकी उपमा कवि नहीं दे सकता, यानि उपमान अथ कवियों के उच्छिष्ट हैं।<sup>४</sup> सीता की अनुरागव्यजना बड़ी गुणलता से की गई है।<sup>५</sup>

कवि की वृत्ति राम के रूप अवन में जितनी रमी है उतनी सीता के रूप चित्रण में नहीं। राम तुलसी की अनन्य मन्त्रि के आलम्बन हैं। उनका रूप-बणन में प्रयुक्त उपमान प्राय परम्पराभुक्त हैं। नामिका के रूप सौन्दर्य का चित्रण कवि परिपाटी के आधार पर किया गया है। प्रसिद्ध उपमाना—सरस्वती, पातली लक्ष्मी आदि की अपूर्णता सिद्ध करते हुए तुलसीदासजी ने सम्भावना व्यक्त की है कि यदि सौन्दर्यमुखा का सागर हो, परम गुन्तर कच्छप, कामा की रम्मी शृंगार का मन्त्रावन और स्वयं कामदेव मन्थन करवा वाला हो और यदि उसमें स सुन्दरता और सुख को निधि लक्ष्मी प्रकट हो तब भी उसकी तुलना सीता में करता हुआ कवि सक्व का अनुभव करगा।<sup>६</sup> इस प्रकार की दूरानुद कल्पनाएँ अनेकत्र की गई हैं।

धनुष भय में सीता की मातृमिक स्थिति का नापन करत हुए, चन्द्रमडल में डोतत हुए कामदेव के दो मीना के रूप में सीता के चलनेत्रा की उत्प्रेक्षा की गई है।<sup>७</sup> विवाह मंडप के मणिमय स्तम्भा में सीता और राम की प्रतिच्छविर्वा ऐसी लगती है मानो

१ रामचरितमानस (बाणिराज मस्करण) कालकांड २२६

२ वही २३०।२

३ वही २२०।६

४ वही २३।८

५ वही २३२।७

६ वही २४७।१८

७ वही दो० २५८—सुवनीप-विहारी १६३ और १६५

राम विवाह दखन के लिए अनवरूप धारण करके स्वयं रति और वामन्व प्राप्त है।<sup>१</sup> कोहबर म उठी सीता अग्न बगन की मणि म राम की प्रतिच्छवि दग रहा है।<sup>२</sup> एगा चष्टाया वा वषणन प्रिया विष्णुया नायिकाया व तप्य प्रण न म अत्र त्रिविधा न प्रिया है। वन भाग म गाम वधुया वा उत्तर स्ती ईई तजामवतिन सीता री तप्य वा अवन और उसक द्वारा ममोष्ट भाव का प्रवागन त्रिवि वा वना निगुणता वा ध्यान है।<sup>३</sup> प्रिया विरही राम वा चित्रण तीव्रत मानवीय भावा म युन प्रिया गया है। राम साता वा पता तता गुल्म और पगु र्पा तथा म उमी प्रारण वृष्ठन है। तग सम्पूत तप्य। म प्रिया विरही नायिका वा पूर्य तप्य जाना है। इम प्रमग म त्रि री उरित परम्परानुगन अधिन है।<sup>४</sup> इत सत्त्व म प्रकृति वा उद्दीपन रूप चित्रित प्रिया गया है।<sup>५</sup> वचि न काम की साता वा इत पष्टभूमि म सागापाग वषण प्रिया है।<sup>६</sup> रीतिवालीन वचि की उन्निर्या बहूत वृष्ठ तुलमी री वन उचितया स साम्य रखती है। तिनु जहाँ प्रकृति व रूप को माया सिद्ध करत हुए दागनिक परिणति दी गई है वही तुलसी का वशिष्ठ्य उजागर हा गया है।<sup>७</sup>

सामान्य सत्त्व वाहका की तरह हनुमान भी राम का सदाग दत हुए सीता से उनका विरह निरेत्न करत है। राम न कहा है कि तुम्हारे वियाग म मेरे लिए सभी विपरीत हा गए है। वधा व तवीन किसलय अग्नि राते-बलरात्रि और चन्द्र-सूयवत् दाहक कमल वन माल के वन म लभत है और मध तप्त तत की वर्षा करता हुआ लगता है। जो (सयोग बाल म) हित्त पोषक थ व ही अन् दु खत् हो गए हैं। त्रिविध समीर सप की श्वास की तरह लगता है।<sup>८</sup> विरही का अपने प्राणा और चन्द्रमा को उपात्तम देना परम्परा प्राप्त है।<sup>९</sup>

यद्यपि रामायण गरिमाययी उदात्त गली म निवद्ध पौराणिक प्रबध काय है और इसम मुख्य काव्य प्रयोजन लोक भगन की साधना है तथापि प्रकृति चित्रण वसत वर्षा शरत प्राति ऋतुया का वषणन रूप और नखणित सयोग और वियोग तथा विविध हाव भावा के चित्रण को भी समुचित स्थान दिया गया है।

प्रबध-वाच्यो की चर्चा करने के उपरांत सूरसागर क सूरसागर का भी उल्लेख

१ मानस बालकाड दो ३२५।३ = तुलसीय विनारी ४२

२ वही २० कविनावली बालकाड छ १७

३ वही अयोध्याकाण्ड दो ११६।१ =

४ वही अरण्यकाण्ड दो १११५

५ वही अरण्यकाण्ड दो ७।३१

६ वही अरण्यकाण्ड ३६।११०

७ वही अरण्यकाण्ड ६।१३१६

८ मानस सुन्दरकाण्ड १५।१४

९ वही ३१।४ = लकाकाण्ड १२।७-१

करना आवश्यक है। वह मूल प्रपञ्चमक मुक्तक ग्रथ है। प्रत्येक पद घटनाक्रम में समायोजित, पूण और स्वतंत्र है। क्यामूत्र की शीघ्र रेखा विद्यमान हान व कारण उसका स्वतंत्र मुक्तक नहीं कहा जा सकता और पूवापर हृत् सम्बन्ध वाभाव व कारण उस प्रपञ्च काय भी नहीं कहा जा सकता। मुक्तक प्रपञ्च इस दृष्टि से कहा जा सकता है कि उसमें गद्य पद्य का मुक्तक रूप हृत् नाम विभाजित भागवत में प्रभावित और कृष्णकथा व प्रभानुसार संयोजन है। इमतिग मूरसागर का अध्ययन न तो प्रपञ्च काय में लिया जा सकता है और न मुक्तक काय में। अतः उभय पक्ष रूप से परिचय दत्त हृत् शृंगार और रीतिकान्य का निरूपण लिया जाएगा।

मूरसागर—श्रीकृष्ण मन्ति काय परम्परा में मूरसागर मधुर रम में आपूण एक अपूर्व ग्रथ है। इग्व रचयिता मूरदास यद्यपि बल्लभ सम्प्रदाय में लीलित थ मिमम दान कृष्ण की उपासना विहित है तथापि श्रीकृष्ण व विगार रूप की मधुर छवि का अकन उहाने पूरी तमयता में किया है। अय वणव सम्प्रदायो की भाँति बल्लभ सम्प्रदाय के अष्टछायी कविया न भी कृष्ण की शृंगार लीलाया का वणन विस्तारपूर्वक किया है। कृष्ण और राधा या गापिया की शृंगार लीला का चित्रण रीतिकाल के पूर्व हरिवंश पद्य विष्णु तथा भागवत और ब्रह्मवैवर्त आदि पुराणों में दक्षिण व आलवार नामक मन्ता के साहित्य में, तथा जयदल उमापतिधर चंडीदास विद्यापति नरसिंह महता मूरदास और नरदास आदि कविया की वाणी में विगद रूप में प्राप्त होता है। यह विश्वास के माय कहा जा सकता है कि शृंगार का जिम मीमा तक वणन उपयुक्त ग्रथा में अथवा उपयुक्त कविया द्वारा हुआ है उस सीमा का अतिक्रमण किसी भी प्रसिद्ध रीतिकालीन कवि न कहा किया।<sup>१</sup> डा० राकेश गुप्त के मत के ममयन में मूरसागर से ऐसे वणन पदाप्त मात्रा में उद्धृत किए जा सकते हैं जिनकी अनुगूज हम रीतिकान्य में मिलती है।

मप्रति मूरसागर के वण्य विषय का परिचय दत्त हुए दखा जाएगा कि रीतिकान्य के वण्य विषय का उसने कितना प्रभावित किया है।

श्रीकृष्ण की दाल्य एव कशीर लीलाया का वणन चित्रण मूरसागर के दशम स्वध के पूवाद्ध में ही अधिक पाया जाता है। डॉ० सयद्र ने इसी स्वध को मूर की ममस्त कीर्ति का आधार मानत हृत् लिखा है। भागवत में भी यही स्वध सजस बड़ा है। इसमें श्रीकृष्ण की जम नीना भावन चोरी, गो दोहन—राधा-कृष्ण का प्रथम साक्षात्कार श्रीडा, राधा का कृष्ण के घर जाना श्याम का राधा के घर जाना, गाचारण, धनुर वन मुरली चीर हृण पनघट, गोवधन पूजा दान-नीना नत्र-वणन रासलीला राधा कृष्ण का विवाह मान नीना हिन्दोल लीला वषम कशी मीमागुर-वध हारी नीना श्रीकृष्ण का अरूर व माय मथुरा जाना आदि अनीव मनाहर और हृदयावकक

१ डा० राकेश गुप्त आलोचना स० १०, भक्ति भावना और रीतिकालीन कवि प० ७५

प्रसंगा के बगुन म जितनी बत्ति रही है उतनी अयत्र नहीं।<sup>१</sup> इन सभी कृष्ण-लीलाप्रा वा दा प्रवार की घटनाप्रा म १० राक्षस वर्मा के अनुसार बंटा जा सता है—  
 एक ब्रज के आनन्दमय प्राण विलास स मयिन और दूसरी कम क भज हुए विभिन्न रागसा क सार स मयिन। इसम पहली घटना बहुत-कुछ गूर की मोलिन उ म् भावनाप्रा क परिणामस्वरूप निरज है किन्तु दूसर प्रकार की घटनाएँ भाग्यत क अनुसार राग म वर्णित हे। रीतिकाम्य का बण्यस्तु का समय इस पहल प्रार की घटनाप्रा स हे।

मूरमागर के कई पना म श्रीकृष्ण क रूप सावण्य का परपरित बगुन प्राप्त हाता है।<sup>३</sup> कृष्ण क रूप प्रभाव और राधा क हृद्गत प्रम का जसा बगुन मूरमास न बिया है, रीतिकालीन बबिया की रुचिताप्रा म भी वसा ही बगुन मिलता है।<sup>४</sup> कृष्ण की विलास-लीलाए बहुत कुछ रीतिकालीन सामता की बलासिक् बत्ति के अनुकूल है अत रीतिकाम्य म इनका बगुन अनेक रूप म मिलता है।

नीवी ललित गही जदुराइ।

जवाह सरोज धरयो श्रीफल पर तव जसुमति गई प्राइ ॥<sup>५</sup>

आदि पदा के भावमाम्य पर रीतिकाम्य के अनेक छटा का निमाण हुआ है। ऐस बगुनो म जयदेव के गीतगोविन्द की छाया स्पष्ट हो जाती है। यहा उदाहरण के लिए एक छद का साम्य द्रष्टव्य है—

गगन घहराइ जुरी घटा कारी।

पवन भवभोर चपला चमक चहु और, सुवन तन चित नद डरत भारी।

कह्यो बधभानु की कुँवरि सौँ बोलि क राधिका काह धर लिए जारी ॥<sup>६</sup>

इसम वातावरण की उदभावना जयदेव क अनुसार है और बिहारी ने इस छद के भाव की ग्रहण किया है।<sup>७</sup>

सयोग शृंगार क बगुन म मूरमास के नमलकिसोर और पहल नागरिया' हव भाव एव कटास-पात म ही नहीं अपितु कोक कला म भी प्रवीण है।<sup>८</sup>

१ डा सत्यम मूरमागर प्राचीवना ४ प २ १

२ डा राक्षस वर्मा मूरमास (ततीय संस्करण) प ६४

३ मूरमागर १०।६२३ ४२ ६७५ ११६४ ६७

४ वही १।६७६ ८१

५ वही १।६८२

६ मूरमागर १।६८४

७ जयदेव गीतगोविन्द क्वी १ सुननीय बिहारी सो० १६६

८ मूरमागर १०।६८८ ६६०

। कवि न राधा रूप<sup>१</sup>, मयाग,<sup>२</sup> सद्य स्नाता,<sup>३</sup> पूर्वराग<sup>४</sup> आदि वा वगण तमयता के साथ किया है।

वही विलानवाली की तमयता वा चित्रण मूरदास न ही नहीं विहारी और पद्माकर न भी किया है।<sup>५</sup> मूर की राधा, कण्ण को अपनी मायें धलम करा को बहनी ह—विहारी म इस प्रसंग को बड़ बीजल व साज उपस्थित किया गया है।<sup>६</sup>

मूरसागर के पतघट प्रस्ताव और 'दान-लीला' भागवत स स्वतंत्र मूरदास की रचि का परिचय दत हैं।<sup>७</sup> वियोग आद्या का वगण करने के उपरात राधा-कण्ण की श्रीम लीला का वगण किया गया है।<sup>८</sup> इस प्रसंग म मरुत महाकाव्या म वर्णित जल बलि का स्मरण हा आता है।

अनुगाग-व्यजक पदा म सधुमान लीला, उन समय के प एव आर समय व पदा म कण्ण के रूप माधुय और तजय प्रमाज का मुत्त वगण किया गया है।<sup>९</sup> डा० ब्रजेश्वर वर्माने म प्रसंग म लिखा है मूरसागर का यह अश संवधा मौलिक और प्रेमकाय का अत्युत्तम उदाहरण है। दान लीला व साथ प्रेम का यह प्रसंग मूरसागर क २६६ पंथा अथवा ६६१ पदा व विस्तार म फला हुआ है जिसम से एक उत्तम पद कवि की गभार अनुभूति और रचना बीजल का परिचय दत है।<sup>१०</sup>

रामलाल म राधा का चित्रित्व रचित स्फुट हुआ है। सयोग और रति शीडा व वगण के पश्चात् कवि न रचित प्रकरण म राधा के मयम मान का वगण किया है।<sup>११</sup> रति चिह्न मर्मावन वगण का उपरर राग का कूठना, कण्ण का मनुहार करना, ली सयोजन आदि प्रसंग के वगण म मूरदास न शास्त्रीय शती का आश्रय लिया है।<sup>१२</sup> राधा व मान मय व पश्चात् श्रीकृष्ण और राधा का हिन्दाल शीडा वर्णित है।<sup>१३</sup> मूरदास का यह प्रसंग भी नवीन और भागवत स स्वतंत्र है। हिंडाल शीडा का वगण परवर्ती रीतिकाल म भी पाया जाता है जिस र प्रणाम्नात व रूप म मूरसागर का महत्त्व

१ मूरसागर १।७६

२ कवि १।६७६-७२, ११०५-२०२३-७१

३ कवि १।११६७-६६

४ वही १।१४४, ४६

५ वही १।७१४-१८ तुलसीदास-पद्माकर जगन्निष्ठ छ० ४४२ तथा विहारी दो० ४७

६ वही १।७३५ तथा विहारी दो० ४१

७ कवि १०।१५८६-१४७०

८ कवि १०।१६२-१७१०

९ कवि १६।२०७२-२४७४

१० वही १०।२४४५-२६२६

११ वही १।२६३-२८२८

१२ वही १।२८७६-२८४७

१३ वही डा ब्रजेश्वर वर्माने मूरदास प० ७३

अशुण्ण है। इसी प्रकार वसन्त नीला, हाती आदि का भी विस्तृत वर्णन प्राप्त होता है डा० ब्रजेश्वर वर्मान लिखा है गूरसागर का अंतिम महत्त्वपूर्ण मौलिक कथाप्रसंग 'वसन्त और फाग लीला है।'

गोपी विरह का वर्णन प्रसंग में कवि ने पावस के उद्दीपक वातावरण का चित्रण किया है। इसी प्रसंग में गापियाँ चन्द्रमा का उपालम्भ भी देती हैं।<sup>१</sup>

संस्कृत में लेकर हिन्दी तक आने वाली महाकाव्या की परम्परा में शृंगार रस और उसके विविध पक्षा के निरूपण में प्रकृति-वर्णन और विलास श्रीदास आदि का महत्त्वपूर्ण स्थान रहा है। रीतिकाल के कवियों को इन ग्रंथों से पर्याप्त प्रेरणा मिली होगी चाहे वह प्रत्यक्ष ही या अप्रत्यक्ष। इसी प्रकार अब उन कतिपय खडकाव्यों का परिचय दिया जाएगा जिनमें शृंगार की अविच्छिन्न धारा संस्कृत से लेकर रीतिकाल पर्यन्त पाई जाती है।

### खड काव्य (संस्कृत)

संस्कृत में खड-काव्य प्रणयन की परम्परा लगभग ७वीं शताब्दी से लेकर १८वीं १९वीं शताब्दी तक पाई जाती है। संप्रति संपूर्ण शृंगारपरक खड-काव्या का अध्ययन अपेक्षित नहीं। रीतिकाल के स्रोत रूप में कुछ प्रमुख खड काव्यों का अध्ययन प्रस्तुत किया जाएगा। इतिहास ग्रंथों में अनेक खड काव्यों का उल्लेख मिलता है जिनमें चक्र कवि (७वीं शती) का जानकी परिणय, नयायिक जयन्त (९वीं शती) के पुत्र अभिनन्दन के बादम्बरी कथासार आशाधर (१३वीं शती) के राजमती विप्रलम्भ (अप्राप्य), सुकुमार कवि (१५वीं शती) के कृष्ण विलास कविराज विश्वनाथ के राघव विलास आदि का स्थान महत्त्वपूर्ण माना जा सकता है।

इनके अतिरिक्त सदेश-काव्य की परम्परा में अनेक ग्रंथ आते हैं जिनका कथ्य विषय मूलतः वियोग-शृंगारात्मक है। इस परम्परा में सबसे प्रथम नाम कालिदास के मेघदूत का लिया जाता है जो परवर्ती दूत काव्यों की प्रेरणा का अग्रम स्रोत है। कुछ विद्वान घटवर्ष का भी कालिदास-कृत मानते हैं। क्योंकि अभिनवगुप्त ने अपनी टीका में इसे कालिदास की रचना माना है। कण्णमाचार्य के मेघ सदेश विमला कण्ण मूर्ति के यशोविलास रामशास्त्री के मधुप्रतिसदेश 'रामचन्द्र के धनवत्तम और मथिल कवि महामहोपाध्याय परमेश्वर भा के यत्नभाग्य आदि को मेघदूत से प्रभावित माना गया है। बंगाल के राजा लक्ष्मणसेन के आश्रित कवि धोयी के पवनदूत से अथ प्राकृतिक उपादानों को दीव्य बल में नियोजित करने की परम्परा चली। इस परम्परा में रूपगास्वामी (१७वीं शती) का 'हम दूत रत्नत्रय वावहाति का विक दूत मटटारक चानभूषण के प्रणिप्य कविराज का पवनदूत हरिदास का कवित्त दूत सिद्धनाथ

१ डा ब्रजेश्वर वर्मान गूरसागर प ७३

२ गूरसागर १ १२६५६ ३५१

विद्यावागीश (१७वीं शती) का 'पवन दूत,' रामकथा विषयक वेदांत देशिक (१३वीं शती) का 'हस सदेश,' रत्नवाचस्पति (१७वीं शती) का 'भ्रमर दूत वेंकटाचाय का कोकिल सदस,' कण्णचन्द्र तकातकार (१८वीं शती) का 'चन्द्रदूत,' आदि शताधिक दूत-काव्या का प्रणयन हुआ। पथिक को भी दूत बनाकर भजन की परंपरा में अनक दूत-काव्या की रचना हुई जिनमें अपभ्रंश भाषा का मुसलमान कवि अब्दुलरहमान (१३वीं शती) का 'सदेशरासक' माधव कवींद्र भट्टाचाय (१६वीं शती) के 'उद्धव दूत,' रूपगोस्वामी (१७वीं शती) का 'उद्धव सदेश,' लम्बोत्तर वैद्य के 'गोरी दूत' आदि का उल्लेख किया जा सकता है।'

सदेश काव्यो में अधिकांश पहले सदेश प्रेषक की विरहावस्था का सश्लिष्ट वणन प्रस्तुत करते हैं, तदुपरांत सदेशवाहक की सामर्थ्य और परोपकार वृत्ति की प्रशंसा। सदेश प्रेषक बड़े विनीत भाव से उसे प्रिय या प्रिया के समीप जान का आग्रह करते हैं और दूरदशस्थित प्रिय या प्रिया के समीप पहुँचने के माग का परिचय देते हैं। फिर जिसके प्रति मदस भेजा जाता है उसका पूरा परिचय विस्तार के साथ दिया जाता है और अन्त में विरह निवेदन के माय-साय विरही या विरहिणी की विरह-दशा का विस्तृत उल्लेख किया जाता है। इसमें कभी-कभी प्राणा की कठोरता प्रकृति की विपरीतता कामदेव की क्रूरता और प्रिय की उपेक्षा का भी वर्णन किया जाता है।

प्रस्तुत सद्धम में खण्ड-काव्या के ऋगारात्मक स्थला का निर्देश करते हुए रीति काव्य के श्लोक के रूप में उनका महत्त्व निर्देश किया जाएगा।

घटलपर काव्य—अभिनवगुप्त इस काव्य का रचयिता बालिदान को मानते हैं। इस ग्रंथ में विरहिणी की मन स्थिति का अलंकृत शली में वर्णन किया गया है। इक्कीस छंदा में कुछ में स्वयं कवि और कुछ में सखी या दूती नायिका की वेदना का निरूपण करती है। वर्षाऋतु के उद्दीपक वातावरण में नायिका विरहोत्कण्ठित होकर प्रिय का स्मरण करती है। प्रकृति को कभी समदुःखमागिनी और कभी दुःखदायिनी चित्रित किया गया है। नायिका बादल से कहती है कि परलगी प्रिय मतुम कहना कि हे नायक व्यासा चातक जल की याचना करता है और वह विरहिणी तुम्हारा मिलन की आकांक्षा करती है। चातक को तो जल प्राप्त हो गया पर विरहिणी का तुम्हारा सयोग न प्राप्त हो सका। हस मानसरोवर को जा रहे हैं पर तुम उसके पान नहीं जाते।'

नायिका कदम्ब, नीप, युथिका आदि वक्षा लताग्रा का उपासक देती हुई उनका विपरीत आचरण की मत्सना करती है। कवि ने अलंकृत शली में विशेष रूप से यमक के प्रयोग द्वारा विरहिणी के भावचित्र का अवन किया है। मेघदूत की तरह भाव-गाभीय के अभाव और चमत्कार प्रदान की वृत्ति के कारण यह रचना रीतिकालीन कवियों की

१ वाचस्पति सराना मरुत माहित्य का इतिहास प ६०६०५

२ हसपत्तिरपि नाथ सम्प्रति प्ररिचिता विवति मानम प्रति ॥

चातकश्च तथिनोऽम्बु याचते दुःखिना पथिक सा च ते प्रिया ॥४॥



वर्णन शली व अधिन निरुद्ध है।

मेघदूत—कालिदास की अपूर्व कल्पना शक्ति व निर्यात प्रस्तुत गडवाय विरही यश की भाँसि उक्तिगा स पूण है। जगा वि पहन रगा जा चुका है वि दूत वागा की रचना ता मून रग वा-भीनि रामायण कूहुमान लका भमन गार सीता रा राम सदेग निवत्न तथा राम ग गीता र सदेग निवत्न म पाया जाता है। आदिकवि वाल्मीकि की रामायण व उतन स्तल की प्ररणा स अनन्य त्त गव्या की रचना हुई।

पूव मेघ म रामगिरि म अगता नव जान का रारता बीच-बीच म पडन बाल नगर, मर सरिता<sup>१</sup> और वीरागनाग्रा गाम्यवधुग्रा का मनोत्तर चित्रण किया गया है। उत्तर मेघ मे कवि ने अलङ्कारपुरी म रहन वाले यश यक्षिणिया की वनासिन श्रीडामा मुरत उपवन विनार और अग्निगार आदि की यजना उड़ी मूमता से की है।<sup>२</sup> कालि दासन यक्ष भवन का जमा वर्णन किया है वह कामसूत्र म वर्णित नागरक व भवन की अनुकृति जान पडता है। यश अपनी प्रिया व रूप का वर्णन परम्परायुक्त गली मे करता है।<sup>३</sup> इस प्रसंग मे विरहिणी की स्थिति का कवि ने बडा ही भाँसि उदघाटन किया है।<sup>४</sup> प्रिय के रूप साम्य के कारण प्राकृतिक तत्त्वा हरिणी चन्द्र, मयूर नगी आदि के माध्यम द्वारा विरही के विरह निवेदन का वर्णन अनेक गायाम प्राप्त होता है। कवि कालिदास ने भी यश का ऐसा ही वर्णन किया है।<sup>५</sup>

एस प्रकार प्रस्तुत दूत काव्य म शृ गार व वियोग वर्णन की रचना कवीज सनिहित है जिनका शकुरण परवर्ती दूतना य म पल्लवन कृष्ण मन्त्रि काव्य म और सबद्धन रीतिकान्य म हुआ।

पवनदूत—वगाव के राजा लक्ष्मणसेन के दरबारी कवि धायी की एकमात्र रचना पवनदूत महाकवि कालिदास के मेघदूत के आधार पर विनिर्मित है। मुख्यत काव्य म राजा लक्ष्मणसेन की प्रशस्ति है। विषय वस्तु की श्वतारणा दक्षिण देश की मलय मुदरी कुवल्यवती के विरह-वर्णन स की गई है। कुवल्यवती लक्ष्मणसेन स अनुरक्त होनी है किंतु जब व दक्षिण विजय करके लौट आते हैं तो विरह यावत वह दक्षिण पवन स सनवशी राजा लक्ष्मणसेन के प्रति अपना प्रणय सदेश भेजती है।

प्रस्तुत गडवाय मे कवि ने दक्षिणपवन की प्रसासा,<sup>६</sup> नायिकाओं के मुरतात<sup>७</sup>

१ मेघदूत १।४१

२ वही १।१६ २७ ३५ ३७ ४७ २।२

३ वही २।२ ५६ ११

४ वही २।१६ २२

५ वही २।२ ३० २।३२ ३३

६ वही २।४१

७ घोषी पवनदूत प्तो १ ५

८ वही ६

जलजीवा<sup>१</sup> अरु म नपक्षत धारण करने वाली वार विलासिनिया<sup>२</sup> अमिसारिकाया और मानिनी की मानलीलाया का सु दर वणन किया है।<sup>३</sup> दासा विलास और प्रणय कलह के चित्रण म तथा अनक ली की सु दरिया क ली अरुन म कवि न पूरी सफ नता प्राप्त की है।<sup>४</sup> कुवलयवती क सुवराग जय विरह क वर्णन म उसकी दुवलयता, उ माद, निद्रानाग, जडता प्रिय धन्नुआ म विरचित विरहतापाधिक्य आर मूर्च्छावस्था का चित्रण कवि क शृ गार वणन का दक्षता का द्यारु ह ।

हस-सदेश - वनातदगिव न इमकी रचोा वानिनास क मषदूत के आभार पर की है।<sup>५</sup> वस काव्य म रामचंद्रजा वियागिना सीता क पास हस द्वारा अपना सदेश प्रेरित करत हैं । मषदूत की तरह इसम भी ली खड ह । पन् र खड म माल्यवान परत स लका तक के रास्त का अलकन वणन किया गया है । शृ गारालोक उचिनया और राम एव सीता की विरह दशाया क विस्तृत विवरण हस सदेश क दूसर खड म दिए गए है । इसी खन् के प्रथम पाच श्लोक म नका का वणन करत हूंग राम वरत ह, भल्लाक्ष ! तुम उम लका को दयाग जिंगम "वागनाम" अपने गुणा क कारण तुम्हारे समान ह । तुम्हारी तरह ललित गति आशुपणा म सुंदर घनितवाली तुम्हारी तरह मन्मथरुचन दृष्टिवाला तुम्हारी तरह पांडुर अगवाली और मधुर मुख जानार वानी मानस विहारिणी समुर पुवतिया तुम्हारा अनुरजन करेंगी ।<sup>६</sup>

कवि न राम क द्वारा सीता की विरहावस्थापन रूप दशा का चित्रण अनक दनाका म कराया है । इमक अनुरान विरहावस्था म "पानिनीन गूय दृष्टिवाली नेत्रा स जलवष्टि रती हुई नपायी सीता का मार्मक चरित्र चित्रण किया गया है।<sup>७</sup> राम हस म वियागवालीन रात्रि की लीघता का वणन करत हुए मयाग म बीत गिरि श्लु मुखा और अर मागा क वियोग म उसक कण्ठप्रभावा का उल्लेख करत हुए दिगत व्यापी कामन्त्र क मायी वमत स विनम्र प्रार्थना करत हैं कि वह सीता क ममीप न जाण।<sup>८</sup>

१ मेघदूत १७३ १२ ८३

२ वहा २६

३ धोयी पवनदूत वतो ८ ४५ ४६

४ वहा ४८ ४० ४८ ४७ ६५ ६६

५ Hans sandesa is like Meghaduta of which it is a manifest mutation and an erotic lyric being erotic in conception and lyrical in execution  
—Hans sandesa Introduction p 1

६ हस मन्त्र २११

७ वही २११ १६ २ २३

८ वही २१३ १५

रीतिराज्य में मानिसा के मंगलकारक कृत्य ही का प्रकृति के उपागत चरम चरम है, यथा ता पवित्र है या दूरा धार गया। कथा-नग्न व समार म कौ दूराकाज का वर रक्षण गता मिताना, जो उक्त व या म प्राण हाता है।

उपगु का मंगल कथा व प्रतिस्तिर शृंगार प्रथम महकथा की दूरी पर परा मानिसा व कृत्यमंगार म पता।

अनुगार प्रस्तुत प व में प्रकृति व उरीरर रूप का ताता परगुत रिपता के द्वारा वणत किया गया है। एत वणता म प्रतिस्तिर मंगु पवित्रता मता का हा प्रयाग किया गया है। कथा का प्रकृति व भावस्वा रूप का भा वता प्राण हाता है।

धीम क्रतु म पदकृतु का वणत प्रारम्भ करत रूप गिता वस्तुमा एत व व विरर्णें जतापय हाता गावि वतास्वा मता व पिभित मनिता गुमपि वता गुवागि वतास्वा त्रिया-वाम रिगिता मी-र राता मत्र गुमि पा-गुपा म गुवागि वता वता वणत किया गया है।<sup>१</sup> वतिराज्य म मरमी का विररर व कारण स्वामावि व भाव एतास्वा एत माय विवाम करत वा वगुया का भी वणत किया है।<sup>२</sup> जमा रि विहारी व भी एत मंग में मितता है।<sup>३</sup> पायस कृतु का राजा मत्र व नगाड की वृति रिजनी का प्रत्यय इत्यु का भाग घोर पानी की धार का तीम वाण व रूप में वणत किया गया है जा विररिया व हृदय को वणत है।<sup>४</sup> एत कृतु का कालिदास न नवाडा गावित व रूप में गितित किया है जिसरी छाया विहारा व गत में पाई जाती है।<sup>५</sup> एत कृतु म वतिरर्ण नीतरमत्र इस घोर वयु जीव वता व विरहोदीपवत्त्व वणित है।<sup>६</sup> इमत्त क्रतु में कामिनिता धीम क्रतु की साज-मजा त्याग कर क्रतु के अनुगुत अनकरण धारण करती है। वति न दस प्रमग में सभोग शृंगार का वणन किया है।<sup>७</sup> गितिर क्रतु म भाग मूरज की धूप माटे वपड घोर रमणिया व मुगल होने का वणन किया गया है। इस वतिरर म म मुगल वस्तुमा का उल्लेग किया है।<sup>८</sup> वसत कृतु व अनुवल कामिनिता व वस्त्राभरण वताग पुण वसत-वायु घोर विरह व्यथा की तीव्रता का भी वणन किया गया है।<sup>९</sup>

प्रस्तुत ग्रथ व आधार पर रीतिराज्य म पदकृतु-वणन की परम्परा चनी तो

- १ अनुगार सग १ श्लोक १६ ५ १२ २८
- २ वहा सग १ श्लोक १ १६ १८ २
- ३ वही १।२७ तुजनीय--विहारी दो ८६
- ४ वही २।४
- ५ वही ३।१ २६ तुजनीय--विहारा वा २१
- ६ वही ३।६ २४
- ७ वही ४।२ ४६ ११ १७
- ८ वही ५।२ ४
- ९ वही ६।४ ६ १२ १३ १६ २२ २६

अवश्य परंतु प्रकृति का उद्दीपक रूप ही गृहीत हुआ आलम्बन रूप नहीं।

गीतगोविंद—गीतगोविंद का उल्लेख बणव का व्याभिव्यक्ति की शृंगारी परिणति<sup>१</sup> के निरूपण में पहले ही किया जा चुका है। आचार्य रामचंद्र गुप्त ने हिंदी के कृष्ण भक्त कवियों के द्वारा विकसित हानवाला गीति-काव्य परम्परा का मूल उत्तम जयदेव के गीतगोविंद में माना है। वं लिखते हैं कृष्णचरित का गान में गीति-काव्य की जो धारा पूर्व में जयदेव और विद्यापति ने बहाई उसी का अवनम्बन ब्रज के भक्त कवियों ने भी किया। भाग चलकर अलवार नात का कवियों ने अपनी शृंगारमयी मुक्तक कविता के लिए राधा और कृष्ण का ही प्रेम लिया।<sup>२</sup> राधा वं सखिता कलहातरिता विप्रलधा, स्वाधीनपतिका तथा मुग्धा स लकर प्राडा त्रक के रूप सूर्याम और परवर्ती रीतिकालीन कवियों की कृतियों में गीतगोविंद से दूर तक प्रभावित हैं।

उपलब्ध संस्कृत काव्य साहित्य में गीतात्मक शृंगारिक प्रसंगों को निबद्ध करने वाले प्रथम में कालिदास का मघदूत के बाद ग्यारहवीं शती उत्तरार्द्ध में विद्यमान कवि क्षेमाद्र के दशावतारचरित का स्थान महत्वपूर्ण है। इसमें कृष्णावतार को शृंगारिक भूमिका में उपस्थित किया गया है। १० विश्वनाथप्रसाद मिश्र के अनुसार उनका ग्रंथ कृष्णावतार विषयक गीत जयदेव के गीतगोविंद का स्नान माना जा सकता है।<sup>३</sup> वं जयदेव से लगभग चार शताब्दों की लोकाभासा में गीति-तत्त्व का 'तु' य जिसका नमूना बौद्धों के चर्यापदा में मिलता है। विद्वानों ने यह सिद्ध किया है कि गीतगोविंद लोक प्रचलित सरल जनगीता के उस प्रभूत माडार का छातक है जो कालवर्धित हो गया।

डा० रघुवंग न यौवन और शृंगार प्रधान उन जनगीतियों की तुल्य परम्परा की ओर संकेत किया है जिनका प्रतिनिधित्व गीतगोविंद करता है।<sup>४</sup> आचार्य रामचंद्र गुप्त ने जनगीतियों से कलागीतियों के अंतर की स्पष्ट करते हुए लिखा है कि गीता की परम्परा तो सम्यग्रसम्यग सभी जातियों में अत्यंत प्राचीनकाल से चली आ रही है। सम्यग जातियों में लिखित साहित्य के भीतर भी उनका समावेश किया गया है। लिखित रूप में आकर इनका रूप पंडिता की काव्य-परम्परा की कठिनायों के अनुसार बहुत-बहुत बदल जाता है। इस प्रकार के मौखिक गीत दंग का प्रायः सब भाग में पाए जाते थे। मैथिलकवि विद्यापति (स० १६६०) की पदावली में हमें उनका साहित्यिक रूप मिलता है। जसा कि हम पहले कह आए हैं मूर के शृंगारी पदा की रचना बहुत-बहुत विद्यापति की पद्धति पर हुई है।<sup>५</sup> इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि

१ दे - प्रस्तुत प्रबंध शिरीय अध्याय

२ आचार्य रामचंद्र गुप्त शिरीय साहित्य का इतिहास पृ० १५१

३ प० विश्वनाथप्रसाद मिश्र शिरीय साहित्य का अज्ञेय भाग १ प० ७६

४ डा० रघुवंग प्रहरी और काव्य (संस्कृत खंड) पृ० १२८

५ आचार्य रामचंद्र गुप्त शिरीय साहित्य का इतिहास पृ० १५८-५९

गीतगोविन्द जनगीतिया का बनागीतिया के रूप में परिणमन है ।

जयश्वे न सामान्य जन की शृंगारिक वृत्तिया की अभिपजना न करव  
अलौकिक नायक वृष्ण और अान्ति गक्तिस्वरूपा राधा का प्रणय-लीलाभा का मावीय  
भावभूमि पर व्यजित किया है । कवि न प्रस्तुत प्रथ क प्रत्यक प्रबंध के अंत में अपने  
मनाभाव का प्रकट करत हुए लिखा है कि जयश्व की इस भणिति म हरि के चरणा की  
स्मृति का गार और शृंगारानुप्राणित सरस वनत वा उद्दीपक वण न है ।<sup>१</sup> अथवा कंगन के  
वृत्तावन क अत्यंत कति रत्नस्रसपूण हैं जा गुम और यग वा प्रगता है ।<sup>२</sup> अत क एक  
द्वान में उपयुक्त भाव और भी स्पष्ट रूप म आए है ।<sup>३</sup>

यदि निष्पन्न मात्र न दया जाए ता गयदय की कविता में भक्ति का अण्णा  
शृंगार का ही स्वर अधिक्त मुतर है । विद्यापति की तरह जयश्व भी मूलत भक्ति क  
नहीं अपितु शृंगार क रसगिड कवि है । जयश्व का विद्याग वण न वास्तविक की  
अप ता धारापित अति नगता न । असम या ता पूर्वराग की अस्थ्या रा विद्याग है या  
मान की अवस्था का अति विरक्त वा स्वाभाविक विवास प्रवास म हा होता है । उदास  
यौवन की गरम शृंगारा अभिपक्ति क कारण द्य काव्य म प्रवृत्ति उद्दीपन विभाव क  
अन्तगत ही वर्णित है । गीता म भावा की प्रधानता क कारण प्रवृत्ति वाहनन अस्ति य  
विस्तृत-भा है । कवि न पत्न ही तन म वनत वा उद्दीपक वणन किया है ।<sup>४</sup> एम  
यातावरण म राधा काण का स्मर । करती हुई गगी म उाकी विनाम भीताया का  
वणन करती है ।<sup>५</sup> स्मरण रणा की अन्तगत व अत पूर्वरागि मयाग अण्णाया का  
भी वर्णन करता है ।<sup>६</sup> तत । तमिा राधा का पन्नात्तप मगी रा शृण म राधा विरह  
निवृत्त एण वा ३ता रा रा म विरक्त विरक्त मगी का राधा का अभिसार क  
विण प्र गित करना ।<sup>७</sup> दू ॥ रा शृण म राधा की अतुरन मि गति का वणन ।<sup>८</sup> विप्रसथा

१ मानसाविण मव १ प्रवच ३ अंतर २

२ क । १।६।८

यथा उवाचरागु कीजतमनप्यान म य एव ।

यत्त दासिद्वरतनकरनता कायप तासाविणम् ।

तस्यैव जय साविन कव वृष्णकवतलमन ॥

मानसा विरथा एतत्त म्दिव मीमानसाविण ॥१ ॥ १ २

४ मानसाविण अंतर १ १ १ ३

५ क । १।३।६ १।६।१ १ २।१ २

६ क । १।३।१ १

७ क । ३।३।१ १६

८ क । ६।१।१० ६।३।१ १३

९ क । २।१ ३।१ ३

१० क । २।१।१।१ ८

११ क । ६।१।३।१ ६

राधा की उक्तियाँ<sup>१</sup> और अन्य समोगदुखिता राधा की चेष्टायाँ<sup>२</sup> का वर्णन काव्य-शास्त्रीय परम्परा व अनुमान की निरुद्ध है। राधा का रीत्या मान और उमर निवारणार्थ सभी की निराशा का वर्णन विद्यापति मूर और रीतिकायीन कवियों में भी इसी प्रकार मिलता है।

जयदेव के अधिकांश गीत मान मनुहार का वर्णन करते हैं।<sup>३</sup> राधा के मान मोक्षन के लिए रामायण का संयोग शृंगार वर्णित है। इसमें अतगत पुरुषांगित और सुरता त<sup>४</sup> काव्य द्वारा राधा का मन्त्र आदि वर्णित है।

कवि ने एक एक मंगल रामायण का एक एक रूप में अंकन किया है जिनकी वृथ्व वस्तु की छाया परवर्ती वृणनाय और रीतिकाय के शृंगारी वर्णना में पाए जाते हैं।

### अपभ्रंश

जसा कि पहल अपभ्रंश के महामाया के विषय में कहा गया है कि इनकी रचना मूलतः सम्प्रदायगत धार्मिक भावना में प्रेरित होकर की गई है और तब ही शृंगार रसा का वर्णन का तत्पयसयायी होता है। इसी प्रकार अपभ्रंश के रचनाय भी धर्म भावना से आपूर्ण है कि तु आदि में मध्य तक मन्त्रिक वर्णना की अविरता होती है। ऐसे कतिपय स्वभावों का वर्णन उक्त किया जाएगा।

मुदसण चरित (मुदशन चरित) अपभ्रंश के स्वभाव में नयनती के प्रस्तुत काव्य का महत्त्वपूर्ण स्थान है। कवि ने वस्तु और भाव वर्णन में अपनी साध प्रतिभा का पूरा परिचय दिया है। साकी गली बहुत कुछ गुप्त बुझ और वाणमट्ट की अनुकूलनी के अनु रूप है। यद्यपि वस्तु वर्णन में कवि ने परंपरित उपमानों का प्रयोग किया है फिर भी उसमें मौलिकता की कमी नहीं है।

ऋतुधा का वर्णन अधिकांश उद्दीपन है। सूर्योत्थ के वर्णन में काव्य की गली की छाप हिंदी के प्रसिद्ध आचार्य कवि काव्यम कृत रामचंद्रिका के सूर्योत्थ वर्णन में देखी जा सकती है।<sup>६</sup>

कवि ने मनोरमा के नखशिख वर्णन में परंपरित उपमानों का सफल प्रयोग किया है। इस उपमान संस्कृत मन्त्राया में प्रतीय और यन्त्र अन्तराग के द्वारा वर्णित किए गए हैं। विद्यापति ने भी इसी शरीर का आश्रय दिया है<sup>७</sup> और रीतिकाय

१ मानयोक्ति शतक ७ १३।१

२ वही ७ १६।१ ८

वही ६ १८।१ १ १६।१

४ वही शतक १ ६ पृ १८ ६६

५ वही १२।२४ १ ८

६ मुदसण चरित ५।८ ५।१

७ वही ४ १ ३ इत्यर्थ—वि १० २०।२ ७

म तो ऐसा वणन करता वणि परिपाटी वा चुराया। गोरी सधि म ववि नेमनेर प्राता घोर जातिया वी रमणिया वा जगा वणन किया है उगरी अनुगू ज रहाम न नगर वणन घोर नेर व तातिविनाग म पाई जाती है।<sup>१</sup> मत्तारमा वा त्रियोग वणन मी रुड शली म किया गया है।<sup>२</sup> पाँचवी सधि म सयोग शृंगार व भगत न गुराडि घाति का वणन किया गया है। एगो सधि म वमत उगवन विहार घोर जन प्रीति वा परपरित वणन मिलता है।

ववि न रूप ने प्रति नेत्रा वी भागति वी जैसी व्यजता वी है वसी ही रानि वाच्य म भी प्राप्त होती है।<sup>३</sup>

करकड चरिउ इसम मुनि वनतामर न मनर गुडा घोर विवाग वा वणन किया है। शृंगार व भतगत सयाग घोर विवाग तथा पदमावती वा रूप-वणन किया गया है। इन वणना म रुद्रि का ही भाथय किया गया है।

पठमसिरी चरिउ इसम घातिन न सयाग विवाग उगगिग घोर शृंगुषा वा परपरित वणन किया है। पदमथी व विवाग वणन म वही तास्थीय गनी घोर बहा जोवनयात्मक गली<sup>४</sup> का प्रयोग हुआ है।

पास चरिउ इसम पदमकीति न गारी रूप चित्रण म परपरामुक्त उपमाता वा प्रयोग किया है।<sup>५</sup> श्रीपमकावीन जननीडा व वणन म मनकृत गली न तापिकाघा वी वलासिक चेष्टाया वा सजीव भवन किया गया है।<sup>६</sup>

अपभ्रंश ने इन गडकाया म जिस प्रकार परपरित उपमाता व प्रयाग द्वारा नारी रूप चित्रण किया गया है उसकी परपरा भाय अपभ्रंश व सणकाया म भी लक्षित होती है।<sup>७</sup>

इन धर्माश्रित गडकाव्या ने अतिरिक्त तावचात्मक या रोमाचक गडकाव्य ने भतगत अदुलरहमान व सदेशरासक का परिषय दिया जाएगा।

सदेशरासक ववि अदुलरहमान न वारहवी गनागी के उत्तराद्ध म सदेशरासक की रचना की।<sup>८</sup> इसकी शली बहुत कुछ वालिगास व मधदूत स मिनती जुलती है।

प्रस्तुत ग्रथ के प्रथम प्रथम म ववि परिपाटी के अनुसार मगलाचरण वविवग

१ सुत्तण चरिउ ४।५ ७

२ वही ५।१

३ काह वि रमणिए पिय दिटिठ पत्त  
ण चलइ ण बहूमे डोरि खुत्त ॥

—सु. व० ७।१७

४ प० ति व० २।११।१२

५ वही ३।४

६ पास चरिउ १।६

७ श्रीधर मुकुमान चरिउ १।८ दशसनगणि सुगोचना चरिउ १।१२ सनत्तुभार चरिउ मधि ७

८ डॉ. दशरथ श्रीवा एवं शर्मा (सम्पादक) रास और रामावली वाच्य पृ. २५

परिचय पूर्ववर्ती कविया का स्मरण एक सज्जन प्रशसा दुजन निन्दा आदि का उपक्रम किया गया है। द्वितीय प्रक्रम में विजयनगर की किसी प्रोपितपति का रूप और उसकी वियोग-दशा की चट्टाआ का वर्णन किया गया है।<sup>१</sup> विरहिणी नायिका पथिक को देख कर उसका गतव्य पूछती है पथिक उमरा रूप वर्णन करता है।<sup>२</sup> वह अपना गतव्य स्तम्भतीय बतलाता है जिस सुनकर विरहिणी विरह से विकल हो जाती है। किसी प्रकार धीरे धीरे वह प्रिय के हेतु सदेव बहाने का प्रयास करती है। कवि न इस सदम में अनेक छंदा के द्वारा नायिका की विरह विकलता और सदेव प्रेयण में असमथता का वर्णन किया है। विरहिणी कहती है कि प्रिय से कह दना कि उसके वियोग में एक एक दिन वप के समान बीतते हैं। नन्हा से निरंतर श्शु प्रवाह होता रहता है और मन में कामदव उद्दीप्त रहता है। उसे प्रिय के वियोग में नाद नहा आती। वह जीवित है यही आश्चर्य है।<sup>३</sup> इसी प्रकार नायिका अनेक छंदा में विरह निवेदन करती हुई जिस दिन में प्रिय गए हैं उसी दिन से ऋतुआ के उद्दीपक वातावरण में उसकी मानसिक और शारीरिक स्थिति जसी रही है उसका वर्णन करती है। यहाँ कवि ने पङ्क्तु वर्णन की परंपरा में नायिका का वियोग-वर्णन निबद्ध किया है।

विरहिणी के प्रियतम उसे ग्रीष्म ऋतु में छोड़कर गए थे अतः वह सदश बाहक पथिक को ग्रीष्म ऋतु में भ्रूल हुए कष्टों से अवगत कराती है।<sup>४</sup> तदुपरान्त वषा गरद, हेमन्त शिशिर और वसन्त ऋतुआ के उद्दीपक वातावरण और अपनी विरहावस्था का पूर्ण विवरण उपस्थित करती हुई अन्त में कहती है, हे पथिक मैंने गहर दुख से युक्त, मदनान्नि तथा विरह से लिप्त होकर कहे जिस नम्रनापूवक प्रिय से इस प्रकार कहना कि वे कुपित न हों और उन्हें अनुचित न लगें।

सदेश-बाहक को विदा करत ही प्रिय को मार्ग में दखती है। शय यही समाप्त होता है।

### राजस्थानी

बलि किसन स्वमणी री (राठीडराज प्रिथीराज री कही) प्रस्तुत प्रथ शृ गार प्रधान है।<sup>५</sup> प० विद्वनाथप्रसाद मिश्र ने लाला भगवान्दीनजी की अलंकार मञ्जूषा में उद्धृत किसी पृथ्वीराज के एक छण्य की शार सन्केत करले हुए समावना प्रकट की है कि 'इन्होंने पिंगल में शृ गार की फुटकर रचनाएँ की हैं। हो सकता है कोई रीतिप्रथ ही लिखा हो।'<sup>६</sup>

१ सदेशरासक २।२।२५

२ वहा २।३।५०

३ सदेशरासक २।८।११६

४ वही ३।१३० २२२

५ प्रथिमें जणि गिगार प्रथ बलि० ८

६ प विद्वनाथप्रसाद मिश्र हिन्दी साहित्य का अतीत भाग १ पृ० ८५



अति मभीष्टम इति परिभाषा है किन्तु सीधिकाय ॥ ३ मार्गिक एव घनराज  
 यथा यो सति हा सात पाया ॥ ३६३ ॥ १५५५ भाग्योत्तम  
 १५५५ उदाहरण ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५  
 पुण्यागत ३ भा ३५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५  
 साधनगत ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५  
 तावता है तो बसि ता पात ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५  
 कुट्टा का पात ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५  
 था। यानत्रा ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५  
 घोर विस्तारज ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५  
 धनुषन घनता ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५  
 पंगति घोर स्वबारी प्रवर्तिता ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५

१ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५  
 मगना ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५  
 उर्या ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५

५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५  
 भम निविता घना ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५  
 उदाहरण ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५  
 विवति प्रस्तुत ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५

कधि ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५  
 मनसातिन का मानधीरत रूप जिलाका ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५ ५५५५

दोला मारुता दहा इग तासगातिपरक सवसाध्य म आवा ता सत्त घोर उमूल  
 सौत्य दृष्टिगत जाता है। एग मोरक ता मर काय ता निमाता सौन ह यह निरवय  
 पूरत र्थी एग जा सवता। मोरिग गीन परवरा म गगा म लोता मारु क दू तासगाती  
 गाती आ रही है। कुछ नाग कानात को उमका र्था मानता है किन्तु एग सतुभुति क  
 आधार पर मौलिक काय परवरास प्रवर्तित एग प्रमन्था का तमयद्ध रूप लन बाल

- 
- १ बलि ७२ २६१
  - २ बनी २७८
  - ३ वही १५ २७ १ ८ १ ६
  - ४ वना ८१ ८६
  - ५ वना १६७ ७ १८५ ६१
  - ६ वना १६२
  - ७ वही १६५ २ २ २२७ २८ २३१ ३ ३८ ६६ २७८ ६६
  - ८ वही २६ एक बिहारी दो १८५

कुशलनाम मात्र जाते हैं। इन अग्रजों में निर्मित चरितकाव्य समृद्ध गणकाव्य पारितोषिक तथा सूफी काव्य परंपरा में निरुद्ध हास्यवादी गार्भ प्रचरिता पुरानी प्रेम गाथाओं का समवित्त प्रभाव हम पर पाया जाता है। दोनों श्रीय मार्गणा की प्रेम गाथाओं में निबद्ध है।

शांखायनीयों में ही मार्गणी का विशाल ढाँचा मिला जाता है। पर वन युद्ध हानी है तब हास्य का म्येषा मत्पथर वन विरत हा जाती है। वषा ऋतु का उद्दीपना वातावरण विरहिणी का यथा का द्विगुणित कर देता है। प्रकृति कभी उस विपरीत और कभी अनुकूल मानूम पड़ता है। त्रिगुणों का कुभा व द्वारा लाना व प्रति मद प्रेषण पवन बोझ और मद्दशवात्का क प्रति उसकी उक्ति प्रिय विनीत यावन व व्यथता का साध प्रिय व प्रति उपासम्म, गात्र आन का चलावनी तथा वियोग रणा व वषा बहुत कुठ नोन गीता और काव्य रूठिया न मित जुन रूप का प्रस्तुत करत है।

गणकाव्य तारी नाथिया की निरुद्ध रणा और मोहनत्वस्था का जलन कर लाना का मार्गणी स मितन व त्रिगुण यानुल कर देता है। मालरणा ग्राम्य वषा गरदनव व अतुआ न उन्नीपक दातावर्ग का वणन करके राक गती है किंतु गणकाव्य में ही जान का तत्पर हाता है। कवि न मनन छन्ना में प्रवस्यतपतिना प्रापिनपतिना की विरुद्ध यथा का विस्तृत वणन किया है।

बोझ चाग्ग मार्गणी न जान मौ दय ना रूप उपमानों का आधार पर वषा ररता है। रूपकानिगथांति न द्वारा मार्गणी व मोहन का वणन करती रणा कहता है। मो मार्गणी ना शुष्य म वीर भमर कारिल कमन, चन्द्र गिह, हा और पणाल ना देखा है। चम ताग्गुण लाना म वर कहता वह मग व म ल मगप का मुख मगम का लता तथा मगरिषु मी कमर वा नी है। दूमा प्रचार उमन रूप वणन अनन उ दा म विधा गया है।<sup>१६</sup>

आगपतिना मार्गणी व ह्यान्नाम मयागकारिक चण्णाया-आतिगतांति वषाडाया प्रकृतिका का वणन गात्रोय परंपरा व अनुसार किया गया है।<sup>१६</sup> मुरत व अभिधा म न करक व्यजना म रिया गया है।<sup>१</sup>

- 
- १ लाना माळ रा दूग ७७ १३२,
  - २ वनी, २६४२
  - ३ वनी ६१ ६२
  - ४ वनी ७६ ७५ १०६ १२२ १३० १४५ १५१
  - ५ वनी, २०१ २०३
  - ६ वनी २६१ २४६ २५६ २७६ २८
  - ७ वनी ७७ ३०४ ६१
  - ८ वनी ४५१ ६५२ ४६२ ८३
  - ९ वनी ५ १ ३
  - १० वही ५८ ५८४

नव दम्पति के अष्टयाम लोक गीतात्मक की अपेक्षा कला गीतात्मक हैं।<sup>१</sup>

## हिंदी

हिंदी खण्डकाव्य के अन्तगत जिन काव्य-ग्रंथों की महा चर्चा की जा रही है वे शुद्ध रूप से न तो खण्डकाव्य हैं न मुक्तक ही। उनमें कथा धारा की क्षीण रेखा विद्यमान है। अतः उन्हें निबन्ध काव्य कहा जा सकता है। कवितावली और गीतावली मुक्तक होते हुए भी पूरे रूप से मुक्तक नहीं हैं। क्योंकि उन्हें काव्यक्रम से निबद्ध किया गया है। नददास की रूपमञ्जरी प्रेमाख्यानक काव्य होते हुए भी महाकाव्य की महनीयता से हीन है अतः उसे खण्डकाव्य के ही अंतगत रख लिया गया है।

बरव रामायण प्रस्तुत ग्रंथ की रचना गोस्वामी तुलसीदास ने अपने मित्र अब्दुलरहीम खानगाना के अनुरोध पर उनके बरव नायिका भेद से प्रेरित होकर की है। प्रत्येक बरव अपने में पूरे तथा स्वतंत्र है किन्तु उन्हें रामायण के काव्यक्रम से लगा कर सम्पादित किया गया है। कई बरवों में कवि ने सीता और राम के रूप सौन्दर्य का वणन अलङ्कृत शैली में किया है।<sup>२</sup> विरही राम की व्यथा का भी वणन परंपरित शैली में किया गया है।<sup>३</sup> सीता की विरह दुःखलता हनुमान का राम से सीता विरह निवेदन भी परंपरित है।<sup>४</sup> प्रस्तुत ग्रंथ के अनेक बरवों का साम्य रीतिकानीन कवियों के दोहों से लिखलाया जा सकता है।

जानकीमंगल—इसमें राम का जयमाल पहनाती हुई सीता का अलङ्कृत शैली में वणन करते हुए तुलसीदास ने लिखा है कि मानो कमलचंद्रिका की काम पाश में बांध रहा है।<sup>५</sup>

कवितावली गोस्वामी तुलसीदास ने बन पथ में जाते हुए राम और सीता तथा लक्ष्मण का सुंदर वणन किया है। इन वणनों में सीता की सुकुमारता राम की सुंदरता एवं दोनों का दाम्पत्य प्रणय उदघाटित किया गया है।<sup>६</sup>

गीतावली गीतावली तुलसी के सम्पूर्ण काव्य में भावा की सरलता के लिए प्रसिद्ध है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल का अनुसार गीतावली की रचना गोस्वामीजी ने सूरदासजी के अनुकरण पर की है।<sup>७</sup> सीताराम विवाह के प्रसंग में कवि ने दोनों के रूप का परंपरित उपमानों के प्रयोग द्वारा वणन किया है।<sup>८</sup>

१ दोना मारु रा दूना ५८२ ५६

२ बरव रामायण छं २१२ १६ १७ २६ ३२

३ वही ३३

४ वही ३६ ४१

५ जानकीमंगल दो० सं० १२२

६ कवितावली अयोध्याकांड छं० ११/१७ १६

७ आचार्य रामचंद्र शुक्ल हिन्दी साहित्य का इतिहास पृ १२५

८ गीतावली आनंदाष्ट १ ३ १०६ अयोध्याकांड २०/६ २१/१ २४/२ ३७/२

चित्रकूट की रमणीय प्राकृतिक पृष्ठभूमि में सीता का शृंगार करते हुए राम कामशास्त्रीय नागरिक या रीतिकालीन रसिक के रूप में चित्रित किए गए हैं। चित्रकूट वसन्त की व्यापक प्रभाव से मानो राजा कामदेव की विहार वाटिका बन गया है और उसमें राम और सीता वन विहार करने आए हैं। राम स्वयं अपने हाथों से सीता का मदन करते हैं।<sup>१</sup>

समवत परवर्ती रसिक शाखा के राममकना को तुलसीदास के इही स्थलों से प्रेरणा मिली होगी। वसन्त ऋतु का उद्दीपक वर्णन करने के पश्चात् कवि ने वषा ऋतु का आलम्बन रूप में वर्णन किया है।

किष्कि-घाकाड में वियागी राम की स्मृति-दशा और उनकी शारीरिक और मानसिक स्थितिया का वर्णन परपरानुसार ही है।<sup>२</sup>

राम से सीता की विरह वदना का निवेदन करते हुए हनुमान उनकी यथा वया का वर्णन करते हैं। इस प्रसंग में तुलसी ने ऊहात्मक शली का आश्रय लिया है।<sup>३</sup>

उत्तरकाड में राम की प्रातःकालीन छवि, वृष्ण की रसिक मूर्ति का साकार कर देती है।<sup>४</sup> अष्टछाप और परवर्ती रीतिकालीन कवियों में ऐसे रूप का अवन प्राप्त होता है।

तुलसीदास ने सावेतवासिनी सलिया के साथ वर्षा की उद्दीपक पृष्ठभूमि में राम की दाला शीला और वसन्त में फाग लीला का वर्णन किया है।<sup>५</sup> आचार्य रामचन्द्र गुप्त ने उपयुक्त स्थानों की ही दृष्टिपथ में रचते हुए लिखा है — पर उत्तरकाड में जाकर सूर पद्मिनी के अतिशय अनुकरण के कारण उका गभीर व्यक्तित्व तिराहित सा हा गया है। जिस रूप में राम को सवन दिया है उसका भी ध्यान उह नहीं रह गया है। सूरदास में जिस प्रकार गोपिया के साथ श्रीवृष्ण हिंडोना भूलते हैं होली खेलते हैं, वहां करते राम भी लिखा गए हैं। इतना अवश्य है कि सीता की सलिया और पुनारियों का राम की श्रौर पूज्य भाव ही प्रकट होता है। राम की नख शिखर शामा का अच्युत वर्णन भी सूर की गली पर बहुत से पदों में लगातार चला गया है।<sup>६</sup>

श्रीवृष्ण गीतावली प्रस्तुत प्रथम तुलसी का सूर की विषय वस्तु पर उही की गली में लिखने का अवसर प्राप्त हुआ है। शृंगारी प्रमत्ता में गोपिया की विरह विवृत्ति विशेष उल्लेख्य है। कवि ने अपने प्रिय अलवार सागरूपक के द्वारा गोपिया की विरहा

१ गीतावली अयोध्याकाड छ ४४ २४

२ वही ४३ ५

३ गीतावली किष्कि-घाकाड ८ १०

४ गीतावली किष्कि-घाकाड १६ २०

५ गीतावली उत्तरकाड ४ १७

६ गीतावली उत्तरकाड १८ २२

७ आचार्य रामचन्द्र शुक्ल हिन्दी साहित्य का इतिहास पृ० १२५



स्नान योग, सहज शृंगार<sup>१</sup> पूर्वानुराग<sup>२</sup> विरह-रोगा,<sup>३</sup> पावस शरद शीत होली वसंत और शीघ्र का उद्दीपन वर्णन किया गया है।<sup>४</sup>

विरह-भजरी यह मधुसूत व आघार पर निर्भर निरव ताप है जिसमें चंद्रमा का दून बनाकर वृष्ण व पास भेगा जाता है। चंद्र स फाल्गुन तथा वारह महाना में त्रिभिन्न प्राकृतिक परिवर्तना का विरहिणी व मन पर पडा वाल प्रभाव और उसकी विरहावस्था का इसमें काव्य परंपरा व अनुसार वर्णन किया गया है।<sup>५</sup>

### मुक्तक

हिंदी मुक्तक व उदभव और विकास में प्राचीन साहित्य व मुक्तक का योगदान महत्त्वपूर्ण रहा है। अनक मनोरम भावा का मुक्तक में प्रकाशन प्राचीनकाल से जाता आ रहा है। मुक्तक की परंपरा व श्रवणन से अनेक प्रकार व — शृंगार भक्ति नीति और प्रशस्तिपरक—मुक्तक प्रभूत परिमाण में मिले।

रीतिकालीन मुक्तक काव्य की परंपरा का निश्चित परिचय पहले दिया जा चुका है। संप्रति उसकी विस्तृत विवेचना संप्रति है।

### मुक्तक परिभाषा और भेद

ध्वन्यालोकानुसार का कथन<sup>६</sup> मुक्तक एक दूसरे में समवद्ध अपने में पूर्ण और स्वतंत्र रूप में परिममाप्ति की आकांक्षा न करत हुए भा प्रथम व मध्य में स्थित होते हैं।<sup>७</sup> अर्थात् प्रथम में भी कुछ अंश मुक्तक हात में जा प्रथम में अति अंत से काट मनाव नहीं गया। इस मुक्तक में स्पष्ट प्रमगा का निरघन होता है। त्रिगिष्ट अथ व मुक्तक में ताप्य जो स्वतंत्र अपने पूर्ण पद्या में है जो रस-परिपाक के लिए किसी अर्थ की अपेक्षा नहीं रखत।

इन मुक्तक का विषय रसु की दृष्टि संप्रति चार विभागों में बांटा जा सकता है—

१ न शृंगार रूपमवगा ८ ५४ १५

२ कौ १७६ २४३

३ कौ २६६ ३ ५० ३७ ४१४ २३

४ कौ ३ ४ ३२५ ५ ७ १७१ ८६ ६५ ६३

५ कौ ८० २४ १ ७

६ मत्तकम अथेन नातिगितम । स्वतन्त्रतया परिममाप्तिनिराकाराथमति प्रथममध्यर्था मत्तकमित्य धने । — ध्वन्यालोकानुसार

७ पूर्वानुरागपरिपेक्षाणि नि येन रसकवणा त्रियने तत्त व मुक्तकम् ।

- (१) शृंगारपरक मुक्तक,
- (२) प्रणामपरक मुक्तक,
- (३) स्तोत्र एवं भक्तिपरक मुक्तक और
- (४) नीतिपरक मुक्तक ।

### शृंगारपरक मुक्तक (सम्बन्ध)

वेदा में ऋषियां न जिस दली प्रण तो शक्तिप्रति की है वह एव श्रुतिगत रह्य पूर्ण चिरंतन सत्ता व प्रति है । ए उक्तिमा म सौन्दर्य व प्रति आत्मनाम प्रपिया वा सहज आनन्दन चोदित हुआ न । ऋग्वेद में एमी भाव प्रवण उक्तिमा की अधिपता ह । उपा का सुन्दर गानवी व रूप म विप्रण शक्ति ऋषि की इय दृष्टि का शानक ह । वह कहता ह हे प्रणागवती उपा तुम कमीय तथा की भाति अयत आनन्दनमयी बनकर अमिता फलदाता मूम व विवृण जाती हा तथा उक्त सम्मुग स्मितनना युवती की भाति अयत व व का आवरणरहित करनी हो ।<sup>१</sup>

ऋग्वेदादि में उक्तिवित्त एव अयत मुक्तक विनेग जिस परवनी शृंगारी मुक्तक का संबध सूत्र जोडा जा सकता ह ।

शृंगारी मुक्तक की नो गीता वाली धारा अन्ततयात म निरन्तर प्रवाहित होनी चती आ रही है । वेदा म जितना कुछ संगीत हा सत्ता वह उमका एव अंग भी नही है । महापत्ति राष्ट्रल साह्यधारा का विचार है विश्वामित्र भरद्वाज या वशिष्ठ म सरस कविता करन की क्षमता नही थी यह नहा कहा जा सकता । ऋग्वेद शान म क्या प्रवेक काल म कविता होती रही है । तिन दूसरी तरह की कविताया व सप्रह करन के लिए ऋग्वेद व सग्राहक तयार नही हुए । पुरखा उवगी और यम-यमी जस प्रेम काव्य बतलात हैं कि उस काल म प्र म की कविताया की कमी नही थी । लेकिन इस तरह व काव्य लोभ काय ही रह हाग जिह अने भीतर जीग होगे के लिए छोड दिया गया ।<sup>२</sup> लोक-काव्य म ऐहिकतापरक या शृंगारी मुक्तक की परम्परा हाल के समय सम्मिलती है ।

पहले सस्कृत साहित्य व शृंगारपरक मुक्तक का सतिप्त परिचय दिया जाएगा ।

सस्कृत का मुक्तक काव्य गणना अयत समद्ध है । इसी परम्परा वन्कि मुक्तक स प्रारम्भ होनी है जिसका विचिा निर्देश ऊपर दिया जा चुका है । लीकि सस्कृत साहित्य म शृंगारपरक मुक्तक मे प्रस्तुतहार का नाम लिया जाता है । प्रस्तुत प्रवध म उसकी चचा खडकाया म की गई है । सम्प्रति अमशतक आदि कतिपय

१ ऋग्वेद १।१२।४।७

२ राष्ट्रल साह्यधारा सस्कृत काव्यधारा प २१

मुक्तवा का परिचय लिया जाण्य। विचार करने पर स्पष्ट हा जाता है कि इन गतक, सप्तगती पचासी और पचासिना जमसग्यापरक काय प्रमा की मग्या सम्बन्ध साहित्य म पयाप्त है।

**अमरशातक** — भन हरि न प्रेम को नितना व्यापार रूप लिया है उनना अमरशातक न नही। अमरशातक प्रेम क उन त्रिगुण प्रापारा न। म न निरुध्वाण परम्परावद्ध दृष्टि म लिया है कि न नायिका भन क चौगटे म आबद्ध किया जा सकता है। हात की नायिका व्यापक परिधन सती गद है आर उनना प्रणय प्रापार भी प्रकृति की विस्तृत रगसली म पल्लवित हुआ। परन्तु अमरशातक की नायिकाए रीतिनाटीन नायिकाआ की तरह अन्त पुर म यादर रही जानी। अमरशातक म रमणी क विविध बलामिन रूपा और उनकी हात मावयुक्त समोहन चण्पाआ का सफन अवन रूपा है। इसके अनेक दनाका ना मान तास्य प्राङ्गन की गायामप्लाती म रखा जा सरना है।<sup>१</sup> एक नी प्रमम क ना काय अथा क दनाका को तुना रन पर स्पष्ट हो जाना है कि हात की गायिका म स्वाभाविक मौल्य है तो अमरशातक दनाका म दृष्टिम अलटन शली का प्राधाय। प्रन्तु प्रथम म नृगार ना सवागीण और मूभम विक्षण करन परवर्ती कविद्या क ना अमरशातक क विना माग प्रगस्त कर लिया है।

नायिका क साथ हास परिहान रत नायक मन्ति प्रीण की व्यग्य वाणी एव तात्न तनन महत धण नायक विरग नमना मुण प्रिय का रोक्नवाली असहाय प्रबन्धत्वपतिवा, नूपुर और मुख प्रमा म घाा रार म भी अभिमरण की सूचना देनी रणाभिमारिका और मुग्धान क अपनयन हनु पाद नुठिन नायक के अनवानक चित्र अमरशातक की अपना विगपना है।

**शृगारशातक** — भन हरि इन शृगारशातक की नाकपियता का मुख्य कारण भावा की मरन अभिधक्ति है। इनम नरुगिया ती विनाम चण्पा उरन मौल्यपाण की कटागता अगा की मनु माहरता चण्पाआ ती प्रमाअमयना आदि का वणन मनोरम गती म किया गया है।<sup>२</sup> गार की नारी दृष्टि बराग्यपरक भी रही है। अत वही-कही नारी म्त्रभाव पर पश्य भी किया है।<sup>३</sup> कवि न जीवन की उपायना या ता विलास या बराग्य म ही मारी है।<sup>४</sup> नारी क आरूपक रूप का वणन अप्रस्तुत याजनाआ द्वारा भी

१ प्रमाण गा र जि निजि च गा पणन गा पुर मा

पय क मा पयि पवि च मा नृपिणा नुम्य ।

हना चन प्रहृतिरपरा नास्ति म नापि गा गा

मा मा मा मा जपति गतने कायम नवात् ॥ अमर १ २

नुवनाय-गायानावनी ६। अमर ६ गाथा ६।८, पद्यापर पद्याभरण १६४

२ शृगारशातक शतक ७ ६ २२ २६ ६२ ६८

३ कवी २० २३ २७

४ वहा १४ १६ ६०



कवि ने किया है जसो हे मन पयिक । कामिनी व कुच-भवता स युवन शरीर रूपी दुग्म  
बन म तू विचरण मत कर बहा काम तस्कर रहता है।<sup>१</sup> बोगलता व वारण शक्ति  
विरण। की असह्य माननेवाली काप्रलागी व वणन<sup>२</sup> पत्कर बिहारी आदि रीतिवादी  
कवियों की नायिकाएँ यात्रा आ जाती है। कवि ने नारी का रत्नमय और ग्रहमय वर्णित  
करके रीतिवादी कवियों की चमत्कारिक बर्तिका नई प्ररणा प्रदान की है।<sup>३</sup> नायिका  
के कटाक्षपात के व्यापक प्रभाव का भी वर्णन किया गया है।<sup>४</sup>

मत हरि का नारी रूप चित्रण म जितनी सफरना मिली है उतनी ही सफलता  
प्रकृति के उद्दीपक रूप वर्णन में भी मिली है। वसंत की रमणीयता तथा चित्र रात्रि का  
मुसवारवत्त्व गीष्म की सुगन्ध-जा वर्षा का उद्दीपकत्व शरत् ऋतु व सुख शिशिर पवन  
का विट चरित्र आदि के वर्णन रीतिकव्य के अग्र्य प्रेरणास्रोत माने जा सकते हैं।<sup>५</sup>

चौरपचाशिका — चौरपचाशिका नामक पचास श्लोकों की एक रचना चौर  
कवि वृत्त प्राप्त होती है। राहुल मास्वृत्त्यायन इस विद्वहण चरित्र का ही अर्थ मानते  
हैं। प्रस्तुत पचाशिका अपनी भाव-गलता के कारण सहृदयों का कठहार बनी हुई  
है। चौप रति का भय शका से मुक्त उद्दीप्त मायन्दा से युवन वर्णन किया गया है।  
प्रिय की एक एक विलास चपटा का एक एक श्लोक में मार्मिक भाव चित्र अंकित  
किया गया है।

रात्रि के लिये कारण अलसित दीध नत्रवाली शृ गार सार सरोवर की राजहसी  
के प्रात काली न जावनत भुग का चित्र गुरतात म थम रत्न नायिका के अस्त-यन्त  
वस्त्राभरणों 'सुरति' विपरीत रति 'रूप सी दय' दत्तगत, 'नस्तगत' और प्रणय  
तथा ईष्यामान वं गु र वगन प्रस्तुत ग्रथ में प्राप्त होते हैं।

### आर्यासपनशती

बगल के राजा लक्ष्मणसेन व सभा कवि गोवर्द्धनाचार्य के प्रस्तुत ग्रथ में ७०२  
आयाएँ हैं। यद्यपि कवि को हाल की गायसप्तगती व अनुसरण पर शृ गार-वर्णन म

१ शृ गारसप्तगती श्लोक ४६ तुलसीदास-विश्वरी १६८

२ वही ७०

३ वही ८ ८१

४ वही ८२ तुलसीदास विश्वरी १३४

५ वही २६ १ ३४ ३५

६ विद्वहण चौरपचाशिका श्लोक २ ८ १ १० २२

७ वही १२ १०

८ वही १३ १६ २३ २८ ३१ ७

९ वही १३ ४१ ४८

१० वही १३ ३४ ४१ ४६

११ वही ११ ३२

पर्याप्त सफलता मिली तथापि उन गथाया जसी गतिमयता, सहृदयता, शब्दचित्रात्मकता तथा ग्राम्य जीवन के प्रति अतिशय अनुरक्ति का इन गथाया में अभाव है।

इनमें भी बिहारी का काव्य मामूली और पेरणा मिनी जैसे सह नही बल्कि सस्कृत के भी परवर्ती कविया पर इनका प्रभाव देखा जा सकता है। अल्मोडा के कवि विश्वेश्वर ने भी इनके अनुकरण पर एक आर्यासप्तगती की रचना की पर उमम न तो विगप भाव-मम्पदा है और न शब्द चमत्कार ही।

प्रस्तुत आर्यासप्तगती में कही विष्णु और लक्ष्मी ता कही गकर और पावती और कही सामाय नायक-नायिका की विपरीत रति व वणन मिलत हैं।<sup>१</sup> मुरतात,<sup>२</sup> सपत्निया के हृप शब्द<sup>३</sup> प्रिय की दशनेच्छा ४ कारण परकीया का माघ-स्नान का दिन निकलन तक न समाप्त होना<sup>५</sup> प्रिय की तुलना निद्रा स करत हुए नायिका का प्रात काल हान पर भी शया-त्याग की असमथता<sup>६</sup> आदि का चित्रण कवि न जमकर किया है। सद्य स्नाता<sup>७</sup> स्पग मुख,<sup>८</sup> रतिनाल दान के लिए नायक की चाटुकारिता<sup>९</sup> नायिका की दृष्टि<sup>१०</sup> उसके भ्रू की सरस भंगिमा<sup>११</sup> नवशत का व्याधि माननेवाल मूढ नायक,<sup>१२</sup> ईश्व की गाल स मान अधि की तुलना<sup>१३</sup> वियाग का अधि गणना रखा स खचित भवन भित्ति<sup>१४</sup> आदि का वणन कवि व उस रूति अनुसरण का दातक है जिसका छान रीतिकालीन कविया पर स्पष्ट देखा जा सकती है।

इसके अतिरिक्त गयाग<sup>१५</sup> और वियाग<sup>१६</sup> की नाना दशाया का चित्रण भी कवि न बड़ी कुशलता से किया है। इन रचना का रीतिका य पर पर्याप्त प्रभाव देखा जा सकता है।

शृ गारिक प्रसगा व ही वणन में नही अग्नि नूति और भक्ति के भी मुक्तक,

१ गावर्द्धनाचाय आर्यासप्तगती वनाक १२ १६ ८५ १२१

२ वही २५ ६३

३ वही १८ ६४७ तुलनाय बिहारी १४२

४ वही २६ तुलनाय बिहारी १७६

५ वही ५४

६ वही ५५ १७२

७ वही ६२

८ वही ८६

९ वही ६५

१० वही ११०

११ वही ११०

१२ वही १६१ १६८ तुलनाय बिहारी १०

१३ वही २६०

१४ वही ६२१ ५४० ६ २ ६२६ ६२८

१५ वही ५७१ ५७६ ६६१

हाल की तरह गायुडसारां व भी शीत शीत मरिचुड रिण ३ शैम रि गतिहायीत  
सतगया गारा घां म न्य गा १ ।

सतवगसष्ट मगांरि मगां व प्रगात गरा व पाय धोरि शिव परि दगा  
म वमग धम धोरि सा का गगा व ररत तुनाय परि २० व मया गा ररग म ररम रा प्री  
पादन ररत हूण रिगा ३ राम ग ना य ४ यामा नी व मग व व ५ ग ग रि ग ग रा ग  
६ र म ग व व ७ गमा रा भा रण १२ ग १३ ग व रि गा रा ग म ग ग र रि गा धोरि ग र भि  
गुह १४ मगा र रगा का रगा य म मा र १५ १६ रि ग ग र ग गा र म गा रि गा व  
र्य मो ग य धोरि रि गा ग र र गा रा व र र गा ग रा ग रा रि गा १७ १८ र ग र रि रि ग र  
वतहा रि गा ती र गा ग गा प र रि गा र र र र धोरि ग रा य धामा द १९ र प्री र धय  
गभा गृ गिना रा व र गा रि। स्वय दू २० ग रि र र प्री र ग र रि र ग र रा  
उदीप र र व न रा ग ती घां ग रा ग र र ग र रि र र ग र रि ग रा य धय र र र घां र रा  
वण र र ग ती रा म रि गा ग या ३ १ २

कोटि विरह-रग्नाय र रि ग र ग व ण भट्ट ( १५६० ई० ) व प्र म न त न म ग र ग र  
तीना और गी र य रा व र प्रणय धा र गा रा र ग र रि गा ३ १ २ ग म गा रि रा ती र ग र  
नाला व पू र ग र ग म ग रि व भा र रि गा ग र र ग र र ग म ग र य यो व ना ग म ध भि म ग र  
सयाग मा न व र गा र रि गा व र गा रि र व ण र रि गा ग या ३ १ ४

शृंगार वराग्य तरगिणी शृंगार वराग्य तरगिणी म व रि म म प्र मा न्या व र  
४६ ग रा रा म पू वा ड म शृ ग र ग र उ र ग र म व र ग य रा रि र ग र रि गा है १ ५

रतिहरजन र रि र र व न म र म ग र व रि न व र ग य धोरि शृ ग र र र र ध यो  
स गु र व ण र रि गा है । उ न र र र र र ग र ग रा र र ग र व र ग रा रि गा की ह रि र ग  
रि गा जा सा ता है १ ६

काव्यभूषण गतर-म ग र र ग र व र र प्र णी न र ग य भू ण ग र व र म ना रि रा  
की मु र र ता ग र उ म ती रि ना म र र ग र र गि न २ १

रोमावती गतर-रि र र र र र र रोमावती गतर म ना रि रा की  
रोमावती रा उ र प्र रा गू ण र ग न र १ ५

- १ क्षम ग चतु व ग स य ( का व य मा ना व च म ग र र ) ३ १
- २ व ही १ ५ ७
- ३ व र ३ १ १ ७ २ ४
- ४ गारायण भट्ट कोटि विरह ( रा ग मा ता व न य गु र र व ५ १ ४ २ १ ५ ७ )  
ग या ३ ६ १ १ १ ६ १ ६ १ ३ ७ १ ७
- ५ शृंगार वराग्य तरगिणी ( का व य मा ना व र म ग र र रि र र ग र र प्र व व र ३ )
- ६ रतिहरजन ( का व य मा ना ग नु र र र र ) १ १ ६ ६
- ७ काव्यभूषण ( का व य मा ना ग र र र र ) १ ३ १ ६ ६
- ८ काव्यमाता ग र र र र र १ ३ ५ १ ५ १

इसी प्रकार अनेक गतन सप्तमतिद्या आदि है जिनमें शृ गारिज प्रसगा का मनोरम वणन पाया जाता है ।

रीतिवाचीन मुक्तावा को प्रेरणा प्रदान करनेवाले प्रथम उक्त अनक नात अनात गय सपन सिद्ध हुए हाग एगा निश्चयपूरक कहा जा सकता है ।

उपरिर्नवित कतिपय शृ गार पानन स्फुट काथा क अनिरिक्त सस्कृत के सग्रह प्रथम सगृहीत शृ गार रम क उत्तम छटा ता रीतिवाच्य क प्रेरणा खात र रूप म लिया जा सता है ।

### सुभाषित वाच्यग्रथ

रीतिवाच्य क प्रेरणा-खाता का निरूपण करत हुए सख्यापरक प्रथा के अनिरिक्त सुभाषित सग्रहा का भी महत्वपूर्ण स्थान है अत उनकी उपक्षा नही की जा सकती । इन सग्रहा का उपयोग कायगास्त्र निरूपक आचार्यों न भी किया है जो इनकी लोक-प्रियता के उदाहरण है ।

सस्कृत साहित्य म सवप्रथम सुभाषित सग्रह कवींद्र वचन समुच्चय है । इन सग्रह म राजगवर (६०० ई०) क पूनवर्नी और समसामयिक कविया की सूक्तिया सगृहीत है । मानसराज मुज (११वी गती) क समसामयिक विचार अभितगत न एक ३२ प्रकरणा एव ६२२ पद्या का वहल ग्रथ सुभाषित पत्राह नाम म प्रस्तुत किया । इस अतिरिक्त सामश्वर (१३३१ ई०) का अभितपितार चिनामणि श्रीवर का सटुक्त्तिरर्णामृत 'जहण की 'सूक्तिमुक्तावली (२० का० १२२७ ई०) मायणाचाय (१४वी गती) की सुभाषित सुधासिद्धि गान्धर्व का गान्धर्व पद्धति (२० का० १३६३ ई०) सकलगीति (१४वा गती) की सुभाषितावली पातयाय की प्रसग रत्नावली (२० का० १४८६ ई०), श्रीवर का सुभाषितावली वल्लभदव (१२वी गती) की सुभाषितावली रूपगोस्वामी का पञ्चावनी दक्षिणात्य पेड्डिमट्ट की 'सूक्तिवारिधि आदि स अनन शृ गारपरक छटा की रीतिवाच्य की शृ गारधारा क स्रोत रूप म प्रस्तुत किया जा सकता है ।

सप्रति कवल एन सुभाषित सग्रह गान्धर्व पद्धति स कुछ एम अज्ञा का परिचय दिया जाणा जिनस रीतिवाचीन शृ गारका य की प्राचीन शृ खला का नियाजन हा सक ।

गान्धर्व पद्धति—सग्रहकार न प्रस्तुत ग्रथ म केश प्रसाधन शृ गारस भेद निरूपण स्त्री प्रथमा कामगास्त्रीय नायिका भू स्त्री सवा प्रकार मोदय प्रसाधन क साधना वय सारि और नायिका क रूप माध्य मय जो वररुचि पुष्य कालिदास, मात, विल्लण बाण श्रोत्र्य पञ्चानन त्रिनिशम कपोद कवि विजिक्ता श्रीधनद दव, मुरारि गान्धर्व भागुशुडिन गुमारराम रत्नाकर कमीरर गधनस्थनाधरक गान्धर्वि वण्डा, भीर्मासह पंडित और स्वय सग्रहकार गान्धर्व आदि अनेक नात अज्ञान कविया के दलाका का सग्रह किया है । नारी रूप-वणन मे उपयुक्त कविया ने जा अग्रस्तुत विधान

किया है उसका उल्लेख प्रस्तुत प्रबंध के चतुर्थ अध्याय में 'नगशिक्ष' के निष्पन्न म किया जाएगा।

इसमें प्रवर्तमानप्रयत्नी की चिन्तातर अस्वया तथा नायक के सात्वनायुक्त बनना का वर्णन करके वाते श्वाका<sup>१</sup> के साथ भल्लट का ग श्वाक भी मृगहीन है जिसमें वियागिनी की मृत्यु का उत्सववन् मानन का उल्लेख विहारी की सगी की उक्ति से मिलता जुलता है।<sup>२</sup> सप्रहारा ग ग अर श्वाका का मृगहीन किया है जिसमें विरहिणी की वागव्याघ्रा का मुदर वर्णन किया गया है।<sup>३</sup>

विरहिणी के निगनाय विरहित अर स्वप्न अनु प्राधिकय पर तखन दूती प्रपण नायक का सन्ध प्रपण दूती के प्रात नायिका का पण उक्ति गार्ति का वर्णन अनेक श्लोकों में हुआ है।<sup>४</sup> वियाग वर्णन के उपरांत समाप्त वर्णनपर श्वाका का भी समूह किया गया है।<sup>५</sup> दूती प्रपण में नायिका के रूप यौवन की प्रशंसा करनेवाले श्वाका का भी सचयन है।<sup>६</sup>

अपने अग्रा से ही स्वागत मदन विधात करनेवाली आगतपतिता के रूप और मानिनी और कन्हारताका के मान मनुहार वात प्रसंगा का भी परपरित वर्णन अनेक श्लोकों में प्राप्त होता है।<sup>७</sup>

कवि शास्त्रपर न नायकानुनय के ग्रा परस्पर प्रसादन का भी वर्णन करनेवाले श्लोकों का समूह किया है।

आभसारिका के प्रपण में माग की भयानकता और उसके सहम आर्ति के भी वर्णन प्राप्त होता है।<sup>८</sup>

समाप्त गारपर उचितता में चत्मा का उद्दीपन के मदपान दूतीप्रोडा आलिगन चुम्बन रति के आंतरिकनवाका की मन्त्र चत्मा प्रोडा की विपरीत रति प्रोडा मुग्धाका का निषेधावितथा गृहार्ति की धरति का उद्दीपनत्व<sup>९</sup> तथा पुरपायितास्वा में नृपरा का भोज और मखना की मुग्धरता आदि का वर्णन कवि

१ शाङ्ग धर पद्धति का ३ ८१ ८२ ३ ८५ ३६१ ६४

२ प्रयासस्त मानो विरहित निनायु तस्य स्वर गण्याराग आशक्ति जनकानुमति के।

विषयव्याख्यानात्पुनरिरे । इति तन्ना । न इत्ये तन्ना मरकमि यत्वात्पदम ॥

—शाङ्ग ३६ ६ तन्नाय का का वाका ग्या इति प्रातेत के ईम ।

इति तन्नाय का वाका ग्या इति प्रातेत के ईम ॥ विरहिणी ८३

३ शाङ्ग धर पद्धति का ३६ ६ ३६ ८ ३६११ १६ ३६१८ ३६२३ ३६३१ ३६ ६८ ४१

४ का का का ६३६ ८ ८८ ६६ ४ १ १ ४ ३४१

५ का का का ३२१

६ का का का ३२२६ ६२ ६२

७ का का का ३२८२

८ का का का ३६१०

९ का का का ३६२१ ३६२३ ३६३२ ७६, ८६

परिपाटी के अनुसार हुआ है।<sup>१</sup>

### प्राकृत अपभ्रंस

गाथा सप्तगती—प्रस्तुत ग्रथ की गाथाग्राम हत्य की समात्मिका वृत्ति को जिस स्वामात्रिक परिवर्तन में व्यक्त किया गया है वही अथवा दुर्गम है। इन गाथाग्राम का दखन से पता चलता है कि प्राकृत साहित्य शृ गारी मुक्तिका की दृष्टि से काफी समृद्ध था। कुछ विद्वानों का मत है कि किसी गाथाकाप नामक बहद समग्र ग्रथ से ही सातवाहन 'हान न डमा की प्रथम गता' की लगभग सात सौ गाथाग्राम का चुनकर प्रस्तुत ग्रथ का रूप में सगृहीत किया था। गाथाग्राम की मधुरता का प्रतिपादन प्रस्तुत ग्रथ की ही एक गाथा से ही जाता है जो अमृतापम प्राकृत कविता का पढ़ना या सुनना नही जानते व काम की तत्त्व चिन्ता करते हुए लज्जित क्या नहीं होत।

गाथा सप्तगती की इन गाथाग्राम प्रेम के विविध पन्ना का मुदर वणन किया गया है। पानी भरती हुई सुदरिया चक्की पीमती हुई युवतिया और धान कागती हुई वृषक बालाग्राम के रूप में तीज-त्योहार हास-परिहास<sup>२</sup> के मनोरम चित्र इन गाथाग्राम की अपनी विशेषता है। इसके साथ ही सट्ट स्थान की आर जाती हुई परकीया गुप्त समत करती हुई स्वयं दूती<sup>३</sup> प्रिय का स्वागत करती हुई आगतपति का उपनायक के साथ रति-व्यापार में रत नायिका का सावधान करती हुई मन्वी या दूती के चित्र रीतिकार्य में शृ गारी कवियों के प्रेरणास्रोत माने जा सकते हैं।

रीतिकार्य पर अश्लीलता का आराप करने वाले यदि गाथा सप्तगती के दवर के प्रति नाभा के वासनामक प्रेम<sup>४</sup> देव दान के याज से प्रणयी-युग्म का भिन्न<sup>५</sup> पुष्पवती हान पर भी पति के पास शयन और सहवास<sup>६</sup> छाटी बालिका को परा पर बिठाकर भुजाने में पुरपायित की कल्पना<sup>७</sup> आदि पर दृष्टिपात करें तो समस्त रीति

१ प्रभान्त नृपराजके धूमन मन्त्राध्वनि । बाल्य नून रम्यता के कामिना पुष्पायन ॥  
 गाथा २६६ तुलसीय —विहारा—पया जोर विपरात रति रूपी मुक्त लखार ।  
 करति कुसाहन विविना गती मोन मन्वी ॥३६ ॥

२ हान गाथामपमना ११२

३ हान गाथामपमना १११ १३ तुलसीय—विहारी दो० ४१० गाथा० १११४

४ पया ११६८ तुलसीय—विहारा ६८१ गाथा ६। ५ तुलसीय—पयापम २५०

जगन्नाथ ३११ गाथा ६१८६ ७१६० तुलसीय—विहारापम का० नि २।६५ गाथा० ७३३

५ गाथा २।४० तुलसीय गाथा० ३५ प्रमद० ६१ वि प० २२४।२ १०

६ गाथा १।२८ १।५६ तुलसीय विहारी ८५ गाथा ५६८ ७।८

७ गाथा ५। २

८ गाथा० ५।८० तुलसीय—पया ४२८ गाथा० ५।८१ ६।१६ ६।२८ २६

९ वही २।६९

वाच्य के असलीलतम स्थला को भी मर्यादा की सीमा में ही पाएंगे।

साने वा बहाना बरक लटे हुए प्रिय तो चूमती हुई प्रियतमा<sup>१</sup> राशिम कोठ  
बला म पवीणता सिद्ध करन वाली नायिका का प्रात लज्जावनत मुख प्रणयमान म  
नायक और नायिका की प्रति द्विदिता,<sup>२</sup> एक ही ग्राम में रहने वाल प्रणयीयुग्म की विरह  
विकलता<sup>३</sup> आदि के साथ निपरीत रति<sup>४</sup> नवाना सुरति<sup>५</sup> प्रमगविता<sup>६</sup> मुग्धा मान<sup>७</sup>  
नय तत तत<sup>८</sup> आगतपतिकरु व गुभमूचक गानुन,<sup>९</sup> प्रिय क आगमन की अवधि  
गणना<sup>१०</sup> दगानोत्कठिता नायिका<sup>११</sup> प्रवस्यत्पतिका<sup>१२</sup> सात्त्विक भावादय क कारण  
फाग रोडा म असमयता<sup>१३</sup> मुग्धा का भ्रम,<sup>१४</sup> सत्य स्नाता आति<sup>१५</sup> न जान कितन मार्मिक  
प्रमगा का यणन इन गाथाओं में हुआ है।

वज्जातलग्न—श्वताम्बर मुनि जयवल्लभ न प्रस्तुत वज्जातलग्न म कुल ७६५  
छन्दा का ४८ परिच्छेपा म इस सङ्ग्रहीत किया है। इसमें सङ्गृहीत छन्दा क रचयिताओं  
के विषय में कुछ भी बात नहीं है। कुछ छन्दों का ही सङ्गणना अदुररुमान क सदेश  
रासत्र और हमचन्द्र क प्रथा से सङ्गृहीत है।

कवि न काम की तत्त्ववाता क लिए पाठ्य-वाच्य का ज्ञान आवश्यक बतलाते  
हुए लिखा है अद्धतिरवाती वाणी विनामयुक्त मुग्धा का हाम चार पटापान का  
रहस्य विना प्राकृत वाच्य क ज्ञान के नहीं जाना जा सकता।<sup>१६</sup>

- १ वही ११२ तुलसीय अमर ८२ विहारी ५१६ ५३
- २ वी ११२३ तुलसीय आर्या ५१
- ३ वही ११२७ ७१६६ तुलसीय अमर २३
- ४ गाथा ११६३ तुलसीय विहारी १७५
- ५ वही ११६२ तुलसीय आर्या ५२६ गाथा ७१६ पञ्चमर ७० रि १६
- ६ वही ११६६ तुलसीय विहारी ५५६ वाचस्पति २ रि १८
- ७ गाथा ११७६ २१७३ २१६४ तुलसीय विहारी ७८ ७ ६६५  
आर्या ४६ गाथा ४६७ का प्र ४६१
- ८ वी ११८७ तुलसीय विहारी ५६७ गाथा ७६५ तुलसीय विहारी ५५४  
गाथा ४६३ तुलसीय विहारी ३५२
- ९ गाथा ११६६ १ २१५ १ ३ ७१५
- १० वही २१ ७ तुलसीय विहारी ४५३ आर्या ३६७
- ११ वी १ तुलसीय आर्या ६२ गाथा ४१७ रि १ १६६ २ ६६
- १२ वी १ तुलसीय आर्या ६७ ४४६ तुलसीय विहारी २८ ८
- १३ गाथा १३ तुलसीय विहारी ६
- १४ गाथा ४११७ तुलसीय विहारी १६८
- १५ गाथा २१२ ७१७८ तुलसीय भावार्णव ५
- १६ गाथा ६१५५ तुलसीय आर्या ६६
- १७ वाचस्पति ७८ २ ६ १७ तुलसीय-विहारी २६३

इसम नारी के नेत्र, स्तन स्वद विपरीत रति, शतशत, नवशत, मुरतसुख, प्रचण्ड मुरत, मुरतात मान प्रवत्स्यप्रेमसी विरहावधि गणना विरहकावत की दीघता, विरह-ताप<sup>१</sup> विरह दगाघ्रा<sup>२</sup> अयममोगदु पिना दूती के प्रति व्यग्य<sup>३</sup> विरह निवन्त, अनुगयना एव ऋपडनु सवधी छत्रा का सचयन किया गया है।<sup>४</sup>

कोई नयिका को समभाती हुई कहती है 'ह पुत्रि भूषण प्रमाधना से अपन को न तूने जिसस (प्रिय) जन का रजन हाता है व अन्तार दूसर ही हान ह।' शबदास आदि परवर्ती कविया की तरह वज्रानग के कविया न भी बसत वा उद्दीपन वणन करते हुए पलाग पर श्लप तथा भीम (पाण्डव) फाल्गुन (अजुन) माधव (कृष्ण) आदि गदा का द्वयथक सदम म प्रयुक्त किया है। कही विरहिणी मध को उल्का पिपाच की तरह दखती है ता कही समवन्ता म आसू गिरात हुए सहाय की तरह।<sup>५</sup>

शृ गार वा प्रम भावना का विरास एक ओर ता स्वच्छ द र स लात भाषाया म होना रहा दूसरी ओर साहित्यिक भाषाया म कवि-परम्परा व अनुसार सृष्टिगत गली म भी हाता रहा। पहल कहा जा चुका है 'वदिक ऋषिया न पारतीकिक दृष्टि स सूचना का सप्रष्ट किया अ यथा शृ गार की गठित गारा का समुचित रूप वाचकाजीन आयभाषा म भी मिलता। इसी प्रकार प्राक्तन साहित्य म सृष्टिगत रूप म जितना साहित्य मिलता है उतना शुद्ध लाक भाषा म नहीं। हाल का सनसर्द म प्रम शृ गार वा जो उद्दाम रूप मिनता है व लक भाषा वा आत्मा क अधिक्त निवट है। जाद म प्राकृत भी साहित्यिक भाषा हातर समुत्त व अनुकरण पर विवसित हाते लगी। उस समय की लाक भाषा अपभ्रंश म शृ गारी मुक्तका की प्रभूत रचना हुई।

अज्ञावधि प्राप्त अपभ्रंश साहित्य अपनी शृ गारपरक काय वारा क लिए प्रसिद्ध है। हिंदी साहित्य के मध्यकाल म विवमित होन वाली प्रम शृ गार वीर प्रशस्ति और नीति भक्ति की प्रवृत्तिया क विकास म अपभ्रंश साहित्य का यागदान महत्त्वपूर्ण है।

डा० गिवप्रसादसिंह ने इस ओर गवन करत हुए लिखा है 'बहुन जिन न हिंदी क आवाचक भक्ति, रीति तथा एतिहासिक स्तुतिपरक काया की अतश्चतना की तनाश करत आ रहे ह और हिंदी के भक्ति रीति साहित्य की प्रवृत्तिया क विकास की मारी प्रेरणा समुत्त साहित्य स ही प्राप्त हुई ऐसा समभन रहे हैं। भागवत तथा गीतागोविंद भक्ति क विकास क लिए उपजीव ग्रथ मान जात ह उमी प्रकार रीतिकालीन अलकृत

- १ बजा दण्डिम प्रमश छ -- २२६ ६७ ३ ३३ ४ ३ ६ ५ ५ ३१५ ५२१ २३ २५ ५५३  
तुलनीय-त्र वि० ६४ बजा ३५५ ५५ ३६२ ५५५ ३७ ३६६ ७६ ३५४ ३५६ ४४१  
२ वनी ३५१ तुलनीय-त्रिपुरी १६५ बजा ३५७ ६५ ६ २ ४७६ ५५ ४५३ ५७  
३ बहा ६१६ १७  
४ बजा देगिम प्रमश छ०-- ६२२ २३ ६७५ ७६ ६३ ६५५  
५ वनी ५५४ तुलनीय-विष्णु ११  
६ बहा दण्डिम प्रमश छ -- ६३ ३३ ६५७ ३५ ६४७ ४६



शृंगार मुक्तका के लिए प्राचीन शृंगार शतका की शरण लेनी पड़ती रही है दसवीं शताब्दी तक क मसूत साहित्य का सोलहवीं शताब्दी में उद्भूत हिंदी साहित्य से जान्त समय बीच क काल व्यवधान को नञ्चरप्रकाश कर जाते म उह कम, कि ता नही होती ।<sup>१</sup> यदि मू म दृष्टि म विचार लिया जाए तो स्पष्ट हो जाएगा कि हिन्दी रीति काय का प्रेरणा स्रोत म प्राकृत और अथ भग साहित्य का महत्व कम नहीं । डॉ० हजारि प्रसाद द्विवेदी न आधुनिक आयमापा री साहित्यिक प्रवृत्तिया का मन्त्र अथ भग म जान्त हुए लिया है । यदि साहित्यिक परम्परा की दृष्टि म विचार लिया जाए ता अथ भग क लगभग सभी काय रूपों की परम्परा प्रायः शिन्दी म ही सुरक्षित है । डॉ० हजारि प्रसाद द्विवेदी न अथ भग क प्रमुख उदाहरण पदद्वियों और गम पत्र का विभाग लिख लात हुए शृंगारी दाहा क विषय म लिया है । प्राकृत की गाथा का की भांति य पुत्रक द्विपरित बद्ध शाल अथ भग म बहुत अधिक प्रचलित थ । अथ भग म रूप यथन विरह की उन्नता मितन क उन्नतम और हाव भाव की का शक्ति क बहुत गुत्तर यथा उपा करत थ । उमवत्ता काय क व्याकरण म तथा प्रमथ कि तामणि शक्ति प्रकाश म गम दाह पयाप्त मात्रा म मृत्वीत हुए <sup>२</sup> । न तोहा री गाधी परम्परा ढाला मात्र क शाला और विहारी मरिणम की मन्मया म तथा मुसगरप्रता क गता शक्ति म सुरभिता <sup>३</sup> । आधुनिक गाथा क परिणामस्वरूप हिन्दी और प्राकृत अथ भग क सम्बन्ध की पविष्टता और भा स्पष्ट हुई है । डॉ० रामगिह तामर क अथ भगनुमधान म यत् मिद्ध कर लिया है कि अथ भग क (मन्त्रिनापरत) शाला यथा री धारा अथा पूर । मन्त्र और अनेकरूपता क साथ हिन्दी म भी प्रचलित हानी रती । मुसगर का यह धारा एक प्रकार अमबद्ध रूप म लगभग एक सत्तर वर्ष तक उत्तरी भारत म चलती रती । शिन्दी शक्ति य क रीतिमान म धारण इस मुसगर धारा का आध्यात्मिक स्वर मन्त्र हा गया किन्तु काय री मन्त्रधर शाला शृंगाररूप और भा पुत्र हाकर प्रचलित हुआ ।

अथ भग क शृंगारी मुसगर का पन्ना प्राय उपास्य विजमावगीवमपुत्रया की विर शिन्दीया म रती जाता है ।<sup>४</sup> हमर क प्राकृत-व्याकरण म उद्धृत अथ भग क दो । का कागवरप पुत्रया क मुसगरा म मितन है । न्त शाला म गम परिणामय कागवरप म मयाग-मग म धारित प्रमिया और शिन्दीय कुम म धारित प्रमयी युमा क अनेक शिन्दीय है । शृंगारी गन्ध्यात का शाल भावता म अथुशक्ति <sup>५</sup> । हमरिण मममन्त्रिना और मन्त्र स्वामादि उपाया का काम कमान ।।

प्राकृत व्याकरण प्रमिद्ध शाला काय (१) १ का शाला क व्याकरण अथ मिद्ध मय शाला अनुपासन म मसूत शाला और अथ भग क शाला शाला मय शाला

१ डॉ० शिन्दीय र शिन्दीय मुसगर उपास्य और शाला मन्त्र य पु १३२

२ डॉ० शाला मन्त्र शिन्दीय शिन्दीय शाला मन्त्र य पु १

३ डॉ० शाला मन्त्र शिन्दीय शिन्दीय शाला मन्त्र य पु ११

४ डॉ० शाला मन्त्र शिन्दीय शाला मन्त्र य पु ११

प्रस्तुत किए गए हैं। इनमें सस्वृत प्राकृत के गदा का ही उद्धरण दिया गया है, किंतु अपभ्रंश के पूरे पूरे दाहे उद्धृत किए गए हैं। इन गदाओं का पद्या को देखकर अपभ्रंश मुक्तक-काव्य की समृद्धि का अनुमान लगाया जा सकता है।

इनमें मृगारपरक मुक्तका में प्रायः व सारी प्रवृत्तियाँ सुरक्षित हैं जिनका विकास रीतिनायक में हुआ। मृगारक विविध पद्या का इन गदाओं में रमणीय निरूपण मिलता है।

नायिका के रूप-सौंदर्य<sup>१</sup> उसके विविध अंगों<sup>२</sup> सयोगनाचीन चेष्टाओं<sup>३</sup> रति,<sup>४</sup> विपरीत रति दत्तजन नक्षत्रत मान<sup>५</sup> विवाह<sup>६</sup> वियोग की दशाओं<sup>७</sup> सदेव प्रेषण, प्रकृति के उद्घोषक रूप<sup>८</sup> आदि के वर्णन अनक छन्दों में प्राप्त होते हैं।

### हिंदी

हिंदी साहित्य में मृगारी मुक्तका का विकास एक विंगिट रीति में हुआ। डा० रामसागर त्रिपाठी ने इस विंगिट विनाम रीति की ओर निर्देश करत हुए लिखा है कि विक्रम की १२वीं शती के अंतिम चरण में मुक्तक-काव्य जगत में हमें नई रतिविधि नई शैली और नई विचार शक्ति के दान होते हैं। यह नवीनता है अनिश्चित नायक नायिका के स्थान पर विंगिट व्यक्ति की स्थापना।<sup>९</sup> यह विशिष्ट व्यक्तित्व राधा कृष्ण या गोपी कृष्ण का है जिसका पूर्वरूप पुराणा हास की गाथाओं और औक्तिव गयपदा में मिलता है। हास की मूलशैली में राधा-कृष्ण के मृगारी रूप का वर्णन बहुत कम गाथाओं में किया गया है। औक्तिव गयपदा में अवश्य एम वर्णन प्रभूत परिमाण में प्राप्त होते हैं। डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी ने गयपदा का प्राचीनता का अनुमान करत हुए लिखा है जो ही सीता के पदवर्णन पहले नहीं लिखे जाते थे। अब स विदु जाने लग यह कह सकता तो कठिन है कि तुलसीदास की प्रथा अवश्य चल पड़ी थी।<sup>१०</sup> डा० द्विवेदी ने जयदेव के गीतगोविंद का मूलपरम्परा के गेय-गयपदा के उम प्रभूत लोक साहित्य का प्रतिनिधि माना है जो उन दिनों जमीना में पत्रबिन्दु हा रही थी।

१ प्राकृत व्याकरण ४३६६। ४३४६। तुलसी-विपरी २६०  
 २ की ३३६०। ६३३ १६ ६२४११ ४।२०।४ ४३६२।१ ४४०१।२ ४६१६।१  
 ३ कौ ६३२२।२ ४३३०।१  
 ४ कौ ४४०१।३  
 ५ कौ ६३३ १४  
 ६ कौ ६२७६।३  
 ७ कौ ६३३३।१ ४ ६५।२ ६४१६।७ ६४२१।१ ४४४४।२ ४४३६।७  
 ८ कौ ४।४ १।२ ४।४१०।५  
 ९ डा रामसागर त्रिपाठी मुक्तक काव्य-परम्परा और विपरी ५ २५  
 १० डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी रीति साहित्य पृ ११७

चण्डीनास के पत्रों में राधा का प्रतिबन्ध अधिक वाग्वत् और लाज भावना का निकट है। विद्यापति ने दरगारी काव्य परम्परा में प्रभावित उत्कृष्टपूण और रुद्रिप्रसन्न शाली में राधा का रूप वर्णन किया है।

ग्यारहवीं शती के पाठमार्गी त्रिविध मंगल के उपावनारचनितम में एक पत्र उद्धृत करते हुए डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी ने गिद्ध किया है कि जिस प्रकार राधा कृष्ण विवाह के पक्ष में राधा का विकास उदीमा और उगात आदि पूर्वी प्रायगोत्रों में उगात उगात सुदूर पश्चिम में भी होता रहा अर्थात् सम्पूर्ण उत्तर भारत में उगात में वाश्मीर तक एक पत्र का प्रचारा था।<sup>१</sup>

### विद्यापति पदावली एवं मथित साहित्य

विद्यापति हिन्दी के प्रथम कवि माने जाते हैं। ये मध्यकाल में प्रारम्भ किया था। इन्होंने संस्कृत में भी अनेक ग्रन्थों की रचना की। हिन्दी साहित्य के इतिहास में उनका उपासक शृंगारपरक पदावली का कारण विचार किया जा सकता है। प्रायः इनकी पदावली का सम्बन्ध गीतगोविन्द से जोड़ा जाता है। डॉ० विश्वनाथप्रसाद मिश्र ने जय व और विद्यापति के गीतों का अन्तर स्पष्ट करा है।<sup>२</sup> विद्यापति का जनसाधारण के प्राकृत प्रवाह में ही गीतों को मिलान करने रहने अर्थात् जयपद में गीतों की प्रवृत्ति आरोपित है विद्यापति में यह प्रवृत्ति या सहज है। कहा जाता है कि जयपद में लोक गीतों को विद्यापति ने अत्यन्त ही आदरपूर्वक रूप में उपस्थित किया जबकि विद्यापति ने उन्हें अपने स्वभाविक रूप में ही रखा। विद्यापति के एहिजातापरक गीतों में मानवीय भावनाओं की जसी धारा प्रवाहित होती है वसी ही रीतिकान्य में भी। विद्यापति के हिन्दी में जन भाषा में शृंगाररस के क्षण के लिए मर्यादा बाँधकर चाहे कृष्ण भक्त कवियों का उपकार किया हो पर वे शृंगार रस के कवियों का बहुत बड़ा उपकार कर गए।<sup>३</sup> उन्होंने शृंगारी कवियों के लक्ष्य विषय का पूरा विचार अपनी पदावली में किया है। कृष्ण-लीला के स्थान यमुना जून के गीत और वनवन के कुजा का वसा विस्तार यहाँ नहीं है जसा गीत साहित्य में मिलता है। इनके पत्रों में नायिका की शयनमधि<sup>४</sup> नरशिष्य सब स्नाता प्रेम पगग दूनी सनी नाह भाव एक सयोग वियोग की नाना भाव शशास्त्रा का विस्तृत वर्णन मिलता है।<sup>५</sup> उद्दीपन विभाव के अन्तर्गत आने वाली सखी या दूनी का नाम प्रवृत्ति के चोखनी आदि का भी मध्यात् सयोजन इन पत्रों में किया गया है। इस प्रकार निश्चित रूप से यह कहा जा सकता है कि विद्यापति का शृंगार

१ डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी हिन्दी साहित्य पृ १६६

२ प विद्यापतिप्रसाद मिश्र हिन्दी साहित्य का अतीत भाग १ पृ ११२

३ वहाँ पृ ११२

४ विद्यापति पदावली (समकाल बनीपुरी द्वारा सम्पादित) पृ ४१२६

५ वहाँ पृ २० २२८

निरूपण सवागपूण है ।

डा० रामकुमार वर्मा १ विद्यापति के राधा कृष्ण का भक्ति धारा के राधा कृष्ण से पायबन्ध निर्देश करते हुए लिखा है 'राधा का शन गन विनास उसकी वय मवि हूती का शिक्षा कृष्ण से मिनन मान बिरह आनि उसी प्रकार निब गण हू जिग प्रफार किसी साधारण स्त्रा का भीतिर प्रेम विवरण । १ रीतिशालीन कविया ने भी विद्यापति के ही राधा कृष्ण को अपने युग के अनुरूप पाया मूरगास क कृष्ण गोपीजनवत्तम क माथ-माथ लोकोपहायक भी हैं ।

विद्यापति की दूसरी विशेषता है सद्य स्नाना श्रयवा वय सधि क चर्चा और कामाद्रीपक चित्र उपस्थित करके लनिमादई और शिवमिह का मारजन करना । रीति कालीन कविया म भी यही प्रवृत्ति पाई जाती है । डा० वर्मा ने विद्यापति को मूलत बहिर्जगत् का कवि माना है ।<sup>१</sup> उनका तात्पर्य है कि जीवन और सौ दय के ब्राह्म रूप को हा कवि ने ग्रहण किया है अत उमम भावा का गहराई और अतजगत की सू म वृत्तिया का उत्पाटन नहीं हुआ है । किंतु उनसे ये विचार विद्यापति क मयोग वणन म ही लागू हान है । उनके वियोग वणन मे भावा की बडी स्वाभाविक और सरल व्यजना पायी जाती है । बिरह वणन म लानगीता की अनुगूज भी बडी व्यजक है । जहा कृष्ण प्रिया राया भारतीय गृहिणी की तरह बिरह वारिनि म आशा की डोर क महार डूब उतरा रही है । उहाँ वह वारहमास और चौमास क गीत गाती है । अपना सखी स बिरह बन्ना का निरूपन करती है । दम प्रमग म विद्यापति न लाक और गाम्भ ताना रा आ गार ग्रहण किया है । गानह्मासे म लान भीत के रूप न है<sup>२</sup> तो पटञ्जलु वणन म शास्त्रीय यवस्था ।

विद्यापति ने नए परिवर्ण म अपने पूर्ववर्ती मस्कृत प्राकृत अपभ्रं ग आदि भाषाओं के साहित्य को उपस्थित-व्यवस्थित किया । इनके पदा पर उन प्रभाव की चर्चा करने हुए महामहोपाध्याय हरप्रसाद शास्त्री ने लिखा है 'सकृत अलकारे यत किञ्चु कवि प्रीणित आछे यत चलित उपमा आछे विद्यापति ठाकुर ताहार गानगुनित समुलिर प्रतुं व्यवहार करियाछन । हानमप्लासती आर्यामप्लाता अमप्लातक शृगारगतक प्रमति सस्कृत एव प्राकृत आदिरसेर कवितागुच्छ हडत विद्यापति आपनार गानर यथेष्ट भाव सप्रह करियाछे ।'<sup>३</sup> शास्त्रीजी क उन कथन की पुष्टि म जयशान्त मिश्र ने गिबन दन ठाकुर की नीतिनता की भूमिका क अगा को उद्धृत किया ह । श्री मिश्र ने यह भी सक्त किया है कि इन उद्धरणों का दमना से स्पष्ट हो जाएगा कि विद्यापति ने अपने पूर्ववर्ती

१ डा० रामकुमार वर्मा हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास प ५६६

२ वही प ५६५

३ विद्यापति पत्रिका २ ६

४ जयशान्त मिश्र मयिनी निदरत्नर पृ १६२ ६२ से उद्धृत

कविया के माना की वहाँ तक प्रवृत्त किया है और वहाँ तक व उतग भाग बढ़ गए हैं।<sup>१</sup>

जहाँ तक रीतिनालीन कविया न गगनगण वषत श्रुतार व विविध वशा पर विद्यापति व प्रमान और भाव माध्य का प्रश्न है प्रस्तुत प्रबंध व चौथे अध्याय में उस पर विचार किया जाएगा।

विद्यापति व राधा उष्ण रीतिनालीन कविया की उत्तम प्रति व दत्ता गरी प्रपितु श्रुतार व नीतिन मान्यन है। डॉ० रामकुमार वर्मा ने इस स्पष्ट वन दृष्ट लिखा है विद्यापति ने इस महासंगार में भगवान मजरा वहाँ इस वष गति मई पर की गति वहाँ मग स्वाना म ईश्वर म जाना वहाँ और प्रतिगार म प्रति का मार वहाँ ?<sup>२</sup> विद्यापति सन्ध भवों में जीवत और मो त्य व कवि है। उनकी भी रीति वानीन के कविया की भी मजबूरी है कि व व्यापक जीवन की प्रगता जीवन मन्त्र ही चित्रकार है। जीवन और मो त्य व प्रति घातण स्वामावि है। रीतिनालीन कविया की तरह विद्यापति भी गिवगिन्त नगिमात्री, विरामत्री तरतिहत्री तथा मिथिला श्रय आश्रयतातामा के आश्रय म रह थ<sup>३</sup> जहाँ सामन्ती वातावरण म राग रग की ही प्रमानता थी। उस राग रग म विधि विपदा म रग मग होने की प्राणवा थी इसीलिए विद्यापति ने राधा के प्रेम प्रवाह म सामाजिक मशान का उपनिबन्ध कर दिया है।

विद्यापति की ही तरह भगान के प्रसिद्ध कवि चण्डीनात न भी राधा माधव की कति नीला का गान किया है। यद्यपि विद्यापति की अपेक्षा उनमें भाव-तन्मयता अधिक है किन्तु दाना कविया म श्राक स्थला पर अन्तर्गत साम्य पाया जाता है। डॉ० गति भूषणशास गुप्त ने भी विद्यापति उषडोशास गोविन्द्याम श्रांति के साथ साथ रूपगोस्वामी सुभाषित सग्रहा के अज्ञातनामा कविया और प्राटन प्रया के भुवना रा मान साम्य प्रदर्शित करके यह सिद्ध कर दिया है कि मन्वन प्राकृत प्रपभ ग की वाय धारा को विद्या पति ने आग बनाया<sup>४</sup> और विद्यापति की दरम्परा वृष्ण भक्ति धारा म सिंचित-पोषित होकर रीतिनायक आई। प्रस्तुत प्रबंध के लेखक ने मतिराम के रसरज पर टीका

१ Introduction to Kirttilata Shivanandan Thakur (Mithakavi Vidyapati with Jayadeva pp 110 114 with Amaru pp 114 123 with Govardhan pp 124 129 and Nagendra Nath Das (Vidya pati Kavyaloka pp 15 to 60) have worked out how his numerous poems echoe Sanskrit writers and how in many cases he had gone beyond them

Jayakant Misra Maithili Literature pp 162 63

२ डॉ० रामकुमार वर्मा हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास प० ५६५

३ दे डा शिवप्रसाद सिंह विद्यापति (प्र स ) प० ६

४ दे डा शशिभूषणशास गुप्त श्रीराधा का प्रेम विकास (१९५६) प १३६ ७८

करते हुए उनके छन्द से विद्यापति के छन्दों का अनेक स्थानों पर भाव साम्य दिखलाया है।<sup>१</sup>

मैथिली साहित्य का प्रभाव रीतिकव्य पर कई दृष्टियों से पड़ा। हिन्दी में लोक गीतों का प्रभाव बहुत-बहुत मैथिली साहित्य के माध्यम से गाया। जयकांत मिश्र ने इस प्रकार के गीतों को तिरहुति नाम दिया है। इनमें प्रेम का उच्चतम गान मिलता है। तिरहुति गीत मैथिली गीतों में सबसे समृद्ध है। इनके प्रणय गीतों में सयोग और वियाग दोनों अवस्थाओं का सुन्दर वर्णन मिलता है। तिरहुति गीतों में बटगमनी (प्रमिसार), गोमालरी (जिसमें वृष्ण और मापिया की प्रणय श्रींदा का वर्णन है), रास, मान और मनुहार आदि का रमणीय वर्णन किया गया है। विद्यापति की तरह उमापति के गीतों में अपनी भाव-व्यंजना के लिए प्रसिद्ध हैं। तिरहुति के श्रुतु सम्प्रदायी गीतों में चत्ता मलार (१ पावस मलार और २ धुरिया मलार) गार्हमासा और चौमासा (केवल वर्षा ऋतु में वियाग-व्यथा का वर्णन) आदि में सरल स्वामाविर भावों का अंगन मिलता है।

अप्रति हिन्दी के पूर्वमध्यकालीन काव्य ग्रन्थों और एम कवियों की कृतियों का परिचय लिया जाएगा जिनका शृंगारी काव्य धारा का आगे बढ़ान और रीतिकव्य को प्रभावित करने में महत्वपूर्ण योगदान रहा है। इस सन्दर्भ में सेतक ने उन कवियों का नाम गीपक में दे दिया है जिनकी रचनाएँ किसी एक मगह-ग्रन्थ में न होकर स्पष्ट रूप में अथवा काव्य ग्रन्थों में पाई जाती हैं।

गग कवित्त—गग अकबर-दरवार के श्रेष्ठ कवियों में था। अकबर का शासन काल साहित्य कला की अभ्युन्नति का काल था। उस समय अकबर की राजसभा में राजभाषा फारसी के साथ हिन्दी संस्कृत और अथ भाषाओं के कवियों को भी समान्तर मिलता था। यद्यपि शाही दरवार में भक्ति नीति और वैराग्यपरक कविताएँ हाती थीं किन्तु उनमें मरस अधिक रचनाएँ शृंगार की ही कही-गुना जाती थीं। श्री बटेकृष्ण ने गग कवित्त में भूमिका में लिखा है अकबरी दरवार का रण-रंग कुछ निराला था। वहाँ एक आर तो शृंगार की धारा बह रही थी—मयाग आर वियोग के चित्रण में नायक नायिकाओं के प्रेम निरूपण में नव नव परिस्थितियों एवम घण्टाओं की उदभावनाएँ हा रही थीं दूसरी ओर अकबर स्वयं पगम्बर बनना चाहता था। अतः शाही दरवार की काव्य-सरिता में दाना रंगों की मिलावट अवश्यम्भावी थी। उस दरवार

१ दे मतिराम हुत रगरात्र की टाका (चौबन्दा प्रकाशन) की पादटिप्पणियाँ।

२ The Tirahuti is the richest of all classes of Maithili songs—songs of separation as well as union. There are beautiful descriptions of the nayika her dalliance, her union with the lover and her separation from the lover, in general, every aspect of her heart is unfolded.

के जितने कवि मितत हैं सबन शृंगार की कविता की ह और गान्तरस की भी ।'<sup>१</sup>

गग की शृंगारी रचनाएँ मा उसी प्रकार रीतिबद्ध हैं जसे रीतिशालीन कविया की । यही नही रीति-कवि की प्रायः प्रत्या प्रवृत्ति गग म मिलती ह । उन्होंने दरबारी प्रवृत्ति व अनुसार आश्रयदाताया ना वग गान भी किया और शृंगार के विविध पना पर मामिन रचनाए भी की । गग ने शृंगारी प्रसगा म इतनी अधि नवीन उदभाव नाए की हैं कि सहसा उह तीन पीढ़ायाल रजिया की श्रणी म नहा बढाया जा सकता । अलहरण प्रवृत्ति की बढ़ती धारा व साथ व जरूर बहे और अतिशयोक्ति क सहारे चमत्कार भी पयाप्त उत्प व किया कि तु उनम मौनिकता की कमी न थी ।

नायिका व नखिग वणन प्रणय म कवि व सौंदर्य बोध और भाव चित्रण का अच्छा उदाहरण मितता न । उ वणन म कवि ने 'रिहारी'<sup>२</sup> को सबसे अधिक प्रभावित किया ह एसा लगता ह । नायिका का अग तीजि ही नही उसही हर विलास चेष्टा का कवि न एसा वणन किया ह कि परवर्ती कविया व व आन्दा वन गए ।<sup>३</sup> नायिका की विनाग उपाधा व प्रभाव म नायक रीतिकार्य म ही मन स हाथ नही घीते थे एग वणन तो मसृत प्रावृत्त आति माहित्या म प्राप्त हात ही हैं कवि गग ने एव छ द म एसा वणन किया ह जिनकी छाया जिनी व परवर्ती काव्या म पाई जानी ह ।<sup>४</sup>

अण्डिताया व वणन म गग मूर मनिगम रिहारी और पगावर म अदभुत साम्य ह ।<sup>५</sup> रीतिशालीन काव्या की वण्यवस्तु का जगा उपयोग गग न किया ह उम दमन दूण उगना ह कि रीतिकान की काव्य परम्परा अवरर व गामनमान म ही पापी विरगित हा चुकी थी । कवि ने अनक पुत्रक छटा म सद्य स्नाता रति पीढा आतिगन, शुम्भन मुरति विपरीत रति मुरात अण्नायिका, सगी-दूती और उनक वम पडरनु और विपोग पूर्वानुराग मान आति का परपरित वणन किया है ।<sup>६</sup>

रहीम रत्नावली एव अरव नायिका भेद—रहीम क अरव नायिका भन से रीतिशालीन कविया न प्रमून प्रभाव घटण किया है । आचार्य रामचन्द्र गुक्न ने लिगा

१ क इण्डिया काग' १ म कविग अविद्या प ३६

२ क कविग २७ मुरर वरिगा ८ ११ एग कविग मयवाय विगरी १६३ १६२

३ कवम म क न रिमाग काउ गाग काग

इति की मा गणग हाग्या हा दि म वी ॥ क कविग ३३

मुरर व मयव-अर म म व क रिगद म न ग मरिदि ।

वावक हा मी शयदि क क हा गग हा दि ॥ विहाग ३२७

४ क कविग छ ६६ मुरर व मयवाय ३६७ कविगद ६३

५ क कविग छ १६६ मुरर व मुर १ १२२ २ विहाग ६ ८ ६४ मनिगम मयवाय १२२  
कव-अर व दि ६३ ६४ की का ५१७३१

६ क कविग रिगन मयवाय १३६ ३८ १४ १६३ २१ १६ ६६

है, इनकी उक्तिया ऐसी लुभायनी हुई कि विहारी आदि परवर्ती कवि भी बहुतो का अपहर्ण करने का लाभ न रोने सत ।<sup>१</sup> रहीम के बग्व गनन स्वाभाविक रमपूर्ण और सच्चे चित्रा के लिए प्रसिद्ध है । हाल की गाथाया की सी स्वाभाविकता रहीम के बरवा म भी मिलती है ।<sup>२</sup> इसीलिए शुबलजी न हाम भारतीय प्रेम-जीवन की सच्ची भनक दखी है ।

भागवत की गोपिया की भाति रहीम की भी नायिका कुन दवता से अभीष्ट वर प्राप्ति के लिए प्रार्थना करती है ।<sup>३</sup> ललिता नायिका के चित्र रहीम और विहारी नाना के एक ही तरह के हैं ।<sup>४</sup> इस प्रकार रीतिसाल के अनेक कविया म रहीम की कविता के भाव और प्रवृत्ति पाई जाती है ।<sup>५</sup>

रहीम ने 'नगर गामा के अतगत अनक नारिया म शृगारिक वणन किया है ।<sup>६</sup> डा० सरजूप्रसाद अग्रवाल का अनुमान है कि 'गायन अत्रवर द्वारा आयोजित मीना बाजार म एक सभी वग और विविध पशा की स्त्रिया सो दयफर रहीम का इस रचना की प्रेरणा मिली हो ।<sup>७</sup> रीति कवि दव ने अपन जाति विलास म भी इसी प्रकार अनक जातिया की रमणिया का वणन किया है । सभवत उनसे जाति विलास का खोन उक्त ग्रथ ही रहा है । इनके फुटवल बरवा म कुछ म उद्दीपन विभाव के अत गत बपा " बसत हाली<sup>८</sup> तथा कुछ म रूप वणन<sup>९</sup> विग्रह-दशाया,<sup>१०</sup> सयाग की चेष्टाया और कुछ म खडिता और उपासम्म का अच्छा वणन किया गया है ।<sup>११</sup>

यदि उक्त बरवा पर मू म दृष्टि से विचार किया जाए ता इनकी प्रतिश्वन्ति रीतिकाव्य के अनक छाना म सुन पडेगी ।

१ प रामचन्द्र बका हिन्दी साहित्य का इतिहास प २ १

२ वही प २ १

मोहि बर नाग बन्देया गणउ पाय ।

बुद्ध कुन पूज देवनका ज्ञान मलय ॥ ध० ना छ० ११ तुलनीय—

रामभागवत १ । २२ । ४ मन्तराम रमराज ६३

४ आज नयन के बजरा और धानि ।

नागर नेह नवनिमा सन्नि जाति ॥ ब ना १७ तुलनीय—विहारी २८

५ द श्री मायाशंकर यादव द्वारा लिखित रहीम रत्नाकरा की भूमिका ।

६ रहीम रत्नाकरा रणरजिन दो १६२ सूकरी ३ २६ फाठिनी ३२ मिक्कीगरानी ५२ ५४, डोमनी ६७ ६८ चरी ६६ कचना ७६ सजनीगरानी ६१ ६२

७ डा सरजूप्रसाद अग्रवाल अत्रवरी अत्रवर के हिन्दी कवि प० १७२

८ रत्नाम रत्नायनी बरक ७ ८ १ १३ १७ १६ २२ २४ २६ २७ २६ ३ ४०

९ वही ४८ ६५ ६४ ६७

१० वही १२ ५३ ६३

११ रत्नाम रत्नायनी बरक छ १७ ५८ ६२ ६६ ६८ ७२ ७

१२ वही देखिए पमज छ - ७४ ४५ ५५, ८८



बीरबल 'ब्रह्म'—प्रकचरी दरबार के हिंदी कवियों में ही बीरबल का नाम महत्वपूर्ण नहीं है अपितु रीतिनालक उन पूर्ववर्ती कवियों में भी महत्वपूर्ण है जिन्होंने रीतिवाच्य को प्रेरणा प्राप्त की है। रूप चित्रण में इन्होंने भी परवर्ती रीति-कवियों की भाँति अप्रस्तुतों के द्वारा चमत्कार प्रदर्शित किया है।<sup>१</sup> डॉ० सरजूप्रसाद अग्रवाल ने इस सन्दर्भ में कहा है 'नायिका की मकटि नयन अधर बुच जप श्रान्ति अवयवा के उचित उपमानों की जुटानकर कवि मुख की वांछि की कल्पना पूर्णमा के चन्द्र से करता है किंतु नायिका के उज्ज्वल मुखभाग को उसकी वाली वेणी के आश्रित देग आश्चर्यावत् हो कह उठता है— पनग के माथ उयो पूरन पूयो को ससि ।' वेणी और मुख की सश्लेषतावस्था की यह सुन्दर कल्पना सराहनीय है।<sup>२</sup> इसी प्रकार की वेणी और मुख क्या नायिका के प्रत्येक अंग को लेकर रीतिवाच्य में भी उत्प्रेक्षा की गई है। कवि ने नायिका के अगड़ाई लहर जम्हाने की चेष्टा का वर्णन करत हुए उत्प्रेक्षा की है कि मानो त्रिलोक का जीतने के लिए कामधेनु ने साने की वधान चढाई है।<sup>३</sup> कवि ने नायिका की बिंदी, सद्य स्नाता रूप प्रेम श्रीडा विपरीत रति और नायिका भेद का वर्णन किया है।<sup>४</sup>

तानसेन—तानसेन की प्रसिद्धि का कारण इनका संगीत है। इन्होंने अनेक राजदरबारों की शोभा-वर्द्धि की। अतः मवल्लभ संप्रदाय से प्रभावित होकर कृष्ण लीला गान किया। कृष्ण की रूप भाधुरी मान मनुहार राधा प्रेम विषयक अनेक सरस गीतों की इन्होंने रचना की। शृंगारी रचनाओं में नायिका भेद और नखलिल विषयक अनेक पदा को मधुर रागा में निबद्ध किया।

इनकी राडिता नायिका के चित्र परपरानुसार ही है —

ए मरे भाग जागे प्रिय भोर ही गुधि लई ।

मैं इतनों भलो मनावत हूँ बतमा ही तुम पर बल गई ॥

अधरन अ जन महावर भाल मति गति औरे भई ।

तानसेन के प्रभु ठाढ कहो बलया लहोँ कह गई तिय नई ॥<sup>५</sup>

कवि ने होली के पदा की प्रभूत परिमाण में रचना की।<sup>६</sup> इस वर्णन रीतिनालीन कवियों ने भी बड़े मनायोगपूर्वक किए हैं।

छीतस्वामी और अष्टछाप के श्रेय कवि—अष्टछापी कवियों में छीतस्वामी के पदों में वसंत, पाग हिंडोरा मान वासकसज्जा सुरति सुरतात, खडिता आदि के

१ डॉ० सरजूप्रसाद अग्रवाल 'प्रकचरी दरबार के हिंदी कवि का परिशिष्ट' पृ० ३४८ छ २६ २६

२ वही परि प १७७

३ वही परि पृ० ३४६ छ २६

४ वही परि पृ० ५ ५१ छ ३४ ५३

५ वही प ४ ७ छ० ११५

६ वही छ १५१

## रीतिकाल के उपजीव्य

पद विशेष रूप से रीतिकाल के प्रेरणा स्रोत सिद्ध हुए हैं।

इस प्रकार के पद कुमनदास मूरदास परमानन्ददास कृष्णदास चतुर्भुजदास, गोविन्दस्वामी आदि की रचनाओं में पर्याप्त परिमाण में मिलते हैं।

डा० दीनदयालु गुप्त ने अष्टछाप की मधुर भक्ति के वर्णन में शृंगारभाव के भिन्न भिन्न रूप और अवस्थाओं का सम्यक् विवचन करते हुए यह सिद्ध कर दिया है कि गोपिया का जीवन की उच्च अवस्था में कृष्ण में साक्षात् कामदेव दिखाई देता था और व्रज पर आने वाली अनेक आपत्तियाँ संघबराई अवस्था में व उस एक अतुल शक्तिशाली रक्षक के रूप में देखी थी। गोपिया कृष्ण के रूप और गुण दोनों पर मुग्ध थी। सौंदर्य और शक्ति इन दो गुणों में अष्टछाप भक्ता ने कृष्ण के सौन्दर्य में आकर्षण को अधिक चित्रित किया है।<sup>१</sup>

डा० गुप्त ने परमानन्ददास के काव्य का विवेचन करते हुए उनसे शृंगार प्रेम, पूवराग प्रेमानुभूति सभी मिलन संधोष विषाण प्रवृत्ति चित्रण आदि का पूण वर्णन विवचन किया है।<sup>२</sup> विस्तार में से यहाँ प्रत्येक अष्टछापी कवि के शृंगारी-वर्णना का विवेचन नहीं प्रस्तुत किया जा रहा है। संकेत रूप में इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि इन कवियों ने शृंगार वर्णन को भक्ति का एक साधन बनाया किन्तु उसका उद्दीपक मासल रूप नितांत लौकिक है। पीछे कहा जा चुका है कि रीतिकालीन भक्ति-काव्य का स्वाभाविक परिणाम है। डा० सावित्री मिह्रा ने राधावल्लभ-संप्रदाय की मधुर उपासना में स्थूल भाव चित्रण का आरंभ करते हुए लिखा है अष्टछाप के कवियों की अपेक्षा पूर्वमध्यकालीन राधावल्लभ संप्रदाय के कवियों की रचनाओं में मासल स्थूलता और लौकिकता अधिक है।<sup>३</sup>

कवित्त रत्नाकर—सनापति भक्तिबाल के प्रतिम खेदे के प्रसिद्ध कवि हैं। इनके अनुपलब्ध ग्रंथ काय कल्पद्रुम में कायशास्त्रीय निरूपण का अनुमान किया जाता है। दूसरा ग्रंथ कवित्त रत्नाकर कवि द्वारा स० १७०६ में किया गया स्वरचित मुक्तक छंदों का संग्रह है। इसमें भक्ति विशेषतः रामभक्ति और प्रकृति भक्ति आदि के साथ अलङ्कार शैली में शृंगारपरक छंदों की कविता का रूप दृष्टिगत होता है। शृंगारी वर्णनों में कवि ने बहुत कुछ रूढ़ परंपराओं का आश्रय लिया है। अलङ्कार-चमत्कार और बलासिद्ध भावात्मन में कवि रीतिकालीन कवियों की वृत्ति का पूरा प्रतिनिधित्व करता है। लक्ष्य है, रीतिकाल के पूर्व ऐसे फुल्ल शृंगारपरक छंदों की

१ दीनदयालु (विद्याविभाग काजरीनी) अष्टछाप जमश १९५५ ५६ १७ ६२ ६५ १२५ १५७ १५९ १५९ १६ २ १७

२ डॉ० दीनदयालु गुप्त अष्टछाप और वर्तमान-संप्रदाय पृ ७ ७

३ वही पृ ७ ७ ७३८

४ डॉ० सावित्री मिह्रा वर्तमान के कृष्ण भक्ति काव्य में अभिव्यक्ति का पृ २३६

पर्याप्त रचना हुई होगी जिसका सुस्पष्ट रूप कवि सेनापति व कवित्त रत्नाकर के छंदों में दिग्दर्शक पड़ता है।

इसमें सरली का नायक स नायिका विरह निवेदन करत हुए उसे अभिमान के लिए प्रेरित करना<sup>१</sup> नायिका की रूप गोभा क साथ साथ हृदय पर पड़ने वाले प्रभावा का अंकन<sup>२</sup> वय सधि,<sup>३</sup> वियोग दशा<sup>४</sup> अज्ञिता वचन<sup>५</sup> आदि के वर्णन तो मिलते ही हैं साथ ही परकीया की उक्ति—

‘कहा ऐसी चतुराई, पड़ी आप जदुराई।

आगुरी पकरि पहुँचा की पकरत हो।’<sup>६</sup>

का रीतिकालीन कवि विहारी की नायिका की उक्ति से साम्य देखा जा सकता है। इसी प्रकार त्रिया का पत्र प्राप्त कर नायिका की प्रमातिगपमुख चण्डाभा<sup>७</sup> और त्रिया विदग्धा नायिका की चतुराई<sup>८</sup> आदि के वर्णन भी रीतिकार्य के तदभिप्राय छंदों में मिलते जुलते हैं।

सेनापति क क्रतु-वर्णन में प्रवृत्ति के आत्म्यन और उद्दीपन दोनों प्रकार के रूपा का अंकन हुआ है। इन क्रतुया में सुगद और दुगद नामों द्वारा प्रारंभ की सामप्रियो की चर्चा प्रायः परंपरा मुक्त होती में पाई जाती है। श्रीधर-वर्णन में त्रि की दृष्टि सामंती भोग वृत्ति के उद्घाटन की ओर अधि रती है।<sup>९</sup> उनमें श्रीधर शत्रु में माधता की दिनचर्या का जगा वर्णन मिलता है रीतिकार्य में भी इस ही चित्र प्राप्त हात है।

### प्रदास्तिपरक (संस्कृत)

प्रदास्ति काव्य मूलतः वह काव्य है जो अपने आश्रयता की तुष्टि के लिए उमक गुणा की प्रशंसा में रचित हा। सामाजिक विज्ञान योग राज प्रदास्तिपरक गुणवा का आति गीत वला क नरागी मूक्तिया और तानम्युतिपा का मानन है। ‘छन्द म राजा माय स्वलय कुरगव राजा और गुणाग का प्रशंसा प्राप्त होती है। इस उक्त राजाया की तानगीतता का अतिरिक्त वर्णन पाया जाता है। इस अंतर्मात्र किया जाता है कि श्रुतिपा न इन गुणिया की रचना किमी लगी राजा या मजमान की

१ सेनापति कवित्त रत्नाकर (प्रमाण मन् १६१६ ई.) २।८६

२ वही १७-१२ २।२४ २४

३ वही २।२६ २०

४ वही २।१६ २३ ३८

५ वही २।११ ३३ ४१

६ वही २।१० अक्षरीय विभाग ३ ३

७ वही २।६ अक्षरीय विभाग ७६

८ वही २।१८ अक्षरीय विभाग ७२

९ वही २।१० १३ १४ १०-२० २।१६

प्रगसा म की है।

लौकिक मान्दित्य म राज-मृतिया म उदाहरण रूद्रामन और समुद्रगुप्त के गिनालेखा म भिन्नत है। इसी दीघ परगण हरिण और वातागमट्टि की प्रगस्तिया म भी भिन्नी है।

कुछ विद्वाना का भा है कि कालिदास ने इन्दुमती स्वयवर के समय राजाओ ने परिचय दन म इसी प्रगस्ति गली का प्रयाग किया है। किन्तु वास्तविक रूप स उस प्रगस्तिवाच्य नही माना जा सकता क्योंकि प्रगस्ति का स्पष्ट वाच्य हाता है कि राजा ता प्रगस्ति गान करके वन्दन म पुरस्कार प्राप्त करना।

प्रगस्तिवाच्य का अधिकांश निर्माण गणितमिक् काव्य तथा या चरित नाम्या क भाष्यम स हुआ। एस प्रया म बाणभट्ट का हारचरित बाणतिराज का गउरुहो पद्यगुप्त (परिमलगुप्त) का नवगाहमात्रचरित वितहण का विप्रमानकदवचरित मध्याहरनदी का रामचरित वल्हण की गजतरगिणी, हमचद्र का द्वयाथय वाच्य तथा कुमारपालचरित जयानक (जयगध) का पञ्चीररज विधान, सोमस्वर का कीर्ति कौमुदी, अरिसिंह का मुरतसकीतन त्रयसिंह गूरि का हम्मौरमदमदन मफान की प्रवर्धाचितामणि राजनेपर का चनुविगतिप्रपद्य चद्रप्रमगूरि का प्रभावक रित गगादबी का कपराय चरित जर्गसिंहगूरि, चरितमुत्तरगणि तथा जिानगोप, एक एक ही गोपक क तीन त्रय कुमारपालचरित जिनहपगणि का तन्तुग। रित, जयचद्रगूरि का हम्मौर महावाच्य, धान-दमट्ट का वल्लालचरित गगाधर पडित का मडलीक महावाच्य और राजनाथ का अच्युतराजाम्बुदयवाच्य आदि उल्लस्य हैं। उपयुक्त प्रया म स कुछ म ता गतिहासिर इतिवत्ति की प्रधानता है और कुछ म किसी एक राजा का जीवनचरित। इनम प्रगस्तिवाच्य के उत्तर पूण परिमाण में प्राप्त होते हैं। उक्त प्रया क रचयिता अधिकांश राजाश्रय म रहने वाले कवि है। उन्होंने अपने आश्रयता के पूर्व पुरुषा का जीवनवत्त लिखत हुए उनकी प्रगस्ति की है।

इन प्रगस्तिया म कवि परिपाटी क अनुसार कीर्ति की शुक्लता, गन्तु की अप कीर्ति की कानिमा प्रताप की रक्ताण्णता और शोध या अनुराग की लालिमा का बणन किया है।<sup>१</sup> इसी प्रकार स्वामिप्रसादनाथक काव्या म शास्त्रीय चरितकाव्या की परिपाटी का पालन भी किया गया है जैसे राजा, राजवध, पुराहित, राजकुमार आमात्य सेनाधिप आदि के बणन क साथ साथ राजा की कीर्ति उसका प्रताप दुष्टा का दमन विवेकपूण धमपरायणता विजय-यात्रा, युद्ध शास्त्राम्यास, यायक्षमता, प्रजा प्रेम गन्तुआ का राय म अभाव एक उनका छिपतर गिरिकदरागा म निवास और भय स उनका जागरण करना आदि का बणन। राजा की उत्तारता, धय, गभीरता, शीघ्र, एदक्य और उद्यम का भा काफी बयन किया गया है ता परपरा-समयित है।<sup>२</sup>

१ शुक्लत्व कीर्ति, आदो काव्य चाकीर्तिवाच्य।

प्रताप रक्ताण्णता रक्ताण्ण भाधरागयो ॥

—कविचलाचन १।१।४७

२ देवेश्वर कविचलाचन १।१।२४

कविनिष्ठा विषयक पुस्तक 'कविकल्पलता' में दशस्वर १ राजा दशरथ का वर्णन किया है जिसमें अनुकरण पर उद्दान प्रशस्ति-वर्णन का भाग दर्शाया है।<sup>१</sup> दशस्वर १ राजा के आराध्यगुणा की विस्तृत सूची दी है जिस दर्शाया गया है कि यदि क पूर्व प्रशस्ति वर्णन में राजा क इन गुणा का वर्णन किया जाता रहा होगा। इस सूची में प्रायः वे सभी गुण द्या गए हैं जिनकी कल्पना एक राजा क लिए हो जा सकती है।<sup>२</sup>

इसके अनुसार राजप्रशस्तियों में राजा की दायीं-पता गुणरता घोर युद्ध वीरता का वर्णन होता है। सस्कृत महाकाव्या घोर गदगा क घ्राणि घोर कानहा अत में आण श्लोका में राजस्तुति गिनती है। आध्यायक में मुरारि कवि न दमी परिपाटी का पालन किया है।<sup>३</sup>

यद्यपि ये श्लोक प्रबंध के अंतगत आते हैं किंतु सूत्र कथावस्तु में उनका कोई संबंध नहीं होता। श्रीहृष ने नवघरित के एक दशा में कागी-वर की युद्ध वीरता एवं उनके अर्था की प्रबलता का वर्णन किया है।<sup>४</sup>

प्रशस्तिवाच्य की 'मूल प्रवृत्ति के परिचय हेतु कुछ प्रथा का उत्पन्न आवश्यक प्रतीत होता है।

राजेन्द्रकण्ठ—महाकवि राम श्रीहृषदेव (१०८८ ई०-११०० ई०)के आश्रित थे। इन्होंने इस ग्रंथ में कुल १६ श्लोका में श्रीहृषदेव की प्रशंसा और ४२ श्लोकों में काशमीर की शोभा-संपन्नता का वर्णन किया है। प्रस्तुत ग्रंथ क मगनाचरण में स्पष्ट होता है कि उस समय शृ गारी प्रसंगा की शृ गारेतर काव्या में भी जिस सीमा तक योजना होती थी।<sup>५</sup>

आश्रयदाता की कीर्ति की ध्वलिमा की स्थापित का वर्णन तथा उनके गुणों की उल्लेखालंकार के प्रयोग से जसी प्रशंसा शम्भु कवि ने की है परवर्ती कवियों में भी उसका अनुगमन किया।<sup>६</sup> सबगुणसंपन्न राजा की यश कथा सुनने में दत्तचित्त रमणियों और श्रीहृषदेव के स्मरण मात्र से कामदेव की विजय आदि का वर्णन कवि ने अलङ्कृत शली में किया है।<sup>६</sup>

१ देवेचर कविकल्पलता १।१।१६

२ वही २।३।१८-२४

३ मुरारि अक्षर्यराधक १।३४

४ श्रीहृष नवघरित १।१।१२७

५ काव्यमाता गुच्छक प्रथम प २२-३४ नि सा प्रम बम्बई

६ ब्रह्मस्यर्षि कितिघरमुनाअ नगावकनाय भूवादभूत्य तव हरशिर धङ्गरो रोति गीत ।

य निष्पीडय स्तनमुखनक्षोलेजरेजास देया सभोगाने विनरनि सहास्यदमर्धेभोलि ।

७ रा क श्लोक ४

८ वही श्लोक ७

९ वही १२

राजा के गुणोत्पन्न व साथ ही उसके पराक्रम से परामृत शत्रुघ्ना की दुदशा का वणन करते हुए कवि ने प्रशस्ति परिपाटी का मध्यक निवाह किया है।

राजा व भूमारवहनवर्ता हान व कारण कवि ने पौराणिक भमारवाहका की निश्चित करत हुए लिखा है, 'राजा श्रीरूपदेव समस्त पथ्वी का भारवहन करत हैं, अतः पथ्वी व भार धारण से मुक्त शपनाय कूम एव दिक्कुञ्जर मय आन न बनायें ।'<sup>१</sup>

इस ग्रंथ में प्रशस्ति वणन की परंपरा व निवाह का परिचय मिलता है।

भोजप्रबन्ध—भोजप्रबन्ध में राजा भाज की कीर्ति की घबलिया का अत्युक्तिपूर्ण वणन किया गया है।<sup>२</sup> एवं 'लाक' में कवि ने भोजराज के राज्य में दो हा चीजा की कमी बतलाई है—एक शत्रुघ्ना के लिए लौह शृंखला, दूसरे ताम्र के शासनपत्र।<sup>३</sup> राजा भाज की दानशीलता के आतंक से पावतीजी अपने पुत्र गजमुप की रक्षा कर रही हैं कि अथ हाथिया के साथ उन्हें भी दान न कर डालें।<sup>४</sup> जिस दानी राजा भोज से भट हाना का वन पूवजन्म कृत तप या सौभाग्य का फल माना है उमी प्रन्तर विहारी न भी राजा जयसिंह से भेंट होने को सौभाग्य का फल माना है।<sup>५</sup> भोज प्रबन्ध में भाज की शत्रु बुद्धि की दुदशा का वणन तथा उनके सौंदर्य आदि गुणा की प्रशंसा की गई है।<sup>६</sup> लक्ष्मणसेन के दरवारी कवि घोषी ने पवनदूत में लक्ष्मणसेन व शोष, दानशीलता और गुणवता व वणन व साथ उनकी गन्तु-रमणिया की दुदशा का भी इसी प्रकार निर्देश किया है।<sup>७</sup>

यहां यह स्पष्ट कर देना आवश्यक प्रतीत होता है कि प्रशस्तिपरक मुक्तक अधिकांश प्रबन्ध काव्य के अतगत आन वाले वे स्फुट छन्द हैं जिनकी प्रबन्ध व पूर्वापर संबंध की उतनी अपेक्षा नहीं है जितनी कि प्रबन्ध-काव्य के लिए होनी चाहिए अतः उन्हें एक दृष्टि से मुक्तक कहा जा सकता है। प्राणामरण और भावविलास मुक्तका का संग्रह मात्र नहीं है उसमें आश्रयदाना की यश गाथा का निरन्धन होने के कारण एक दूसरे छन्द का संबंध जाड़ा गया है। फिर भी कथा-मूत्र का विगणन व घन न हाने से उन्हें मुक्तका के अतगत ही रक्ष लिया गया है। इसी प्रकार विद्यमानकवचरित और गडडरहा मूलतः प्रबन्ध काव्य हैं किंतु उनके राजप्रशस्तिपरक छन्दस्वरूप से अपना अभीष्ट अर्थ बहन करते हैं और परवर्ती हिन्दी मुक्तका के द्योत कहे जा सकते हैं इसलिए प्रबन्धातगत हाने

१ रा० व १६

२ भोजप्रबन्ध श्लोक ७६ ८२ ८३ तुलनीय पद्याभरण २१२

३ वही १६२

४ निजानपि गजाभोज दयान प्रथम पावती।

गजद्वन्द्वेन पूव रक्षयद्य पुन वृत्त ॥ वहा १६७ तुलनीय-पद्याभरण ज वि ७ ०

५ भोजप्रबन्ध १६५ तुलनीय विहारी १६७

६ भोजप्रबन्ध १७२ १८२ तथा ३१६

७ घोषी पवनदूत पत्रांक ५५ ६५ तथा ५६

पर भी उन रत्न की महा मूर्तियों के सम्भ्रम पर्याप्त की गई है।

विश्रमांकदेवचरित—विलक्षण १ राजा १ माथय म पत्नी यात्र कविता का महत् प्रतिपादित करा हुआ निम्न<sup>१</sup> जिम राजा १ दरबार म धन<sup>२</sup> रवि महा है उसका यग रम पत्र साता है ? इम परी पर एम न ताा जिनन राज महाराज हुए पर उताा राम वा<sup>३</sup> नती जानता ।<sup>४</sup> धर्मान् राजा का धर्मो यग का चिरस्थायी बनान के लिए रविधा का पापण कराा जाहिण । इमीतिण उटे-बढ प्रतापी राजा जन्धि रपी रगना को धारण करा यानी पथ्वी १ स्वामी होकर भी जिम रवि के रूपा क जिना स्मरण भी नही किए जान उस कवि १ महान कम का नमस्कार किया जाता है ।<sup>५</sup> धन कवि केवल राजा का गिनो<sup>६</sup> और उम लात्र गीति तथा गारप्रतीति का पाल ही नगा कराता था अपितु उसक यग को चिरस्थायित्व भी प्रदान करता था । रावण की कीर्ति का सकृच्चिन होना और राम की कीर्ति का दिगन्तव्यापी होना कवि बाल्मीकि की कृपा का फल है । रवि की रूपा को प्राप्त करने के लिए धार्मिकता का यह पुनीत तत्त्व था कि वह कवि का प्रसन्न रग ।<sup>७</sup>

प्रस्तुत प्रथम प्रशस्ति वणन की छडिया का सम्बन्ध पानन किया गया है । चरितनायक विश्रमांकदेव की विजय यात्राया का तो विस्तृत वर्णन है ही साथ ही चानुवग वग की प्रशसा<sup>८</sup> गन्धु वधुया की दुदगा<sup>९</sup> कीर्ति की प्राप्ति<sup>१०</sup> चालुस्यवर्गीय राजाया की तलवार की प्रशसा<sup>११</sup> तलप राजा की प्रशसा<sup>१२</sup> ग्यसिहदेव की प्रशसा<sup>१३</sup> ग्राहवमहन क पुत्र विश्रमांक देव क पराक्रम<sup>१४</sup> गुणवता<sup>१५</sup> एव दानगीरता<sup>१६</sup> और उाक हाडिया और

१ पृथ्वीपते सन्ति न यस्य पार्श्वे

नवीश्वरास्तस्य तुतो यथासि ।

भूया विद्यन्ता न वमनस्यो

जानाति नामापि न कोपि तयाम् ॥ विर १।२६ तुल -वाव्याकरण १।५

२ भजवतनरन्नाया धर्मा निषव्य महौजसा

जलधिरक्षनामेदियाःसीत्यावकुतोभया ।

स्मद्विमपि न त यान्ति दमाया विना पत्तुषह

प्रहृतिमहते बुभस्तस्म नम कविकमण । राजतरंगिणी

३ विर १।२७

४ वही १।२८

५ वही १।२९ १।१ ४६

६ वही १।६०

७ विर १।६१

८ वही १।६८ ६९

९ वही १।८०

१० वही ३।६८

११ वही ३।७१ ५।३१

१२ वही ४।३५ ४।१४ १५

घोडा की भी प्रणामा की गई है।

विद्यापति — विद्यापति न केवल शृंगार वगण की परंपरा का ही हिस्सा म श्रीगणेश नहीं किया था अपितु अनेक आश्रयता विविध और उक्त छोटे भाई पदमगिह की पत्नी विद्यामन्दा और उर्दी व तुन क राजा नरमिन्द्य उपनाम 'दशनारायण की अनेक प्रशस्तियाँ लिखकर प्रशस्ति की परम्परा का भी निर्वाह किया है। य प्रशस्तियाँ प्रायः उक्त आश्रयतागण की आत्मा म विरचित प्रणाम स्थान पर उपनिबद्ध किए गए सूचक छत्रा म हैं।

निर्वाह क गौय की प्रणामा<sup>१</sup> उनकी 'गणनीयता'<sup>२</sup> आदि का वगण क विन परपरित गली म किया है। विद्यामन्दा की प्रशस्तियाँ 'गण मत्स्यगार म और नरमिह दस की प्रशस्तियाँ दुर्गामन्वितरगिणी और दानवारयावना म लिखे हैं।<sup>३</sup>

प्राणामरण<sup>४</sup> — प्रस्तुत प्रथम म पत्तिराज जगन्नाथ न रामरूप रण क नामक प्राणनारायण की प्रशस्ति निबद्ध की है। 'गला बंधी ही मनोहर और अतृप्त है। कवि कहता है = शीरगागर<sup>५</sup> भाहात्म्य का मैं परावधि हूँ यमीरता का घर और रत्ना का पिता भी हूँ मरे समान रम भवन म दूसरा कौन है ?' ऐसा साचर सहस्र शब्द क अक्षर म न पडो। तुम्हारे समान था प्राणनारायण भी है। 'आश्रयता की कीर्ति की विराटता प्रतिपादित करते हुए कवि कहता है = राजन ! मत्स्य की विपत्तियाँ का तुम नाग करत हा और तुम्हारा वैभव अपार है' ऐसा भूषण की उक्ति का म तुम गव उरता क्याकि तुम्हारी प्रिया कीर्ति इस छोटे स अक्षरों रूपी भांड म अपड उन्नत अथा की समेत्तर बड़े बट्ट स निराम करती है।<sup>६</sup> वह उक्त गुणगणा का वगण करता हुआ प्राणनारायण की चित्त-वृत्ति का निरूपण करता है — दीना पर दया शत्रुघ्ना पर नित्यता काव्यालाप म मधुरता तक क उत्तर म ककगता धम मे लोभ, धन म त्याग और परविपत्ति म कातरता धारण करने वाली नुम्हारी चित्तवृत्ति बड़ी रमणीय है।<sup>७</sup> इसी प्रकार पत्तिराज न आमफविलास म नवाव आसफियाँ क गौय गण और युद्ध वीरता का वगण किया है। काव्यमाला म इसकी कुछ ही पक्तियाँ प्रकाशित हैं।

जगन्मरण म पडितराज न गहजही क कलाप्रिय उन्नत और दानी पुत्र दाराशिकोह का वगण किया है। काव्यमाला म यह अर्थ प्रकाशित है।

काव्यशास्त्रीय प्रणाम अक्षरारा क उदाहरणस्वरूप अनेक राजप्रशस्तियाँ भी

१ दे ही उमम मिथ विद्यापति ठाकुर प २५ पर उद्धृत 'शकशवस्वमार के शता'।

२ का काना खयाने बनकमयतुनापुष्पी यन दत्त। —करी

३ द० ही उमम मिथ विद्यापति ठाकुर प ५ पर उद्धृत उक्त प्रथम क श्लोक।

४ काव्यमाला गच्छक प्रथम प ७६६ निगणतापर प्रथम बम्बई

५ प्राणामरण श्लोक ५

६ वही श्लोक ६

७ वही, श्लोक २३



की गई हैं। वीररस के उदाहरणों में भी कभी-कभी किसी प्रशस्ति काव्य में छन्द उद्धृत मिलता है। इनके अतिरिक्त सुभाषित संग्रहों में राजा और राज परिवार के गाय साय सना, कीर्ति दानगीलता आदि के भाव छन्द मिलते हैं।

सिद्धहमचन्द्र गणानुशासन में हमचन्द्र न प्रत्यक्ष पाठ के अन्त में अपने आश्रय दाता राजा सिद्धराज जयसिंह के प्रशस्तिपरक छन्दों को रखा है। इन प्रशस्तियों का पढ़ने से आश्रयदाता की कीर्तिगायनवृत्ति पर काफी प्रकाश पड़ता है।<sup>१</sup>

## भाव विलास

प्रशस्ति काव्या में इसका उल्लेखनीय स्थान है। इसमें कुल १३६ पद्य हैं। जयपुर के महाराज भार्वांसिंह के दरबारी कवि 'यायवाचस्पति' रत्न न ग्रथ के आरम्भ में राजा भार्वांसिंह (१७वीं शती) के पितामह भगवानदास का एक श्लोक में वणन किया है। तदुपरांत दो पद्यों में उनके पिता भार्वांसिंह की प्रशस्ति है और चौथे पद्य से सत्रहवें पद्य तक भार्वांसिंह की उदारता दानगीलता युद्ध वीरता सौंदर्य आदि गुणों की अत्युक्तिपूर्ण वणना है।

## प्राकृत अपभ्रंश

गजद्वयहो — वाक्पतिराज ने प्रस्तुत ग्रथ में यशावमा की प्रशस्ति तथा उनका युद्धो और विलास वीरभोगों का वणन किया है। रण प्रमाण के समय चारण-कचो-द्रा के द्वारा यशोवर्मा की प्रशस्ति का जसा उल्लेख प्रस्तुत ग्रथ में मिलता है<sup>२</sup> रीतिकाल्य की प्रशस्तिपरक रचनाओं में उसकी अनुगूज मुनी जा सकती है। रीतिकालीन कवियों ने उन्हीं प्रशस्ति वणन की रूढ़िया का प्रयोग किया है जो प्रशस्तिपरक एतिहासिक काव्यों में पूर्ववर्ती कवियों द्वारा प्रयुक्त किए गए हैं। गजद्वयहो में निबद्ध प्रशस्ति उस युग की काव्य प्रवृत्ति के स्रोतक है जिसका आश्रय परवर्ती कवि चन्द ने अपने ग्रथ में पृथ्वीराज की प्रशस्तियों में लिया है। प्रस्तुत ग्रथ में बीच-बीच में एस स्थल प्रवृत्ति और परम्परा की तुलना के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। इनमें राजा के प्रताप सौभाग्य और गुणों का अतिशयोक्तिपूर्ण श्लोक में वणन मिलता है।<sup>३</sup>

प्राकृत पगलम्— प्राकृतपगलम् में चण्डेश्वर काशिराज, राजा वण और

१ यद्दोमण्डनकुण्डनीहृद्यधनुष्यन सिद्धाधिप-

कीर्त वरिभुलात त्वया किल दनलुन्नावदात यग ।

भ्रान्त्वा स्त्रीणि जगति धन्विषश्च तन्मातृवीना व्यधा-

दापाण्यौ स्तनगण्डल च धवले गण्डस्थले च स्थितिम् ॥

-विश्वहर्मवर्णनानुशासनम् प ४ श्लोक १ तथा प १७७ श्लोक १ ४

२ गजद्वयहो छ स २१२ ५४

३ श्लो ६६५ ७३७ १०४ ४३ १ ६६-७२

हम्मीर आदि के प्रशस्तिपरक छंदों का सकलन मिलता है। उक्त राजाभो-सामन्ता की यश घबलिमा शत्रुभो का भयभीत होना सेना प्रस्थान और युद्ध वीरता का अत्युक्ति पूण वणन किया गया है।<sup>१</sup> डा० शिवप्रसाद सिंह न रीतिकालीन कवियों-भूषण सूदन, सोमनाथ और लाल के प्रशस्तिकव्य की प्रेरणा का निर्देश करते हुए लिखा है कि प्राकृत पगलम की वीरप्रशस्तियां म के सभी रुढ़ियां दिखाई पड़ने लगती हैं जिनका परवर्ती विकास रासो का-या म तथा भाग चलकर भूषण सूदन, लाल आदि कविना को ब्रजभाषा रचनाभा म दिखाई पड़ता है।<sup>२</sup>

### हिंदी प्रशस्तिपरक मुक्तको का जन्मविकास

हिंदी म प्रशस्तियां अधिकांशत रासो ग्रंथों म है। इनम उस प्रकार की चाटुकारिता और शरणकामना की वृत्ति नहीं दिखाई पड़ती जसी रीतिकव्य म मिलती है। आदिकालीन रासो ग्रंथों क नायक वास्तव म वीर योद्धा होत थ, माथ ही विलास वृत्ति भी उनम पर्याप्त हाती थी। वे अधिकांश युद्ध किसी रूपवती रमणी को हस्तगत करने के ही लिए करत थे। इसलिए इन ग्रंथों मे गीय शृंगार का अदभुत सम्मिलन दृष्टिगोचर होता है।

आचार्य गुक्ल ने हिंदी के आदिकाल के कवियों के विषय म लिखत हुए कहा है राजा भोज की समा म खड होकर राजा की दानशीलता का लम्बा चौड़ा वणन करके लाखों रुपय पान वाने कवियों का समय बीत चुका था। राजदरबारा मे ग्रास्त्रार्थों की वह धूम नहीं रह गई थी। पांडित्य क चमत्कार पर पुरस्कार का विधान भी ढीला पड गया था। उस समय तो जो नाट या चारण किसी राजा के पराजय विजय शत्रु कया हरण आदि का अत्युक्तिपूण आलाप करता था रणक्षत्रा म जाकर वीरों के हृदय मे उसाह की उमगें भरा करता था वह सम्मान पाना था।<sup>३</sup> यद्यपि गुक्लजी का कथन काफी हद तक सही है किन्तु पृथ्वीराज रासो के अद्वानव समय म निवद्ध दुर्गा केदार और चंदबरदाई म का यप्रतिद्वंद्विता की घटना उस बात का प्रमाण है कि उस समय भी राज दरबारा म कविना और नाटो म अक्सर हाड टुआ करती थी और उनका काय विषय शृंगार प्रधान ही होता था।

आदिकाल म प्रशस्तियां की परम्परा अधिकतर प्रबंध काव्यों या प्रबंधात्मक मुक्तककाव्यों म पाई जाती है। ये प्रबंध-काव्य जसा कि पहल कहा जा चुका है अधिकांशत राजाश्रय म निर्मित हुए हैं। हिंदी म भी सस्कृत प्राकृत ग्रन्थों की काव्य

१ प्राकृत पगलम ११२३, १११०८ ११७७ ११८७ ११६२ ११६६ १११४५ १११४७ १११५१  
१११८० २११८३

२ डॉ० शिवप्रसाद सिंह मूरपूव ब्रजभाषा और उसका साहित्य प० ३७६

३ आचार्य रामचन्द्र गुक्ल हिन्दी साहित्य का इतिहास पृ० ३०

परम्परा के अनुसार राजाओं की कीर्ति को अमर बनाने के उद्देश्य से ही प्रशस्ति-वाक्या का निर्माण हुआ। प्रशस्तिपरक मुक्तका की रचना अधिकतर चारण भाटो द्वारा हुई जा साहित्य का स्थायी निधि तो न बन सकी किन्तु उत्तम प्रशस्ति की प्रवृत्ति को प्रोत्साहित अवश्य किया। आठवीं नवीं शताब्दी से ही राजदरबारों में चारण भाटों की स्थिति का पता चलता है। डॉ० शम्भूनाथ सिंह ने कवि मुरारि के पद्य को उद्धृत करते हुए इस अनुमान की पुष्टि की है और लिखा है कि यदि मुरारि का स्थिति वाल आठवीं नवीं शती मान लिया जाय तो यह स्पष्ट होता है कि उस समय से लोक भाषा में प्रशस्तिगान करने वाले चारण भाटों को दरबारों में सम्मान मिलने लगा था। वस्तुतः चारणों की प्रशस्तियाँ संस्कृत प्राकृत में प्रशस्तिमूलक ऐतिहासिक चरित कान्यो का ही विवक्षित रूप हैं। इस प्रकार हिंदी में चारण भाटों की वृद्धि देखकर यह उक्ति सही लगती है कि ब्राह्मण के मुख की कविता कछु भाट लई कछु चारण लीही।

इन भाटों और चारणों की परम्परा में पृथ्वीराज रासो का रचयिता चंद्रवरदाई भी आता है। पृथ्वीराज रासो में पृथ्वीराज की वीरता, दानशीलता युद्ध-वीर्य, रण प्रस्थान नीति कुशलता आदि का विस्तृत वर्णन मिलता है। इस श्रेणी में चौहानों की वृत्त उत्तराद्ध में रचित श्रीधर कवि कृत रणमल्ल छन्द नल्लसिंह कृत विजयपाल रासो भी मूलतः रासो आदि प्रथम उल्लेख्य हैं।

करण का बीजन के तीन प्रतिष्ठ प्रथम परणामरण श्रुतिभूषण और भूपभूषण में मूलतः प्रशस्तिपरक मुक्तका से अपूर्ण अलंकारों के उदाहरण लिए गए हैं। हरिवंश राय के आश्रित हालराय ब्रह्मभट्ट के पुटवल पद अक्षर के दरबारिया में व्यास कवि, राजा पृथ्वीराज गंग खानखाना आदि की रचनाएँ हिंदी प्रशस्ति धारा को समृद्ध करती हैं।

गंग कवि न अक्षर के अतिरिक्त जहाँगीर रहीम राजा मानसिंह बीरबल, दारिया राजा रामनाथ राजा जगन्नाथ अमरनाथ दरारवाली तुरान खाँ आदि की प्रशस्तियाँ निरद्ध की हैं। रीतिकालीन कवियों के अग्रज आचार्य काव्यशास्त्र में बीरसिंह और जहाँगीर की प्रशस्तियों की रचना वीरचरित और जहाँगीर जतचंद्रिका में की है। सम्भवतः उत्तम प्रथा की प्रेरणा में परमात्माने हिम्मातहादुर निरालवा और प्रशासित निरालवा की रचना की।

### भक्तिपरक मुक्तका का परिचय

रीतिकाल में उगार के बाद अनेक अधिक प्रशस्त और भक्ति परम्परी मुक्तक मिलते हैं। प्रशस्ति मुक्तका का विभाग जिन प्रकार के निरालवा मूल्य और शान-श्रुतियाँ में उतर एतहागिता अद्ध-निहागिता काव्य प्रथा माल-आरणा के मौरिग और विभिन्न मुक्तका में जाता हुआ रीतिकाल में आता उगा प्रशस्त मूल्य या भक्तिपरक मुक्तका का भी विभाग मूल्य वरिण दया की श्रुतियाँ में जाता जाता है।

वष्णुव ऋष्याभिव्यक्ति की श्रु गारी परिणति की चर्चा करत हुए दूसर अत्र्याय मे दिखलाया जा चुना है कि किस प्रकार भक्ति की मूल भावना शक्ति और एदव्य क प्रति मय और आण की कामना स श्रद्धा क रूप म परिवर्तित होकर विकसित हुई । कमहाण्य प्रदान धार्मिक कृ या के जगन मे विवरती हुई भक्तिधारा शक्ति और मानसिक आकषण का केन्द्र बनकर अपन जीवनप्रण प्रवाह से एक आर मानव मन को आनादत करती हुई एव दूसरी ओर शरण कामना की परिर्तित करती हुई दक्षिण स उत्तर की ओर आई । उसका यह आगमन विदेशी आत्रामयो से वस्त निराशाच्छन् उत्तरी भारत के लिए विजली की चमक की तरह आरस्मिक नही था अपितु वैदिक लौकिक साहित्य साधना का स्वाभाविक विास था । इस धारा न आनाल, नामदेव, रामानंद कवीर आदि सता जयदेव विद्यापति, चण्डीनास, सूरनाम तुनसीदाग आदि सगुणोपासक भवता और कविया का रससिक्त किया ।

रीतिकव्य म भक्तिपरक मुक्तरक दो प्रकार के प्राप्त होन हैं एफ म सता नी सी सुधारात्मक पासण्ड विरोधी धाणी की अनुगूज मिलती है और दूसरे मे आराध्य दवी-देवताआ की ऐश्वय-सम्पन्ता भक्तवत्सलता और गदमुत शक्ति का निर्देश करत हुए अपन को दीन और अनाय के रूप म चित्रित किया गया है ।

आराध्य की विलास चटाआ नखशिव्य और रूप माधुरी का वणन स्तोत्र साहित्य म पयाप्त मात्रा म पाया जाता है । इन स्तात्र मुक्तका का प्रारम्भ ऋग्वेद की उन स्तुतिपरक ऋचाओ स माना जा सकता है जिनम देवताआ की लोकोत्तर महता और उनस लौकिक एव पारलौकिक सुख भाग की याचना प्रकट हानी है । इन स्तात्रो म आराध्यदेव के रूप मे ब्रह्मा विष्णु और महृग का स्तवन ब्रह्म के रूप म किया गया है । इनके साथ ही प्रकृति या माया का सयोग एक महत्प्रपूण घटना है डमी आधार पर परवर्ती स्तोत्रा मे शिव के साथ शक्ति की भी उपासना हाने लगी और वात् म इनका स्वतंत्र विकास परामानागत के रूप में हुआ ।

इन स्तोत्रा का विकास प्रबन् और मुक्तरक दोनों रूपो में हुआ । पीराणिक स्तात्रा में शिव, विष्णु शक्ति आदि की उपासना विकसित हुई । सासागिक यत्रणाओ स त्राण और अपवग की सिद्धि के लिए अनेक भक्ति-भावित रचनाएँ हुई जिनमें धाणमट्ट का चडीगतक माननुग का भक्ताभर स्तोत्र मपूर का मूयगतक आदि उलम्बनीय हैं ।

इन स्तोत्रों में अनेक स्थाना पर काव्यात्मक उक्तिया, अलकार और उक्तिवक्रना भी पयाप्त मात्रा में पाई जाती है ।

जगदगुरु शंकराचार्य के नाम स भी अनेक स्तात्र प्राप्त हान हैं जिनमें अनकृत गली में दवताआ की स्तुतियाँ निबद्ध हैं । लगना है विभिन्न शंकराचार्यों म समय-समय पर इन स्तोत्रा की रचना की हागी । विष्णु पात्रादि के गात वणन स्तोत्र में एक और भक्ति भाव और दूसरी ओर नखशिव के वणन की परम्परा मिलती है । सम्भवत इस स्तात्र की रचना ईसा की ७ वी गती में हुई हागी ।

शंकराचार्य विरचित भवायाट्टक और आनंद लहरी नामक स्तोत्र काव्योत्कप

और सरस अलकृत शाली के लिए प्रसिद्ध हैं।

कुछ स्तोत्र ऐसे भी हैं जिन पर तापिन प्रभाव स्पष्ट लक्षित होता है। दुर्वास प्रसिद्ध प्रणीत 'ललितास्तवरन' और त्रिपुर महिम्नस्तोत्र इसी श्रेणी में आते हैं। इनमें त्रिपुरसुन्दरी के रूप सौन्दर्य और वस्त्राभरण का अलकृत वर्णन किया गया है। दक्षी के ध्यान विषयक पद्यों में परवर्ती साहित्यिक नक्षत्रिण वर्णन की परम्परा के साथ जुड़े जा सकते हैं। लकेश्वर रावण के नाम पर प्रसिद्ध शिव ताण्डव स्रोत में आराध्य के सर्वांग सौन्दर्य का वर्णन है। प्रसाद गुणयुक्त पद्यांश में शिव पावती की विलास-लीला का भी इसमें चर्चा मिलती है।

जनों द्वारा रचित तीर्थकरो की स्तुतियाँ छोटी शतांश चौदहवीं शताब्दी तक पर्याप्त परिमाण में मिलती हैं। इनमें शिव चमत्कार और उक्ति वक्रता की प्रवृत्ति लक्षित होती है। यमक अनुप्रास और श्लेष का सुन्दर समाजन अलकृत शाली की व्यापकता को घोषित करते हैं।

बौद्ध स्तोत्रों की रचना कनिष्क के राज्यकाल में प्रभूत परिमाण में हुई। मातृचेता (मातृचेत ?) और अश्वघोष के स्तोत्र इसी समय विनिर्मित हुए। काश्मीरी कवि सवज्ञमित्र ने बौद्ध देवी तारा की वदना में लक्ष्मण स्तोत्र की रचना की। काव्यात्मक अभिव्यक्ति की दृष्टि से उक्त ग्रन्थ का स्थान अप्रतिम है। इन स्तोत्रों में एक और अलकृत शाली का विवास और दूसरी ओर आराध्य के नक्षत्रिण चित्रण की वृत्ति का प्राधिक्य लक्षित होता है।

पूर्ववर्ती स्तोत्र साहित्य की प्रेरणा से हिन्दी में शिव विष्णु पावती, लक्ष्मी, चण्डी दुर्गा गंगा यमुना कृष्ण राधा आदि अनेक देवी देवताओं की स्तुतियाँ का मुक्तक पद्यांश में निबद्ध की गई हैं। प्राकृत पद्यमय में भी अनेक छन्द ऐसे मिले हैं जिनमें शिव<sup>१</sup> कृष्ण<sup>२</sup> उमा<sup>३</sup> चण्डी<sup>४</sup> और राम<sup>५</sup> की भक्ति प्रतिपादित है।

यहाँ भी यह ध्यान देने की बात है कि रीतिकान्य में देवताओं के शृंगारी रूप चित्रण में हान की सतसई की उन गाथाओं का पर्याप्त प्रभाव माना जा सकता है जिनमें पावती शवर,<sup>६</sup> गोपी कृष्ण<sup>७</sup> राधा कृष्ण<sup>८</sup> और लक्ष्मी-नारायण<sup>९</sup> की विलास-लीलाएँ

१ प्रा ५ ११९६ २१६ २११ २१२४ २११४८ २११२५ २१२ १

२ वही ११२ ७ २१४६

३ वही २१८

४ वही २१२४ ६६ ७७

५ वही २१२११

६ हाल गायामन्जरी १११ ६६ २१४८ २५ ७१०

७ वही २११२ १४ २८

८ वही ११८६

९ वही २१५१

निवृद्ध हैं। इससे साथ ही सस्कृत प्राकृत और अवध श के उन ग्रथा का भी स्मरण करना आवश्यक है जिनमें मगलाचरण व नोको में देवताप्रा क शृ गानी रूप को निवृद्ध किया गया है। भक्तिपरक मुक्तका का गीता के उपदेश से पर्याप्त प्रेरणा मिली है। उसी प्रसिद्धि प्राचीन काल में पाई जाती है। श्रीकृष्ण के दीन वत्सल, अशरण शरण और लोक रक्षक रूप की प्रतिष्ठा श्रीमद्भगवत गीता में हुई। उसका आधार पर कवि अपनी दीन अवस्था का वर्णन करता हुआ अपने को पापिया में अग्रगण्य घोषित करता है और भगवान से शरण की याचना करता है। वह उन्हें अपने विरुद्ध की लाज रत्न का विवश करता हुआ चुनौती देता है। इस द्वारा म भगवान क लोक मंगलकारी रूप की पूजा प्रतिष्ठा हुई है।

भक्तिपरक मुक्तको में भगवन्नाम महिमा<sup>१</sup> अथ य भक्ति हरिविमुख निदा<sup>२</sup> और सत्सग महिमा<sup>३</sup> व साथ चान बैराग्य<sup>४</sup> का भी प्रतिपादन किया गया है।

यदि ध्यान से देखा जाय तो रीतिसिद्ध और रीतिवृद्ध दोनों प्रकार के कविया ने भक्तिपरक रचनाएँ पर्याप्त मात्रा में की हैं।<sup>५</sup>

### नीतिपरक मुक्तको का नर्मावकास

सस्कृत में नीति मुक्तका का विशाल भांडार उपलब्ध होता है। इस प्रकार के मुक्तका को सुविधा के लिए तीन श्रेणियाँ में विभक्त किया जा सकता है। पहली श्रेणी में अयोधिन मुक्तका आते हैं जिनमें अमर, कोविन काग वश आदि क व्याज से उपदेश दिए गए हैं दूसरी श्रेणी में व मुक्तका आते हैं जिनमें नीति या उपदेश की बातें सरल सीधी भाषा में कही गई हैं और तीसरी श्रेणी ऐसे मुक्तका की है जिनमें ससार को माया मिथ्या सिद्ध करके सासारिक भोगों की निंदा की गई है तथा त्याग-वैराग्य का उपदेश दिया गया है।

सस्कृत में मल्लिक की अयोधिनया प्रसिद्ध हैं जिनमें प्राकृतिक उपादानों को प्रतीक के रूप में चित्रित करके मानव जीवन के अनुभूत सत्या को प्रकट किया गया है। ऐसी ही मार्मिक अयोधिनया का मगह शय वीरवर मट्ट कृत 'अयोधिनगतक'<sup>६</sup> है। इनमें वमन अमर जुगनू चदन, हाथी समुद्र चंद्र कमलिनी, पवन, मडक नदी कीर और काक आदि पर अयोधिनया निवृद्ध हैं।<sup>७</sup> एक श्लोक में कवि लवगलतिका से कहता है,

१ सुरमागर २।५८

२ वही २।६१२

३ वही २।१ १६ तुलसीदास-राधामाहिन चान का जाहिन भावन नह ;

परियो मृगा द्वार दम ताका आखिन खह ॥ म म० ६

४ वही २।१७

५ विनारी दो० म ४७५ ४३४ ५५२

६ अयोधिनगतक काव्यमाना पञ्चमगुणक नि० सा प्रम बम्बई।

७ वही वनो० २३ ३६ कमल २ ११ १७, २२ २४ ३७ अमर ६ १० जगनू १८ २० चदन,

'हे लवगततिके तुम मन में सताप न करो, सोचरीति बड़ी कठिन है। सारी रसशता समाप्त हो गई कलाप्रा का भी अंत हो गया। उस मृगाक्षी मालिन को छात्रकर दूसरी कौन तुम्हारे गुणा को जानने वाली है।' इस गली में नीति उपदेशपरक मुक्तका की पर्याप्त रचना हुई। सामग्रम की अ याकियाँ भी भरलट की तरह प्रसिद्ध हैं।

बोद्ध और जैन साहित्य में महापुण्या व उपत्या और नीतिपरक उक्तियाँ पाई जाती है। इन अनुभवपूर्ण मुक्तका में स्वाभिमान त्याग, सहनशीलता, उदारता आदि सदवक्तिया और सज्जना की प्रशंसा के साथ असदवक्तियों का त्याग और दुजगो की निन्दा के वर्णन मिलते है।

प्राकृतपद्यम के स्फुट छंदा म नीतिविषयक छंद भी निबद्ध है। इसमें यह स्पष्ट लक्षित होता है कि शास्त्रीय यथा म भी भक्ति प्रशस्ति और शृंगार की तरह ज्ञान वराग्य और नीतिपरक उक्तिया भी स्थान स्थान पर निबद्ध की जाती थी।<sup>१</sup>

हिन्दी म भी नीति विषयक मुक्तका की परम्परा अभुष्ण रही है। आत्काल और पूर्वमध्यकाल मे अनेक ऐसे कवि हुए जिहोन अपन का यो म नीतिपरक छंदा का निबधन किया है। इनमें कबीर तुलसीदास मनुकदास वृद्ध आदि प्रसिद्धि प्राप्त कवि और सता की गणना की जा सकती है। इनकी परम्परा अपभ्रंश कविया--जोइन्दु रामसिंह आदि से जोड़ी जा सकती है। रहीम के दोहो म जीवन का यापक और गहरी दृष्टि से दलने समझन का सक्त मिलता है। राजा टाडरमल नरहरि ब्रह्मभट्ट बीरबल गग आदि इसी श्रणा व सिद्धहस्त कवि हैं।

रीतिकाल म विहारी जस रीतिसिद्ध काँव और मतिराम, मिखारीदास एव पद्याकर जैसे रीतिवद्ध कविया की रचनाप्रा में नीतिपरक छंद स्थान स्थान पर आए हैं।<sup>२</sup>

२५ हाथी २६ २० सम २६ ३२ ३३ ६८ चन्द्र ३० कमनिनी ३४ पवन ३५ मडक ३८ ननी ४६ और ४ काक।

१ कौ २१

२ प्रा प १।२ ६ स्वभाव की दुवारता २।२० ५१ ५३ स्वाश्रया की स्वाधपरता २।८३ धर्मतीवरील २।८५ १४३ नीति की स्थिरता २।११ १ कीर्ति की प्रबलता २।१३ ३ पाप से निवृत्ति २।१४६ परापकार प्रशंसा २।१८६ द्वय महिमा १।१६६ १।१७१ छन निन्दा।

३ विहारी ४७६ ४८६ ५ २ ५१८ ५३२ ६३१ ६३३ ६३५ ६५४ ६५८ ६६६ ६८६ मतिराम मतिराम हलमर् ६३ ६४ १६२ १८५ भिखाराम का० नि ३।५२ ५३ ७।६ ८।४८ ८।६२ ६८ ८।७ ८।७४ ८।७६ ८।८४ ८।८६ ८।८६ ६।७७ १२।११ १४ १२।२६ १२।३१ १३।८ १३।२६ १३।३१ १३।४६ १४।११ १४।१३ १४ १४।२६ २७ १४।६ १४।२८ २६ १४।३५ ३७ १४।४ ५१ १४।४३ ५४ १७।४३ ४४ १८।६ १ ११।३१ ३८ १३।६७ २ १७।२ २ १७।६ १४।६ पद्याकर पद्यामरण २४, ८६ ६ ८२ १ ४ ११।११२ ११५ ११७ १५५ १६० १६६ १७१ १७३ १७४ १८१, २ ५ २०८ २१० २१७ २२८ २३० २३३ २५७ २६३

नाटक

सस्कृत के नाटको म शृगार रम के सयोग और वियोग दाता पशो का अच्छा चित्रण मिलता है। समृतन नाटका की इसी रमणीयता को दृष्टि म रखकर शायद कहा जाता है कि काव्यपु नाटक रम्यम अर्थात् कायो मे नाटक रमणीय होता है। इन नाटका म प्राय नायक नायिका के रूप लावण्य, नखशिल, हास-परिहास श्रीडा विनोद, मान मनुहार और प्रवृत्ति की उद्दीपक पष्ठभूमि म उनके सयोग सुख और विरह-वदना का मार्मिक चित्रण हुआ है। इन नाटका की लोकप्रियता इतनी बडी कि काव्यशास्त्रीय ग्रथा म लक्षणा के उदाहरणस्वरूप नाटका क भी श्लोका को पयाप्त मात्रा म उद्धृत किया जान लगा। सस्कृत के महाकाव्या की तरह नाटका म भी वीर शृगार और कही कही शात रस का परिपाक दृष्टिगत होता है। परिमाण और गुण की दृष्टि से शृगार प्रधान नाटक हा अधिक रचे गए।

रीतिकान्य की वण्यवस्तु की दृष्टि से यदि इन नाटका की विवेचना की जाय तो प्राय साम्य दिग्गलाई देगा। उदाहरण के लिए कतिपय प्रसिद्ध नाटको की चर्चा प्रासंगिक होगी।

स्वप्नवासवदत्ता—प्रस्तुत नाटक म भास कवि ने उदयन-कथा को बडी कुशलता स निबद्ध किया है। उदयन की प्रेयसी वासवदत्ता विरहावस्था मे अपने को धिक्कारती हुई कहती है चकई धय है जो प्रिय से विमुक्त हाकर नही जीती। मैं प्राण त्याग नही कर पाता। आयपुत्र क दग्ना की लालसा से मैं जी रही हूँ।<sup>१</sup> वियोग म पुनर्मिलन की आशा का वणन अनेक कविया ने किया है। रीतिकान्य मे तो इस आशा क सहारे नायिकाआ की विरह व्यथा का अत्युक्तिपूण वणन करत हुए भी उस जीवित रसा गया है।

कामदेव क पाच वाणो की सख्या को लेकर रीति कविया ने भी इसी भाव के वणन किए हैं जसा भाम ने उदयन के मुख स कहलाया है।<sup>२</sup> प्रसिद्ध पचवाणा के अति-रिक्त छोटे वाण की कल्पना बडी व्यजग है। प्रस्तुत नाटक म विवागी उदयन की स्मरणगा,<sup>३</sup> स्वप्नगान<sup>४</sup> आदि का परपरित वणन प्राप्त होना है।

अभिज्ञानशाकुन्तलम—महाकवि कालिदास की प्रौढ प्रतिभा का जसा निदशन प्रस्तुत नाटक म शृगारी प्रसगा के निरूपण म हुआ है वसा अयत्र नही। इसम शकुन्तला की रूपशामा,<sup>५</sup> विलास चेष्टा<sup>६</sup> आदि के अकन और उनक व्यापक प्रभाव के निरूपण म

१ स्वप्न (विवेचन सस्कृतनिगोत्र ११ १९११ ई ) प २६

२ वही ४१

३ वही ४१६ ४१६ ६ ६१

४ वही ४१०

५ अ० शा० (गुरुप्रसाद शास्त्री संपादित स० १९६० वि०) १११० २२ ६११ १० ।

६ वही ११२४ २६ २१२ २ ७ ३११०



कवि को पूरा सफलता मिली है। गणिका व सौन्दर्यांशय का निर्दोष करने की रूढ़ परिपाटी का आश्रयण दृष्टिगोचर होता है।<sup>१</sup> यह न मन्नाख्या की कथा करी हुए श्री ७मी उद्भावनामा की ओर संबन्ध किया गया है।

स्थापना राजा दुष्यन्त की मानसिक स्थिति<sup>२</sup> उसने पुनराग<sup>३</sup> धातुतमा व रागाविष्ट वित्त की वृत्तिया का उदघाटन मुषा की मन्त्रा विमिश्रित विनाग धेष्टामा का चित्रण<sup>४</sup> राजा की विन्हावस्था,<sup>५</sup> धातुलता की विरह<sup>६</sup> गा<sup>७</sup> उपायमूष उसका प्रेम पत्र लगन<sup>८</sup> सयाग म लजा भययुक्त उगरी धेष्टा<sup>९</sup> प्रिया सम्पत्-स्यत्, पुम्नना<sup>१०</sup> जय आन द<sup>११</sup> और विषोयी राजा का प्रिया की चित्र रचना द्वारा मनो वितो<sup>१२</sup> आदि परवर्ती प्रमपरा काव्या व प्ररणा-न्योत बने इमम यमय नहीं। ससृष्ट, प्राकृत और अपभ्रंस काव्य माहित्य को कालिदास की रचनामा ने पर्याप्त प्रभावित किया और कालांतर में उसकी प्रतिष्ठा छाप हिन्दी की रीति रचना के सुवनक छटा पर भी पड़ी। इमकी पुष्टि माहित्य परम्परा व अध्ययन से सहज ही हा जाती है। कालिदासाय उपमा की प्रतिष्ठा स रीतिकालीन कवि भी अपरिचित न रहे होगे परिणामत उनके अप्रस्तुत विधान म भी गणिका के साहित्य की प्रेरणा कम महत्व पूरा नहीं मानी जा सकती।

विश्रमोवशीय—प्रस्तुत नाटक म महाकवि कालिदास ने पुरूरवा और उवरी के प्रणय का वणन किया है। इसमें स्वशाजय सावित्र माय रोमाच, अभिलाष, रूपा सक्ति सर्वानिशायो रूप शोभा, दक्षिण-भवन की नम श्रीडा प्रमदवन की उद्दीपक शामा वसन्तश्री की वय सवि आदि के वणन म शृंगार और उसने विविध पगा का सम्यक निरूपण किया गया है।<sup>१३</sup> राजा पुरूरवा की रागावस्था के निरूपण के साथ

१ चित्त निवन्धन परिकल्पित सकयोगान्  
रूपोन्वयन विधिरा विहिता वृशांगा ।  
स्वीग्लमष्टिपररा प्रलिभाति साम  
धातुविमरकमनुचित्व वपुर्वव तस्या ॥ ध शा २।१

२ वही १।३६ २।१८ ५।२

३ वही २।१ ३

४ वही २।१ ३

५ वही ५।८ ६ ११५ ३।२२ ६।५ ६

६ वही ३।१ १८ ५ १२५ १३८

७ वही ३।१६

८ वही ५० १४६ ५२

९ वही ३।३३

१० वही ६।१५ २१ २४

११ काविकास विश्रमोवशीय (चो स० सिरोज १६५३ ई०) १।११ १।१८ २।२७, २।१, ४।१६ १७ २२ ३० ३४

उद्यान म छिपकर उसकी दशा का निरीक्षण करने वाली उवशी व भी समानुराग का वणन किया गया है। उवशी के प्रणय पत्र लेखन और पुस्त्रवा के उम पत्र की प्राप्ति के कारण उद्दीप्त भाव का भी वणन परंपरित शली म किया गया है।<sup>१</sup> परवर्ती नाटका, मुख्यरूप से नाटिकाया म एसे प्रसंग कई वार वर्णित हुए हैं।

राजा पुस्त्रवा की महिषी श्रीशीनरी का उवशी के प्रणय-पत्र को प्राप्त करना, राजा पर कुपित हाना और राजा का उमके चरणा पर गिरकर क्षमा माँगना उस प्रसन करना<sup>२</sup> आदि का अय नाटिकाया व धीर ललित नायका और उनकी प्रमुख रानिया के वणना म रूढिवत् प्रयोग किया गया है।

राजा की विरह अवस्था<sup>३</sup> उवशी का अभिसार<sup>४</sup> मान<sup>५</sup> एव पुस्त्रवा का अपने विरूपक के साथ वार्तालाप का वणन<sup>६</sup> कवि कालिदास की शृ गारी प्रसंगा के निरूपण की प्रतिमा का चोतक है।

जसा कि पहले वाल्मीकि रामायण मे विरही राम को लतागुल्म से सीता के विषय म पूछते हुए चित्रित किया गया है उसी प्रकार विरही पुस्त्रवा भी मयूर नीलकण्ठ कोयल, हंस भ्रमर गजराज पवतराज एव हरिणा से अपनी प्रेयसी का पना पूछता है। इसक साथ ही वह उवशी व अपूव सौदय का भी सवेत करता चलता है। राजा व नदी का प्रणय कुपिता उवशी मानकर उसके मनुहार और लता का कलहातरिता उवशी मानकर उसके वगन पर कवि ने जमे विरह चित्रित किए हैं<sup>७</sup> के रीति काय क कविया के प्रेरणा स्रोत माने जा सकते हैं। वियोग के पदचात् सयोग मुज की तीव्रता का भी वणन किया गया है।<sup>८</sup>

इस प्रकार प्रस्तुत नाटक म कालिदास ने शृ गार के दोना सयोग और वियोग पक्षा का सफल अ वन किया है। यद्यपि कवि ने उवशी की रूप शोभा के वणन मे अनेक नवीन उदभावनाएँ की है फिर भी अधिनाश उपमान परंपरित और रूढ हैं।<sup>९</sup>

**मालविकाग्निमित्र**—मालविका और अग्निमित्र की प्रणय कथा बहुत कुछ भास की वासवदत्ता और उष्यन की कथा स मिनती-जुलती है। विदिशा नरेश अग्नि मित्र मालविका के वृत्य को दत्तकर उसकी प्रशसा करता है। वह उसकी विलास

१ कनिष्ठा विरभावशील० मिराज १६५५ \*०) २।१२ १५

२ वही पृ ८५ ८६ २।२१

३ वही ३।५ पृ १५३

४ वही प १ ७

५ वही पृ १३६

६ वहा ३।१ ११

७ वही ५।२० २१ २४ २५ ३१ ३३ ३६ ४७ ५।४२ ८। ४६ ४६ ५१ ५८ ६०

८ वही ५।४२ ५५ ५।६६

९ वही ५।६६

१ वही ५।२२ ३० ३ २४

चेष्टाओं से आकृष्ट हो जाता है।<sup>१</sup> इस प्रसंग में कवि ने राजा और मानविका के पूजा नुराग,<sup>२</sup> और मन नेत्रा और कामदेव के प्रति विरही के उपालभ<sup>३</sup> और मनयानिल वमत का उद्दीपक रूप<sup>४</sup> रानी इरावती का ईर्ष्यामान<sup>५</sup> मातविका का चित्र विनोद उसकी लज्जाशीलता<sup>६</sup> मान मनुहार,<sup>७</sup> रतिमय<sup>८</sup> और राजा अग्निमित्र का मानवती रानी इरावती को प्रसन्न करने का प्रयत्न<sup>९</sup> वर्णित है।

कालिदास के प्रस्तुत नाटक का प्रभाव परवर्ती नाटक नाटिकाया पर पर्याप्त मात्रा में पाया जाता है।

रत्नावली— प्रस्तुत नाटिका में भी हृषदेव ने सामंती वातावरण में अतः पुर के प्रणय-व्यापार का सफलतापूर्वक अंकन किया है। यद्यपि रत्नावली भी स्वप्नवास मदता की तरह उदयन तथा परमाधत है किन्तु इसमें शृंगारात्मक स्थलों की पूर्ण विवर्ति प्राप्त होती है।

इसमें वसंत का उद्दीपक प्रभाव<sup>१०</sup> वासवदत्ता की सुन्दरता<sup>११</sup> सागरिका का पूर्वा नुराग<sup>१२</sup> सागरिका सौन्दर्य<sup>१३</sup> प्रणय मान<sup>१४</sup> खटिता वासवदत्ता का प्रसादन,<sup>१५</sup> उदयन की विरहावस्था,<sup>१६</sup> प्रथम समागम प्रिया की प्रतीक्षा चन्द्र का उद्दीपकत्व विभ्रलघा सागरिका का अनुनाथ वासवदत्ता का गुरुमान<sup>१७</sup> आदि व वर्णन में सयोग वियोग व धन की रुद्धिया का पूर्ण पालन किया गया है।

प्रियदर्शिका— इस नाटिका की भी वही कथावस्तु है जो रत्नावली की है। अन्तर केवल नामिकाया व नाम में है। वहाँ सागरिका है तो यहाँ प्रारण्यका (प्रिय

१ कालिदास मानविकाग्निमित्र (वी. म. मिश्र १८२१ ई०) २१२ ४ २१६ २११

२ वही २११ पृ० ८४

३ वही ३११ २ एव पृ० १०१ १०३

४ वही ३१२ ३१८-९

५ वही पृ० १२६ १३१ ३४

६ वही पृ० १६३ एवं ४१८

७ वही ४१६ १०

८ वही ४१३ १२

९ वही पृ० १८४ ८६

१० श्रीरामचन्द्र रत्नावली (वि. मा. म. शर्मा) १११ १८

११ वही ११९

१२ वही पृ० ३१ ३४ एवं २११

१३ वही २१८ १२ २११

१४ वही २१६

१५ वही २१६

१६ वही ३१३ ४१३

१७ वही ३१४ ३१६ १४ ४११

दर्शिका) । इनमें आरण्याका और उन्मयन का प्रथम मिलन एक उद्यान में होता है । कालिदास के दुष्यंत की तरह यहाँ राजा उन्मयन तत्परातः सनायिका का दखकर उसके सौंदर्य की प्रशंसा करता है । शकुन्तला की भाँति प्रियदर्शिका को भी भ्रमर समूह उद्विग्न करत हैं ।<sup>१</sup> इसमें भी रत्नावली नाटिका की तरह, नायक और नायिका के पूर्वानुराग,<sup>२</sup> गुप्त मित्रता वामवदत्ता के ईष्यामान<sup>३</sup> मनुहार<sup>४</sup> और अन्त में रत्नावली की ही भाँति वासवदत्ता का प्रसन्न होकर प्रियदर्शिका का हाथ राजा को सौंपने का वणन किया गया है ।

नागानन्द—श्यामीर जीमूतवाहन की कथा यद्यपि अन्त में पयवसामी है फिर भी श्री हृषदेव ने प्रस्तुत नाटक के प्रथम तीन अंश में जीमूतवाहन और मलयवती की प्रणय कथा का वणन किया है ।

प्रस्तुत नाटक में जीमूतवाहन के प्रति आकृष्ट मलयवती का गौरीपूजन और वर प्राप्ति<sup>५</sup> पूर्वानुराग<sup>६</sup> जीमूतवाहन की विरह-व्यथा<sup>७</sup> मलयवती के कामल अंग की प्रशंसा<sup>८</sup> मलयवती का मूढात्व सन्तुष्ट चञ्चल और उमकी मुक्त गोमा<sup>९</sup> के साथ प्रकृति का उद्दीपक वणन भी परम्परित गली में किया गया है ।<sup>१०</sup>

श्री हृषदेव की रचनाश्रावण अन्वयन से यह स्पष्ट होता है कि वे कामल प्रणय के कुतूहल शिल्पी हैं । कहीं कहीं राजमहारा के आंतरिक गुप्त प्रणय नीलाश्रावण चित्रण में रीतियुगीन सामंता के अन्तःपुर का सा चित्र उपस्थित कर दिया है । इनका उन्मयन नागरक वृत्ति का सच्चा प्रतिनिधित्व करता है । यद्यपि इन नाटकों में प्रेमाख्यानक काव्य के बीज सुरक्षित हैं पर इनमें उन साहित्यिक रोमांचक घटनाश्रावण का अभाव लक्षित होता है जिनका परवर्ती हिन्दी प्रमाख्यानका में विकास हुआ है ।

मालतीमाधव—मधुभूति का यह प्रकरण मालती और माधव की प्रणय कथा पर आघत है । इसमें शृंगार प्रधान किया कलाश्रावण और हाव भावा का मुद्गर वणन मिलता है ।

१ श्रीहृषदेव प्रियदर्शिका (नि० सा प्रेम चम्बई) २७०

२ वही पृ १६२३

३ वही ३११ १५ ५३

४ वही ५११

५ श्रीहृषदेव नागानन्द १११६

६ वही पृ ६ १५ ४४

७ वही २१२ ५० ४६ २१६ ५० ५२

८ वही २१४ तुलसीदास शृंगार मालवि ६१५ अथवा ४१

९ वही ३१६

१० वही ३१० ११ १३

११ वही ११५

माधव व पूर्वानुराग<sup>१</sup> माननी व सो दय<sup>२</sup> प्रथम दानत्रय घनुमात्र<sup>३</sup> विरह  
विरलता,<sup>४</sup> उद्दीपन उगाय-यागु<sup>५</sup> मकर<sup>६</sup> और मन्थतिरा की विरहास्या<sup>७</sup> मयाग  
कालिन नायक नायिका की गष्टाघा<sup>८</sup> विषाग म मय-मन्थ<sup>९</sup> प्रिया-पण<sup>१०</sup>, घाति वा  
परम्परित वगण प्रस्तुत नाट्य म भी प्राप्त होता है ।

हनुमानाटक— रीतिराव्य म शृंगार प्रधान घनकृतानी की प्रभावित  
करन मे संस्कृत व जिन प्रमुग नाटका की वर्णा की जानी है उनम हनुमानाटक या  
महानाटक का स्थान अत्यंत है । यद्यपि प्रस्तुत नाट्य म वीररम मुख्य है पर तु कवि  
को जहा वही भी शृंगारिन प्रमया व वणन वा अद्यमर मित्त<sup>१</sup> उगत पूरी तमयता  
दिसलाई है ।

हनुमानाटक का द्वितीय अथ दाम्पत्य जीवन व शृंगारी चित्रा म आरूप है ।  
चन्द्रोत्प होने पर मानिनिया के मान मय वा वणन काव्य रक्ति है । कवि म मनारम  
गली म इसका वणन करत हुए लिया है आज भी उत्तु ग स्तन गिगरा से मुक्त हृदय  
वानी रमणिया म भान रहना चाहता है धिरार है । यह (च<sup>२</sup>) अघनी दूर ता  
फलन वाली विरणा से प्रफुल्ल कुमुद ममू<sup>३</sup> म व<sup>४</sup> रहन वा न भ्रमरा को निराल रहा  
है जस सफे<sup>५</sup> वी<sup>६</sup> म कानी तलवार निकाल रहा हो ।<sup>७</sup> कही-कहा प्रकृति पर मानवीय  
भावा का आरोपण दखकर महाकवि कालिदास की वणन गली या<sup>८</sup> हा आती है ।<sup>९</sup>

इसी प्रसंग म राम और सीता व मयाग शृंगार के अगत मारिज और  
सचारी भावा प्रणय मान आलिंगन चुम्बन अररपान घाति वा वणन कामगात्रीय  
मर्यादा के अनुसार किया गया है ।<sup>१०</sup> राम और सीता के उद्दाम समोग भीडा का कवि

१ मानतोमाधव (वी स० गिरीज १६१४ ई ) १११८ २०

२ वही ११२१ ११३

३ वही ११२७ २६ ३११६ ४१२

४ वही ११२१ ३२ ५ ६२ ६७ ११२७ ११४१ ५ ६३ ६४ २११ ४ ३१३ ५ ३१६ १

५ १४५ १७ ६११७ २३ ६१४६ ४८

६ वही ५ १३ ११२

७ वही ११८ ५१८ १ ५ ३२४ ३

८ वही ७१२ ८११ ३

९ वही

१० वही ६१२७ २६ ३ ४४

१ अद्यापि स्तनतु मशस्तकिञ्चदे सीमतिनीनां हृदि

स्यातु वाञ्छति मान एष धिगिति त्रोधान्तिवालाहित ।

उच्चरुत्तरप्रभारितकर वपयमो तत्त्वाणा

त्वन्मकरवक्रोशनिरुददिधिया कपाण शशी ॥ हनु २१५

११ हनु २१६

१२ वही २११० १८ द्रष्टव्य कामसत २१३१६ ७

ने वैविध्यपूर्ण वणन किया है।<sup>१</sup>

परिपुष्ट प्रेम की भूमिका प्रस्तुत करा के अनन्तर प्रस्तुत नाटक के पञ्चम अङ्क में अथहता सीता के वियोग में राम की मार्मिक व्यथा का सफल अङ्कन प्राप्त हुआ है।<sup>२</sup> सीता का सदश लेकर लौट हुँ हनुमान जिस प्रकार सीता की वियोग व्यथा का वणन करते हैं इस प्रकार के वणन रीतिकार्य की दृष्टियाँ भी करनी हुई पाई जाती हैं।<sup>३</sup>

कपूर रमजरी—प्राकृत के इस सुप्रसिद्ध सट्टक में शृगार का जगमग परिपाक दृष्टिगत होता है।

प्राकृत भाषा में निबद्ध प्राप्त अप्राप्त अथ सट्टक विलासवती चद्रलेहा आनन्दसुन्दरी और शृगाररमजरी में भी लगभग कपूर रमजरी की ही शली और काव्य वस्तु का आश्रयण किया गया होगा ऐसा अनुमान है।

मुद्रसिद्ध कवि राजगणेश्वर ने प्रस्तुत सट्टक में १४४ गाथाओं में वसत चन्द्रोदय कपूर रमजरी की रूप शोभा यौवन विलास चेषाया और विरह-ताप का वणन किया है।

वसत ऋतु में मानिनी का शिक्षा देनी हुई सबी की उक्ति—'मान छोडो प्रिय जना को प्रेमपूण दृष्टि स देखो पीनस्तना से युक्त यह यौवन केवन पाच तम दिन तक ही रहा वाला है। काकिल की मधुर बूक के द्वारा चन्द्र महात्सव कामदेव की सबव्यापी आगा को घापित कर रहा है।'<sup>४</sup>—रीतिकार्य की सबी की उक्तिया में बहुत आगा में मिलती जुगती है। इस प्रकार प्रकृत के अनेक उद्दीपक चित्र इसमें प्राप्त होते हैं।<sup>५</sup>

सद्य स्नाता<sup>६</sup> रूप लावण्य<sup>७</sup> कटि की शीणता, जघाम्रों और नयना की विगायता एव उनके व्यापक प्रभाव<sup>८</sup> पूवराग<sup>९</sup> वियोग की आशाया<sup>१०</sup> दालाक्रीडा<sup>११</sup> उद्दीपक प्रकृति<sup>१२</sup> आदि का वणन परपरित शली में किया गया है।

चद्रलेहा—इसमें कवि रुद्रदास (१६६० ई०) ने मानवेद और चन्द्रलेखा के प्रणय-व्यापार का अलङ्कृत शली में वणन किया है। इसी शली में १८वीं गताङ्गी क

१ हनु २।२० २८

२ वल १।५ १२ १८ २० २२ २६

३ वल ५।४

४ राजगणेश्वर कपूर रमजरी १।२८ ।

५ वल १।२० २।२

६ वल १।२६ १।२८ २।२४

७ वही १।२६ ३१ ३८ ३६ २३ २६ २७ ४१ ३।१४ १६

८ वही १।३२ ४ ३।१६

९ वही २।२०

१० वल २।४५ ६ १।१ २६

११ वही २।० ३७

१२ वही ३।२५ ३२ ४।१६

कवि विद्वेद्वर ने 'शृ गारमन्त्री' की रचना की। मग मन्त्र में १४वीं गतांगी क कवि प्रसन्नचन्द्र ने 'रामाजरी' का भी उत्तम आवरण है।

प्राकृत के इन मन्त्रों में शृ गार रम की प्रधानता यद् दानिन करती है कि नाटक। म भी इन रम के विविध पं॥ का सम्पन्न विनियोग किया जाता रहा है। रीतिवाच्य का प्रेरणा देने में इन मन्त्रों का भी महत्त्व महत्ता नाटक। तन्त्रिका की भाँति अधुण है।

काव्य की एक और विधा चम्पू में भी शृ गार निम्पण पूरी विविधता क माय प्राप्त होता है। महाकाव्य महाकाव्य गुणों एवं नाटक की भाँति चम्पूमा में भी शृ गार परंपरा को विवर्धित करने में महत्त्वपूर्ण योग दिया है।

### चम्पू काव्य

संस्कृत का चम्पू काव्य अत्यंत समृद्ध है। इसमें अनेक रमा का सदर सहाजन किया गया है। इन चतुष्पा में गद्य और पद्य की अनन्त और प्रवाहमयी गती क द्वारा वष्य वस्तु को बड़े कौशल से उपस्थित किया गया है। चम्पू काव्या का निर्माण ईसा की प्रथम शताब्दी से ही होने लगा था। बौद्ध जातकों में इस गली का प्रचुर प्रयोग दृष्टिगत होता है। जातक माला तथा हरिषण की प्रशस्ति में गद्य-पद्य मय गती का प्रयोग मिलता है। गुप्तकाल के गिलाखेला में चम्पू गीता की रचना का उत्कृष्ट लगभग चतुर्थ गतांगी स हाना लिखा हुआ है। किंतु काव्यशास्त्र में वर्णित चम्पू काव्य क संपूर्ण लक्षणा से युक्त ग्रंथ का निर्माण लगभग दसवीं गतांगी से उपलब्ध होता है।<sup>१</sup> इनमें जनाचाय हरिचन्द्र का जीवधर चम्पू सोमदेव का 'यशस्तिरुच्यं चम्पू भोजराज (११वीं शती) का रामायणचम्पू अनन्तमठ का भारतचम्पू (११वीं गती) और जीवगोस्वामी (१६वीं शती) का 'गोपालचम्पू मुख्य हैं।

यहां प्रत्येक चम्पू काव्य के शृ गार प्रधान भागों का विवेचन संभव नहीं। प्राय सभी चम्पू काव्यों में अलङ्कृत शैली का प्रयोग किया गया है। महाकाव्य की भाँति इनमें भी शृ गार प्रमुख रस के रूप में गहीत हुआ है। यहाँ उदाहरण के लिए कतिपय चम्पू काव्या का संक्षिप्त विवेचन प्रस्तुत किया जाएगा।

नल चम्पू—प्रस्तुत चम्पू को १०वीं शती क त्रिविक्रम मठ में नल दमय ती की प्रणय-वधा के आधार पर विनिर्मित किया। इस काव्य में नल और दमय ती के रूप प्रादि का वणन परंपरा युक्त गली में किया गया है।

नल गिय और सौम्य वणन में कवि ने वाण और दण्डी की अनन्त शैली को अपनाया है। उपमान प्राय परंपरित ही है।<sup>२</sup> प्रकृति वणन में वस्तुप्राप्त एवं विरोधा भास का जसा संयोजन त्रिविक्रम मठ ने किया है उस वाण की परंपरा को प्रागे बटाने

१ वाचस्पति गयेना संस्कृत साहित्य का इतिहास प० ६१ ११

२ नलचम्पू (नि० सा प्रस बम्बई १६ ३ ई ) उच्छ्वास १ प० ३४ क १।२६ २८

का श्लाघ्य प्रयत्न माना जा सकता है। रीतिकौष्य के प्रथम आनाय के शब्दास व काव्य वणन में ऐसे अनकृत प्रयोग देखे जा सकते हैं।<sup>१</sup>

इसमें नल का पूर्वानुराग,<sup>२</sup> दमयती के रूप यौवन,<sup>३</sup> वय मधि<sup>४</sup> आदि के वणन परपरित और चमत्कारपूर्ण है। प्रथम दशन में मावाकुत प्रणयी युग्म के आश्चर्य हृष, लज्जा, श्रोत्रुक्थादि कई भावों का कुशल चित्रण कवि के अनुभाव विधान के नपुण्य का द्योतित करत हैं।<sup>५</sup> ऐसे अनुभावों का अरुन रीतिकालीन कवि विहारी की विनायता मानी जाती है। कविवर त्रिविक्रम मट्ट ने मुद्रा अलंकार का अनेक स्थला पर सफल प्रयोग किया है। ऐसे स्थल उनकी अलङ्कृत शली के अच्छे उदाहरण हैं।

दमयती की हृदय स्थित नल के प्रति वही स्वाभाविक और सहज उक्तिया स्वच्छन्द धारा के रीतिकालीन कवि घनानन्द की ऐसी ही अनेक उक्तिया की याद दिलाती हैं।<sup>६</sup> दमयती प्रिय मित्र के उपाय की चिंता करती हुई अपनी अभिनाया प्रकट करती है कि यदि प्रह्ला ने उसे भी पक्षी बनाया होता तो उड़कर प्रिय मुख देख लेती। ऐसे अभिलाष प्रवाशन लोक गीता और कलागीता में वृत्तायत में पाए जात हैं। दमयती की विरह अवस्था उसकी शारीरिक और मानसिक स्थिति का वरुण अनकृत शली में किया गया है। कवि ने इस सन्तप्त में भी परपरा का पूरा निवाह किया है।<sup>७</sup>

त्रिविक्रम न किरात कामिनिया के सौम्य जन जीटा एव विलास च्छेदाग्रा का भी वणन किया है।<sup>८</sup> कामदेव की शक्तिमत्ता का वणन करत हुए नल की उक्ति 'तस्मिन्या व मध्यभाग में त्रिविनिया के तीन पय में और विशाल कुचरुगी चौराहे पर तनिक भी स्थलित होने वाले मनुष्य को मदन पिशाच छल लेता है। बिहारी की उक्ति से काफी साम्य रखती है।<sup>९</sup> दमयती के प्रणय पत्र को प्राप्त करन वाले नल की च्छेदाग्रा का जैसा वणन कवि ने किया है रीतिकौष्य में प्रिय का पत्र या उसका कोई चिह्न प्राप्त करने वाली नायिका की च्छेदाग्रा का भी एसा ही वणन पाया जाता है।<sup>१०</sup>

इन स्थला के अतिरिक्त कविवर मिथुन का नल से दमयती की विरहदशा का

- १ नलचम्पू उच्छ्रवाम १ प ५२ तुलनीय-केशवदास, कविप्रिया ७।३२ एव नलचम्पू प ५२ ख प २ वही १।६३ ६४
- ३ वही उच्छ्रवाम २ प ५५ ख ३।२६ उच्छ्रवाम ३ प ८६ क
- ४ वही ३।२६ ३२
- ५ वही उच्छ्रवाम ४ प ६ ख प ६ ३ ग
- ६ वही उच्छ्रवाम ५ प १२२ २३ क
- ७ वही उच्छ्रवाम ५ श्लो १४
- ८ वही उ ५ प १२६ क १ १३१ क-ख ५।१६ २१ प १३२ क ख प १२३ क ग
- ९ वही उ ५ प १५१ ५२ ५।५७ ५।५० ६२
- १० वही ५।६७ तुलनाय विहारी दो १६८
- ११ वही उ ६ प १७१ क तुलनीय विहारी दो ७६



निवेदन<sup>१</sup> ग्राम्य वधुओं का सहज सौन्दर्य और उनकी विलास चोटियों मुण्डिनपुर म राजा नल व अत पुर का वणन<sup>२</sup> प्रथम समागम के समय दमयंती की लजामिथित चोटियों<sup>३</sup> आदि बड़ी कुशलता से वर्णित हैं। इनके साक्ष्य पर यह कहा जा सकता है कि रीतिकार्य को प्रेरणा प्रदान करने में तथा शृंगारपरक वणन की परंपरा को विवक्षित करने में नलचम्पू का योग महत्वपूर्ण है।

जीवधर चम्पू—कवि हरिश्चंद्र का जीवधर चम्पू जन-साहित्य की अनुपम कृति है। यद्यपि यह काव्य शांत पयवसायी है जसा कि जनिया के काव्य पाय जात है, किन्तु इसका अधिकांश बलेवर शृंगारी वणनो से आपूर्ण है। मुरतिन पटावली की तुलना वाणमट्ट एक दण्डी की पदावलीयों से की जा सकती है।

प्रस्तुत चम्पू में जीवधर के अनेक विवाहों का वणन है। प्रत्येक विवाह का कारण नायिका का रूप लावण्य है जिस पर नायक योछावर हा जाता है किन्तु थोड़े समय के सहवास और थोड़ा विलास के उपरांत वह एक रमणी को छोड़ देता और भ्रमण करने को निकल पड़ता है। अंततः जाकर फिर दूसरी रमणी से विवाह करता है। इसमें पुरुष की रूप-लोभी वृत्ति का अच्छा परिचय मिलता है साथ ही रासोकार चदवरदायी की तरह हरिश्चंद्र को भी अनेक रमणियां व रूप चित्रण और विलास थोड़ाभा के वणन का अवसर मिल जाता है।

इसमें गोविंदा गधवदत्ता वसंतश्री गुणमाना पदमा क्षमश्री धनगलतिका और मुरमजरी आदि की रूप शोभा एक विलास चोटियों का वणन परंपराभूक्त शैली में किया गया है।<sup>४</sup> कवि की उत्प्रेक्षाओं तो कुछ अज्ञान परंपरामुक्त भी हैं किन्तु उपमान अधिवाश रूढ़ हैं। समग्र रूप से विचार करने पर स्पष्ट होता है कि कवि ने रूप वणन को विशेष विस्तार दिया है।

सयोग और वियोग दाना का वणन साथ-साथ होता चला है। एक रमणी से सयोग तो दूसरी से वियोग। सयोग के अंतगत नयशत मुरति उद्यान थोड़ा जलथोड़ा आदि का परंपरित वणन पाया जाता है।<sup>५</sup>

वियोग व अंतगत वामदेव प्राण और प्रिय के प्रति विरहिणी के उपात्म, सदेव प्रेक्षण विकलता आदि का सक्षिप्त वणन किया गया है।<sup>६</sup>

१ नलचम्पू ६।२२ २३

२ वही ७।६७ ७

३ वही ७ ७ २१० ११ व ७।२० २२ पृ २१० व

४ वही ७। ७-४४

५ हरिश्चंद्र जीवधर चम्पू (भारतीय ज्ञानपीठ काशी संन १८५६) लम्प २ छ ३४ ३५ ३।२० ३० ४२ ७ ४।२ ३ ४।२६ ५।३५ ४६ ६।५ ३२ ३।२४, ६।३१ १०।३

६ वही लम्प १७० ४।७ ८ ४।१७ २३

७ वही, ४।३१ ३२ ३४ ७।१ १ १३

रूप वणन में अदृष्ट गली का प्रयोग निरंतर बढ़ने वाली चमत्कार प्रधान वाच्य-परंपरा की ओर सवेन वरता है।

### संस्कृत गद्य

रीतिवाच्य की अदृष्ट शृंगारी अभिप्रेतिका के प्राचुर्य-संस्कृत की उन गद्य कृतियाँ में ढूँढ़े जा सकते हैं जिनमें पद-पद पर श्लेष और नाद-गौरव का मयाजन प्राप्त होता है। संस्कृत भाषा की कथा-आस्थाधिराग्रा में अधिराग-नायक-नायिका व-व-ज-म, यौवनावस्था और विवाह के पूर्व या पदचाल-समाग-वियोग-आदि का वणन परंपरित गली में पाया जाता है। शृंगारी प्रसंगा की सम्यक्-समाजना-प्राय-सभी-प्रेमा-स्थानना में पाई जाती है।

भारतीय-प्रेमास्थानक की मूल धारा की चंचा-करल-हुए-प०-कल्याणपति-त्रिपाठी-न-ऋग्वेद-क-पुष्करवा-उव-गी-क-सवाद-मूर्ता-की-ओर-सकत-बिपा-है। उक्त-सवा-सूक्त-स-जिसकी-प्रेयसी-दिव्य-अपारा-ओर-नायक-भानव-है—इतनी-ही-प्रेम-कथा-का-सम्भ-सवेत-मिलता-है। परन्तु-गत-पद्य-ब्राह्मण-में-भारत-की-इस-अति-प्रत्य-प्रेम-गाथा-का-वणन-पुन-भिन-जाता-है। ऋग्वेदो-तर-साहित्य-में-यह-आस्थानक-बु-छ-विस्तार-के-साथ-मिलता-है।<sup>१</sup> त्रिपाठीजी-न-लौकिक-साहित्य-स-उसकी-ब-नी-जो-रत-हुए-लिखा-है, यह-कथा-व-दा-कित-अत्यन्त-प्रसिद्ध-नाट्य-रूपानक-होन-स-ही-ऋग्वेद-में-ओर-तदु-त्तर-वर्ती-वा-इ-प-प-में-वार-वार-गु-फित-हानी-रही। स-उ-स-वि-गि-ष्ट-ओर-क-न-र-म-क-र-प-इ-स-का-म-क-वि-कालिदास-के-विश्व-विख्यात-नाटक-विश्व-मो-व-शी-य-में-मिलता-है-जहाँ-य-य-पि-मूल-प्रे-र-णा-ऋग्वेद-ओर-गत-पद्य-ब्राह्मण-स-ही-प्रा-प्त-जान-प-डती-है-तथा-पि-उ-स-का-मु-फ्य-आ-ध-ार-महा-भारत-है।<sup>२</sup> उ-क्त-स-द-भ-स-य-ह-तो-स्प-ष्ट-ही-हो-जाता-है-कि-प्रा-ची-न-काल-स-अनेक-प्रे-मा-स्थानक-का-य-श्लोक-में-प्र-च-लि-त-र-हे-ह-ा-गे-जिनके-प्र-म-ा-द-में-पर-व-र्ती-का-व्य-सा-हि-त्य-नि-मित्त-ओर-स-मृ-द-हु-आ। त्रिपाठीजी-न-न-ल-द-म-य-ती-ओर-उ-त्प-न-की-कथा-के-भी-लो-का-अ-श्रित-हो-ने-की-ओर-स-वे-त-क-र-ते-हु-ए-लि-खा-है-‘य-ह-भी-जान-प-ता-है-कि-महा-भारत-के-न-लो-पा-स्थान-से-गृ-ही-त-य-ह-कथा-नक-स-भ-व-त, उ-सी-प्र-का-र-ग्रा-म-कथा-या-ज-न-कथा-हो-ग-या-था-जिस-प्र-का-र-उ-त्प-न-की-ना-यिका-अ-श्रित-गाथा-ग्रा-म-कथा-हो-चु-की-थी-ओर-जिसके-नि-ए-कालिदास-का-उ-द-य-न-कथा-को-वि-ष्ट-ग्रा-म-वृ-द्धा-की-च-र्-चा-क-र-नी-प-डी-थी।’<sup>३</sup>

प्रस्तुत अध्याय में नल-दमयंती की प्रणय-गाथा पर आधत श्रीहृष के नैपथ्य महाभाष्य और त्रिविधम के नलचम्पू की चर्चा पढ़ने की जा चुकी है साथ ही उदयन कथा पर आधत भास के नाटक स्वप्नवासवदत्ता, श्रीहृषदेव की प्रसिद्ध नाटिका ‘रत्नावली’, और प्रियदर्शिका का शृंगार और उसके विविध पक्षों की वणन परंपरा के विकास

१ प. कल्याणपति त्रिपाठी रसतरंग (ना० प्र० संभा, काशा) का विभागीय प्राक्चन, पृ० २

२ वही पृ० ६

३ वही पृ० ८

म गृह्य भी निर्मित किया जा चुका है।

यद्यपि इन सौत रणामा पर धार्मिक काव्या के बसावक रीतिराम्य क उपयोग म गरी धाम रीतिराम्य म सागर घोर ७ विरल श्रीराम्य घोर राग ही सवमाग दूद रि तु उर प्रणव-व्यापार विनाग भन्त ७ धार्मिक सवग विधाग घोर घोर वसागि श्रीरामा का वगा उर प्रमाग्यगत। १) परधरा म पुण प्रमागि है।

गदृत्त साहित्य क धनृत्त प्रमाग्यगत। म उपासगा पर धार्त गुबधु की धागवत्ता का नाम उल्लग्य है यद्यपि उत्तम उग्या क ग्या पर कग्यगु नामा विगी काल्पनिक पात्र भी धरतारणा की ग है। मलमाग्यर परत्रति ७ भी दवरीन प्रियगव यद्यपि प्रभृति धामगाता का निर्ण किया है तथा धागवत्ता गुमगोगरा भमरधी धार्मि धाम्यागिगामा का उगग किया है। जग्दग क गुमागित म वरगि का धाम्यति घोर धाय कयासा का भी उल्लग पापा जाता है।

यहा कवि गुबधु विरगित धागवत्ता का मक्षिण परिचय दत दृण शृगार परव रचनामा का प्रेरणा दत म उतर योग्याउ का निर्ण करना धभीष्ट है।

वासवदत्ता-प्रस्तुन प्रमाग्यगत क लगक गुबधु को म० म० पी० धी० काण की पादम्बरी की भूमिका श्रीर वासपतिराज क गउडवहो क साय पर धागमद का पूववर्ती माना जा सवता है।

इसम वासवत्ता क रूप सौग्य का वणन परपरभात उपमाना क माध्यम स किया गया है।<sup>१</sup> वासवत्ता क सवाग सौग्य का वणन करत दृण कवि दलय घोर ग साभ्य क ध्यामाद म एसा पद जाता है कि उस कभी नायिका गुधीव घोर धग स मुचन वानर सना की तरह ता कभी धमिनय योवनत्व क कारण कया घोर तुना रागि का अतिप्रमण कर वरिचक रागि पर स्थित ग्य की तरह लगती है।<sup>२</sup> अतिप्रयत्नसाध्य वणन के उगाटरणस्वरूप कवि की वे पकितया ली जा सकती है जिनम उसन वासवत्ता को ग्रह मयी त्रिचित किया है।<sup>३</sup> क दपकनु की विरहावस्था का वणन द्रतृत्त गली म का प हलिया क धाधार पर किया गया है।<sup>४</sup> गुन सारिका का सवाद खडिता घोर धष्ट नायक के सवात् स मिलता जुलता है।<sup>५</sup> मुक रात्रा क उद्यान वणन म वमत ऋतु क सौग्य घोर उमके उद्दीपक प्रमाव का वणन करना है।<sup>६</sup> वह क गगनु के स्पन्द गशन स उद्यान वासवत्ता क पूवापुराग का वणन करत दृण गीतोपचार विरहो माद मूर्धा धार्मि का

१ वासवदत्ता (क जीवानन्द विद्यासागर कलकत्ता १९०७) प २५, ३०, १५, १०९

२ वही १ २५, ३ १ ४ १ ६

३ वही प ३ ३१

४ वही प ३२ ३ एव ८

५ वही प ५

६ वही प० ५९ ६३

विस्तृत वणन रीतिवद्ध शैली में करता है।<sup>१</sup>

रात्रि में चन्द्रोदय का प्रणन करते हुए कवि ने अभिमारिका, दूती व उपालम और नायिका व प्रणय निवन्धन आदि का उल्लेख किया है।<sup>२</sup> इस प्रसंग में दूनिया का जमा परिचय यहाँ मिलता है वह बहुत कुछ परवर्ती रीतिवाच्य के अनुरूप ही है।

वामवदत्ता मग्न व अत पुर का चित्र सामंती बलासिक् जीवन का सच्चा प्रतिनिधित्व करता है।<sup>३</sup> रीतिकान्त क कविया व भी तदगुणोन् प्राभिजात्य दग व चित्र एस ही लगत हैं।

कादम्बरी — प्रस्तुत कथा-कृति वाणभट्ट का अक्षय कीर्ति का आधार है। परवर्ती कविया ने अपने आधारभूत में जहाँ कहीं पूर्ववर्ती प्रमुख कविया का नाम स्मरण किया है वहाँ वाणभट्ट का नाम अवश्य लिया गया है। समर्थ है इनके प्रस्तुत ग्रंथ से पर्याप्त प्रेरणा भी ग्रहण की हो।

अनकृत शैली व सफल कविया में वाणभट्ट का नाम अग्रगण्य है। रीतिवाच्य में जिस अलंकरण-वृत्ति की प्रधानता लक्षित होती है उसके विकास की पूर्वशृंखला उक्त ग्रंथ से जोड़ी जाती है। कवि ने अस्तुत विधान में अपनी अनूख प्रतिभा का परिचय दिया है। नायिका व रूप मौदय विलास चेष्टा, वियागदशा व हो वणन म नही अपितु नगर, वन उपवन अत पुर रात्रिसमा सध्या चन्द्रोदय रात्रि और प्रात बाल व भी वणना में उपमा और उत्प्रेक्षा का लम्बी शृंखला उपस्थित की गई है। यद्यपि इन अस्तुता में बहुत कुछ अछूत और मौलिक हैं परन्तु चाण्डालकथा, महादेवता और कादम्बरी के रूप वणन में प्रायः परम्परायुक्त उपमानों का प्रयोग मिलता है।

हिंदी के सर्वप्रसिद्ध आलंकारिक आचार्य केशवदास पर वाणभट्ट की शैली का पर्याप्त प्रभाव लक्षित होता है।<sup>४</sup>

शुक्नास का उपदेश नीतिवाच्य का अच्छा उदाहरण प्रस्तुत करता है।<sup>५</sup>

शृंगारिक प्रसंगा व वणन में अनक स्थानों पर कवि ने अस्तुता व सजाजन में अतिशयोक्ति का प्रयोग किया है। नववीचन की उपमा वसन्तागम से देन की कवि परंपरा-सी है। वाणभट्ट ने भी इसका निर्वाह किया है परन्तु इनकी शैली बड़ी रोचक है। महादेवता कहती है वसन्त मजस मधुमास मधमास मजसे नवपल्लव नवपल्लव मजस पुप पुप मजस अमर और अमर मजस मद आविमन हान है उती प्रार मरे

१ वामवदत्ता पृ० ६७ ७१ ७३

२ वहाँ पृ० ७४ ८६

३ वही पृ० ८७ १ ३

४ परिकृतशास्त्रापरगण राट्टपट्टि लिप्काश्यमान प्रकश्यमान जर घनापमम । कादम्बरी (श्री० ५० सिरीज) पृ० १२० सुनीय केशवदास कविप्रिया ७।११

५ कादम्बरी, पृ० ३१३ ३५

शरीर में नयनोवन का आविभाव हुआ।<sup>१</sup> उस नयनोवना का पुण्डरीक को देखकर आसक्त होना, बारबार उसे देखने और उससे मिलने की वन्ती हुई कामना के कारण पूर्वानुराग की स्थिति में विलासता का अनुभव करना<sup>२</sup> पुण्डरीक की भी इसी अवस्था में महाश्वेता को प्रणयपत्र देना<sup>३</sup> उसकी वियोग व्यथा,<sup>४</sup> कर्पिजल का दौ-यकम और मित्र की विरह-वेदना का महाश्वेता से निवेदन करना<sup>५</sup> शीतोपचार,<sup>६</sup> महाश्वेता का वियोग<sup>७</sup> अभिसार<sup>८</sup> पुण्डरीक की मृत्तु पर महाश्वेता का विलास<sup>९</sup> आदि के वणन में कवि न जित शली में वस्तु-व्यजना और भाव-व्यजना की है उमकी अनुवृत्ति न सही, छाया तो अवश्य ही रीतिकाव्य में यत्र-तत्र मिलती है।

चन्द्रोप्य का उद्दीपकत्व<sup>१</sup> कादम्बरी के कथात पुर की कुमारियों की रूप शोभा<sup>२</sup> उनकी विमिल वलामिक चेष्टाया,<sup>३</sup> और अग मादव आदि<sup>४</sup> के वणन में कवि ने अतिशयाकित का ऐसा प्रयोग किया है कि फारसी शायरों के मुवालागे भी पीने पड़ जाए।

कादम्बरी की रूप शोभा का वणन करतहु कवि ने चरणनख की रविनमा पर उत्प्रेक्षा की है कि अत्यधिक कोमल हाने के कारण नखरध्र मानो रुधिरधारा का वमन कर रहे हा।<sup>५</sup> इसी प्रकार उसक अग प्रत्यग पर अनूठी उत्प्रेक्षाएँ की गई हैं।<sup>६</sup> चन्द्रापीड के मोदय का वणन सुनकर कादम्बरी में सात्त्विक भावोदगम का वणन गाम्भीर्य परिपाटी के आधार पर किया गया है।<sup>७</sup> रीतिकाव्य में लक्षिता और वही वहीं गुप्ता नायिकाया के वणन इसी प्रकार क मिलत हैं जिनमें नायिका के सात्त्विक भाव उसके गुप्त अनुराग को सूचित करने लगत हैं और वह उ ह ठिपान के लिए अय चेष्टाएँ करने लगती है। इसी प्रकार कादम्बरी की चित्तसकित पूवानुराग छिप छिपकर

१ कादम्बरी पृ० ४१२

२ वही प० ४३७ ३६

३ वही पृ ४४३

४ वही प० ४४४ ४८

५ वही प० ४४४ ६३

६ वही पृ० ४६४

७ वही प० ४६७ ६६ ४७३ ७४

८ वही प० ४७४ ७६

९ वही प० ४८७-६२

१० वग प ५१६

११ वही प० ५२४ २७

१२ वही प ५२७ ३३

१३ वही प० ५२८ २६

१४ वही प० ५३७ तुलसीप-विहारा लो० २०

१५ वही पृ ५३६ ४२

१६ वही प ५४८ ४६

परस्परालोचन, अमिसार की मञ्जा, विरामचन्द्राद्यः क व्याज स नामः पर सविस्तर  
अपना प्रेम प्रकाशन आदि का बणन करत हुए बाणमट्ट न अना शृ गार रम बणन  
की निपुणता मिद की है ।<sup>१</sup>

कादम्बरी का विरह निवृत्त करत हुए बभ्रुक की उचितया रीतिकालीन  
दूतिया की उचितया म पनी मुनी जा सकती है । इसी प्रकार कादम्बरी क विरह एव  
शीतलोपचार<sup>२</sup> और चन्द्रापीठ क आगमन स उसक हर्षोल्लास का जसा बणन<sup>३</sup> बाण  
मट्ट न किया है रीतिकव्य की प्रापितपतिकामा की अवस्था एव उनके शीतलोपचार  
और आगलपतिकामो क बणन म इही वस्तुमा और चन्द्रापीठ का उल्लेख प्राप्त होता है ।

वास्तव म बाणमट्ट और परवर्ती अनेक कवियो ने इन बणन रुदियो का पूरा  
निर्वाह किया है, इसीलिए जहाँ कही भी एस बणन आए हैं उनम काफी साम्य दृष्टिगत  
होता है ।

कालिदासात्तर महानामा खण्डलाख्या और मुक्ता म जिम प्रसार अलकृत  
और शृ गारी बणन की परम्परा रुदिरुद्ध गली म मिलती है उसना प्रयोग सुबहु,  
बाणमट्ट और दण्डी ने अपनी कथा-कृतिया म भी बडी सफनता स किया है । इन  
कविया की मौलिकता कवल अस्तुतु वि अनी—उत्तराभा दृष्टान्त और उदाहरणा क  
प्रयोग म दृष्टिगत हाती है । कादम्बरी म वस्तु बणन और भाव निरूपण का जसा  
विस्तार मिलता है वह प्रथ धामर है मुक्तकाम उतना अवकाश नहा रता । फिर  
भी रीतिकव्य म अनेक स्थला पर उक्त प्रथ की गली का प्रयोग निरालाई पडता है ।

प्रस्तुत अध्याय म शृ गार के विविध पया का ससृत प्राकृत और अक्षर के  
काव्या म जैसा बणन पाया जाता है उसका किचिन परिचय दिमा गया ह । ध्यान देने की  
जात यह है कि उक्त प्रथ म सयाग विषोग नवगिस अनु दूनी सखी आदि क बणन  
की रुदिया स्थापित की गई और उनका सम्बन्ध निर्वाह किया गया है । हिन्दी के  
आदिकालीन प्रथ म यद्यपि शीर रस की ही प्रधानता रहा किन्तु उना शृ गार बणन का  
अवसर आया है, कविया न पाचीन परिपानी की उभन रुदिया का हा सहारा लिया है ।  
पानमार्गी सता की बाणिया म शृ गार की उतना स्थान नही मिला कयानि उनका  
प्रतिपाय स्पष्ट रूप स मित था । उ हाने या ता लारमगत की भावना स सदुपदेश,  
पावन का लडन और अश्विन्वासा की निरस्त करन म अपनी काव्य प्रतिभा का प्रयोग  
किया या फिर आत्मानन्द म लीन होकर भगवान क एश्वर्य और शक्ति का गान करते  
हुए उनस अपना रहस्यात्मन सम्बन्ध स्थापित किया । इन रहस्यात्मक सकेतो म कहा  
कही शृ गार का हृन्का पुत्र मितना है । एम स्थल वहाँ पाण जान है जहाँ जीवन्पी बधू  
व्रतस्वी वर की प्राप्ति क लिए व्याकुल चिन्तित की गई है ।

१ कादम्बरी पृ० १५०-७२ १५२-५५

२ वही पृ० ६०३ १६ ६०३ २६

३ वही पृ० ६२०

प्रममागी सत्ता ने शृ गार क लौकिक पारंगति का अधिकार धन र किया है, किंतु उनही मूल मायना रीतिवाद्य की मूल मायना न मिली थी। रीतिवाद्य का प्रतिपाद्य या लौकिक सुभावयोग किंतु प्रममागिया का न्याय या लौकिक प्रेम का माध्यम स अलौकिक प्रेम का निदान। साथ ही न हीन पर भी साधन की एकरूपता दृष्टिगत होती है।

सगुणधारा म रामभक्ति का प्रथम मूलत मर्त्यापुष्ट ही रहा। उसम सनक सध्य भाव की प्रधानता क कारण शृ गार को स्थान न मिल सका किंतु परवर्ती राम काव्य कृष्ण की माधुर्योपासना स प्रभावित होकर शृ गारा अमिध्यविनया का प्राप्न हो गया।

कृष्णभक्तिधारा म शृ गार को विनाय महत्व मिला। इसका उल्लेख कृष्णव कायामिभक्ति की शृ गारी परिणति की चर्चा करते हुए किया जा चुका है।

प्रस्तुत अध्याय म रीतिवाद्य के उपजीव्य ग्रंथ म आए शृ गारिक प्रसंग का सक्षिप्त वणन किया गया। आगे क अध्याय म शृ गार क विविध पक्षों की चर्चा करते हुए इन ग्रंथों के शृ गारिक स्थला की तुलना रीतिवाद्य क तत्तन् स्थला स करते हुए परम्परा और पवक्तिया का निर्देश किया जाएगा।

## चीथा अध्याय

# शृंगार और उसके प्रमुख पक्ष

### शृंगार रस स्वरूप

पिछले अध्याय में विभिन्न साहित्य में प्रयुक्त शृंगार रस का परिचय दिया जा चुका है। इस अध्याय में उसके शास्त्रीय स्वरूप एवं प्रमुख पक्षा का निरूपण करते हुए रीति काव्य और उसके पूर्ववर्ती साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन किया जाएगा।

सम्प्रति शृंगार रस के स्वरूप का परिचय मात्र देना अमीष्ट है।

रस की व्यवस्थित और सवमाय विवेचना सवप्रथम भरतमुनि के नाट्यशास्त्र में प्राप्त होता है। यद्यपि उन्होंने रसा का विवचन दृश्य-काव्य के परिप्रेक्ष्य में किया है तथापि उनका रस सूत्र का महत्व शून्य काय के लिए भी कम नहीं है। उन्होंने रस-निष्पत्ति के लिए विभाव, अनुभाव और सचारी भावा का संयोजन आवश्यक माना है।<sup>१</sup>

### विभाव

वाचिक आंगिक और सात्विक अभिनय के द्वारा चित वृत्तिया के विभावन या पापन कराने वाले हेतु कारण या निमित्त को भरतमुनि ने 'विभाव' कहा है।<sup>२</sup> इनके द्वारा वासना-रूप में स्थित अत्यंत सूक्ष्म रति आदि स्थायी भाव आस्वादनीय बनते हैं।<sup>३</sup> चित्त-वृत्तिया के उदरोधक ये विभाव दो प्रकार के माने जाते हैं—आलम्बन और उद्दीपन। चित्तवृत्तियों के विषय भूत विभाव को आलम्बन या विषय कहा जाता है। जागृत भाव को उद्दीपित करने वाले निमित्त कारण को उद्दीपन विभाव कहते हैं।<sup>४</sup> जिस व्यक्ति में

१ विभावानभावव्यभिचारिसंयोगान्निष्पत्ति ।

—नाट्यशास्त्र भाग १ प २७४

२ विभाव कारण निमित्त हतुरिति पर्याया । विभाव्यतेऽनन वागगमत्वाभिनय इति विभाव । यथा विभावित निजानमिति अर्थान्तरम् ।—नाट्यशास्त्र भाग १ प ३४७

३ वागनादपतयाति सूक्ष्मरूपणावस्थितान् रत्यादीन् स्यादिति विभावयन्ति आस्थान्पोग्यता नयति इति विभावा —ना० प्र टाका पृ० ८६

४ यस्या चित्तवृत्त यो विषय स तस्या आलम्बनम् । निमित्तानि च उद्दीपकानि इति बोध्यम् ।



स्यायी भाव रति की अवस्थिति होती है वह भाव का आश्रय होने के कारण आश्रय कहलाता है। इस प्रकार आलम्बन व विषय और आश्रय दो भेद माने जाते हैं।

### आलम्बन

शृंगार रस के आलम्बन नायक नायिका मधुर समुहार तथा रूप-यौवन-सम्पन्न होते हैं।<sup>१</sup> रूप उस आवृत्ति का बोधक है जिसमें सौन्दर्य साधारण होता है। सामान्यतः रूप और सौन्दर्य का प्रयोग एक ही अर्थ में किया जाता है। सौन्दर्य या रूप का अधिष्ठान शरीर है, अतः रूप वर्णन के अतगत नायक या नायिका के शारीरिक (बाह्य) आकषण का ही अर्थन करत आए हैं। रूप का चरमोत्थय यौवन में ही होता है। रूप और यौवन अयो-याश्रित से माने जाते हैं। आलम्बन के सम्मोहक रूप का चित्रण यौवनावस्था में ही होता है। शृंगार के आलम्बन का स्वस्थ, सुन्दर और यौवन सम्पन्न होना इसीलिए अनिवार्य माना गया है। अस्वस्थ, असुन्दर और यौवनेतर अवस्था को प्राप्त स्त्री या पुरुष शृंगार के आलम्बन कदापि नहीं हो सकते। मनोवैज्ञानिक दृष्टि से चाहें इस रस की ध्याप्ति जिसमें मानी जाए किन्तु रसशास्त्रीय दृष्टिकोण से उसे ग्राह्य नहीं माना जा सकता। शास्त्रीय मायता के अनुसार यौवनावस्था में नायिका के शारीरिक और मानसिक आकषण का महत्त्वपूर्ण स्थान है। इस प्रकार की भी सजा दी गई है।

### उद्दीपन

आलम्बन विभाव की ही तरह उद्दीपन का भी कई भेद मिलते हैं। इसके अतगत मुख्य रूप से आलम्बन के गुण उसकी चेष्टाएँ वस्त्रानूपण और तटस्थ ये चार भेद गहीत होते हैं। आलम्बन के गुणों से रूप यौवन उसका चेष्टाआ में यौवनादभूत हाव भावादि, वस्त्रानूपण में नूपुर अंगद्वारादि तथा तटस्थ के अतगत चन्द्र मलयानिल आदि आते हैं।<sup>२</sup> इन भेदों को मुख्य रूप से दो ही समाहित किया जा सकता है—एक के उपकरण जिनका आलम्बन से सीधा सम्बन्ध है और दूसरी के वस्तुएँ या क्रियाएँ जो अपना स्वतंत्र स्थान रखती हैं। दूसरी श्रेणी में प्रकृति और आलम्बन के सहायक

१ मधुरा मुहुभारारव रूपयौगशालिन ।

शृंगारात्मन्वना भावात्मन्वयस्वस्वशान्त्य ॥ शारदातनय भावप्रकाशन प० ४

२ चरत्कारणजातमद्दीपनविभाव । स वनुविध । यथा चात्र शृंगार तिलके—

आलम्बनगणश्वव तचेष्टा तदवकृति ।

तटस्थचेति विशयश्चतुर्थोद्दीपनकम ॥

आलम्बनगुणो रूपयौवना रूपहृत ।

तचेष्टा यौवनोद्भूतहावभावादिषा मता ।

नूपुराङ्गद्वाराणि तन्वकरण मतम ।

मलयानिलश्च गद्यास्तटस्था परिकीर्तिता ॥—प्र० ४ पद्यो०, प १५६

सखा-सखी, दूत-दूती और उनके वचना को भी लिया जा सकता है। साराशत उद्दीपन व अतगत अलम्बनादि की चप्टाए तथा दशकाल की गणना की जाती है।<sup>१</sup>

### अनुभाव

भरतमुनि के अनुसार अनुभाव उन वाचिक, सात्विक और प्रागिक चप्टाया का कहते हैं जा आश्रय के आतरिक भावा का प्रकाशन करती हैं।<sup>२</sup> इनके द्वारा भाव विशेष का साक्षात्कार होता है, अत इहे कारण भी कहत हैं। मानुदत्त ने इह वायिक मानसिक, आहाय और सात्विक भेद से चार प्रकार का माना है।<sup>३</sup> यदि इन अनुभावा का स्थायीभाव के उत्पन्न होने के कारण उनके मात्र बाह्य प्रकाशन मानें तो इह कायरूप मानना पडेगा।<sup>४</sup>

भरत ने रमणिया के बीस सात्विक अलकारो को तीन भागो मे विभाजित किया है—अगज अयत्नज और स्वभावज।<sup>५</sup> धनजय आदि ने भी इह स्वीकार कर लिया है। यौवनोदभेद के कारण होने वाले नायिकाओ के प्रागिक परिवतना को साविक अलकार कहा जाता है। अगज अलकार के अतगत हाव, भाव और हेला तथा बिना किसी प्रयत्न के होनेवाले अयत्नज अलकारो म शोभा, कांति दीप्ति, माधुर्य प्रगल्भता औदाय तथा घम की गणना की गई है। स्वभावज अलकारो मे लीला विलासादि दम हावो को ग्रहण किया गया है।<sup>६</sup> ये सब अलकार यदि विषय के माने जाए तो उद्दीपन विभाव के अतगत आएंगे।<sup>७</sup> किन्तु कुछ प्राचीन आचार्यों ने अनुभाव के अतगत अलकारो की चर्चा की है और हाव को भी उसी म अ तभु वन माना है। इसकी विशेष चर्चा आगे नायिका के गुणा के प्रसंग म ही की जाएगी।

४६ भावा मे से भरतमुनि ने स्तम्भ रोमांच, स्वेद स्वरभंग, वेपथु ववण्य अथु और प्रलय को सात्विक भाव के अतगत पृथक् रूप से वर्णित किया है।<sup>८</sup> यद्यपि सत्व आतरिक घम से प्रकट होनेवाल भाव होने के कारण सात्विक भाव भी आतरिक घम होत हैं, किन्तु रस प्रकाशन मे सहायक होने के कारण इह अनुभाव भी माना जाता है।

१ साहित्यदर्पण (पी०भी०काण) प० २४

२ अनुभाव्यतेऽनेन वागमल्लङ्घनोऽभिभव इति । —नाट्यशास्त्र भाग १ प ४८

३ रसतरंगिणी ३।२

४ सा ६ प २४

५ नाट्यशास्त्र २२।५

६ दशरूपक २।५ ३३

७ २० त० प ४७

८ स्तम्भ स्वेतोऽथ रोमांच स्वरभंगोऽथ वपथु

ववर्णमधुप्रलय इत्यपि सात्विका मता ॥-नाट्यशास्त्र ७।१४८।

## व्यभिचारीभाव

इहे सचारी भाव भी कहा जाता है। चर धातु म वि और अग्नि उपसर्गों के योग से व्यभिचारी शब्द निष्पन्न होता है और सम्' उपसर्ग व योग से सचारी। चर धातु का अर्थ वाक्य अर्थ एव सत्य आदि के द्वारा रसपोषक भावा व सवरण स लिया गया है।<sup>१</sup> ये स्थायी भाव के पोषण म सहायक और अस्थिर होत हैं। शृ गार के अतगत प्राय ३३ सचारी भावा का समावेश किया गया है।

इस प्रकार रस की निष्पत्ति के मूल सहायक तत्वा—विभाव अनुभाव और सचारी भावों के परिचय के उपरांत शृ गार रस का परिचयात्मक विवेचन किया जाएगा।

## शृ गार रस विवेचन

'शृ ग ऋच्छतीति शृ गार' अर्थात् शृ गार शब्द की व्युत्पत्ति 'शृ ग' और 'आर' शब्दों के योग से होती है। शृ ग का अर्थ है कामोद्रेक, काम का सवद्धन या कामवद्धि।<sup>२</sup> ऋ धातु से 'यवस्थित' आर शब्द गत्यधिक है जिसका अर्थ है—कामवद्धि की प्राप्ति। अतएव मानव की आदि वासना काम को सवद्धित और पुष्ट करने वाली रचनाएँ शृ गारमूलक मानी जाती हैं। रति स्थायी भाव से सम्पुष्ट शृ गार उज्ज्वल वेपात्मक<sup>३</sup> उत्तम प्रकृति का माना जाता है।<sup>४</sup> इस प्रकार शृ गार को उज्ज्वलवेपात्मक और उत्तमप्रकृति स युक्त मानकर इसे विलास भंगित कामुकता से बन्ना लिया गया है। भरत मुनि ने स्पष्ट कहा है कि ससार म जो कुछ पवित्र भेद्य उज्ज्वल या दशनीय है वह सब शृ गार के द्वारा उपमित हो सकता है।<sup>५</sup> अर्थात् उसका ग्रहण शृ गार के अतगत किया जा सकता है। भोजराज ने आस्वाद्यता और सप्रेषणीयता के कारण इसे ही एक मात्र रस माना है।<sup>६</sup> भानुदत्त ने युवा और युवती क आमोद प्रमोद (विभावानु भावसचारी) आदि से सम्पन्न रति भाव को शृ गार माना है।<sup>७</sup>

शृ गार के स्थायीभाव रति की व्याख्या करते हुए भोजदेव ने मन के अनुकूल विषयो मे सुख की अनुभूति को रति माना है।<sup>८</sup> भरत ने राजा और उसके अनुचरों का

१ नाट्यशास्त्र भाग १ प ३४८ ३५०।

२ शृ ग हि ममयोद्भदस्तदागमनहेतुः ।—सा ६ ११९३

३ तस्य शृ गारो नाम रतिस्थापिभावप्रभव उज्ज्वलवेपात्मक । नाट्यशास्त्र भाग १ प ० ३ १

४ उत्तमप्रकृतिप्रायो रस शृ गार ण्यते ॥ सा ६० ३१९३

५ यत्किञ्चिद्विलोक्य शुचिर्भेद्यमुत्तमं दशनीयं वा तच्छृ गारशोभनीयम् ।

—नाट्यशास्त्र भाग १ प ३ २

६ शृ गारमवरसनात्समायनात् ।—शृ० प्र०

७ युनो परस्पर परिपूर्ण प्रमोद सद्गन्ध सपूर्णरतिभावो वा शृ गार ।

—रसतरंगिणी षष्ठ तरंग

८ मनोमन्त्रेण्यर्पणं सुखसंवेदनं रतिः ।—शृ० प्र०

शृ गार और उसके प्रमुख पक्ष

उदाहरण देते हुए रति को राजा और भय भावा को उसका उपकारक अनुचर माना है।<sup>१</sup>

इसके भ्रालबन अनुरागवती स्वीयादि नायिकाएँ और दक्षिणादि नायक हैं तथा उद्दीपन चन्द्रमा, चन्दन भ्रमर आदि एव अनुभाव अनुरागपूज मकृटिभग तथा कटा र आदि और सचारीभाव उग्रता मरण भ्रालस्य एव जुगुप्सा का छोटकर अथ पिनेगादि हैं।<sup>२</sup> यद्यपि आचार्यों ने श्रास भ्रालस्य उग्रता और मरण आदि सचारीया को शृगाररस विरोधी माना है, फिर भी शृगाररस प्रधान रचनाओं में इनका प्रयोग मिलते हैं। वियोगा वस्था में मरण व्यंग्य रूप में गृहीत हुआ है। स्तम्भ, रोमांच और स्वरभग का दृशु श्रास माना जाता है और भ्रालस्य-जनित जम्भा का प्रयोग अनेक स्थलों पर आया है। बिम्बाक हाव में उग्रता एव जुगुप्सा भी अतमुक्त होते हैं। प्रोला अधीरा नायिकाओं में इन दोनों सचारीया की स्थिति पाई जाती है। इस प्रकार शृ गार के व्यापक परिवेश में तैत्तिरीयो सचारीभाव आ जाते हैं।

### शृगार भेद

नायक-नायिकाओं के संबन्ध का आधार पर शृ गार के समोग या सयोग और विप्रलभ या वियोग का भेद किण गए हैं। इसमें सयोग के अंतगत ऋतु, मातृय अनुपपन, भ्रालकार, इष्टजनानुरजन उपभाग वनगमन विहार श्रवणदशन, श्रीडा लीलादि अनुभाव आते हैं।<sup>३</sup> नायक और नायिका के परस्पर अनुकूल होने से दान, स्नान और सलापादि के कारण अनुभूयमान मुग्ध या सभोग से उत्पन्न होनेवाले आनन्द का सयोग कहते हैं। इसमें बहिरिन्द्रिय-संबन्ध की प्रधानता होती है।<sup>४</sup> सयोग शृ गार में बलपूर्वक या अनिच्छा से सम्पन्न होनेवाले सभोग का बणन नहीं होता। नायक अथवा नायिका के एकपक्षीय या रति का एकांगी प्रदर्शन रसाभास माना जाता है।<sup>५</sup>

### सयोग शृगार

यहां यह ध्यातय है कि सयोग और सभोग में तात्त्विक ऐक्य होने पर भी किंचित्

१ बहवाश्रयत्वात्स्वामिभ्रता स्थायिनो भावा तन्वत्स्वानीयपुरुषगणभूता अये भावास्तान्गुणनयाध्यते परिजनभूता व्यभिचारिणो भावा । —नाटयशास्त्र भाग १ पृ० ३८

२ भरत नाटयशास्त्र ६।५२ ८८

३ तस्य द्वे अधिष्ठान सम्भोगा विप्रलभश्च तत्र सम्भोगस्तावन्नुपलानुलेपनानकाष्टजनविषय वरप्रवनापभागवत्सगमनानभवनश्रवणदर्शनश्रीडालीलादिभिर्विभावस्त्वद्यत । वी भाग १ पृ ३०४

४ तत्र दर्शनेस्पर्शनसलापादिभिरितरेतरमनुभूयमान मुख परस्परसयोगतात्वाद्यमान आनन्दो वा सयोग । सयोगो बहिरिन्द्रियसम्बन्ध । —रसतरंगिणी पृ १२८

५ यूनोरेकव प्रमोदस्य रतेर्वाधिक्ये धनताया यतिरेके वा परिपूतैरभावात् रसाभासत्वमिति ।

अन्तर है। डॉ० मनोहरलाल गोड ने लिखा है 'प्रिय और प्रेमी का मिलन दो प्रकार का हो सकता है - समोग महिष तथा समोग रहित। पहले का नाम समोग है, दूसरे का नाम सयोग हो सकता है।<sup>१</sup> उन्होंने अपने मत की पुष्टि में कहा है कि ऐसा विभाजन भावनाशा के आधार पर किया जा सकता है। जो प्रेम वागनामूलक है उसका पथवसान भाग में होता है। पर जो त्रिगुण आत्मानुभूति के रूप में है उसका पथवसान भी प्रेम ही होता है। ऐसा प्रेम त्रिगुण वस्तु का जैसे भोगात्मिका साधन नहीं बनता। इस साध्यभूत प्रेम का मिलन समोग बन जाना चाहिए।<sup>२</sup> परंपरागत शृंगार निरूपण में आचार्यों ने भाग पक्ष का ही प्रमुखता दी है यद्यपि डॉ० गोड जिस आत्मानुभूति के रूप में होने के कारण सयोग कहते हैं उसमें बहिर्निर्दिष्ट समयोग का उतना भवना नहीं रहता।

सयोग को रूपासक्ति और शारीरिक आनन्द का परिणाम मानते हुए इसमें हाव आदि चेष्टाएँ सुरत विविध विहार मद्यपान आदि का वणन किया जाता है।

सयोगकालिक नामक की चेष्टाएँ मधुर होनी चाहिए। उस कालिका मनोरजन कला, क्रीडादि के द्वारा तथा उसकी चाटुकारिता एवं रूप गुण की प्रशंसा करके करना चाहिए। कोई भी ग्राम्य आचरण या सौम्य में बाधक बात नहीं करनी चाहिए।<sup>३</sup> इस प्रसंग में जल क्रीडा सर का शोभ चतवाक और हस्ता की उद्विग्नता पद्म की मलिनता जलविदुषो से नेत्र की अरुणिमा तथा आभूषणों के पतन आदि का वणन होना चाहिए।<sup>४</sup> वात्स्यायन ने कामसूत्र में सयोगकालीन क्रियाकलापों का सांगोपांग निरूपण किया है। कामसूत्र के द्वितीय अधिकरण के द्वितीय अध्याय में सुरति की चौंसठ कलाओं का विवरण देते हुए उन्होंने इसके प्रमुख भेद आठ माने हैं जिनमें प्रत्येक के विकल्प में आठ आठ भेद और होकर चौंसठ हो जाते हैं।<sup>५</sup> वात्स्यायन ने इनमें से आलिंगन, चुम्बन, नखक्षत, दंतक्षत और पुरुषायित का वणन अलग अलग अध्यायों में किया है। संस्कृत, प्राकृत और अपभ्रंश साहित्य में इन कलाओं का व्यावहारिक रूप स्थल-स्थल पर वर्णित है। रीतिकाल के कवियों ने भी इस कामशास्त्रीय और काव्य साहित्य की परिपाटी का काफी हद तक अनुगमन किया है। रीतिकाम्य में मात्र शारीरिक चेष्टाओं और स्थूल रति क्रीडाओं का ही वणन नहीं मिलता अपितु ऐसे भी चित्रणों की कमी नहीं है जिनमें मनोवृत्तियों का सूक्ष्म अंकन और भारतीय रसमर्यादा के अनुरूप नारी के शील लावण्य का उद्घाटन न मिलता हो।

संक्षेप में सयोग शृंगार के अंगों और उनके शास्त्रीय स्वरूप का परिचय दिया जा चुका है। सुविधा के लिए उसके विविध पक्षों का निम्नलिखित रूप में वर्गीकरण किया जा सकता है—

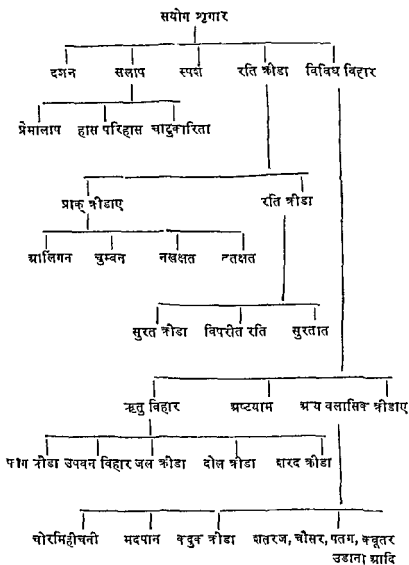
१ डॉ० मनोहरलाल गोड 'योग' और स्वच्छ कामधारा पृ ३१२

२ वही पृ ३२

३ धनव्य दशरूपक ४११

४ विकल्पलता, ११३।४१

५ वात्स्यायन कामसूत्र २।२।५



## दशन

नायक और नायिका के परम्पराश्लोकन का उन पर पडनवाला व्यापक प्रभाव वर्णित किया गया है। रीतिकाय के उपजीव्य ग्रंथों में अनेक काव्य नाटक और आख्यायिकाओं में प्रथम दानजय प्रभावा का वर्णन मिलता है। प्रथमे नयनप्रीति के अनुसार प्रेम की स्थापना सबप्रथम स्थान में ही हुआ है। आगे प्रथम स्थान में ही लगती है लट्ती है या आगे चार होती है और प्रेम का नाट्यारम्भ हो जाता है। स्थान के क्षण में प्रेमी पूरित प्रिय में तमय हो जाता है।<sup>१</sup> नेत्रों की इमीतिग प्रणय व्यापार का सूत्रधार कहा जा सकता है। नववकी मेपशाली रूप की यात्रा में नयनपिकी की दुर्गति भी कम नहीं हुई है चाहे व नयन के नयन हो या बिहारी के नायक के।<sup>२</sup>

सयोग के अन्तगत केवल प्रत्यक्ष दशन ही लिया जा सकता है। इसके अथ भेद स्वप्न चित्र या श्रवण दान पूर्वानुराग की अवस्था में ही आते हैं। कही-कही नायक के वेणुवादन का श्रवण या नायिका के नूपुरादि आभूषणों की ध्वनि का श्रवण सयोग शृंगार के अन्तगत उद्दीपक रूप में वर्णित हुआ है।

## सलाप

दान में प्रिय और प्रेमी या विषय और आश्रय की दूरी बनी रह सकती है किन्तु सलाप में सयोग-मुक्त पुष्पतर रूप में आता है। नायक और नायिका के प्रमानाप में प्रणय निवेदन उच्चालम हास परिहास और एक दूसरे की रूप गुण प्रशंसा का वर्णन किया जाता है। नायक अपने अनुराग की तीव्रता का वर्णन करते हुए प्रशंसा के विषय में पूर्वानुभूत विरह दुःख का भी विस्तार में वर्णन करता है। वही वही रूप गुण-मण्यन नायिका को अपनी प्रिया के रूप में प्राप्त कर वह अपने भाग्य की सराहना करता है। नायिका की पूर्वचरित निष्ठुरता पर उभय करता हुआ उस उपायन में मां देता है। इसी प्रकार नायिका की चेट्याप्रा और आलाप का वर्णन प्राप्त होता है। इस प्रथम में नायिकाओं के परिहास का मनोरम वर्णन कविमान किया है। परिहास में मया या प्रौढा नायिका ही पदु होती हैं। उन पर परिहास बस ही मामिक होता है जैसे पद्मावत में अनेक स्थान पर पद्मावती अपने का शानी आरंभ करने का जाति निर्गरी बनाकर उसका मूढ मडाक उखाती है।<sup>३</sup> आख्यायक आसम्भर गुर्वन १ दस मन्त्र में लिखा है नायक-नायिका के बीच कुछ बात बाल्य और परिहास भा भारतीय प्रेम प्रवृत्ति का

१ लिट्टी ११ २११

२ नयन ७११ लिट्टी से १२१

३ काव्यी १८११ ३२११ ११ २११

एक मनोहर अंग है, अतः उसका विधान यहाँ के कवियों की शृंगार-पद्धति में चला आ रहा है। पीछे तो उदूवाला में भी 'खूबा से छेड़छाड़ की रस्म चल पड़ी।' मूरदास की गोपियाँ भी परिहास में पीछे नहीं हैं। वे भी घे वहती हैं 'हे कृष्ण पहले मेरा घट भर दो तब तुम्हें लकड़ दूँगी।' कृष्ण के प्रसंग का लेकर रीतिवालीन कविघान भी गोपिया की परिहासपूर्ण उक्तियों का निबन्धन किया है। मतिराम हाया पद्याकर सबको नायिकाएँ कृष्ण से पूर्ण परिचित है अतः अक्षय्य मिनते ही व कृष्ण के कम्बल और लकड़ी की हीनता तथा राधा के हार की बहुमूर्त्यता का वर्णन करती हुई कृष्ण को फटकारने लगती हैं। एसी ही प्यारभरी भिडकिया के वर्णन अनेक रीति कविया के काव्यों में देखे जा सकते हैं।<sup>१</sup> इन हास परिहासयुक्त वचनों में यद्यपि अति परिचय और अनुराग का संकेत मिलता है किंतु संयोग की प्रगाढ़ता नहीं। शारीरिक दूरी यहाँ भी बनी रहती है।

### स्पर्श

दशन में केवल नेत्रा की तर्पित हाती है। सलाप में नेत्र वाक और श्रोत्रेन्द्रिय का परितोप होता है और स्पर्श में नेत्र, कण वाक और त्वक संवेदनाओं का भी सम्मिलित आनन्द मिलता है। इसीलिए मयोंग पक्ष की दृष्टि में स्पर्श का महत्त्व अधिक है। साहित्य में स्पर्श का वर्णन कई रूपों में मिलता है। कहीं तो साकरी अघेने गली में नायक नायिका की असमावित मुठभेड हो जाती है<sup>२</sup> कहीं चोर मिहीचनी खलत हूण<sup>३</sup> और कहीं अंग से अंग छू जानें में।<sup>४</sup> इन सबसे अतिरिक्त बिटारी आदि में स्पर्श मुख का बड़ा ही सूक्ष्म अंकन किया है जैसे प्रिय क उडाए हूण पतंग की छाह का स्पर्श प्रिय की दृष्टि का स्पर्श अथवा प्रिय से दी गई किसी वस्तु का स्पर्श। उन सभी स्पर्शों में प्रेमी के सात्त्विक भावों का वर्णन किया गया है।<sup>५</sup> मतिराम ने स्पर्शार्थ सात्त्विक भावों का

१ प रामचन्द्र गुप्त जायसी प्रयावली भूमिका पृ० २१

२ घट भरि देह लकड़ तब दहा। -मूर० १०१५४ ६

३ मतिराम र रा छ ३७२। पद्माकर ज० वि ४५५

४ गली अघरी साकरी भी मूठभरा आनि।

पर पिछाने परसपर दोऊ परम पिछानि ॥ बिटारी १५१

तुन सगमा मरुटवर्त्य बितविनसमन्नागेनापि।

अभिलपितेनोद्वष्टवमनस्यशुभममथा लभ्यम ॥ -कुम्भीनीमतम छ ८२२

५ दग मिहचन मृगलोचनी भरयो उलटि भज-बाध।

जानि गई तियनाथ क हाथ-परसहा हाथ ॥ -बिटारी ३१६

६ एकहि भोन दुरे एक सग ही अंग सा अंग छवायो बहाई।

कप छट्यो फनस्ये बड्यो तनु राम उठयो अखियाँ भरि घाई ॥ -रसरज १६।

७ बिटारी ४३ ५ २६७ ३६८ ५३१



जैसा वणन किया है वैसा धामन भी मिलता है।

यदि मूलम दृष्टि से दग्ना जाए तो रति का प्राक् श्रीढाएँ स्पग गवन्ता पर हा प्रापारित है। आलिंगन और चुम्बन स्पग व ही भू माते जा सकत है। इसी व्याप्ति नशगत और दन्तगत तत्र ही गही कामगास्त्रीय दृष्टि से गधनन म भी एक प्रकार म स्पग गवन्ता की ही परिकल्पित तिहित रहती है। इमे या भा कहा जा सकता है कि प्रपमावस्था म स्पग परस्पर घना व छू जाते तत्र ही सीमित रहता है किन्तु प्रमग प्रेमवद्वि के साथ ही स्पग भी दीपकालित और प्रगाड़ हाता जाता है।

रघुवग म महाकवि कालिदास ग दन्तुमती का पाणिग्रहण करा ही घन के रोमाञ्चित हो उठने तथा दन्तुमती की प्रगुलिया म पसीया छूटन का वणन किया है।

### रति-श्रीडा

रति श्रीडा व अतगत पहले प्राक् श्रीढाएँ घाती हैं। दग्ना मलाप और सामान्य स्पग के बाद प्राक् श्रीढामा म प्रगावतर स्पग के ही विभिन्न रूपा वा वणन होता है।

### प्राक्-श्रीढाएँ

प्रेम के सम्पोषण और काम के सम्बद्धन म प्राक् श्रीढामा का महत्वपूर्ण स्थान है। शृ गार-काव्य म चाहे वह जिस भाषा म हा, प्राक् श्रीढामा व विविध रूपा का मनोहर वणन प्राप्त होता है। इसके अतगत आलिंगन, चुम्बन नशगत और दन्तगत का वणन परपरा प्राप्त है।

### आलिंगन

स्पश सवेदना की सुखात्मक अनुभूति आलिंगन म प्राप्त होती है। वास्त्यायन ने अनेक प्रकार के आलिंगन का वणन किया है। उ हाने चार कोमल और चार कठोर भेदा की चर्चा करते हुए आलिंगन आठ प्रकार के माने हैं। कोमल आलिंगन का प्रयाग नवोटा या मुग्धा नायिका के साथ करन का विधान है और कठोर आलिंगन विश्व-घ नवोटा या मध्या और प्रीडा के साथ। एक गाथा म रति अत म घणना वस्त्र न पाने के कारण नायिका के लवनादना प्रिय आलिंगन का वणन मिलता है।<sup>१</sup> आलिंगन वणन म अधिकांश कविया न विभिन्न अंगों क स्पग तत्र का ही वणन किया है। साहित्य म सभी प्रकार के आलिंगन नहीं मिलते केवल कुछ प्रमुख या सामान्य आलिंगना

का ही वणन मिलता है। भालिगन की प्रगाढता के साथ साथ पीडा की मात्रा बढ़ती जाती है। यह पाडा भी आनन्ददायिनी होती है। इसमें प्रिय में प्रेमा डूब जाना चाहता है, उसके अगा म समा जाना चाहता है इसीलिए रामाय का भी व्यवधान उसे सह्य नहीं होना।<sup>१</sup> भालिगन म तमयता, सात्विक भाव और स्पर्श सुख का वणन काव्य साहित्य की परंपरा रही है।<sup>२</sup> रीतिराय म भी इस परंपरा का निर्वाह किया गया है।<sup>३</sup> बिहारी ने नायक-नायिका के आत्ममिचौनी खेलत दृग बारवार भालिगन का वणन किया है—

दोऊ चोर मिहोचनी खेल न खेलि अघात ।  
दुरत हिये लपटाय क छुवत हिये लपटाय ॥<sup>४</sup>

उक्त दोहे म स्पर्श सुख की अतृप्ति की मुदर व्यजना हुई है। इस प्रकार इस श्रीडा म नायक-नायिका क क्षणिक भालिगन का वणन मिलता है।<sup>५</sup> पद्याकर की नायिका वृष्ण से प्रेमपूणपरिहास करते हुए उन्हें छूट का मना करन की चेष्टा करक भी भालिगनप्रद हो जाने पर कुछ बोल नहीं पानी।<sup>६</sup> इसी प्रकार मतिराम की नायिका के हाथ ही प्रिय को भालिगन करने से वर्जित नहीं कर पात।<sup>७</sup> पहले उदाहरण मे स्वरभग और दूसरे म स्तम की स्थिति का वणन है। इस प्रकार क सात्विक भावो के अय वणन भी भालिगन के प्रसंग म शृ गारी काव्य-परंपरा म प्राप्त होते हैं।

### चुम्बन

चुम्बन म स्पर्श और गंध दोना प्रकार का सुख मिलता है अत इसमें त्वक और प्राणोद्वय की परितृप्ति हाती है। सामान्य स्पर्श से चुम्बन प्रिय क और अधिक तृप्तय एव प्रेम की स्वीकृति का दानक है। चुम्बन क्रिया का कोमल रूप स्त्रत्व घषण से गुदगुदी उत्पन्न करता है किन्तु प्रगाड चुम्बन प्रगाड भालिगन की तरह पीडायुक्त होता है। कामशास्त्रीय विधान क अनुसार चुम्बन के मुख्य स्थल मस्तक कंग, कपाल, नत्र, अघर,

१ तपस १८१०८

२ ऋतुम० ४६ ५६ अमर ४६ चिरान ६४८ शिग० १ १५६ शीक० १५१२१ १५१२३ २५ हनु २१२ गडडवही ११५२ ११५७ कु म ५७३ गीत १४४३ १४४१ बरो ३ ५ १८१ मूर १०६८८ १ १०८१ १ १२१३ १

३ मतिराम सतमई ५३४ ६४७

४ बिहारी दो ३३०

५ दुरिन का गई निगरी सखियाँ मतिराम कहै इतने छिन म ।

ममकाय क राधिका कठ लपाय छिप्यो कहू जाय निवृ जन म ॥ मतिराम रसराज २७०

६ आनि लगायो हिये सोँ हियो भरि आयो गरो कहि आयो कछू ना । ज वि० छ ४०८

७ र रा० छ०, ३१५

वण और त्रिहृत् ६ ।<sup>१</sup> गस्तुत प्राटुनात् प्राचीन तात्पर्य म प्रोक्त म्यन क चम्बन का वणन गिनता है ।<sup>२</sup> घघर चुम्बन म मुगस्तरु क मादक प्रमात्र का वर्णन धार्याचार ने बड़ी विस्मयता म किया है ।<sup>३</sup> त्रिहृत् हिन्दी म मुरुयन वणोन घघर घोर नत्र चुम्बन क हा वणन उपलब्ध होने हैं । मत्र चुम्बन की वज्रना अधिभाग म पीर पग पत्र न स होती है । वही स्वयोमा प्रात काल प्रिय के घघरा पर घननेत्रा क वज्रल को देगकर दार्याती है तो वही राषिडता प्रमग म नादा क हाडा पर वज्रनरेगा को दग मुक्ति होती है ।<sup>४</sup> परकीया क चीर रति म चुम्बन का वणन धार्याचार और बिहारी ७ बड़ी ही चित्रात्मन शती म किए हैं ।<sup>५</sup>

### नखक्षत

प्रेम की स्वीकृति और प्रगाढ़ता क साथ साथ प्राक भीठामा म पीडन की मात्रा बढ़ती जाती है । चुम्बन की प्रपेगा नखगत म स्पष्ट ही पीडा की वद्धि लक्षित होती है । साथ ही इन पीडा म काम की प्रवृद्धमान अवस्था का भी चोतन होता है । काव्य परपरा के अनुसार तो दग्गन से ही सात्त्विक भावा के उदय का वणन मिला लगता है । किन्तु भ्रालिगन और चुम्बन प्रणयीयुगम की काम भावना की तीव्रता को व्यजित करते हैं । उससे भी अधिक काम-वद्धि नखगत म हानी है । इसीलिए काममूत्र म पहल रागवद्धि क लिए सघर्षात्मक नख विदखन का विधान है ।<sup>१</sup> उसम भनक प्रकार के नखक्षता का वणन है चित्तु साहित्य म या तो नखक्षत की रेखाया का स्पष्ट भ्रकन नही है या है भी तो केवल मद्धचन्द्र या मण्डल का ।<sup>२</sup> सामान्यत नखक्षत की लाल रेखा का ही वणन मिलता है । काममूत्र मे चुम्बन के स्थला की तरह नखक्षत के भी स्थलो—कक्षा स्तन, गला, पीठ जघन और उरु का निर्देश मिलता है ।<sup>३</sup> काव्य परपरा म अधिक वणन स्तन क लसपदाक-भूषित होने का ही मिलता है अय स्थलो का बहुत कम ।<sup>४</sup> रीतिकाल के पूव भनक काव्य

१ काममूत्र २।३। ६-७

२ किरान ६।४७ शिख १ ।५२ ५५ गाय।० २।७६ भ्रमर ३६ नख० १।८।८३ १।८।६६ १०१

श्रीक १५।३७ ब्रह्मव पुराण ४।२।१५३ नय० ५।४।११ हनु० २।१३ २।१८

३ अघर उस्त कश्चिदमामालिहमधि सोलितो मौलि ।

आसात्तमिष चुम्बनमुग्गस्थशोषि तरुणाम्याम् ॥ -धार्या ६२

४ नखघ० १।८।१२ मूर० १।६।८७

५ प्रमदानम्बिनमूमिश्चम्यन्ती प्रीतिभाति मघराशी ।

प्राचीराग्रनिवेशिनविदुःकापा न पतिता सुतनु ॥ -धार्या० ३५६

अग्ररिन उच्चि भ्रम प्राति द उग्रमि चित चक्ष लील ।

रुचि मा दुःख दग्गन के चूमे वाट वपोन ॥ -बिहारी ४

६ रागवृद्धी सघर्षात्मक नखविलेखनम । -काममूत्र २।४।१

७ बिहारी ५ १ तुलनीय- नखपदकक्षिपयिन ॥ -गात ७।१५।३

८ काममूत्र २।४।५

९ गाय।० ५।६।३ ३।३३ वजा ३२३ । नखघ० १।८।६३ ६६ पन्मावत २।७।५१

प्रथा में नखक्षत के वणन मिलते हैं। कवियों ने नखक्षत के वणन में अनेक प्रकार के अप्रस्तुत विधानों द्वारा अपनी चमत्कार प्रदर्शन की वृत्ति का परिचय दिया है जिनमें नवीन नखक्षत से गोमित कुच द्वय मानो गुकी के चंचु से खाए गए यौवन वक्ष के दो फल हैं मन्म एज के गजराग से क्षण्य कुम्भयल या अमृतपूण दो कलश।<sup>१</sup> यदि तुलनात्मक दृष्टि से इन प्राक-नीडामो के वणन की परंपरा का अध्ययन किया जाए तो इनमें भी कुछ रुचिमा निश्चित की जा सकती है जिनका वणन प्रायः सभी कवियों ने किया है। नखक्षत प्रिय के प्रेम का प्रतीक मानकर विहारी की नायिका उस सूखने ही नहीं देती।<sup>२</sup> कविदा ने प्रचण्ड रति वणन में नखक्षत का विशेष रूप से उल्लेख किया है। किंतु कहीं कहीं नायिका के रति चिह्नो की शोभा मात्र का वणन करते हुए इसका उल्लेख किया गया है।<sup>३</sup>

### दत्तक्षत

वात्स्यायन ने नखक्षत विधान के पश्चात् दत्तक्षत का विधान निरूपित किया है। दत्तक्षत की निया में प्रणया या नायक-नायिका के अधिक प्राण अनुराग का द्योतन होता है। नखक्षत की अपेक्षा दत्तक्षत में स्पष्ट की अधिक प्रगाढ़ता निहित होती है। कामसूत्र के अनुसार उत्तर ओष्ठ अंतमुख और नयन को छाड़कर शेष चुम्बन स्थला में दत्तक्षत का विधान वर्णित है।<sup>४</sup> साहित्य परंपरा में दत्तक्षत का वणन मुख्य रूप से अधर पर ही होता है। शेष स्थानों के वणन क्वचित् कदाचित् ही प्राप्त होता है।<sup>५</sup> यद्यपि दत्तक्षत के प्रकारों का भी वणन कामसूत्र में प्राप्त होता है किंतु कविदा ने प्रायः इसका वणन नहीं किया है। कामादीपन में दत्तक्षत का महत्वपूर्ण स्थान है। कवियों ने इसका वणन अधिकतर व्यंग्य रूप में ही किया है। कहीं-कहीं सङ्घटित अधर पर उत्प्रेक्षामो के द्वारा दूर

१ शुक्री चक्रेऽतः छवि फलयुग यौवनतरा-

रय शकुलक्षणा मन्मकरिण कु प्रयुगनम ।

समुद्र भोगयामनवलशायणमुकुटिन

कुच-त-त-व्या नवनक्षपाक विजयते ॥ -शाङ्ग ३३३८ ।

२ विहारी २७७ तुलनीय गाथा १११

३ कु सं० ८८७ किरात ६१६, शिशु १ १५७ ६६ श्रीक १५१५ १५३ ३२ पवन २६ जी च ४१७ ब्रह्मव० ४१५१ १५३ ४१२८६६ १ १ कु म० ४०१ २ गीत २१६६ ७१५३ पद्मावन २७३० ४१ का० नि १५१६ १६१२० १७६ २० सा ६७ १२३ २५६ २६६ पद्मा० १५५

४ उत्तराष्ट्रभन्म मुख नयनमिति मुखवा चुम्बनवद्वानरदनस्थानानि ॥

-कामसूत्र २१५१

५ वचन-नाया ७१ उह-गाथा ६१७, कापल-गाथा ११६६, स्तन-गाथा० २१५०

की कौड़ी लाने का प्रयास भी रतिरत होता है।<sup>१</sup> नलगत की तरह दनशत भी प्रिय के प्रणय का स्मरण श्लिलाता रहता है।<sup>२</sup> वाच्य परवरा म रत्नशत की साभा व वणन प्राय प्राप्त हाते हैं।<sup>३</sup>

यद्यपि यहाँ भालिगन, चुम्बन, तगगत और दनगत को प्राक् श्रीडा व अतगत लिया गया है, किन्तु वात्स्यायन के साधय पर इसका वणन रति श्रीडा व पश्चात् भी किया जा सकता है।<sup>४</sup>

## रति श्रीडा

मानव की मूल वृत्ति काम के मानसिक सक्षोमा या अन्तिम परिणाम रति श्रीडा है। इसे नायक और नायिका के मानसिक और शारीरिक तात्काल्य का प्रनीह माना जा सकता है। नारी और पुरुष की एक दूसरे के प्रति समर्पित होने की अन्तिम क्रिया रति या समोग है। भारतीय सस्कृति म इसका धार्मिक महत्व भी प्रतिपादिन है। सष्टि क्रम का मूल बीज होने के कारण धम अविरुद्ध काम की प्रगासा की गई। फायड जस पारचात्य मनोधज्ञानिक प्रत्येक प्राणी व क्रिया-बलाप की अविक्ति काम-वृत्ति से बठात है। सामान्या को छोडकर स्वकीया और परकीया म उभयपक्षीय मानसिक सामीप्य इस श्रीडा मे चरमावस्था को प्राप्त होता है।

मानव की विलास भावना ने धीरे धीरे इसके धार्मिक रूप को त्याग कर मोग पक्ष को प्रधानता दी। कालिदास में काम की स्थापना उच्च भावभूमि पर की गई है। वहाँ नारी विलास का साधन नहीं और काम श्रीडा मात्र मनोरजन नहीं है। कालिदासोत्तर साहित्य म मोग पक्ष की प्रधानता के साथ नारी का रूप विलासिनी मात्र रह गया उसी प्रकार काम श्रीडा भी आभिजात्यवर्गीय मनोरजन का एक अंग बन गयी। महाकाव्या मे भालिगन चुम्बनादि प्राक् श्रीडाभा के साथ समोग का भी खुलकर वणन मिलता है।<sup>५</sup>

राधा माधव या गोपी-कृष्ण की अनुरजक लीलाओं के वणन के साथ पुराणो म

१ वाया ५।५८

२ छिनक उचारति छिन छवति राघति छिनक छिगाय ।

सूत्र त्ति पिय छहित अघर दरगत देखत जाय ॥ --विहारी १६१

३ रघु ६।३२ ऋगु ५।१२ १७ उपध० १।८८६ शाङ्ग ३७१२ कु म ५७१ वजा ३२३ म स ४ २ विहारी ३८४

४ चुम्बननघाशन छयाना न पीवापियमस्ति रागयोगात् । --नाममूत्र २।३।१

५ कु स ८।१७ २ ८।८३ विरत ६।५ शिशु १०।५२ ६०, नपध० ६।११६ १२ रा० म गुदर काण्ड ६४ ६१ हनु० २।२८

समोग और रति क्रीडा का वणन अनिवाय रूप से पाया जाने लगा ।<sup>१</sup>

इस प्रकार मस्त्रत के लौकिक और पौराणिक साहित्य में जिस वामकला की विविधता का अवनन हुआ उसका प्रभाव परवर्ती साहित्य पर पूण रूप से पडा । जयदेव की राधा की सखी काम क्रीडा के अानन्द की चचा करती हुई राधा से कहती है, इस रात्रि में लज्जाप्रस्त दम्पति को किसी रस की प्राप्ति नहीं होती । परस्त्री और परपुरुष भाव से प्राप्त होने वाले नायक और नायिका का आलिंगन चुम्बन फिर नखभत तदनन्तर कामोद्वेग फिर सुरतारम्भ सुरत और सुरतान्त में प्रेम तथा सम्भाषण में अप्रुव आनन्द की प्राप्ति हाती है ।<sup>२</sup> जयदेव ने अनेक स्थलो पर सुरतक्रीडा का वणन किया है । वही वाच्य रूप में और कही व्यंग्यरूप में ।<sup>३</sup> हिंदी के महाकाव्यो और मुक्तकोम शुगर वणन के प्रसंग में रति क्रीडा का भी वणन सवत्र हुआ है ।<sup>४</sup> रीतिकाल में उपयुक्त साहित्य की परंपरा कुछ तो बलासिक बत्ति की बद्धि के कारण और कुछ काव्यशास्त्र के निरूपण के आग्रह के कारण भी मिलती है । विहारी ने तो रति क्रीडा का विवरण देते हुए स्पष्ट ही कहा है—

चमक तमक हाँसी ससक मसक भ्रुपट लपटानि ।

ये जिहि रति सो रति मुकुति और मुकुति अति हानि ॥<sup>५</sup>

इस प्रकार के रति-व्यापार का वणन अथ कवियों में भी द्रष्टव्य है ।<sup>६</sup> इसमें प्रेम भावना के उदात्त और साहित्यिक रूप के स्थान पर बहिरंग रसिकता का ही परिचय मिलता है ।

### विपरीति रति

वात्स्यायन ने पुरुषायित का विधान उस समय किया है, जब नायक रति क्रिया में अथ जाय पर राग की गति न हो । ऐसी अवस्था में नायक के आग्रह से सुरति में उसकी सहायता के लिए अथवा अपने अमिप्राय से अथवा रति की एकरसता को दूर करने के लिए या नायक के कुतूहल के लिए नायिका को पुरुषवद् आचरण करना चाहिए ।<sup>७</sup>

१ हरिवंश पु २।२।१७ ३५ पंम प पाताल छट ८३।५६ ५८<sup>१</sup>

बहववत पु ४।३।१५ ४।११।१८ ४।२८।७२ ५६ ४।२६।४१८

२ गान श्लो० ५ पु० १ १ १

३ गीत १।४।११ २।६।११२ श्लो० १२ प० ८६ ६१ श्लो० १ प० १७६ श्लो० २

४ श्लो० ५८ ८४ मा० का ५।१११ १२ मूर० १।११ ६१ ११६१, १२०

पद्मभाषण २७।३३ ३६

५ विहारी दो १६२

६ म० म० ४६७-६६ ५६१

७ नायकस्य सतताम्यापारिधिममुपलभ्य रागस्य चानपयामम् अनुभवा तेन तमद्योऽपगत्य पुरुषायित्तन माहात्म्य दद्यात् स्वाभिप्रायाद्वा विरस्यद्योत्रनादिनी नायककुतूहलाद्वा ॥ -मा० मू २।८।१

रति श्रीशामा के बरान प्रसंग म विपरीत रति का बरान ससृष्ट व महाना-व्या, पुराणो और मुक्तक रचनाशामा म मिलता है। प्राकृत भाषा व ग्रथा म भी इसक बरान मिल जाते हैं। वलासिक प्रनुरजन की प्रधानता व साथ एस बराना की वृद्धि होती गई। रीतिवाच्य की स्थूल शृ गारिकता और विपरीत रति व प्रसंगा को सामन लाकर कुछ आचारवादी या आदशवादी आलोचक रीतिवालीन कविता की निंदा करते हैं। प० विश्वनाथप्रसाद मिश्र ने इस धारणा का निराकरण करत हुए लिखा है 'रही घोर शृगारिकता की बात, सो विपरीत रति और सुरतात के बरान ससृष्ट और प्राकृत की परम्परा म पहले ही स चले आ रहे थे। फिर भी एस बरानो के नाम पर जितनी अधिक इनकी वृत्ता की जाती है उतने अधिक परिमाण म उनके ऐसे बरान मिलते नही।' रीतिवाल के कुछ कथियो ने विपरीत रति के बरान मे अलकारो की अकार कुण्डल चिबुर हारावलि वा हिलना स्वेद नीकरा से तिलक बिंदी आदि का फलना और वस्त्राभूषणा का अस्तव्यस्त होना वर्णित किया है। ऐसे बरान काय परपरा मे नए नही हैं। उदाहरण क लिए ससृष्ट प्राकृत और अपभ्रंश के साथ रीतिपूर्व हिंदी वाच्य स अनेक छंद उद्धृत किए जा सकत हैं।<sup>१</sup> राधा कृष्ण की विपरीत रति का बरान भक्तो और रसिका ने समान रूप स किया है। एसे छंद चाहे ब्रह्मवैवतपुराण<sup>२</sup> मे हा चाह बिहारी की सतसई म बरान शली और वस्तु परिगणना म कोई अंतर नही पडता। बिहारी की नायिका की किकिनी का बोलाहल और मजीर का मौन होना<sup>३</sup> हिन्दी के लिए पुरानी बात है। इसक सोन हिंदी ही नही अय प्राचीन साहित्य म नी दूटे जा सकते हैं।<sup>४</sup> हिन्दी वाला ने परपरा पालन मान किया।<sup>५</sup>

## रति-रण

रति श्रीशामा का रूपक रण से देना भी एक प्राचीन काय परिपाटी थी। कथियो ने नायक और नायिका को विरोधी राजा या सेनापति वचुकी को कवच कटाक्ष को तीर बर्छी या भाला किकिनी की ध्वनि को मारू बाजे और सीत्कारादि को

१ प० विश्वनाथप्रसाद मिश्र बिहारी पृ ५७

२ गाथा ५।४६ १।५२ ७।१४ वजा० ३२१ ३२४

३ ब्रह्मवैवतपुराण ४।१५।१५

४ परयो जोइ विपरीत रति रूपी सुरत रन और ।

करति कुत्ताहल किकिनी गली मौन मजीर ॥ -बिहारी ३६३

५ शिगु १०।६२ मपघ २।६३ ६४ थीर १५।३५ ६ कु म ५७४ शाड्य० ३१ ५ ३४६७ ३६६६ गीत शनो ३६ प १६१ ६४

६ सर० १।२० ३३ ग क १४३ ४४ म स १६७ ६० ४६४ ६५ ५० ५५६ बिहारी ४६४, ३२६, ५६० ३८३ का० नि ४।२०, १८।४१, प० प्र० ४८ ४६

हुकार के रूप में वर्णित किया है।<sup>१</sup> उदाहरण-स्वरूप मिखारीदास का एक छंद द्रष्टव्य है—

जानु जानु बाहु बाहु मुल्ल मुल्ल भाल भाल,  
 सामुहँ भिरत भट मानो यह थर है ।  
 गाढ़े ठाढ़े उरज बलत नख घाइ लेत  
 दाहे णिग करन-सजोगी धीर बरु है ।  
 टूट नग छूट वान सिजित बिरद बोल  
 मपरन मारु बाज बाजत प्रवरु है ।  
 राघे हरि क्रीडत अनेकनि समरक्ला  
 मानो मडी सोभा श्री सिगार सौ समरु है ॥<sup>२</sup>

कृष्णमवत कवि मुरदास ने ऐसे वर्णना में कही दस चंद्रमा को एकत्र चित्रित किया है तो कही असख्य ग्रहों को।<sup>३</sup> जायसी ने तो नायिका के विभिन्न वस्त्राभूषणों के टूटने का ऐसा उल्लेख किया है मानो सप्राम भूमि में शत्रुपक्ष की सेना छिन्न भिन्न हो गई है—

भएउ जूझ जस रावन रामा । सेज विधसि विरह सप्रामा ॥  
 टूटे अग-अग सब भेसा । छूटी माग, भग भए बेसा ॥  
 कचुकि चूर, चूर भइ ताती । टूटे हार, मोति छहरानी ॥<sup>४</sup>

## सुरतान्त

इस प्रसंग में नायिका के शिथिल अंग निमीलित या अर्द्धो मीलित नेत्र, विखरे केश और वंशपुष्प स्वेद, दीघ नि द्वास, पसीने से फले हुए कुकुमादि के तिलक, अव्यवस्थित और टूटे हुए वस्त्राभरण आदि का वर्णन प्राप्त होता है। रीतिकार्य के लिए ऐसे वर्णना के श्रोत संस्कृत प्राकृतादि भाषाएँ एवं हिंदी का पूर्वनिर्मित प्रभूत साहित्य रहे हैं।<sup>५</sup> अमरुक कवि ने एक ऐसे ही श्लोक में उक्त अवस्था का सफन अंकन हुआ

१ श्रीक १५१२२ गउठवहो ११५३ ५६ कु म ५७२ वजा ३२७  
 २ शु नि २४४  
 ३ मूर १ ११६८६ १६६ १६६८ २ ३२ २ ३५ २१२६  
 ४ पलमावन २७१३३  
 ५ कु० स ८५८८ ऋतु० ५१७ ५११ १२ १४ १५ नय १८११४ २० श्रीक० १५१४० ४६  
 कु म ३८७ ८८ ३६० गीत २१६१८ श्लो० ४ प १६२ श्लो० ५ ६ प १६३ ६४  
 पवन० ६ गउठवहो ७८८ ११६१ वज्जा ३२८ पद्मावत २७१४२ मूर १०१६६० ११६६  
 १६६४ २० ६११ २ ३४ २१७६ ८० मा० का ५११२३, वनि० १७४ ७८ २ ७  
 म० स० ४७८, ५०२



है।<sup>१</sup> पद्मानर का वणन बहुत अश म उक्त श्लोक में साम्य रखता है।<sup>२</sup>

सुरतात म जिन दगाभा का वणन किया जाता है उमरा विचित्र परिचय नायक के पक्ष म खण्डिता के वणन म भी मिल जाता है।

## विविध विहार

सयोग शृ भार के वणन म काय परम्परा के अनुसार विविध विहारो क वणन का प्रमुख स्थान रहा है। ऐसे विहारो म ऋतुभा की उद्दीपन पृष्ठभूमि पर घनेर श्रीडाभा का आयोजन नागरक वृत्ति की विशेषता थी। वात्स्यायन ने इन ऋतु विहारो का विस्तृत उल्लेख किया है।

## फाग-श्रीडा

फाग श्रीडा मे इन्द्रिय सुख का सर्वाधिक भवराश रहता है। सामाजिक विधि निषेध का बंधन भी इस मदन महोत्सव म शिथिल हो जाता है। परकीया प्रणय लीलाएँ निबन्ध हो जाती हैं। रामोद्दीपन म वसंत का मादक वातावरण पूण भोग देता है। वात्स्यायन के कामसूत्र मे नागरका की विलास श्रीडाभो के वणन म फाग श्रीडा के अनेक रूप मिलते हैं।<sup>३</sup> इन श्रीडाभा म स सुवसंतव को ही जयमगला टीका म मदनोत्सव कहा गया है। इसम नरय गीत वाद्य आदि का सम्यक विधान होता है। मदनोत्सव म कामदेव को प्रसन्न करने और अभीष्ट वर प्राप्ति क लिए काम पूजन का विधान प्राचीन साहित्य म प्राप्त होता है। यह उत्सव चन शुक्ल त्रयोदशी का मनाया जाता है। इस उत्सव का हर्षोल्लास चत्र पूर्णिमा को अपनी चरम सीमा पर पहुँच जाता है।

१ शालोलामलकावनी विसुल्लिता विभ्रच्चलत्तुच्छन ।  
विचिन्मूष्टविश्रयक तनुतर स्वेदाम्भत शाकर ।  
तन्व्या यत्सुरतान्ततातनयन वक्र रतिभ्यत्यये  
गत्वा पातु चिराय कि हरिहरस्वदादिभिर्विवत ॥ -भमर० श्लो०

२ कन कुण्डल जह हुलन सुनत धनकावलि विनमित ।  
स्वेदकीकरण मदित तनक तिलकावनि सुनमित ।  
सुरतमध्य भति लसत हरप हुलसत चष चधन ।  
पघाकर भपि उभपि उभपि भपि रहत दगचल ।  
नित सो विपरीत मुरति समय त्त मुख मुख साधक ज सब ।

हरिहरविरचिपुर उरगपुर मुरपुर न कह भाव भव ॥ -पद्मानर ज वि० ६१६

३ 'यगराति यौगजीवार, मुनसन्तक सहशारमजिवाभ्युत्पादिका विसखादिका नवपत्रिका उदकभेदिका पाषाणानुपानम एवशात्मनी यवचतुर्थी घ्राणोत्तुर्थी मन्नीलावो मदनमजिका ह्यालारा भशाशोतमिका पुग्गावचारिका चूनलतिका इममजिका कम्भयद्वानि तास्ताश्च माहि मा'यो देशपाशक श्रीडा जनम्यो विदिग्माचरवृरिति ममूय श्रीडा । -का सू० १।४।४३

वामसूत्र में उल्बध्वेदिका श्रीडा का उल्लेख बाँस की पिचकारी में सुगन्धित जल भरकर प्रियजना का उत्तम सराबोर करने की प्राचीन परम्परा का संकेत देता है। इसका दूसरा नाम 'शृंग श्रीडा' भी मिलता है। फाल्गुन पूर्णिमा को नगरनिवासी पिचकारी से एक-दूसरे पर किशुक आदि कुसुमों के रंग से युक्त जल को छोड़ते तथा पटवास का भी प्रक्षेपण करते थे।<sup>१</sup>

रीतिकाल पूर्व भक्त कविता ने राधा वृष्ण की फाग-खीला का बड़ा विगद वणन किया है।<sup>२</sup> रीतिकाल में बहुत कुछ उसी प्रकार फाग का वणन मिलता है। इस उत्सव में एंड्रव मुख की सामग्री सबसे अधिक उपलब्ध होती है ऋतु के अनुकूल कसरिया और पीत वस्त्रा की बहार, काकिल और पपीहे की पुकार, नृत्य, वाद्य, गुलाल केसर और अक्षरी की झोली पिचकारी की फुहार, स्त्री पुरुषों की लपक भपक धर पकड़ रोझ-खीझ, माग गौ वस्त्रा की खीचा-तानी, डफ-गोल मदग वगैरे आदि सभी उपकरणों को एकत्र किया गया है।<sup>३</sup> रसिक सामन्ता का यह प्रिय खेल हो गया था। संस्कृत साहित्य में तो मदनमहोत्सव का ही वणन मिलता है हालाँकि मलने का कम अर्थात् वामदेव का पूजन प्रमुख और रंग गुलान खेनने का गीण स्थान था। फिर भी रत्नावली नाटिका में कुकुम अक्षरी के प्रयोग के साथ चबरी नटर का वणन मिलता है।<sup>४</sup> फाग श्रीडा में प्रिय सानिध्यजय सादिक भावा के उत्सव का वणन भी प्रायः मिलता है।<sup>५</sup>

रीतिकाल में होनी का सबसे अधिक और विचित्र वणन पद्माकर ने किया है। प्रेम की व्यञ्जक चेष्टाओं का नादात्मक और चित्रात्मक शैली में पराकर ने जैसा वणन किया है वगा फाग श्रीडा के प्रसंग में किसी भी पूर्ववर्ती कवि ने नहीं किया।<sup>६</sup> मतिराम बिहारी और मिथारीदास के चित्र उतने रंगीत और भावमय नहीं हो पाए हैं।<sup>७</sup>

### उपवन विहार

सदागणालिक श्रीडा विनोद में उपवन विहार का विनोद रूप से वणन होता

- १ हानवा फाल्गुनपूर्णिमाया शृंगारान्मिकनेन किशुकात्किमुभरारागाम्भता परस्वरोक्षणम्, मिथ पटवाम प्रक्षेपश्च । —वा सू जयमगला टीका पृ ४६
- २ छातस्वामी पृ सं० ५६ ५७ तुलसीदास गीतावली उत्तरकांड छ० २१ २२ सू० छ० २८५६ २६२१ व र ४१६ ६१
- ३ डा बच्चार्जिह रीतिकालीन कविता की प्रेम यजना प ३५३ ५४
- ४ रत्ना १।६ १८ कु म ८६२ ६२
- ५ माया ४।१२ बिहारी, १४८
- ६ पद्माकर ज वि १३ ५८ ८९, १५६ १८७ २०० २३६ ३०१ ३४० ४१ ३४८, ३६६ ४२ ४३५ ४४५ ४६५ ४६६ ५०३ ६३ प्रवीणक ५६ ६१ पद्मामरण ६३
- ७ मतिराम म सं० ४४७ ४६ बिहारी १६६ ६७ २०५ ३ २ ४१४ मिथारीदास २ स।० २५२

रहा है। कालिदासोत्तर शास्त्रीय महाकाव्या में ऐसे वणन प्रायः मिलते हैं जिसमें वमत के उद्दीपक वातावरण में नायक नायिका किसी उपवन में बिहार करते चित्रित किए हैं।<sup>१</sup> श्रीकठचरित में तो पूरे छठे सर्ग में अम्पाराषा और पावती के साथ शकर का उपवन बिहार ही वर्णित हुआ है। पौराणिक साहित्य में भी ऐसे प्रसंग आए हैं।<sup>२</sup> वाल्म्यायन ने नागरकवृत्त की चर्चा करते हुए उसके उद्यानगमन का भी वणन किया है। नागरक की बलासिक श्रीडाग्री में स अनेक श्रीडाग्री का सम्बन्ध उपवन बिहार सहै।<sup>३</sup> साहित्य परम्परा में इन उपवन बिहारों की चर्चा करते हुए उपवन में बने श्रीडागल, श्रीडा सरोवर और प्रँजादोला का भी वणन किया गया है। पुष्प सरिताएँ, मयूर और कोकिल ऐसे वातावरण को और भी उद्दीपक बनाते आए हैं। कभी-कभी गृहाराम में भी इन सब वस्तुओं की चर्चा मिलती है। मेघदूत में यक्ष का गृहोद्यान इसी प्रकार का था।<sup>४</sup> वाल्मीकि रामायण में अगोक दानिका में राम और सीता के सयोगवालीन बिहारा का वणन मिलता है।<sup>५</sup> श्रीकृष्ण का तो लीला क्षेत्र ही वृन्दावन था। कुछ पदा में कृष्ण भक्त्या ने राधा कृष्ण की मिलन चिष्टाओं के साथ कुंज और उपवन की गोभा का भी वणन किया है।

रसिकवृत्ति की प्रधानता के कारण ऋमश वन विहार से उपवन या गृह वाटिका में बिहारा का वणन अधिक होने लगा किन्तु रीतिकालीन कवियों ने वाटिका में नायक और नायिका को जाने के कष्ट से भी मुक्ति दिला दी। अधिकशः क्रीडा विनोद रंगमहल में ही सीमित हो गए। फिर भी कुछ कवियों ने प्रकृति के माह परंपरा के आग्रह और जहागीर के बागों से प्रेरणा प्राप्त कर उपवन बिहार का वणन किया है। उपवन बिहार के प्रसंग में पुष्प चयन पुष्पाभरणों के द्वारा नायिका का मडन पुष्प समृद्धि की प्रशंसा एवं वसंत श्री का वणन प्राप्त होता है।<sup>६</sup>

## जल क्रीडा

रीतिकव्य या शास्त्रीय महाकाव्या में उपवन बिहार के साथ ही कहीं-कहीं जल क्रीडा का भी वर्णन प्राप्त होता है। उपवन बिहार से थके हुए नायक-नायिका जल क्रीडा के द्वारा अपना मनोरंजन करते हुए पाये जाते हैं। वाल्म्यायन ने नागरकवृत्त प्रकरण में उपवन बिहार के ही अंतर्गत जल क्रीडा का वणन किया है।<sup>७</sup> जल क्रीडा का वणन

१ किरात ८।२२-२६ शिशु ७।७-१७ ७।४७-५७ नष १।८ १।१८ जी० च ४।८

२ पद्मपुराण पातान अट ८३।४३-४३

३ कासखूड १।४।४ ४।४।४२

४ मघदूत २।१३-१६

५ बा० रा उत्तर काट ४२।२-१२

६ विक १।४१-६० श्रीक० ८।१४-१४ क र ३।६ म स० २३१ बिहारी १६६-४३८

७ कामखूड १।४।४१

मुग्यत ग्रीष्म ऋतु म होता है परंतु कही कही वसंत ऋतु की सामान्य गर्मी से विकल होकर भी नायक नायिकाया की जन त्रीडा का वणन मिलता है ।

सर-सरिता के तटों पर स्नान के व्याज स परकीयाओं से मिलन स्नान करती हुई नायिका के भोगे वस्त्रा स ऋनकते अगा का दशन, उनकी सलज्ज विलास चेष्टाएँ, मुपुत सकेत या मौन सम्भाषण अनेक काया म वर्णन हुए हैं । ऐसे स्थला पर जल त्रीडा का स्वच्छ द अवन नहीं हुआ है ।

प्रिय के साथ जल त्रीडा करन म सयोग मुख अधिक प्रगाढ हा उठता है । नायक-नायिका का जन को विशेष आधाता स एक दूसरे पर उछालना तरना डुबकी लगाना आदि का वणन जन त्रीडा म प्राय मिलता है । समृद्ध प्रावृत आदि प्राचीन काया मे सरिता तट क प्रणय चापार और जल त्रीडा क प्रवसर की भी वलासिक चेष्टाएँ वर्णित हुई हैं ।<sup>१</sup>

पुराण साहित्य म भी जल त्रीडा का वणन पाया जाता है ।<sup>२</sup> कृष्ण की लीलाया का के द्र यमुना का पुलिन प्रदेश रहा है परंतु जल त्रीडा का जैसा वणन समृद्ध के शास्त्रीय महाकाया म मिलता है वना पुराणा म नहीं । पुराणा म इतिवत्त की प्रवा नता हाने के कारण ही सभवत जल त्रीडा का विस्तार स वर्णन नहीं किया गया ।

हि गी म कृष्ण भक्ता ने कही कुछ पदा म राधा कृष्ण की जल त्रीडा का वणन किया है पर विस्तार स नहीं ।<sup>३</sup> डा० मिथिलश कान्ति न लिखा है, जल त्रीडा प्रसंग म माधुरीजी न यमुना क अदर ही एक महल की कल्पना कर ली है जिमम जाकर राधा कृष्ण केन करत ह । इसी प्रसंग म उन्होंने नौका विहार का भी उल्लेख किया है । वल्लभ रमिक ने यमुना क स्थान पर सरोवर म जल-त्रीडा का वणन किया है ।<sup>४</sup>

लगता है रीतिकाल के पूर्व ही जल त्रीडा क वणन म कविया की उगासीनता का कारण जन रचि का परिवर्तन है । प्राचीन काल म लाग सरिता सरोवरा म ही स्नान करन थ किन्तु धीरे धीरे कुछ तो पदा प्रथा के कारण और कुछ शारीरिक थम स बचने क कारण लागे ने न्ने तालाब म स्नान करना कम कर दिया था । मुगल बादशाहा मे भी जल त्रीडा क शीकीन कम ही रहे हांग । इसीलिए जसे वन विहार की प्रथा म द पढ गई थी उसा प्रकार जल विहार की भी रचि कम हो गई थी वरना किसी न किसी रीति कवि ने अपने आश्रयदाता की दानगीलता युद्धवीरता क साथ साथ तराकी की भी प्रशंसा की हाती और रानिया के साथ जल-केलि की भी ।

१ रघु १६।५४ ५६ गिण ८।१७ ३८ गाथा ५।७३ षड्वहो छ १६१ ६६ विक० १०।७०  
८६ १२।६१ ७ श्रीक ६।२३ ३२ न० थ ५० १।२ ख ६।५७ पवन० १७ ३३ ३५  
८३ जी च ४।१७ २३ कु म० ६८४ ६०

२ भागवत १०।३३।२४, १।६।७ ६ पद्म० पानाल खण ८३।५६ ६

३ मूर १०।११।८ ६५

४ डॉ मिथिलश कान्ति द्विती कवि शृंगार का स्वल्प पृ १७६

बिहारी और पद्माकर ने जन शीडा के वणन में रुचि प्रवर्धन सिद्धाई है पर वह प्रायः एकांगी है केवल अर्थात् नायिका के तरने स्नान करने का ही वणन किया गया है।<sup>१</sup> ऐसे वणन संयोग शृंगार के नहीं कहे जा सकते। हाँ जहाँ नायिका नायक को देखती हुई देर तक स्नान करने का बहाना किए बठी रहती है उस वणन प्रसंग को संयोग शृंगार का अंग माना जा सकता है।<sup>२</sup>

रीतिकाल के कवियों ने जल शीडा की प्रपेक्षा नन्-नदी के तट प्रदेग पर मंडरान वाले रूप-सोनुप रसिका का ही प्रकन किया है और उससे भी अधिक इन कवियों ने सद्य स्नाताओं का वणन किया है। इन वणनों की परंपरा मद्यपि प्राचीन साहित्य में सुरक्षित है किन्तु लगता है इन कवियों ने आत्मानुभव के आधार पर ही ऐसा वणन किए हैं। फिर भी यह नहीं कहा जा सकता कि रीतिकाल के कवियों ने जल शीडा का वणन किया ही नहीं।<sup>३</sup>

सद्य स्नाताओं के प्रसंग में उनके अधस्तुने अगा नक्षत्रतां रति चिह्नं धुलं हृष्टं तिलकं काजलं भालक्तव्यं बाला से चूते हृष्टं जलं विदुषो और मण्डनहीन रूप-श्री के वणन में कवियों का विशेष रुचि लेना बलासिक युग-दोष का प्रतीक है। ऐसे वणनों सस्कृत से लेकर रीतिकाल तक मिलते हैं।<sup>४</sup>

## दोला शीडा

नागरकवच का वणन करते हुए वात्स्यायन ने उसकी बाटिका में सघन छाया में प्रेक्षा-दोला का होना आवश्यक माना है। उहाने चक्र-दोला का भी उल्लेख किया है।<sup>५</sup> संभवतः यह चक्राकार घूमने वाला कोई यंत्र रहा होगा। डा० हजारीप्रसाद द्विवेदी ने लिखा है 'प्रेक्षादोला की प्रथा वर्षा ऋतु में ही अधिक थी। सुमापितो में वर्षा ऋतु के वर्णना के अक्षर पर ही प्रेक्षादोलाओं का वणन पाया जाता है।<sup>६</sup> वर्षा की मोहक और रागोद्दीपक पृष्ठभूमि महर्षिल्लसित प्रेमिया की दोला शीडा का वणन सस्कृत प्राकृतादि साहित्यों में खूब मिलता है। झूला झूलने में स्पष्ट के साथ वायुवेग से सहराते

१ मह पद्मारि मु दहर भिज सीत-सजल कर छाया ।

मीर उब घूटन नै नारि सरोवर न्हाय ॥ -बिहारी ५२१

२ मुह घोवति एधी घसति हसति अनगवति तीर ।

घसति न इदीवरनयनि कालिदी के नीर ॥ बही ५२०

३ पद्माकर ज वि० ७७

४ विराट ८।३४ ३६ शिशु ८।५५ ८।६१ ७० गाथा० ६।५५ गउडवही ७७७ ८७ अर्थात्

५ ५ भागवत १०।६०।१० ११ कपूर १।२६ १।२८ २।२४ नीक ६।३३ मूर० १ १।१६६ बनि ८१ बिहारी ५७३ ६७३

६ स्वामीजीजी प्रेक्षादोला बहावाटिकायां मप्र-छाया स्थण्डिल पीठिका च मनुमुमति भवनविपास ।

-कामसूत्र १।४ १५

६ डॉ० हजारी प्रसाद द्विवेदी प्राचीन भारत के कलात्मक विनोद पृ ४१

वस्त्रों खुलते अंगों, झनझनाते आभूषणों और प्रमुञ्चित वटाओं के साथ नायिकाआ की बैलासिक चेष्टाआ का भी वर्णन किया गया है।<sup>१</sup>

### शरद-त्रीडा

शरद रात्रि में जागरण करके त्रीडा विनोद करने का सबसे वात्स्यायन के यथ रात्रि में कौमुदीजागर से मिलता है।<sup>२</sup> वृष्णनीला में राम का आयोजन अधिकान्त शरद रात्रि में ही मिलता है। इसलिए रासनीला के वर्णना का शरद रात्रि की त्रीडाआ में लिया जा सकता है। शेष काव्य साहित्य की परंपरा में शरद त्रीडा का रामेतर वर्णन नहीं मिलता। शरद की रात्रि ज्यो स्नाध्वनित हान में रागोद्दीपक हाती है। एमी रात्रि में रीति कालीन कवियों ने नायक नायिका के विनास और मुग्ध त्रीडा के वर्णन मिलते हैं पर वे भी स्वल्पमात्रा में ही हैं। वृष्ण और गोपिया की राम त्रीडा का वर्णन परम्पराबद्ध गली में ही मिलता है।<sup>३</sup> रूपगोश्वामी ने रास त्रीडा और कदुक त्रीडा को चारुव्रीडा नाम दिया है।<sup>४</sup>

### अष्टयाम

अष्टयाम के अन्तर्गत छ मिजात्यवर्गीय जीवन के आदर्श पर संसकतापूर्ण दिन चर्या का उल्लेख मिलता है। चार प्रहर दिन और चार प्रहर रात्रि की अवधि का मिला कर अष्टयाम की विलास त्रीडाआ का वर्णन किया जाता है। नायक-नायिका की अनवरत प्रवृद्धमान विलास-तपणा के सतपणाय कविया ने अष्टयाम का विधान करके उनक सुखपूर्वक कालयापन का नुस्खा तयार कर दिया। इसका विशेष अर्थ में प्रयाग वृष्ण भक्तान किया। उन्होंने अपनी अद्भुत रचनाआ में आराध्य देव के अष्टकालिन पूजाविधान का वर्णन किया है। यद्यपि इसका मूल ध्यय इष्टदेव के समय समय पर भोग राग उत्पादन गयन पूजा आरती की व्यवस्था देना था किन्तु बाद में कविया ने उसे अपनी रचि के अनुरूप वर्णित किया।

१ रघु ६।४६ विक्र ७।१२ २७ १।३२ ३६ श्रीक ७।५५ ६६ कपूर २।३ ३७ पवन ४८ छीनस्वामी प० स० ६२ ६३ मिहारी ७ ५ ज वि २२१ ४ ६ प० प्र ६४ ६७

२ का सू १।४।४२

३ हरिनंदवचनावृत्ति प्रतिबधुन्य मध्यत

स्तनविलसदमजो अमति चित्रमरोत् सी।

मधुसूत तद्विदुग्धना प्रति हरिद्वय मध्यत

मश्रीपूतकराम्युजा नगनि पश्य रागोसवे ॥ उ नी० श्वा ४२ प० ४८६

सुतनीय-गोपिन मंग निमि गरु की रमन रमिक रमराम।

सहां ह अमि मनिन की मवनि लख सब पाम ॥ -विहारी १७३।

४ रासकदुकशनाया चारुवाहात्र कानिता ॥४२॥ उ० नी० पृ २२७

अष्टयाम का संकेत वात्स्यायन व कामभूता ग मिनता है। उन्होंने नागरक की दिनचर्या का विधान किया है। वात्स्यायन न इग प्रसंग में नागरक व प्रात जागन, नित्य श्रिया स निवत्त हाकर अनुमान (गुणधि प्रयोग) करा धूप आदि म अवन को सुवासित करने माला पहनन आन्वक्तव लगान आठा पर चिन्नाहट व निग माम लगाने मुख सुवासित करने व लिए ताम्बूल ग्रहण करा और प्रसाधन की पूणता जानन के लिए दपण देखन या वणन किया है। नागरक दापहर म भाजन व अनंतर घुन सारिका व प्रलापन गुन लावन कुक्कुट मय आदि व मुद्र का दन तथा पीठमद विन विद्रूपक आदि व साथ मनोरजन करता हुआ शयन कर। पुन तीसरे प्रहर गांठी म जाय। गाम को संगीत वा आयोजन करे उमर उपरात रात्रि हान पर वह गुरु मित धूप से पूण सुसज्जित गयन-वश म जाकर महायज्ञा व साथ अमिसाग्नि की प्रतीक्षा करे दूती भेजे या स्वय जाए। प्रिया व आ जान पर मधुर आनाप स उसका स्वागत करे। उसके सौंदर्य प्रसाधना व विलुप्त होन पर स्वय उसका मण्डन कर।'

वृष्ण और राधा का अष्टयाम इससे कुछ भिन्न है। जसा कि पहन कहा जा चुका है उनके अष्टयाम म पूजा विधि को प्रमुखता दी गई। किंतु जब भजनगण अष्टयाम का गान करने लगे तो श्रद्धय वृष्ण एवम गाली नागरक बना दिए गए। प्रात उत्थापन के पदो मे सुरता त और रात्रि गयन के पटा म सलज्ज रति म नकर विपरीत रति और रति रण तक का वणन किया जाने लगा। परिणाम यह हुआ कि आराध्य की दिव्य लीलाएँ लुप्त हा गई और उनके स्थान पर इन्द्रियापभोगपरक शृ गारी लीलाया की प्रमुखता हो गई। खोज रिपोनों के साक्ष्य पर प्रमाणित किया जा सकता है कि ऐसे प्रभूत सामग्री के सकलन का अष्टयाम नाम दकर शृ गारपरक ग्रथा की सभ्या मे अतिशय वद्धि की गई। रीति कविया के फुल्ल छन्दो मे अष्टयाम का आयाम न समा सका अत उ होंने स्वतंत्र ग्रथ लिखकर अपनी अष्टयाम-वणन की अभिलाषा पूरी की।

### वैभवपरक त्रीडाएँ

शृ गार के संयोग पथ के अतगत उक्त विलास त्रीडाम्रा के अतिरिक्त कुछ अन्य गीण विलास त्रीडाएँ भी आ जाती हैं। समय के साथ इन त्रीडाम्रो म परिवर्तन होता गया, फिर भी कुछ अपने रूप मे सुरक्षित है। इसी प्रकार कुछ बलासिक त्रीडाम्रा म विदेशी प्रभाव के कारण वद्धि भी हुई। इनका संक्षिप्त परिचय यहाँ प्रस्तुत किया जाएगा।

### चोरमिहीचनी (आखमिचीनी)

भारतीय साहित्य म चोरमिहीचनी की प्राचीनता का संकेत हाल की गाथा सप्तगती की एक गाथा स लगता है जिसमे शिव का पावती के नेत्रो को अपने हाथो

मूढ़ने का उल्लेख है।<sup>१</sup> रीतिकाल के पूर्व कृष्ण भक्ताने चोरमिहीचनी का सुरक्षितवर्णन किया है। नपथ चरित में भी नन का ठिपकर दमयती के नन को बद कर लना और दमयती का नन क स्पश को पहचानकर मान करना वर्णित है।<sup>२</sup> रीतिकाल में चोरमिहीचनी खेलत हुए नायिका के स्पर्शय सात्विक भावा का रमणीय अकन हुआ है।<sup>३</sup>

### मदपान

मदपान के प्रभाव में पद-पद पर स्थलित होनेवाली मदधूणित नत्र आरवत कपोला वाली नायिका की उद्दीपक चेष्याण सस्कृत प्राकृत और रीतिपूर्व हिन्दी साहित्य में वर्णित हुई है। मानिनिया के माभग की औपथ करपन, मान गनु और लज्जा सकोच क नाशक आदि रूपा में इसका वर्णन प्राचीन साहित्य में पाया जाता है। वाल्मीकि रामायण में अशोक वनिका में विहार करत हुए रामचंद्रजी और सीतजी के मधुमरेय पान का वर्णन मिलता है।<sup>४</sup> कालिदास स अकर पद्मावर तव के कविषा ने मदपान का वर्णन करत हुए मदमत्त प्रणयी-युग्म की चष्टाया और उनकी रूप शोभा का उद्दीपक वर्णन किया है।<sup>५</sup>

कृष्ण लीला विहार विषयक ग्रथा में गापी कृष्ण के लीलाधीय का भी वर्णन मिलता है। रूपमांम्रामी न लीलाचाय के अतगत वशी वस्त्र और पुष्प आदि चुरान का वर्णन भाता है।<sup>६</sup> कृष्ण की वशी चुराती हुई राधिका का वर्णन चिन्तित है—

नोच-वासिदय चरणयो नू पुरे मूकयती

धत्वा धत्वा कनकवलयो पुत्क्षिपन्ती भुजाते ।

मुद्रामक्षणे चकितचकित गन्धदात्तोकयती

स्मित्वा स्मित्वा हरति मुरलीमक्तो माधवस्य ॥<sup>७</sup>

१ रत्नेतिहासिप्रसंगकरनिसलप्रप्रहृदणमणममलसम् ।

रहस्य तद्वर्णनमण पञ्चपरिउम्विध जमद ॥ -गाथा ५।५५

नपथ २।१११ १३

३ मनिराम २०।२।० छ १६

वाल विहार सग में अवनमन वला ।

मुदत मेरे नपन होकरन वपूर लगाद ॥ वहा २

म० म० ५६ ११७ २१८ २ विहारा ५२३ ३३० ३१६ कर ति १२।५

५ वा० रा० उत्तरकाण्ड ५।१९ २८

६ कु म सग धट्टम् ऋतु ५।१ किरान० ६।५१ ७१ विक० ११।५३ ६७ धीक १५।८

पुष्पराण विवाताम्रद ८३।५५ गाथा ६।१ मउडवने १६२ ६५ ३६६ ८३६ ११५

११५५ ५८ उ नी वनी २१ प २८८ श्यो २३ प० ५६२ विहारी १३१ ३६५ ५०८

५८६ ६६५ अ० वि० ५८६

७ लीलाधीय भवेद्वशीवस्त्रपुण्यां हागिता ॥

उ नी० श्ला० ५७ प० ५८१

७ वही श्ला ५८ प० ५६१



दुमी प्रकार वारण के गानव ग मुग्गी सुग्गी वगैर को तपाना ती मुग्गी के गाने  
बिहारी । भी बिहारी ।

उत्तरय सागरय सागर को मुग्गी धरयो मुग्गी ।

गौरी वरे भोरनि धरयो वरे वरे नि- जाय ॥

समय शृंगार म मन्त्राभिधायक का मन्त्राभिधायक का मुखर त/ का गाना किन्तु  
प्रिय का गाना टूटा जातर उतरा मुखर त/ का गाना है । का गाना म उतरय विर को  
कान्त मुग्गी का गाना मिहारी ।

उत्तरा शीशया विहारा क धिशांखा मंगल का धरया म मंगल गानिका का  
धन शान का भी गाना बिहारी है । का गाना म मंगल धरया धरया धरया धरया  
रति धरिया की धरया मंगली थी । कर्त-कता गाना मंगल का गाना मिहारी है । का गान-  
का गानय धरया धरया का म धरयाधरया धरया धरयाधरया भी गाना धरिया का गान  
समयागुगार पारर गाना करता था । गानिका को वृद्धि क गान का प्रयाग भी  
बढ़ता गया था धरया धरया मंगल का मुख गाना माना जात गया था । वि ति  
प्रमाण क साय धरयाधरया धरया धरया धरया धरया धरया धरया धरया धरया धरया  
प्रवेति का शीशया धरया धरया धरया धरया धरया धरया धरया धरया धरया धरया  
म धरयाधरया धरया धरया धरया धरया धरया धरया धरया धरया धरया धरया धरया  
धरया धरया धरया धरया धरया धरया धरया धरया धरया धरया धरया धरया धरया  
धरया धरया धरया धरया धरया धरया धरया धरया धरया धरया धरया धरया धरया

वियोग शृंगार

मानव की मूल वृत्ति काम का आधार प्रेम होता है धीर प्रिय वस्तु या स्थिति  
का सन्निकष प्रयास वापस हास है । धरया धरया की प्रवेति दगा है । धरया धरया  
दगा को प्राप्ति करन क पून धीर धरया भी प्राय उम प्रिय वस्तु को प्राप्ति करन  
क निल नास प्रहार क वृष्ट सहजा है तथा उमे प्राप्ति करन क धरया धरया धरया धरया  
कारणवत धरयाधरया जाता है धरया धरया धरया धरया धरया धरया धरया धरया धरया धरया  
साहित्यशास्त्र म पहली स्थिति का पूरण धीर धरया धरया धरया धरया धरया धरया धरया धरया

१ बिहारी दो ४४०

२ धमक ३७ ८२

सुचनीय-में मिसदा तापो समुधि मुह धूम्यो डिग जाय ।

हृत्यो विस्यानो गर गहो रहा गर मर आय ॥ -बिहारी ३१०

३ नी वरी ५५ पृ० ४६३

४ गम सहिता २१२ १९९ उ० नी वरी ० ६२ प ३५३ वरी ५६ पृ ६२

५ का० मू० ११४१२

६ दाता० ५७ मा का० ५१७७

७ पद्मपुराण पाताल लण्ड ८३१७९ ७२ उ० नी वरी ० ४४ पृ २२३ २८

मर १ १९९६४ पद्मावत २७१२४ का ति १२१२

है। कुछ लेखक ने वियोग को दुःखकारी और अप्रियानह माना है। इसी आधार पर मयाग शृंगार का स्थायी भाव जहा रति माना है वहा वियाग शृंगार का स्थायी भाव अरति ग्रहण किया है। किंतु तात्त्विक दष्टि से विचार करने पर उक्त मत का निराकरण हो जाता है। विप्रलम्भ यद्यपि दुःशात्मक अनुभूतियाँ की प्रधानता रहती है किंतु उसका स्थायी भाव अरति कभी भी भाय नहीं हा सकता। प्रेमी कष्ट भेलता हुआ भी प्रिय का स्मरण और अनुचितन नहीं छोडता। उसम प्रिय के प्रति आसक्ति और विन्वास की कमी नहीं होती। अरति सचारी भाव हा सकता है स्थायी नहीं। वियोग की व्यथा म भी प्रेमी के हृदय म रति भाव विद्यमान रहता है इसीलिए वियोग म भी मनोनुकूल प्रेमी के प्राप्त होन की आशा और सुखसवेत्नात्मक सयाग की स्मृति चाह वह भूत हो या भावी, निरतर विद्यमान रहती ह। श्रीहृप ने इसीलिए चकई-चकवा के नित्य नूतन और प्रचद्धमान राग को आदग रूप माना है जो वियोग के कारण सयाग की एकरसता को दूर करता रहता है। क्षणिक वियोग या मान की महता इसलिए स्वीकार की गई है कि वह अरति का परिणाम न हाकर रति का नित्यनूतनता प्रदान करता है। अत कुछ कविया द्वारा सयोग की अपेक्षा, वियोग की मधुरता की स्वीकृति समीचीन ही है।

विप्रलम्भ के भेदापभेद का निरूपण समवत सवप्रथम भोजराज ने शृंगारप्रकाश म विस्तृत रूप से किया है। जैसा कि पहल कहा गया है प्रथम मिलन स पूव के और मम्मिलन के पदचात् व वियाग म कुठ अन्तर अवश्य हाता है। इस अन्तर या वणिष्टय को दष्टि मे रखते हुए दगारूपकवार न शृंगार क नीन भेद—सयोग अयोग और विप्रयोग किए हैं।<sup>१</sup> वियोग क उपभेदा म कुछ लागा ने अमिलाप ईर्ष्या, विरह प्रवास और शाप—पाच ग्रहण किए हैं और कुछ ने केवल पूर्वराग मान प्रवास और कृष्ण—चार भेदो को ग्रहण किया है। इनम अमिलाप और पूवरराग वस्तुत एक ही है जो धनजय के अयोग का पर्यायवाची है।

## १ पूर्वानुराग

इम अवस्था म प्रेमी प्रिय का प्राप्त करन की अमिलापा स प्रयत्न करता है। इस प्रयत्न म अमिलापा की तीव्रता आवाग्ना और सक्न्प स पुष्ट हाकर राग का प्रवद्धन करती है। उक्त अमिलापा दा प्रकार न उत्पन्न होनी है—(१) अवणजय (गुणा के सुनन से) और (२) दानजय (प्रिय क प्रत्यक्ष देखन से अथवा चित्र म या स्वप्न म देखन म)<sup>२</sup>। पूणराग म कवल अमिलापा ही नहीं होनी अपितु श्रीत्मुक्य, निर्वेत् ग्लानि आदि की स्थितिया भी पाइ जाती हैं, ऐसा दगारूपकवार का भी

१ अयागो विप्रयोगश्च सम्भोगश्चरति स त्रिधा । -दशरूपक ४१५

२ सागाणप्रतिहृतिस्वप्न छायांशामामुत्थनम् ।

धुनिष्ठात्रात्मधीरोदमागशाङ्गिगुणस्तुके ॥ वही, ४१५

मन है।<sup>१</sup>

डॉ० बच्चनसिंह ने अमिलाप दशा की मनोवृत्तियों व्याख्या करते हुए लिखा है 'मनोवृत्तियुक्त दृष्टि में अमिलाप का सबंध किसी-न किसी मूलप्रवृत्ति से होता है। पूवानुराग में 'अमिलाप मूल यौन प्रवृत्ति (सेक्स इन्स्टिक्ट) से सम्बद्ध है। किसी के गुण-श्रवण या दग्गन से मन में एक क्रियात्मक प्रेरणा (इम्पल्स) उत्पन्न होती है। यह क्रियात्मक प्रेरणा अमिलाप का जन्म देती है। इसने अनन्तर सामाजिक अवरोध या व्यवधान नायिका के मन में अनक प्रसार के सबगा (इमोजन) को जन्म देते हैं। इन समा सबेगो में बेचनी (अनइजीनेस) मूल रूप से सन्निविष्ट रहती है।<sup>२</sup> वास्तव में कामदशा में इन्हीं सबेगा की प्रमुखता रहती है। भारतीय साहित्यशास्त्र के अनुसार इन्हीं अमिलाप चिंतन अनुस्मृति गुण-कीर्तन उद्वेग प्रलाप उमात्, व्याधि जडता और मरण नामक दस अवस्थाओं में अंतर्भूत किया गया है।<sup>३</sup> कुछ लोग इनका निबंधन अथ नामों से करते हैं जस चक्षुप्रीति मनसग स्मरण निद्रामग तनुता, व्यावृत्ति लज्जानाग उमाद मूर्च्छा तथा मरण।<sup>४</sup> इनमें चक्षुप्रीति और अमिलाप वास्तव में एक ही दशा है। मनसग और चिंतन या चिन्ता तत्त्वत एक हैं। व्यावृत्ति और मरण के अनुस्मृति में कोई अंतर नहीं है।<sup>५</sup> लज्जानाग, उमाद की ही एक अवन्तर दशा मानी जा सकती है। तनुता और व्याधि भी एक ही हैं। इन दशाओं में विरही की शारीरिक और मानसिक दोनों अवस्थाओं का सम्यक उदघाटन होता है।

इस सदन में मुग्धा विधोगिनियों की दशा बड़ी विचित्र होती है। वे अपनी चक्षुप्रीति को लज्जा के कारण प्रकट नहीं कर पाती। ऐसी स्थिति में उनकी सखियाँ कामदशा की अवाप्ति को रोग समझकर कभी कोई उपचार करने लगती हैं और कभी ताप आदि के उपगमन के लिए शीतोपचार की व्यवस्था में लग जाती हैं। काश्च प्रश्न में शीतोपचार की सम्बन्धी सूत्रियों का प्रयोग प्रायः पाया जाता है। रीतिकार्य में तो ऐसे विवरण अनेक स्थिता में मिलते हैं। रीतिकविया को वियोग की इन दशाओं के वर्णन में कवि गिना सबंधी पुस्तिका से पर्याप्त सहायता मिली होगी इसमें दो मत नहीं हो

१ दृष्टि अने अमिलापान्च कि नीलमुख्य प्रजायते।

अप्राप्ती हि न विचेंगे ग्नाति हि नादिचिन्तनात् ॥ वही ४।१६ १७

२ डॉ बच्चन सिंह रीतिकारीय कवियों की प्रमथयता प १६४

३ दशावस्थ म तत्रागवभिलापोय चिन्तनम् ॥

स्मदिग भाक्यो गप्रलापोमात्सवरा ।

४ जडता मरण चति दुःखस्य यथोत्तम् ॥ -दशरूपक ४।११ १२

५ यथा प्रीतिमन सग सकलागतिमतति ।

प्रत्यागा जागर काश्यपरतिविषयान्दरे ॥

स वाकियवन व्यागिन्माग मूछन मुहु ।

मरण चतिविजया क्रमण प्रम पुण्य ॥ वही १।६६ १ ७

६ नायिकास्य २४।१६१

सकत। कविकल्पलता में वियोगदशा के अन्तगत वर्णित होने वाली स्थितियों का निरूपण करते हुए लिखा गया है कि इसमें ताप निश्वास, चिन्ता, मौन वृत्तागत, वय की गणना, रात्रि की दीघता जागरण शीतलता की उष्णता आदि का वर्णन होना चाहिए।<sup>१</sup>

## २ मान

आचार्यों ने मान के प्रणयजय और ईष्याजय दो भेद किए हैं।<sup>२</sup> प्रणय मान निहंतुक होने के कारण यद्यपि तात्पर्य दृष्टि से वियोग के अन्तगत नहीं आ सकता, किन्तु विद्वानां ने इस भी वियोग में गृहीत किया। नायकगत नायिकागत या उभयगत मानकर इसका तीन भेद किए हैं। ईष्यामान सहतुक होता है। इसका कारण प्रिय का अपराध माना जाता है। प्रिय के अपराध को सूचित करने वाला नायिका की चेष्टा विशेष को मान कहते हैं।<sup>३</sup> शिगमूपाल ने निर्वेद अवहित्या, ग्लानि दीनता चिन्ता क्षपलता, जडता और मौन आदि का इसका सचारी माना है।<sup>४</sup> यह तीन प्रकार का होता है—लघु, मध्यम और गुरु। अल्प प्रयास से अपनेय मान का लघु कहते हैं। कष्टतर और कष्टतम प्रयास से दूर हाने वाल मान को क्रमशः मध्यम और गुरु माना जाता है।<sup>५</sup> भानुदत्त ने चौथे प्रकार के असाय मान का रसाभास माना है।<sup>६</sup> काव्य ग्रंथा में उक्त तीन प्रकार के ही मान पाए जाते हैं। दूसरी स्त्री को देखने हुए देखने पर लघु गीतस्खलन से मध्यम और दृष्ट सम्भोग या भोगकल्पन के कारण उत्पन्न हानेवाला मान गुरु होता है। हँसी विनोद के द्वारा मनोरंजन करने पर लघु मान दूर होता है मध्यम मान पुनः वसा अपराध न करने की बात कहने अपवा नायक के क्षय लेने पर समाप्त होता है और गुरु मान मानिनी नायिका के चरणा पर गिरने से या उसे भूषणादि देने से दूर होता है।<sup>७</sup>

## ३ प्रवास

प्रवास के हेतु का निरूपण करने हुए धनञ्जय ने इस तीन प्रकार का माना है—

१—नायक २—भ्रमवत् श्रयवा ३—शापत्रय।<sup>८</sup> यह काव्यका प्रवास भी तीन

१ विरहे तापनि श्वासचितामौनवृत्तागता ।

मन्मथ्या निशाब्ध जागर शिशिरोष्णता ॥ —कविकल्पलता १।३।३७

२ मानोऽपि प्रणयेष्ययो । —शश्वत् ६।५६

३ प्रियापराधमूचिता चेष्टा मान । —रत्नरविणा (चौ) पृ० ४३

४ रसाभाव मुधावर (त्रिवेदम सत्त्व ) प० १८१ ।

५ हा च लघुमध्यमो गुरुव । अलापनयो लघु कष्टतरापनयो मध्यम कष्टतमापनेयो गुरु ।

— रत्नरञ्जरी प० ४३

६ मन्नाध्यस्तु रमामाम । वही पृ ४३

७ वही पृ० ४३

८ कार्यत सम्भ्रमात्तापलवसो मित्तयेकता । दशम्यत् ४।६४

अवस्थाप्राप्त विभक्त किया गया है—१—भावी २—भवन और ३—भूत ।<sup>१</sup> अर्थात् प्रवास की सम्भावना तथा उद्यतता और सम्पन्नता जिसे गमन यास्वत्प्रवास गच्छत्प्रवास और भूतप्रवास कहा जा सकता है । ही रीतिकविया न यास्वत्प्रवास या भावीप्रवास और गच्छत्प्रवास या भवन प्रवास का अंतर स्वीकार न करत हुए केवल दो भेदों को ही स्वीकार किया है । भावी प्रवास का तात्पर्य प्रवास की सम्भावना से है जिसमें अवधि या प्रवास काल की दूरी निश्चित रहती है किन्तु भवन में वह क्षण सम्मुखित होता है । इसमें प्रिय जान को उद्यत रहता है और भावी में भविष्य में जान वाला होता है । पूर्वानुराग में निरूपित तस्य तशाण इसमें भी होती हैं ।

प्रोपितपतिका व मनु निश्वास वाश्य और अप्रसाधित वगैर वलाप वा वणन किया जाता है । याज्ञवल्क्य ने प्रोपितपतिका के आचरण को नियमबद्ध करत हुए लिखा है कि उस पीडा शरीर का अनकरण सामाजिक उत्सवा का दान हास और परशुहगमन नहीं करना चाहिए ।<sup>२</sup>

भारतीय साहित्य में प्रवासत्रय वियोग की कुछ रुढ़ियाँ हैं जस संश्लेषण पत्र लखन उद्दीपन तत्वों के प्रति उपानम और चित्र-लेखन । इन रुढ़ियों के प्रयोग का अवकाश गत प्रवास या प्रोपितपतिका व वणन में ही अधिक रहता है । पूर्वराग और मान में वियोग दशाप्राप्त का विस्तार १० विद्वनायप्रसात् मिथ के अनुसार प्रस्वामाविक हो जाता है । मिथजी ने लिखा है— पूर्वराग में उद्वट प्रमिलाप मात्र रहना है इसलिए वचना का विस्तार शिग्यान की जगह वहाँ नहीं रहती । जो लोग ऐसा जात हुए भी पूर्वानुराग में ही नाना प्रकार की व्याधियाँ सही कर लिया करत है वे प्रेम व स्वरूप को ठीक नहीं समझत । मान भी पर क धरे व मीतर हाना है, इसलिए उसमें भी वचना का बड़ा चढ़ा रूप ठीक नहीं । सचारिया की भाँति मान का वीग भी सचरण करता रहता है ।<sup>३</sup> किन्तु सामान्यत पूर्वानुराग में भी विरह दशाप्राप्त का वणन पाया जाता है ।

### वनिपय वणन रुढ़ियाँ

वियोग गृहार का सामान्य परिचय तन व वान सम्प्रति वियोग वणन की कुछ रुढ़ियाँ की चर्चा की जाणगी । यह वक्वित्तल्लनाकार व अनुमार वियोग में वणित वनिपय रुढ़ियाँ का उद्भव किया जा सका है । इसमें अनिश्चित कुछ और भी वणन रुढ़ियाँ हैं । यहाँ उक्त सभी रुढ़ियाँ का परपरा का परिचय दिया जाणगा ।

१ गुण वनतया कृतान्त हाना विषय की प्रथमा में व ही वचन

१ न व वाना ववन वनतयापदी वचन ॥

परी ११२

२ इत न व नि वनतयापदी वचन ॥

-वचन ११२

३ वीर वनी वचन वचन वचन वचन ॥

इत व व व व व व व व व व ॥

वचन वचन वचन ११२

४ व व व व व व व व व व व व व व ॥

विरहोद्दीपन हो जाती हैं जो मयोग की दशा में सुगन्ध होती हैं।<sup>१</sup> यहाँ तक कि शीत तापसार भी तापदायक प्रतीत होने लगता है।<sup>२</sup> विरही की मन स्थिति ही ऐसी हो जाती है कि उसे सारी प्रकृति विपरीत दिखाई पड़ती है। मयोग शृगार में नाना विलासा का जा दीशागु<sup>३</sup> और 'अनेकमुरतनमागमनाम्य लीलोपदेशापाध्याय'<sup>४</sup> का सम्मानित पत्र प्राप्त करनेवाला कामन्द्य है वही वियोग की स्थिति में निर्दिष्ट आचरण वाला पिशाच<sup>५</sup>, व्याघ्र<sup>६</sup> चाण्डाल<sup>७</sup> धून<sup>८</sup> दलाल<sup>९</sup> और इद्रजालक<sup>१०</sup> के रूप में दिखाई देता है। विरहिया ने उसकी ममता करते हुए उसे उपालभ भी कम नहीं दिए हैं। संस्कृत प्राकृत अभ्रभक्ष और गीतिकान के पूर्व हिन्दी साहित्य में एस अनेक उपालभों का बणन है जिसकी परंपरा रीति काव्य में भी अपुण्ण दिखाई देती है।<sup>११</sup> कामदेव ही नहीं उसने प्रिय मित्र वसंत की भी कम ममता नहीं हुई है। जिसे जितना सम्मान मिलना है उस विपरीत रूपा में उतना ही अपमान भी। वसंत को रागोद्दीपक होने के कारण ही काम राय का प्रधान मंत्री<sup>१२</sup>, सधि विग्रहिक<sup>१३</sup> ऋतु तुलपति<sup>१४</sup> शृगार मंत्री<sup>१५</sup> काम मनापति<sup>१६</sup>, योद्धा<sup>१७</sup> आदि का पद प्रदान किया गया है कि तुविरही या विरहिणी के लिए वह ठग या वरुण<sup>१८</sup> एवं अधिक<sup>१९</sup> के समान मालूम पड़ता है। कामसदेश

१ यानि स्म रमणीयानि तथा सह भवन्ति ये।

ता यवाग्मणीयानि जायन्ते म तथा विना ॥ - वा रा क्विचि १।७०

२ शर पर न कर हिंसी शरजर पर जार।

दात्रनि धारि गनाव सा मल मिन घनसार ॥ - विहारी ३

३ शाङ्ग ७० ३४४४ ३६७० वि० प ६२।१२ ज कि ३५६

४ कामन्दरी प० ४२६

५ वही प ४८१ न० व० ५।६७ शाङ्ग म ३३४६

६ वि प० २७।२ मूर० १०।१७०२ म म० ६३५ विहारी १३४ ३५

७ गाय वना ३ प० १५७ प्रा प्र २।१६५

८ नीक १५।१७

९ वि प ४८।८

१० वही ३२।२ म स २१५ का नि० १७।२०

११ श शा० ३।६ मालि २।२ का ५ ४७१ नपव ४।७५ हन ५।२२ नागा पु ३८

२।० रत्ना० २।१ जी च ४।३१ सु० व० ५।१ जिनाई ४१५ ६१४

१२ विक ७।३६ बालि० २३६

१३ श्रीक ६।४ ६।२६

१४ नीक० ७।१७

१५ विक १।६

१६ विक १।१० रत्ना १।१७ १८ श्रीक ६।८

१७ ऋतु० ६।१ ६।२७ २८

१८ श्रीक० ६।३३

१९ ज वि० २५६, ५ ४ प० प्र० ५८

वाह्य<sup>१</sup> मान निवारण म पणित<sup>२</sup> प्रिय सगी<sup>३</sup> कायल वियोग की दगा म बन्धरा<sup>४</sup> पाणिनि<sup>५</sup> और यसाइनि<sup>६</sup> बन जाती है। पसाय को किसी विरहिणी न कामदेव की लाल आंगा<sup>७</sup> की तरह देखा तो किसी को दाशानि<sup>८</sup> का भ्रम हो गया। कामदेव का सदेगवाहा<sup>९</sup>, अग्ररक्षन्<sup>१०</sup> और उमका सम्मोहन मन्त्र जपनवाला<sup>११</sup> भ्रमर, वागाग्नि का धूम<sup>१२</sup>, यम का काला नागपाश<sup>१३</sup>, मानच्छे<sup>१४</sup> व वृष्ण वृषाण<sup>१५</sup> आदि की तरह प्राप्तदायक हो जाता है।

वसत ऋतु रा ही थोड़ी थोड़ी गर्मी पडने लगती है। सयोगिया व लिए रातें कामोद्दीपक और सुखद लगन लगती है। इसीलिए वसत ऋतु व प्रारम होते ही शुभ्र ज्योत्स्ना धवलित रात्रि म चन्द्रमा मत्वरक्तु व श्वेत छत्र<sup>१६</sup> की भाति शोभित होने लगता है। स्मरचमू के श्रेष्ठ योद्धा<sup>१७</sup> शृगार दीशागुरु<sup>१८</sup>, शृगार वधु<sup>१९</sup> शृगार सजावन,<sup>२०</sup> मामय सम्प्रदाय के दीशागुरु<sup>२१</sup> चद्र को दक्षवर वियोगिनिर्वा विवत हो जाती हैं। कोई स्वय राहु बनकर उसे प्रसने की कामना करती है<sup>२२</sup> तो कोई राहु की सामय्य वद्धि के लिए प्राथना<sup>२३</sup> करती है। कोई विरहिणी अपनी सखी से कहने लगती है कि यह चद्ररथवाहक हरिणो को तमाल किसलय खिलाए जिसमे उनकी तोद बढ जाय और चद्रमा उससे ढँक

१ रघु० ६।४७

२ शीव ६।१४ १६

३ शाङ्ग ३७६६

४ विहारी ४४२

५ वा नि० १५।२५

६ ज वि ३८३

७ शीक ६।१६

८ रघु ६।२१ गिण्टु, ६।२१ विहारी ४२६ म० स ५८५।

९ शाङ्ग २७६५

१० शीव ६।४६

११ फाद शप ४५४

१२ शीक ६।४५ ७।२५

१३ वही ७।३२

१४ हनु २।५

१५ वा० रा अयोध्या ५।३७ वासवन्ता पू ८५ का० पू० ४८१ शाङ्ग ३६४१ ३६४५  
श्रीक १२।८ विज ११।६४ म स ५२६ विहारी ४६

१६ शीक ११।१२

१७ शाङ्ग ३६३६

१८ शीक १२।६४

१९ शीक० ११।६५

२० शाङ्ग ३७२१

२१ वा नि० १५।३१

२२ नप० ५।६४-७१

जाय ।<sup>१</sup> किसी प्रोपितमत का जो वह यमराज<sup>२</sup> की तरह दिवार्द्ध पडता है तो किसी को कर्माई<sup>३</sup> की तरह । चादनी ज्वाला,<sup>४</sup> त्रिच्छू के डक<sup>५</sup> और चन्द्र विरण मरिच<sup>६</sup> की तरह लगती है ।

काम मित्र,<sup>७</sup> केलि सूत्रधार<sup>८</sup> और काम के बगवान रथ<sup>९</sup> मलयानिल को विरहिणी अग्नि-सा दाहक,<sup>१०</sup> गरल<sup>११</sup> यमराज,<sup>१२</sup> त्रिगूल एउ अहिमगी<sup>१३</sup> मानती है । किसी पथिक बधू के लिए वह यम दिशा स आनेवाले काम-भय का फूत्कार सा लगता है<sup>१४</sup> तो किसी विरहिणी के शरीर पर अग्नि पीवपा करने वाला ।<sup>१५</sup> यही नही वियोग की अवस्था म आभूषण बवन,<sup>१६</sup> माला जाल<sup>१७</sup> और भारवत<sup>१८</sup> चदन विप,<sup>१९</sup> इधन<sup>२०</sup> और अग्निवत<sup>२१</sup> शय्या हुताश<sup>२२</sup> और घाणवत<sup>२३</sup> नि श्वास द्रौपदी क चीर<sup>२४</sup> और प्रलय अनिलवत<sup>२५</sup> एव प्राण अवम तिथि<sup>२६</sup> की तरह (होत हुए भी न हान के समान) लगने लगते हैं ।

- १ नप ४१४६
- २ श्रीक १११५४
- ३ का नि १३१५
- ४ म स० ३७१
- ५ र० रा ४१५
- ६ म स० ७१
- ७ श्रीक ६१४४
- ८ श्रीक० ७१४
- ९ वही १२१७
- १० का रा किष्कि ११५४
- ११ गीत ४१८२
- १२ भाग० ३८११
- १३ का० नि १३१११ र० सा० २६८
- १४ श्रीक० ७१२४
- १५ वही ७१४
- १६ महापुराण २२१६
- १७ गीत ४१८१०
- १८ गीत ४१६११
- १९ वही ४१६२ ६१६८३
- २० महापुराण २२१६
- २१ वही ७३३३ ८
- २२ गीत ४१६६
- २३ पृ रामो २५११६
- २४ का नि १ ३
- २५ म म ५४८
- २६ विहारी १४०



२ विरह न्यथा की अधिगता के कारण विरहिणी का मृत्यु को उगमग्य मानता <sup>१</sup> रही रही विरही या विरहिणिया की मरण रामायण भा वणा दृष्या है <sup>२</sup>

३ प्रिय व समाप रहा पत्र गुण व धन की गिहता से व्यनीत हा जाा है किन्तु प्रिय के वियाग म व्यथापूण समय गती गहा कन्ता। कविया न प्गालिण विरहिणी के कष्टपूण दिना की नीघता का वणन रिया है <sup>३</sup>। पधकार न विरही व तिन को प्रीधमश्रुतु के दिन और रात्रि का इमन्त की रात्रि के समान लम्बी बतलाया है <sup>४</sup> ऐसे ही भाव विहारी के कई दाहा म वर्णित है। <sup>५</sup> गग महिता और सनापति व कवित्त ररनाकर म अरवि नीघता प्राय एर हा प्रवार के अरस्तुन द्वारा वर्णित है <sup>६</sup>।

४ प्रिय व वियोग म विरहिणी का नीन् भी रही आनी। नीन् न घाने स प्रिय के स्वप्न म भी दशन होने को समावन नही रह जाती इमल्लिए विरहिणी की व्यानुवता और भी अधिक् वन् जाती है यन् नीन् आ भी जाती है ता प्रिय का स्वप्न नही आता, यन् स्वप्न भी आता है ता वह पूरा गही हो पाता और धीन म ही गीदटूट जाती है। उक्त भावा को विरह वणन के प्रसंग म प्राय अनेक कवियाने विवड किया है <sup>७</sup>।

५ विरहिणा के सम्मुख प्रिय के समीप सत्ग भेदने की समस्या बडी कठिन होती है। कहा तो विरहिणी स्वय ही आत्मगलानि स भरकर वह उठती है कि जिस प्रिय के प्रवास करते ही उसीके साथ मैंने प्रवास नही किया और न जिसके वियोग म मैं मरी ही उस प्रिय को सदेश देते हुए मैं लज्जित होती हू <sup>८</sup> और कही कागज पर उससे लिखत नही बनता और सदेश वहने म लज्जा मालूम हाता है <sup>९</sup> इसी प्रवार क भाव अयत्र भी व्यक्त किए हैं किन्तु फिर भी पत्र लिखना पडता है, सदेश देना पडता है <sup>१</sup>।

१ शाड म० ३४०४

सुलनीय—कहा कहीं काकी दगा हरि प्रानन के ईन।

विरन् ज्वाल जरिवी गय मरिवो भर् प्रयोग ॥ —विहारी ८७

२ मा० मा २।२ रत्ना० २।१ ह स० २।३६ ज वि ६२३

३ मधुत २।२६ २।४५ ह स २।३३ वज्रा० ३८४ क० २ २।३२ ३।५७ विहारी २७८

४ नपघ १।४१

सुलनीय—जालें सब हुने माह की राति निन्त के धीन को मानु गजावते। का० नि० ११।२१

५ विहारी १६५ २६६

६ परपस्तीना कृष्णमाग नेत्र दु धगल मशम्।

अरवि पादविशप वासनस्य करानि हि ॥ —गये स १।१८।१२

सुलनीय—बोली अधीध आवन की सात्र मनभावन की

इय भर् वावन की सावन की रतियाँ ॥ —व र ३।२८

७ म शा० ६।२५ मेघदूत २।२८ विरमो २।१० शाड म ३४३४ म क ६४८

८ सपेय रामक २।७०

९ शाड म० ३४७७ सुलनीय विहारी, ६६

१४ क० पू० ६३७-६८ मा का ६।६२४ ३०

६ वियोग की शक्ति की दीयता और जीतत हुए जीवन की अस्थिरता के लिए विरहिणियाँ प्रायः पश्चात्ताप करती हुई वर्णित की गई है।<sup>१</sup>

७ विरह का प्रथम म वियोगिनिया के विरह-ताप या वणन प्रायः ऊहात्मक गती में किया गया है। दमयन्ती का गीत-व्यंग्य के लिए आताज कमल-पुष्प हृदय पर रखे जानने के तावाधिसय का कारण राम्य म ही मुख जात थ।

८ वियोग का प्रथम का पोषक माना गया है। रूपगास्वामी सभोग की पुष्टि के लिए वियोग का आवश्यक मानत है जैसे रग पत्रा करी के लिए वस्त्र का कपायित होना आवश्यक जानता है।<sup>३</sup> इसीलिए वियोगावस्था में विरही की वह ज्या ज्या क्षीण होती है गनुराम पुष्ट हाना है।<sup>४</sup>

९ वियोगी को प्रिय की प्रत्येक वस्तु प्रियवत् लगती ही है<sup>५</sup> वही उसका प्रणय-पत्र मित जाय तो विरही क्षणभर को आत्म विभोर हो उठता है।<sup>६</sup> प्रिय सदेव विरहिणा के लिए जीवोपयुक्त जानता है।<sup>७</sup>

१० वियोगी को सबत्र प्रिय ही दिखताई पडता है। ऐसा वणन अनेक कवियों ने किया है।<sup>८</sup>

११ वाच परपरा का अनुसार वियोगिया को प्रियवत् रूप का गणु उन्नत वाच नामन्व ज्ञान्य प्राण मन नेत्र प्रिय<sup>९</sup> वाच<sup>१०</sup> पपीहा चद्र<sup>११</sup> आदि का उपात्मन्व हूण भी वर्णित किया गया है।

१२ वियोग म भी मित्त की आशा में वियोगिनिया प्राण-त्याग गही कर

१ वा० रा० सुन्दरान्द ५१५ कु० म० ६७७ दोला० ११५ २२ १७० ७८

२ स्मर नागनगिनिया तथा अन्य महु सरस सरसाकृष्टम ।

अभिनवमये वनम रग शक्तिनिमित्तमम रमिप्रथम ॥ -नयक ४२६

सुनतां र म शनक ४२ म म० ५२१ २२ विरही ५५

३ म विया विप्रवम्भत सभोग पुष्टिमशनत ।

वरादिद हि वरादी भूषान रागा विवधन ॥ ॥ उ ना० पू० ४१६

४ पुननाम गागावनी विधि ८ म म० ६२८ विरही १३०

५ रं वा प ७ विरमा २१५ म० शा ३१६ रत्नावरी ४४

६ विरमा २१५ म० च पू० १७१ गण स० ४१५११ ह० र० २१६

७ वा रा मुन्दरकाड ६६१५

८ म व पुनर्णमि निमि पुरसा विहिद्य स्व गीतस मत्तो ।

सु पडिमापडिवा वि वदइ स्व मघन निमामर ॥ गायक ६३०

ममम० १०२ मुत्र घ वाम प ७३ मा मा ११४१

९ म शा ६१० नाड प ४६४ रत्ना म० ५२५५

१० का १० ४६३ रत्ना ४३ डागा ३७३

११ का० १० ६५८ म० स० २०६ ३७६

१२ म म ४१६

१३ का० पू० ४८१

पाती अथवा उनके प्राण पुनर्मिलन की भांति म भ्रष्ट रहे रहते हैं। एसी रीति का वणन रीतिकाल्य म भी विरह-वर्णन की रूढ़ि निर्वाह के कारण प्राप्त होता है।<sup>१</sup>

१३ प्रिय मिलन की उत्कृष्टा से विषागिनी प्रिय के जाने की अर्थाधि गिना करती है।<sup>२</sup> कही-नही अर्थाधि धीतने पर भी प्रिय के न जाने से व्यापुन विरहिणी का विषय मिलता है। कही कही वह गकुन विचारती हुई भी अश्रित की गई है।<sup>३</sup>

शृ गार रम व दोना पक्षा—सयोग और वियोग के गान्धीय और परवरित रूप की चर्चा के अनंतर इसका कुछ एते एता का वणन किया जाएगा जिनका स्वतंत्र रूप से पल्लवन की परपरा प्राप्त होती है। इसके अंतगत नायिका भेद नलगिग, पदकृतु चारहमासा, भ्रष्टयाम आदि के अर्थ आते हैं। रीतिकाल म उक्त विषय का अनक स्वतंत्र अर्थ लिखे गए एक रीति निरूपक अर्थ म मुक्ता छदा के उगहरण भी अर्थ गए। सम्प्रति नायिकाभेद की प्रवृत्ति के हेतुभा की विवेचना करत हुए उसने स्वरूप का परिचय दिया जाएगा।

### नायिकाभेद हेतु और स्वरूप

नारी सामाजिक एवं साहित्यिक परिप्रदेश—नारी का प्रति भागप्रधान दृष्टि कोण केवल रीतिकाल म ही नहीं पाया जाता अपितु प्राचीन साहित्य म भी इसके मनेत मिलते हैं। आचार्य भरत न सुलभोग का क्षेत्र नारी को माना है। उनकी यही मायता नायिका भेद के निरूपण म भी है।<sup>४</sup> नायिका के भेद प्रभेदा के निरूपण म काव्यगान्धीय विधान के मूल म भी उकी विचारधारा का परिचय मिलता है जिसका श्लोक कामशास्त्र था। इसीलिए कुछ का अशास्त्रियो न भी स्पष्टत कामगान्धीय भेदा—पयिनी, चित्रिणी शक्तिनी और हस्तिनी का उल्लेख किया है।

कालिदास के काव्य म अदिक प्रभाव के कारण नारी का सहधमचारिणी रूप उभर कर आया है किन्तु उसम भी उसे पुरुष की बशवर्तिनी ही सिद्ध किया गया है। लगता है कालिदास के पूर्व ही उसका स्वतंत्र अर्थाधिकत्व सुप्त हो गया था। प्रिय से उपेक्षित होकर भी नारी की शक्ति पति को छाडकर अयत्र नहीं थी। तभी तो शकुंतला का लिए गाडग रव राजा दुष्य त से कहते हैं यह आपकी पत्नी है चाहे इसे ग्रहण करें या त्याग दें,

१ आशावध कुमुदगण प्रायणी ह्य गनानां ।

सप-पाति प्रणयि हृदय विप्रयोग गणः ॥ —मेषदूत १११

मा मा ६।२६ व २ २।६७

२ शया मासाविरहनिवृत्तस्थापितस्यावधर्वा ।

विन्यासपती भवि गणतया देहवीर्यतुष्य ॥ —मेषदूत २।१४

म मा ६।१३ वजा ३७७ ७६ व० २० २।६१

३ व० २० २।६१ २ सा० १४३

४ भूयिष्ठमेव लोकोऽयं मुषमिच्छति सवदा ।

मुषम्य दि शिवो मून नानाशोलास्यता पुन ॥ —मा मा २२।६६

क्योंकि पत्नी पर पति की पूरी प्रभुता होती है।<sup>१</sup> और 'कुतला से कहते हैं, ' यदि जैसा दुप्यत कहते हैं तुम बनी ही हो तो तुम जसी कुलटा से क्या प्रयाजन । किन्तु यदि तुम अपने को पवित्र जानती हो तो पति के घर तुम्हारा दामोदर भी रहना उचित है।'<sup>२</sup> नारी की इस विवशता और सामंती भोगवृत्ति के कारण उस समय से ही बहुविवाह-प्रथा प्रचलित हो गई थी। सामिजात्यवर्गीय मुखोपभोग के उपकरण के रूप में त्रिनादिन नारी का स्थान प्रमुख माना गया। उमक धार्मिक महत्व का तिरोभाव और सामाजिक उपेक्षा ने धीरे धीरे नारी के अधिकार की सीमा अत्यंत संकुचित कर दी। बलामिक अनुकरण की वृद्धि ने उमक मातृत्व और भगिनीत्व को अथवा कामिनीत्व को ही प्रमुख माना। डॉ० लक्ष्मीनारायण सुधाशु ने नारी के प्रति पुरुष की इस मनोवृत्ति का विश्लेषण करने हुए लिखा है 'पुरुष ने स्त्री का सदा अपनी भावनाओं के अनुकूल देखा। एक स्त्री' का ही ऐसा है जो अपनी मूल अथवा स्थिति में है अथवा इसके जितने भी बाध्योपयुक्त पर्याय या समानाधिकार हैं सब पुरुष की भिन्न भिन्न भावनाओं के द्योतक हैं। पुरुष की सौम्य लिप्सा ने स्त्री को सुदरा रमण प्रवृत्ति ने रमणी कामना ने कामिनी, प्रेम ने प्रिया प्रमिका या प्रणयिनी विलास ने विलासिनी और अम प्रकार अनेक प्रवृत्तियों ने उमक अनेक रूप दिए हैं।'<sup>३</sup> यदि रीतिवाच्य में नारी के विभिन्न पर्यायों को देखा जाय तो वे अधिकतर पुरुष की विलास-वृत्ति से ही सम्बद्ध मिलेंगे। श्री सुधाशु ने उमकी प्रवृत्ति के अनुसार नारी रूप का विवरण प्रस्तुत करते हुए उमक सुधाना सुबोधना चंद्रवर्ती, शृंगारी नितम्बिनी मुग्धिनी आदि नामों का उसका आधिक सौम्य एवं गजगामिनी मृदुभाषिणी मुहासिनी आदि नाम उमक गुण या धर्म का लक्षित करने का उदाहरण देते हैं।<sup>४</sup> नारी की माहक बलासिक चेष्टाओं पर भी उमक कई नामकरण किए गए हैं जो पुरुष की भोगवृत्ति के द्योतक हैं। काव्य परंपरा में उसने सौम्य और विलास का जितना अवन हुआ उतना उमकी आंतरिक उत्पन्न वृत्तियों का नहीं। कालिदासोत्तर सस्कृत काव्य में उमका रमणीत्व अधिक प्रतिपादित हुआ सह्यम चारिणीत्व और मातृत्व कम। इसकी विशेष चर्चा आगे के अध्याय में की जाएगी।

पुरुष की स्वच्छाचारिता और भोग लिप्सा ने सारे अधिकार अपने पक्ष में सुरक्षा करके नारी का अपनी बशवर्तिनी बना लिया। परकीया प्रेम का प्राधान्य उमकी इस स्वच्छाचारिता का ही प्रतीक है। वह स्वकीया से तप्त न हाकर परकीया और सामाया तक व्याप्त है। परकीया प्रेम को उपपत्ति के लिए सुलभ बनाकर उम शास्त्रीय मर्यादा तो प्रदान की गई किन्तु अनेक पुरुषानुरक्त नारी को कुलटा का कलकित अभिधान

१ तपेया भवत पत्नी त्यज वतां गहाण वा ।

अथगुह्यि दारेप प्रभुता सवतोमुखी ॥ अ० भा० ५।२६

२ बही ५।३०

३ डॉ० लक्ष्मीनारायण सुधाशु जीवन के तत्त्व और काव्य के सिद्धांत प २२४

४ बही पृ० २२४-२५

भी दिया गया। पुरुषा के कुलटात्व को काव्यशास्त्रिया ने भी कोई महत्व न दिया अपितु यदि वह अनेक नारिया के साथ प्रणय का कपट प्रदर्शन सफलतापूर्वक कर ल जाता है तो उसे दक्षिण का प्रणसागूचक नाम दिया जाता है। हा, यदि उसका कपटाचार प्रकट हो जाता है तब उसे शठ घट की सजा अवश्य दी जाती है पर उसमें बसा तिग्स्वार भाव नहीं जसा कुलटा म है। स्वर्गीया होकर भी शकुंतला को सौता का प्रिय करना है और अपराधी होकर भी दुष्यंत उसके कामल व्यवहार का अधिकांगी है।<sup>१</sup> यही दृष्टिकोण नारी को पुरुष की दयाशायिणी और पोष्या बना देता है। पति की दृष्टि में घाने और उसके प्रेम को प्राप्त करने के लिए नारी में अगज यत्नज और अयत्नज न जान कितने अलक्षरों की आवश्यकता हानी है। यदि इस क्षत्र में कोई यून है तो वह ज्येष्ठा कभी नहीं बन सकती और पति प्रेम से भी वंचित रह जाती है। इसी दृष्टि से कविया न भी विनिष्ट नायिकाया को अपने वष्य क्षेत्र में ग्रहण किया है। जिनमें कटान विक्षेप की क्षमता न हो एभी गौर पार्यतो हूँ येन निराती हुई, मह्वम म उलभी हुई स्त्रियाँ उनके काव्य का विषय नहीं हो सकती क्याकि उनमें यत्नव्य को मादक बनाने की क्षमता नहीं थी। रीतिनाल का कवि सौम्य का तब तक बहुत कामती वस्तु नहा समभता जब तक वह मादक बनकर न प्रकट हुआ हो—सहज वस्तु को मादक बनाने उपभाग्य समभता रीतिनालीन मनोवृत्ति का गहन बड़ा विरोधना है।<sup>२</sup> डा० द्विवेदी न उक्त बातें रीतिवादीन कविया की नारी भावना को स्पष्ट करत हुए लिखी हैं परन्तु य बाँ सास्त्रीय महानायक त्रिगुण वाच ससृष्ट क उन कविया क निष्ठा भी उतनी ही सत्य है जितनी कि रीति कवि क लिए।

काव्य-मरपरा में नारी की प्रत्यक्ष चेष्टा उमकी प्रत्यक्ष भावमगी उद्दीपक रूप में ही चित्रित की गई और काव्यशास्त्रिया नता शृंगार क क्षेत्र में नायिका के एग ही ध्यापारा का अकन मान लिया जो उद्दीपन या स्वयं उद्दीप्त की दशा में छातन है। यहाँ तक कि सण्णनामा की कापमरी भिन्नकिया भी उह प्रणय लीला हा लगा। इस प्रसंग में पुरुष की निराज कामुकता क नग्न चित्र अंकित किए गए हैं। निरपराध हान पर भी नायिका अपन का हा अपराध भागी मान लेता है।<sup>३</sup> इसमें बन्धक और उमकी निवृत्ता का रूप क्या हा सरता है। सपिडता यन्नि काप म भी मरु रहनी है ता उम धीरा की

१ कविनाम घ गा ४।२०

२ डॉ हृदारीप्रसाद शिन्धी द्वितीयांश पृ० ३४०

३ कावे । नाथ । विमूष मानिनि । एतरोपायया कि हूँ ।

घे ०२माग न माररायनि अमानेराया मवि ।

तकि रां नि मरुत्तन बबया कयाधना एधे ।

मन्त्र-मम का नशाभि दशित नाभीगीनी एधे ।। घमन ५३

मुन०-क्या न बरी दण प्रात यिया ? धंयुनानि ए० करि नैन मबान ।

बौन १।१ दण है किरटे मुपमे मन्वाचन ईन एवीन ।।

उपाधि मिलती है अथवा अधीरा या धीरा धीरा कहती है। मानिनी की मनुहार में भी नायक व सुगानुमथ का वचन किया गया है। उसका कोप पुष्प व निष् रति उद्दीपन चट्टा से अधिक वाइ मट्टव नहीं रखता। मानवती के कोप का भी गाल्सीय मर्यादा व अनुसार एक निर्दिष्ट सीमा है। यदि नारी ने उस सीमा का उल्लंघन किया तो उसकी चट्टाएँ रसाभास माना जाती हैं।<sup>१</sup> इस प्रकार नारी की भावनाओं को भी पुष्प ने अपन अनुकरण की सीमा में आवद्ध कर दिया। मान करने में यदि वह अधिक बठार हुई और नायक असफल प्रयत्न हाकर लौट गया तो वाप में उस ही बलहासिता व रूप में विवियत करके बकिया ने नारी व मानसिक क्षोभ और आत्मग्लानि का प्रकाशन कराया है।

धमशास्त्रियां न राजा व निष् जिनती छूट गी उससे भी अधिक वाच्यशास्त्रियां न नायक को उन्मुक्त आचरण का छूट दी है।

नारी अयमभांगदु गिता व रूप में भी पुरर व उ०उ म्पन आवरण का सहवी आई है। सपी मा दूती का पनि द्वारा दिग गण रतिनिह—नमगत त्त तादि से सम्भित दखर नारी गार ली दु ग ता अनुमत्र कर मरुती है। इसी प्रकार गण्डित, नायिका नायक का दखर भी मृदु वाप ही कर सकती है।

नीतिगत तत् आन छो मुगन वागाहा की बरवती कामतिष्मा व फन स्वरूप नारी का जियर रहन का उडाग विधान मित्त। इस परिणामस्वरु वहु और भी बुद्धित और ममाज विछिन मी हा मद्। बकिया ने जिस रूप में नारी का चित्रण किया है वह उसका नितान्त कामलता और साहसहीनता को छागित करता है। डा० नयेद्र ने लिखा है 'उमरी मयमन सत्रियता—गभी चट्टाएँ वास्तव में उसकी उपमात्मता में धीवद्धि करन के ही निमित्त प्रर्णित की गई है'। नारी के व्यक्तित्व—उमर प्रेम विरह, सुख दुख हाव भाव नाया विनास का एन ही उद्देश्य है उसका आवरण का समझ करत हुए उसकी अधिक-स अधिक उपमाय बना देना। नायिकाभेद का विस्तार नारी के उभांग्य हरा का विचार नीता है।<sup>२</sup> नायिकाभेद व अथा में नारी व इही गुणा की गणना तथा उसका भेद प्रभंग की यन बना इस बात को सिद्ध करती है कि रना का लज्जा, गहाव नीत्या आदि पुष्पा व अनुरजन के लिए ही चित्रित किए गए हैं। यहाँ तक कि उमरी 'नाही में भी पुष्प व अनुरजवत्व का आराप करके उस स्वीकृतिगम निषेध माना गया।<sup>३</sup> कायपरिाटी में 'मवे प्रचुर और रमणीय उदाहरण मिलत हैं।<sup>४</sup>

१ मयाध्यन्तु रसाभास । —मानुस्म २० म० पृ० ४१

२ डॉ नयद्र रीतिराज्य की भूमिका पृ० १६२

३ अति मून पर कर कहल दिवाग्नि की ईति ।

गही से चिन ताहा करनि करि ललबीहा बाठि ॥ —विहारी १०८

४ सदीडमित्तम दशवमित मर मास्यगति शयलया ।

आनोपमेत्य वातायन पिघाव स्थित श्रियया ॥ —धार्वा० ६२८

इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि नायिकाभेद के मूल में नारी के प्रति उक्त बलाधिक दृष्टिकोण ही था। प० बरणापति त्रिपाठी ने शास्त्रीय दृष्टि में गहीत नारी के बलाधिक रूप चित्रण में विकास की विवचना करते हुए लिखा है 'संस्कृत साहित्य में नायिका गद मन्त्र में शास्त्रीय विवचना की जो रूप रत्ना उपयुक्त पवित्रता में प्रस्तुत की गई है उससे स्पष्ट हो जाता है कि हिंदी में ही गही संस्कृत के आचार्यों में भी उस (सामाजिक ह्यासा-मुख) युग की शृंगारी मनोभावना का प्रवाह प्रोत् हो चला था। शृंगारी रचनाओं की सजना और स्वीय लक्ष्य—दलोका द्वारा नारी सम्पन्न कामभावना तथा अग प्रत्यक्ष के वासनामय सौन्दर्यात्मक लेखन मधुर रचनाओं का निर्माण प्रचुर मात्रा में होना लगा था। बलाधिक मनोरंजन के सतपणाय वासनामय काव्य का निर्माण उ हे अधिक प्रिय था। यद्यपि रसमजरी शृंगारमजरी के समान ग्रंथों में शास्त्रीय स्तर पर विषय का निरूपण और विदलपण किया जा रहा था तथापि नायिका का कामज-सौन्दर्य और उसकी उद्दीपनता में रस रम रम जाता था। रस तरंगिणी लिखकर भी नायिकाभेद के ग्रंथों का भानुदत्त द्वारा निर्माण इसी भावना का परिचायक है।' अर्थात् रीतिकव्य की विलासानुप्रेरित रचनाओं अपने पूर्वनिर्मित पुष्पल साहित्य की परंपरा में ही आती हैं और नारी के प्रति उनका दृष्टिकोण भी परंपरित है। डा० हजारीप्रसाद द्विवेदी ने इस तथ्य को और भी तीव्रपन के साथ उदाहरित करते हुए लिखा है 'संस्कृत और प्राकृत के पुराने शृंगारी कवि किसी भी स्वभाव और शीलवाली स्त्री की शारीर चेष्टाओं और कम व्यापतियाँ को मुद्ररूप में उपस्थित करने में रस ले सकते हैं। बचन एक ही गत लगाना चाहते हैं—उद्दिष्ट नारी सुन्दरी हो युवती हो अनुरागवती हो। फिर वे और कुछ नहीं सोचते। वे प्रेम के सहज रूप को कम और उसके मनोहर रूप को अधिक पसन्द करते हैं। वे उसके कल्पना-कौमल रूप का उभारने का अधिक प्रयत्न करते हैं और उसकी अनायास मोहन गोमा को कम के चित्र को बलापुण बनाने में अधिक श्रम करते हैं। व्यक्तिक सम्बन्धों की अनुभूतियों को रगन का कम।' रीतिकाल में उक्त संस्कृत प्राकृत कवियों के भावों का ही पल्लव होना है। युग धर्म के प्रभाव से साहित्यिक परम्परा से प्राप्त नारी भावना रीतिकाल में और भी सजुबित और रग्न होकर काव्य में आई। सम्प्रति नारी के प्रति सामाजिक और साहित्यिक भावना का सामाज्य परिचय देने के उपरान्त नायिका भेद के शास्त्रीय रूप का उल्लेख किया जाएगा।

## नायक नायिका भेद

रीतिकव्य में नायक-नायिका भेद का शास्त्रीय विस्तार संस्कृत काव्यशास्त्र के

कु० स ८१५ तिमा १।७ नप १८१५ १८ ७० ७२ छांडे १० ३६६१ ३६६६ कु १२७ म स ३१७ विरार २ ६

१ प० बरणापति त्रिपाठी ना० प्र० पत्रिका पृ ६५ पृ ५ २५६

२ डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी हिन्दी साहित्य १० ३२७ २८

आधार पर हुआ। सम्बन्धित काव्यशास्त्र में इस विधा का विस्तार मुख्य रूप से नाटयशास्त्र और गीत रूप से कामशास्त्र की प्रेरणा से हुआ। समस्त काव्यशास्त्रीय ग्रन्थों में सबसे प्रथम और व्यवस्थित रूप में वाल्मीयान के कामसूत्र में इन भेदों प्रवेश की चर्चा मिलती है। किन्तु वाल्मीयान का उद्देश्य कामशास्त्रीय ग्रन्थों के उद्देश्य में किञ्चित् भिन्न था। कामसूत्र का उद्देश्य मानव जीवन में त्रिवर्ग मुख्य रूप से काम की सिद्धि है जबकि काव्यशास्त्र का मुख्य उद्देश्य है काव्यागा का विवेचन। कामशास्त्र में नायक नायिका, सखी और दूती का विधान भिन्न परिप्रदेश में किया गया है। वहाँ स्वर्गीय के अतिरिक्त परकाया को प्राप्त करने प्राप्ति के पश्चात् उसका अनुरजन करने तथा अनुरजित होने के पश्चात् उसमें अनुराग उत्पन्न करके पूर्ण रूप से समागम करने के लिए विविध प्रयत्न, वेष्टाघ्रा और क्लाम्रा का आवाजन किया गया है।<sup>१</sup>

परवर्ती काव्यशास्त्रीय ग्रन्थ रति रहस्य में कककाक ३ नायिका के जिन चार भेदों—पद्मिनी चित्रिणी, गविनी और हस्तिनी का उल्लेख किया है वह यद्यपि नायिकाभेद के ग्रन्थों में उतना प्रचलित नहीं हुआ फिर भी काव्य ग्रन्थों में उमका यत्र तत्र उल्लेख मिलता है। चन्द ने पृथ्वीराजराजो में इन भेदों का संक्षिप्त वर्णन किया है। वाल्मीयान ने नायक नायिका के भेदों में यौन वशिष्ट्य का ही दृष्टिपथ में रखा।<sup>२</sup> इसीलिए काव्यशास्त्र में उसका सम्यक् ग्रहण नहीं हुआ।

आचार्य भरत ने नायक-नायिका का भेद सामान्यतः दृश्यका योग्यो गी नाटकीय पात्रों की दृष्टि में रखकर किया है। उनके सम्मुख काव्यशास्त्र में आनेवाले शृंगार रस के आनन्दना का विवेचन नहीं था। हा धनजय ने दशरूपक में श्रय दृश्य का सम्मिलित रूप लिया और उनका नायक नायिका भेद रस दृष्टि से अधिक उपयुक्त सिद्ध हुआ।

काव्यशास्त्र के अतगत रस सिद्धांत का निरूपण करने हुए कई आचार्यों ने नायक नायिका भेद का सविस्तर उल्लेख किया है। काव्यशास्त्रीय ग्रन्थों में रुद्र के काथालकार रुद्रभट्ट के शृंगारतिलक भाजराज के सरस्वती कठामरण और शृंगारप्रकाश वाग्भट्ट प्रथम के वाग्भट्टनगर हेमचन्द्र के काव्यानुशासन गारदानय के भावप्रदाय वाग्भट्ट द्वितीय के काव्यानुशासन विश्वनाथ के साहित्यशास्त्र में ग्रन्थों के अतिरिक्त कृष्ण की भक्तिपरवर्तित रस धारा ने आचार्य रूपगोस्वामी के उज्ज्वल नीलमणि नामक ग्रन्थ में भी इस विस्तार मिला।

हिंदी के आचार्य कविना ने सर्वप्रथम मूल भेद प्रभेदों की चर्चा करके उसके सरस उदाहरणों की रचना द्वारा परिचाय प्राप्त किया। पं० कल्याणपतिजी ने शृंगार तिलक

१ धनाध्याया मुधमिद्धि मिद्धायास्वानुरजनम्।

रत्नाध्याय रति सम्यक् कामशास्त्रप्रयोजनम् ॥ -कककाक रति रहस्य

२ पद्मिनी पृ० रा २१।१२६ हस्तिनी पृ० रा० २१।१२७ चित्रिणी पृ० रा २१।१२८ गविनी पृ० रा २१।१२६

३ कामसूत्र २।१।१२





परिस्थितिवश आठ प्रकार की होती हैं। अतः इनके कुल (१६ × ८ = १२८) १२८ भेद हो जा सकते हैं। इनमें से उत्तम भेद और अन्तम भेद में ३८८ हो जाते हैं। इस सख्या में भानुभक्त द्वारा निरूपित - अग्रमभागटु गिता और वनाकिनगविता (प्रेम-गविता रूपगविता) तथा मानवती की गणना नहीं की गई है। अबस्वानुसार प्रवत्स्य-त्पतिका नामक नायिका के नव भेद का आरंभ भी भानुदत्त ने सकेन किया है।<sup>१</sup>

शास्त्र निरूपित इन नायिकाओं में से कुछ नायिकाओं का काव्य साहित्य में वारम्बार वर्णन हुआ है। इसका मूल कारण प्रेम वचनिय में उक्त अवस्थायों का वार-वार आना है। रीतिकाल में इन विशिष्ट नायिकाओं की नायिकाओं का अनेक बहुत कुछ पूर्ववर्ती वैष्णव वाक्याभिव्यक्ति के अनुसार ही हुआ है।

शृंगार के आरम्भ में नायक और नायिका होते हैं। काव्यशास्त्र में नायक की अवस्थायों का वैविध्यपूर्ण निर्देश नहीं मिलता। उस केवल युवक और सुन्दर होना चाहिए, किन्तु काव्य साहित्य में नायिकाओं की यौवनावस्था के प्रारम्भ होते ही उसकी मानसिक और शारीरिक अवस्थाओं का रमणीय वर्णन मिलने लगता है। इसका प्रारम्भ वय संधि वर्णन से होता है।

### वय संधि

वय संधि उम्र अवस्था विशेष को कहते हैं जब नायिका में यौवन के आकषक प्रभाव नष्ट होने लगते हैं। शशव का अस्त और यौवन का आरम्भ जिस बिन्दु से होता है उस काव्य परम्परा में वय संधि की अवस्था कहते हैं। इसमें नारी के शारीरिक परिवर्तन के साथ मानसिक परिवर्तन भी होता है। नारी की चैष्ट्याओं में अपूर्व परिवर्तन आने लगता है शैशव की चपलता अहङ्गता के स्थान पर तज्ज्व और मकोच का प्रादुर्भाव रमणीयत्व का सञ्जन करता है। कवि परम्परा के अनुसार इस अवस्था में यौवन के प्रदान उपानाना में स्तना का उभार और नितम्बों की पृथुलता का प्रारम्भ और तज्ज्वय गति की मदना, मन्ना की चपलता, लज्जाम्ण कपाला की मन्विककणता कटि की क्षीणता, रोमराजि की रूपाद स्फुटता आदि का वर्णन किया जाता है।<sup>२</sup>

१ इत्यादि प्राचीनप्रबन्धग्रन्थप्रसंगे देशांतरनिश्चिन्नगमने प्रयति प्रवत्स्यत्पतिकादि नवमी नायिका भवितुमर्हति। -२ म. पृ. ८५

२ गौडीय वैष्णव परम्परा में अभिजातिका वामकगजा उल्लङ्घिता विप्रलम्भा घण्टिता और कल हा गतिता नायिकाओं की दशा के वर्णन करने वाले पद्य हैं। मुख्य रूप से पाए जाते हैं। हिन्दी का पद्य वर्णन साहित्य इस प्रकार के अनेक प्रकारों में घटित हो चुका है। इनका वर्णन नहीं करता। केवल घण्टिता नायिका में मन्विककणता घण्टिता सजा देकर मुरमागर में मन्विककणता है। अतः कुछ नायिकाओं का वर्णन करने वाले पद्य भी गूर में बनाए हैं।

३ रत्न कुमारी शिन्धी और वगामी वैष्णव कवि पृ. ४२३

४ २०, नं. ७० ३३० ३२ मं. मं. ११५ ११२ २०७, विहारी १६६ २०६ ३११ का. नि. ११ ३०

वय संधि को नायिका भेद के शास्त्रीय पथ में कोई स्वतंत्र स्थान नहीं मिला क्योंकि इस अवस्था का अंतर्भाव भ्रुवा में ही हो जाता है। जिम रूप में विद्यापति प्राणि कविया न वय संधि का वर्णन किया है उसना साहित्यशास्त्र में कोई स्वतंत्र महत्व नहीं है। वय संधि में चूनि शशव और यौवन का सम्मिलित प्रभाव दृष्टिगत होना है, इसलिए कविया ने इसकी उपमा दुहरे काल दुहरे राय और दुहरे ऋतुआ स या इनकी संधि वेत्ता सती है।<sup>१</sup> पृथ्वीराजरासो में वय संधि की उपमा सन्निहितान में दी गई है जिसकी छाया बिहारी पर स्पष्ट लीन होती है।<sup>२</sup> बलिकार पृथ्वीराज न वय संधि की तुलना स्वप्नावस्था स की है। उ होन शशव का सुसुप्तावस्था और यौवन का जागृता वस्था मानकर इस अवस्था विशेष का बड़ा ही सांकेतिक चित्रण किया है।<sup>३</sup>

वय संधि को पार करत करते नायिका के अगो भ यौवन का निखार आ जाता है। वय संधि की भांति यौवन के भी मोहक चित्र कवियों ने अंकित किए हैं।

### यौवनावस्था

शशव और कशोर अवस्था के उपरांत यौवनावस्था का आविर्भाव होता है। इस अवस्था में काम भावना का ईषद उभेय और लज्जा की सघनता नारी के रूप-लावण्य को और भी रचिर और सम्मोहक बना देती है। महाकवि कालिदास ने पावती की यौवनावस्था का बड़ा ही मार्मिक अंकन किया है।<sup>४</sup> कवि परम्परा के अनुसार नायिका के इस शारीरिक उत्कष और मानसिक आह्लात् की तुलना वसतथी स सम्पन्न प्रकृति से की जाती है।<sup>५</sup> बिहारी ने यौवन को ज्येष्ठ मास की तरह मानकर नायिका के कुचो की क्रमिक वृद्धि की ज्येष्ठ दिन मान की वृद्धि से एव उसकी कटि की क्षीणता की रात्रि की क्षीणता से तुलना की है।<sup>६</sup> यौवन को भी अनवरूपा में देखा गया है जैसे किसी ने उसे अमीर या 'गासक'<sup>७</sup> के रूप में देखा तो किसी ने हरकारा<sup>८</sup> के रूप में।

जसा कि पहले कहा गया है यौवनागम के कारण स्फुट आगिक शोभावाली

१ सायनाय (बिहारी १६६) गोपूनी मध्या (पु रा ४७।३६ ४० उपकाल (बलि १६ ४० २० २।२६) दुःख (बिहारी ३११ का नि० ११।३० १२।२१ १८।२१ १६।२२ २ सा० २७ ३३ हिमउत्पगण्य (पु रा ४७।४

२ 'या करवाणि मकर म'। रात्रि निवस सन्निहित।  
या ब्रह्मन मनस ममय। प्राणि सपत्तिप कान्ति ॥ पु रा० ४७।४१  
तुल०-बिहारी २७६

३ बलि १२

४ उमीनिन नूनिरयेव चित्र मयौगभिनिनिवारविन्म।

बभूव तस्याम्बनुरस्यशोभि वपुर्विभक्त नवयौवनन ॥ कु स १।३२

५ नयय १।१६ २ पु रा ४७। ८ ४७।२ ४७।२६ बलि १८६

६ बिहारी २४१

७ बहो ३४६ २ मा २८

८ बी० ४० ३।२० २० मा० २७

नायिका ही शृगार के आलवन योग्य मानी गई है। शैशव की अवस्था में तो वह शृगार रस का विषय ही हो सकती है न आश्रय ही। शारीरिक विक्रम के साथ ही मानसिक विकास भी होता है। यौवनागम के साथ नायिका में काम भाव का अनुरण होना लगता है। जब काम भावना आती है तभी वह खज्जा, मय आदि सचारियों का अनुभव करती है। उसमें अपने आगिक परिवर्तना के प्रति सहज जिज्ञासा उत्पन्न होती है। ऐसी जिज्ञासा का वणन अनक बहिया न अलवृत शली में किया है। जिज्ञासा के साथ ही वह काम-वृत्तियां से परिचित होने लगती है। उस समय कभी वह अपने शारीरिक और मानसिक परिवर्तना के प्रति सजग और सचेष्ट प्रतीत होती है और कभी उनकी उपेक्षा करके शैशव की नसगिक चंचलता, निमयता और लापरवाही का प्रदर्शन करती है। रस निरूपक आचार्यों ने इस स्थिति की भिन्नता को दृष्टिपथ में रख कर मुग्धा के अज्ञातयौवना और जातयौवना नायिकाओं के भेदा की चर्चा की है।

यौवनागम से उत्पन्न होने वाले शारीरिक और मानसिक आकषणा को काव्यशास्त्र में सम्भव रूप से निरूपित किया गया है। शृगार-रस के स्वरूप-परिचय में भरत के अनुसार जिन वाचिक, आगिक और सात्विक भावा का उल्लेख किया गया है वे सब यौवनावस्था में ही उत्पन्न होने वाले भाव हैं। नायिका भेद की दृष्टि से नायिका के वय क्रमानुसार—मुग्धा मध्या और प्रौढा—भेद किए गए हैं। शिगभूपाल ने प्रौढा के बाद भी 'निर्मासता' नामक चौथे भेद का उल्लेख किया है। किन्तु शिगभूपाल की चौथी प्रकार की नायिका की बात दूर रही, नीमरी को भी शृगार के योग्य नहीं माना क्योंकि प्रीत्या में काम भाव की प्रधानता तथा चेष्टाओं में आकषक नवीनता के स्थान पर पुनरावतन मात्र होता है।<sup>१</sup>

यौवनावस्था के अनुभावों को धनजय प्रभृति आचार्यों ने अलंकार की अभिधा दी है। शारदानाथ ने इन अनुभावा को दो बाटियों में विभक्त किया है—मानस अनुभाव या मनोरमानुभाव और वायिक अनुभाव या गात्ररमानुभाव। इन दोनों की मध्या दम-दस मानी गई है।<sup>२</sup> मानस अनुभावों में हाव भाव हेरा, शोभा, वाति दीप्ति, माधुय प्रागल्भ्य धय और औदाय आन हैं। इनमें विश्वनाथ और धनजय आदि ने हाव, भाव और हेला को अगज अलंकार तथा शोभा वाति, दीप्ति, माधुय प्रागल्भ्य, धय और औदाय को अयत्नज अलंकार माना है। ये किन्हीं यत्न, साज सज्जा या प्रसाधन से साध्य नहीं होते। गात्ररमानुभावा में लीला विलास, विचित्रिचित्ति विभ्रम किलकिचित्त् मोटटायित, कुट्टमित, विड्बोक, ललित तथा विहृत की गणना की जाती है।<sup>३</sup> विश्वनाथ ने इनमें

१ तत्र शृगारयोग्यत्व रताद्भ्यान् कारणम् ।

प्रायः त्रितीयो एव न तृतीयचतुर्थयो ॥ -रमाजयसंघाकर १।१७६

२ मन आरम्भानुभावा भावाद्या दश योक्तानाम् ॥

गात्ररमानुभावा लीलाद्या दश योक्तानाम् ॥ -भावप्रकाशन पृ० ६, पंक्ति १४-१६

३ भावप्रकाशन पृ० ६ पंक्ति १३



वर्ति होने पर वह अनस म व्याप्त हा जाता है। शृंगार ने श्वेन में रूप का इसीलिए महत्त्वपूर्ण स्थान है। सुन्दर और मधुर लपनजात रूप स मिन सौंदर्य और माधुर्य की सत्ता नहीं जाती। सौंदर्य राध का मूल सुन्दर वस्तुआ रा मन में आना ही है। इस भा सिक रूप विधान का नाम मभावता या कल्पना है। १० रामचन्द्र गुण न इस स्पष्ट करत हुए लिखा है मन क भीतर यह रूप विधान दो तरह का होता ह। या ना यह कभी प्रत्यक्ष देखी हुई वस्तुआ का ज्या का त्या प्रतिबिम्ब हाता है अथवा प्रत्यक्ष दृष्ट हुए पदार्थों के रूप रग गति आदि क आधार पर खडा हुआ या वस्तु व्यापार विधान। प्रथम प्रकार की आभ्यन्तर रूप प्रतीति स्मृति कहलाती है और द्वितीय प्रकार की रूप-याजना या मूर्ति विधान का कल्पना कहत हैं।<sup>१</sup> इन तीना — प्रत्यक्ष स्मृति और कल्पनाजय रूप की अनुभूतिया आनंदा मक हाती ह। इस आनंदायक वस्तु क गुण से ही सौंदर्य कहा जाता है। सौंदर्य का अधिष्ठान शरीर है अत रूप सौन्दर्य क वणन म शरीर और उमके गुण धर्मों का ही सामान्यत वणन हाता है।

राजानक रययक ने युवतिया (नायिकाओं) के शारीरिक उत्कृष्ट के सहायक तत्वा म गुण अलंकार, जीवित और परिकर की गणना की ह।<sup>२</sup> उहाने शामा विधायक धम को गुण कहा है<sup>३</sup> और इसत अतगत रूप वण प्रभा राग आभिजात्य विलासिता, लावण्य, लक्षण, छाया और सीभाग्य की परिगणना की ह।<sup>४</sup>

रूप सं तात्पर्य है अवयवों की रेखाआ की स्पष्टता।<sup>५</sup> नारी शरीर म रेखाओं की स्पष्टता यौवनागम स प्रारम होती है। रूप का पानिप वय सच्चिदान से ही निकरने लगता है। अंगों के आकार ग्रहण के रूप का उत्कृष्ट चोर्तित होता है। रूप आकार का सौंदर्य वृद्धि म महत्त्वपूर्ण योग होता है। काव्य-परम्परा म सामुद्रिक शास्त्र और काम शास्त्र क आधार पर नायिका के विभिन्न अंगा का आकार निर्धारित किया गया है जिसके वणन म कवि अरु प्रकार के अग्रस्तुता की सहायता लते हैं। नर्त्तकशय क प्रसंग म इसका विशेष विवचन किया जाएगा।

वण म अंगा क स्वाभाविक गौरवा यामता आदि की गणना की जाती है।<sup>६</sup> सम्भवत गौरवणवाली नायिका क लिए ही गौरी गन्द प्रयुक्त हाता था जिसका हिंदी

१ १० रामचन्द्र कल्प रममीमामा १०२६

२ यवत्पाणीयत्कर्मो देह गुणा तकारजीवितपरिकरेभ्यः ।

—राजानक रययक सङ्घटनाना (का० भा० गु० ४६५) प १५८

३ तत्र शामा विधायिनो धर्मा गुणा । वहा प १५८

४ रूप वण प्रभा राग आभिजात्य विलासिता ।

लावण्य लक्षण छाया सीभाग्य चरमो गुणा ॥ वही

५ अवयवाना रेखास्पष्टय रूपम् । वही

६ गौरवाधिर्म विषयो वर्ण । वही

म गौरी के रूप में विराग हुआ। वायु परम्परा में गाविया का वण सामान्यतः गौर ही गहीत हुआ।

गूय की भाँति उमर (कातराग) यानी वाँति को प्रभावान्त है।<sup>१</sup> प्रभाव अन्तगत वाँति गौर दीप्ति का गहन क्रिया का मरता है। अग प्रत्यय के यथाति सस्थान से उत्पन्न हानवान गौर्य में प्रभाव का महत्वपूर्ण योग होता है। यौवनावस्था में काम के आविर्भाव से उत्पन्न हानवाना गामा का वाँति बहते हैं। मरुत धनजय आदि आचार्यों ने शोभा की इस विवर्तित अवस्था का वाँति माना है। वाँति की उत्तरपा वस्था को दीप्ति बहते हैं।<sup>२</sup>

नायिका के अग्रा की गोभा का वणन करते हुए कवियों ने उनकी अग-वाँति या दीप्ति का विशेष उल्लेख किया है। वाँति की लपटा में घिर उसका अगो का स्पष्ट लक्षित न होना अनेक कवियों द्वारा वर्णित हुआ है।<sup>३</sup> कण्व मिश्र ने अलंकार नेपथर में तन चुँति के उपमान रोपना स्वर्ण मिथुत हरिद्रा बरारण, चम्पक हमरतकी आदि मान हैं।<sup>४</sup> कवि परम्परा में सबसे अधिक स्वर्ण<sup>५</sup> से ही तनचुँति की उपमा दी गई है, नेपथ्रमश चम्पक,<sup>६</sup> हेमवतकी<sup>७</sup> विद्युत्<sup>८</sup> मशाल,<sup>९</sup> दीप-याँति<sup>१०</sup> आदि का भी प्रयोग

१ काचकान्यरूपा रविवत्त्वान्ति प्रभा । -रा० ६ सिं ली प० १५८

२ विज्ञेया च तथा वाँति शोभवापूणममया ।

कान्तिरेवातिविस्तीर्णा दीप्तिरित्याभिधीयते ॥ -ना शा २२।२८ एव दशरूपक २।३४

३ वाँतिरेवातिविस्तीर्णा दीप्तिरित्यभिधीयते । सा० द ३।६६

४ प्राणश्वरेण रभसापहितात्तरीय  
मणोदशो जघनबिम्बमपत्रपिण्णो ।

अथ अजन्ववनवद्य तिसस्तवेन

वस्याप्रघन स्वयमिवावरणान्तराणि । श्रीक १५।१६

तुननीय-दीप उजरेहू पतिहि हरत वसन रति-काज ।

रही लपटि छवि की छटनि नको छटी न साज ॥ बिहारी ३ ५

१या-गुदरी सा भवत्येव विवेक वेन जायते ।

प्रभामास हि तरण दश्यते तत्र नाश्रय । शाग ३३६६

५ रोचनास्वर्णविद्युत्त्रिभर्हिद्राभिवराटक ।

चम्पकहोमकेतवया वण्णने पत्तनोद्यति ॥ अ श ५।२ ३

६ वा रा० अरण्य ४६।१६ शीक १३।२ विक ८।८४ शाग १ ६६ सूर १।२१११  
क० र २।१ म स ३४७

७ प रा ३६।२ १ ४७।३६ सूर १।११६७ बोला ४६२ बिहारी ५७२

८ शाग ३३७६ बिहारी ६ ६

९ प रा ६१।३७४ वि प ४८।१२ बिहारी ४२ १६२ वा नि० ३।१६ ज वि० ५१  
२ ७ ३६६

१ क० र २।४ १ सा० २४ १३ २

११ बिहारी ६४ ६४२ ज वि २०७

मिलता है। कभी कभी नायिका की देह को भी उपमा उक्त उपमाना से दी जाती है।

अधरा पर स्वामाविक हभी खेलते रहने के कारण सबकी दृष्टि आकर्षित करने वाले धम विगेप को राग कहते हैं।<sup>१</sup> नायिका को इस स्वामाविक मुस्कान का वणन प्रायः सभी शृगारी कविया ने किया है। इसके वणन में जिन उपमानों का प्रयोग किया गया है उनका परिचय 'नखशिख' क प्रसंग में दिया जाएगा।

कून के समान मधुता और पेशलता नामक गुण जो लालन आदि के रूप में एक विशेष प्रकार का स्पश या सहलाव होता है उसे आमिजात्य कहा गया है।<sup>२</sup> माधुय मादवादि को भी इसी में अन्तर्भुक्त कर लिया गया है। नायिका के आमिजात्य या मादव का वणन कविया ने अत्युक्तिपूर्ण शली में किया है। इस प्रकार के वणन के मूल में कविया की चमत्कार प्रदर्शन वृत्ति अधिक सन्धिय प्रतीत होती है। कहीं-कहीं तो उनका सौंदर्य बाध कु ठिल-सा प्रतीत होने लगता है। कोई सखी या दूती नायिका के ऐसे ही मादव का वणन करती हुई नायक से कहती है जो केसर की मालिका और अगो म घना विलेपन भी नहीं सह सकती तथा दीप शिखा भी नहीं दख सकती है वह निरहताप को कैसे भूल सकेगी ?<sup>३</sup> इसी प्रकार जयदेव की राधा के अग कुसुम-सदश कोमल है<sup>४</sup> तो रीतिकान की नायिका जावक रग के भार से रास्ता नहीं चल पाती।<sup>५</sup> वह भार के डर से ही आभूषण उतार देती है<sup>६</sup> फिर भी बाल के भार से उसकी कमर छड़ी की तरह लचक जाया करती है।<sup>७</sup> माध की यात्रा रमणिया भी कम कोमल नहीं जो मृणाल-तन्तु-विनिर्मित आभूषणों को भी धारण करने में अममय हैं।<sup>८</sup> बाणमट्ट न कोमलागी के लिए आलकनकरम को चरणों का भार बकुलमालिका को गति में विघ्नकारक, अगराग को निश्वासाधिक्य का कारण अशुकभार को अगस्तानिकारक मासलिक हस्तसूत्र को करकपन का हेतु अवतसकुसुम को श्रम का जनक एवं कणपूर के कमल पर बैठे मधुकरों के पखों का पवन भी क्लेशकारक सिद्ध किया है।<sup>९</sup> फिर रीतिकालीन कवि ही क्यों पीछे

१ नैमिगिन्धेरत्त्वमुखप्रमादादि सर्वोपायेव चक्षुव-घनो घर्मो राग । —सहृदयानन्द पृ० १५८

२ कुसुमघर्मां मात्वात्सिलतात्स्त्रिप रपशविशय पेशलताम्यग्रामिजात्यम् । वही

३ केश कमरमानिकामपि विरया विघ्नती विद्यते

या मात्र य घन विलेपनमपि यन् न सोढ क्षमा ।

दीपस्यापि शिखा न वामभवने शकनोति या ईक्षितु

साप मा विरहानन्म्य महत सोढू क्य शान्यति ॥ शाग० ३४५८

४ गीत १।२।११

५ ज वि ३६७

६ ज वि १२८ तुननीय—ठ म ६८४

७ प प्र ४६

८ शिम् ८।४४

९ कादम्बरी प ५२६ तुलनीय—म स ४२२ विहारी ३४१ ४६०, ५२६ ५५४ ६५६ का० नि० ११।८ ११।१६, ज वि १२ पद्माभरण १२१ १८०



रहते ? उनसे सामने तो अनुपप या मुग्ध हरम ही बगम ही आता था। अन्तु सामाजिक प्रभाव उन पर था जो पता ही नहीं चलता। रीतियाँ बचाव प्रथा या भी उनकी रचनाओं पर काफी प्रभाव डाली हैं।

योगितावरथा में अगोपना या नाना वर कामकाज का प्राणित करने वाली बटाया, भ्रूक्षेप आदि विधान चष्टाओं को वितागिता कहते हैं।<sup>१</sup> रीतिकार्य ने अनुभाव विधान में इन चष्टाओं का वणन पूरा रूप में किया है।

चंद्रमा की भांति आह्लात्कारक गीत्य या उत्तरपभूत लावण्य वह स्निग्धमधुर धम है जो अवयवों के उचित संनिर्गम से व्यजित होता है।<sup>२</sup>

उपयुक्त गुणा का वणन युवतियाँ के रूप गीत्य चित्रण में चिरवात से होना आया है। इनके अतिरिक्त गारी गीत्य का निरूपण में उनके आत्मिक सम्भारणा के वणन की भी परिपाटी रही है। राजानन रथ्यन ने गोभा के समुद्रीपक अलकारों को सात प्रकार का माना है।<sup>३</sup> उनके अनुसार रत्न और स्वर्ण से नाना प्रकार के अलकार बनते हैं जिन्हें आवेद्य, निवृधनीय, प्रक्षय्य और आराप्य भंगे में बाटा जा सकता है। वस्त्रों का प्रयोग मात्र अगोपन के लिए ही नहीं होता अपितु उनके द्वारा विशेष मोहकता उत्पन्न होती है। ये वस्त्र भी वण और सजावट के भेद में नाना प्रकार के होते हैं। इसी प्रकार का भी अनेक भेदों की चर्चा की गई है।<sup>४</sup> द्रव्यमय मण्डन के अन्तर्गत वस्तुद्वारा कुचम चंदन, कपूर, अमरु कुलक, दंतसम, पटवास सहकार, तेल, ताम्बूल आलकतक आदि गोरोचन प्रमति की गणना होती है।<sup>५</sup>

संस्कृत प्राकृतादि साहित्य में नायिकाओं और नायकों के भी कही-कही इन सौंदर्योपकारक द्रव्यमय मण्डनों का वणन मिलता है। लगता है रथ्यक ने इन काव्य ग्रंथों के आधार पर ही इन मण्डनों का वणन किया है। उन्होंने योजनमय मण्डन के अन्तर्गत भ्रूक्षेपना कशरचना और जूडा बाधने को माना है।<sup>६</sup> पूरा भारतीय ललित साहित्य ऐसे अलकार विधानों के वणन से पूरा है। रीतिकार्य में जूडा बाधने वाली नायिकाओं की मोहकता का भी वणन परंपरित शली में प्राप्त होता है। इसके अतिरिक्त

१ अगोपनाया मोवनोदभरी ममभावसनाप्रमथन बटाशादिबद्धिप्रमास्वभेष्टाविशयो विनासिता ।

—सहृदयानन्द पृ १५८

२ तरंगिद्रवस्वभावाप्याभनेत्रपेयव्यापिस्निग्धमधुर इव पीनिमोर्ध्वंगार इव पूर्णोदुवदाह्लात्को धम सस्यानमुग्धमव्ययो लावण्यम् । वही

३ रत्न हेमाङ्क के माल्य मण्डन द्रव्ययोजने ।

प्रकीर्ण चेत्यलकारा स्वप्नवेते मया मता ॥ वही

४ दे राजानन रथ्यक सहृदयानन्द पृ १५६

५ वस्तुद्वारा कुचम चंदन कपूर कुलक अमरु कुलक सहकार तेल ताम्बूल आलकतक आदि गोरोचन प्रमति विवृत्तो मण्डनव्यमय । वही

६ भ्रूक्षेपनाकशरचनाप्रमिन्वत्र गतिर्गोत्रनामय ॥ सहृदयानन्द पृ १५६ ६०

श्रमजन और मदिरा के मत्त घ्राति जय अलंकार<sup>१</sup> से युक्त नायिकाप्रा की गोमा का भी वर्णन रीतिकविया न किया है। निरर्थक अलंकारों<sup>२</sup> में दूबा, अशोक पल्लव यवाकुर, रजत त्रपु गल्ल तालदल अतपत्रिजा मृगानन्दनय और करक्रीडनादिक का प्रयोग युगानुरोध से काफी कम हो गया था। डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी ने इस मत्त में रीतिकवि की मनोवृत्ति की ओर मन्त करत हुए उपयुक्त अलंकारों के युगानुसार परिवर्तित रूप का वर्णन किया है। वे लिखते हैं— यद्यपि रीतिकाल के शृंगारी कवि का प्रधान आकर्षण नारी का मान्य रूप ही है तथापि हम साहित्य में चित्रित नारी अपनी महिमा से महीयसी नहीं बन पाई है। वस्तुतः उसके चित्र में रईमी की धाक है। नायिकाप्रा के चित्र को मादक बनाने के लिए उसने आलम्बरपूर्ण वातावरण और महाघ बेपभूषा का महारा लिया है। उसकी नायिकाएँ विशाल प्रासादा में रहती हैं उनकी मेज की चारों चादनी और दूध की उज्ज्वलता का लजित करती हैं उनका पायदान में बहुमूल्य भवमल का उपयोग होता है, उनका सेवा में नियुक्त दामिया जिन पायदानों इन्द्रमना और पूजादाना का व्यवहार करती हैं उनमें साने चान्पी की बहार रहती है। नायिकाप्रा के परिधान में कीमत्ताव, सायन मलमल और अतलस के वस्त्र प्रयुक्त होते हैं। उनकी सार्डिया का किनारी सुवर्णवर्चित होती है और चारू चूनी चटकीले रंगों से सूरत बनती होती है। पुरुषों के वस्त्रों का उतना उत्प्रेय नहीं है अनेक प्रकार के अगण उबटन पान मिस्ती महली, अजन बाजल मिदूर रंगी कुकुम जावक के साथ ही साथ सीमफन कणपूल तराना भुमका वनर नथ कड़ कड़ लरा के हार हसली कठुला, हमल दपण वाजूबद कगन पट्टा चूड़ी, अगूठी मुदरी, आरसी, करधनी पावल, विदुषा नायिका की गोमा को सोगुनी बनाते रहते हैं। गुलाब और बेना के गजरे जूही और चमली की मीनी मीनी महक, चम्पा और मौलसिरी के कामल और गुमावन हार कस्तूरी और कसर के अगण और गेंदा गुलदाउदी गुलाब गुलबास गुलाबो, गुल लायची गुलनाला की गमक से यह शोभा मूर्तिमान मद बनकर प्रकट होती है।<sup>३</sup>

रीतिकाल में यद्यपि अलंकारों के रूप में कुछ परिवर्तन हुआ गया किन्तु उनके प्रकार—आवध प्रथेप्य और आरोप्य में अंतर नहीं हुआ। सभी प्रकार के अलंकार रीतिशास्त्र की नायिकाएँ पढ़ती हैं। साथ ही द्रव्यमय भङ्ग और वाचनामय अलंकारों का भी प्रचलन मिलता है। यह तो हुई साज सज्जा की बात। अब नारी के रूप चित्रण की परम्परा का रीतिकाल तक विकास तब निरूपित करने हुए यह स्पष्टाने का प्रयत्न किया जायगा कि रीतिकाल के इस क्षेत्र में स्त्रियों की प्रेरणा पूर्वकी साहित्य और शास्त्र से मिली।

१ सहस्रपाद ५ १६

२ वही

३ डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी साहित्य ५० २३-२६

## रूप-चित्रण

यद्यपि नायिका के रूप चित्रण में तीन प्रकार की परम्पराएँ पाई जाती हैं जिन्हें क्रमशः नखशिल वणन, अगसमष्टि-वणन और स्फुट अग वणन कह सकते हैं किंतु काव्य परम्परा के अन्तर्गत सबको नखशिल-वणन ही माना जाता है। सुविधा के लिए नख शिल-वणन के स्वरूप और स्रोतों का उल्लेख बाद में किया जाएगा पहले स्फुट अग वणन की परम्परा का परिचय दिया जाएगा।

## स्फुट अग-वणन

प्रबन्धेतर काव्या में नायिका के नख से शिल तक के सौन्दर्य वणन का अवसर नहीं रहता अतः एक या दो छन्दों में ही नायिका के कतिपय विशिष्ट अंगों का मौल्य का वणन कर दिया जाता है। रीतिकान्य में ऐसे छन्द अनेक मिलते हैं जिनमें नायिका के नेत्रों या कुचों का ही वणन कर दिया गया है। एक अंग के सौन्दर्य से सर्वांग सौन्दर्य के बोध की परम्परा ऐसे वणनों में विशेष महत्त्व हुआ है। स्फुट अंगों में भी वे ही उपमान या अप्रस्तुत प्रयुक्त हुए हैं जो नखशिल की परम्परा में होने चाहिए अतः इसकी चर्चा नखशिल-वणन के ही प्रसंग में की जाएगी।

## अग समष्टि-वणन

अग-समष्टि के वणन की भी परम्परा बहुत कुछ स्फुट अंगों के वणन जैसी रही है। एक-दो छन्दों में ही नायिका के सर्वांग का वणन मुख्यतः प्रधान यौन धारण के केन्द्र का उल्लेख करते-उसके माहुर प्रभाव का अंकन किया जाता रहा है। इसके अन्तर्गत पूर्वोक्तलिखित अग प्रभा या कान्ति का संकेत करते हुए नायिका की कुछ उद्दीपक चेष्यामा का निर्देश किया जाता रहा है। रीतिकान्य में भी पूर्ववर्ती काव्य परम्परा का अनुसरण किया गया। अतः इस सन्दर्भ में भी कोई नवीनता लक्षित नहीं होती।

नायक-नायिका के रूप सौन्दर्य का शृंगार रस के पोषण में महत्त्वपूर्ण स्थान रहा है अतः शृंगारी साहित्य की मुख्य विशेषता रूपांकन की रही है। डॉ० विपिन बिहारी त्रिवेदी ने इसकी परम्परा का निर्देश करते हुए लिखा है— भारतीय काव्य धारा की एक बहुत बड़ी विशेषता रूप-वणन में निहित है। सस्त्र साहित्य के लगभग प्रत्येक कवि ने रूप-वणन को अपने काव्य का मुख्य अंग बनाया है। प्राचीन साहित्य भी इसी प्रकार के रूप राग में भरा पड़ा है। हिन्दी कवियों की रचनाओं में धारम्भ में ही इस काव्य पद्धति का अनुसरण मिलता है।<sup>१</sup> जिस रूप चित्रण का विकास सस्त्र प्राचीन और हिन्दी साहित्य में उत्तरोत्तर एहिा हुआ गया उसका मूल रूप अपारिध्व देवी देवताओं की मूर्तियों में देखा जा सकता है। मन्वन्तर में उग्र गूँठ में उपाय के रूप का अंकन किया गया है। मन्वन्तर काव्य में धाराध्य के अतीति सौन्दर्य का उद्घाटन

१ डॉ० विपिनबिहारी त्रिवेदी, अष्टांग शृंगार के हिन्दी कवि, पृ. १०६

सौन्दर्य उपमानों के द्वारा किया गया। केवल मिश्र न नारी शरीर के निम्नलिखित गुणों की चर्चा की है— उसमें सौन्दर्य मधुना अतिबोधिता काचित उज्ज्वलता और आबल्य या मुकुमारता का वर्णन होना चाहिए।<sup>१</sup> प्राचीन साहित्य में इन गुणों का नाना देवियों के ध्यान में विधान किया गया है। डा० हजारप्रसाद द्विवेदी ने लिखा है 'इन गुणों का नाना देवियों के रूप से मगृहीत होना अनुमान का विषय है। लक्ष्मी और गौरी के ध्यान में स्वल्पप्रभा अन्नपूर्णा और सरस्वती के ध्यान में सौकुमार्य या आबल्य तुलसी के ध्यान में अंग का यष्टित्व और आबल्य सावित्री और सरस्वती के ध्यान में औज्वल्य तथा राधिका और सरस्वती के ध्यान में काचित का उल्लेख पाया जाता है। इन देवियों के रूप में सौन्दर्य का प्रधान उपादान माना गया है। समस्त देवियों को दिव्य-वस्त्राभरणा से युक्त माना गया है और इसी प्रकार के आभरणा को भारतीय काव्य में स्त्री रूप का एक आवश्यक अंग मान लिया गया है। इसीलिए अमनक-यष्टि और सपुष्प लता के साथ स्त्री शरीर की तुलना करना रूढ़ हो गया है।'<sup>२</sup>

भारतीय साहित्य के मध्यकाल में अनेक भक्तों ने दिवालयारभूषिता श्रद्धा के स्तुति ध्यान का वर्णन किया है। शंकराचार्य ने भक्तियों की स्तुति में उनका अंग के गुणों का वर्णन काव्य परम्परा के अनुसार ही किया है। वगैरह गौरी की स्तुति करते हैं जिसके मुख में ताम्बूल नेत्रों में कज्जल की कला लताट पर कसरतिलक और शिखा में मौक्तिक का हार मुशामित है जिसके पृथु कटि प्रसंग पर साड़ी के ऊपर स्वर्ण उचित भेजना मुशोभित है। स्तन तट पर मदारकुमुम का हार वीणा की भङ्गा काता में कुण्डल और जिगम्वी गति भगिमा हस्तिनी के समान है। जा चंचल नेत्रों में विजयशोला, मणि और वनजमय आभूषणों से नवीन सूयवत् प्रभा में मण्डित अगोत्राणी तडित्वत् पीताम्बर और मञ्जीर से युक्त कर-अल्लवत्राणा है। जा पुष्प और मुक्ताभरणा से युक्त और अनरूपी अमरा से गोमायमान है।<sup>३</sup> इसमें विविध वस्त्रालङ्कारों से युक्त देवी के रूप का चित्रण किया गया है। एसी ध्यान स्तुतियों का मूल कुछ विद्वानों आगमाओं को मानते हैं। सम्भव है वेदों से शौकिक काय का नारी रूप चित्रण का प्रेरणा मिली हो। त्रिपुरगुण्टी के स्तवना में नारी सौन्दर्य उभरकर आया है। देवी के अंग प्रत्येक का वर्णन परम्पराभुक्त विवेचना से किया गया है।<sup>४</sup> इसी प्रकार नवरत्नमानिका<sup>५</sup> और

१ अन्वय शब्द प ५२

२ डा० हजारप्रसाद द्विवेदी की साहित्य की भूमिका (तीका संस्करण) प २६०-६३

३ बृहत् सागरनामक १३० ध्यानन्दहरी श्लोक ३६।

४ निम्नलिखित भूषणों नवावर्णनायिका महाहमणितोरणा विजयशोला कुचोपमितशय्या मन्थन कपालया कुटिलवसनायुक्ता मन्थनशिलाधरा धनमन्तभारानया गतिचूर्णिका मनु कुम्बिका पनामन कवचिकक्षुरिका समहस्तिभया अशपदनमाङ्गिका

—बृहत्सागरनामक १०१ श्लोक म स्तव

५ व० स्तो १६७ नवरत्नमानिका।

'त्रिपुरगुप्तीप्रातःस्मरणम्' म भी भक्त कविया व परपरित रूप चित्रण की भारी मिलती है। त्रिपुरगुप्ती विजयस्तव क प्रत्यादत्तोर म दती तणा एत भग श्रीर जनकी रचिर अगभ्या व सात्थ्यादुघाटन म सभग है।<sup>१</sup> भारताय वान्य व रूप चित्रण की परम्परा को प्रभावित करने म प्रागभा म अनुप्रतिन भवितभावित इन धनीरित सौंथ्य व्यजक उदगारा ता तम महत्त्व गही है।

अगसमष्टि के वणन म जिन प्रमुग प्रगा व सौंथ्यों रूप का निरूपण प्राय किया जाता है उनका सबत राजापर की निम्न उक्ति स मिनता है। रपू रमजरी म वे लिगने है 'युवावस्था म ताज्यपूण अग आरणनमित नोतन स्वन स्तन पिबतिपा स युक्त मुष्टिप्राप्त मध्यभाग श्रीर उपातार (स्थूत श्रीर वनु ल) नितम्ब व भतिरितन श्रीर स काम ही क्या ? इहा पांन अगा स तरुणियां कामन्व की विजय वजयती हा जानी हैं।'<sup>२</sup>

यहां यह भी ध्यात व है कि नारी व रूप चित्रण म कामगास्त्रीय विधान को भी कविया ने दृष्टिपथ म रखा है। सौंथ्यों रूप व कारण पदिना श्रीर भित्तिणी नायिकाया के गुणा का आधान प्राय नारी रूप चित्रण म किया जाता रहा है। उनके प्रगा की विवेचनाया का उदघाटन कवकोट पणित ने बडी सूक्ष्मता से किया है।<sup>३</sup>

हिंदी के आदिकाल म उपलब्ध राज्य प्रगा म पृथ्वीराजरासो रूप चित्रण की दृष्टि से अत्यंत समृद्ध है। उसम पृथ्वीराज जिन राज नयाया से विवाह करत है कवि च ने उन सभी राजकुमारिया का रूप चित्रण विस्तार व साथ किया है। माथ ही दासियो सेविकाया पतिहारिना श्रीर दूतिया व भी रूप चित्रण कम आकषक नहीं है। हिंदी के इस आदिकालीन प्रथम रूप वणन की रुद्धियो का सम्पक निर्वाह दृष्टिगत होता है।

पूर्वमध्यकालीन भक्तिधारा म आराध्य का रूप चित्रण उसी तमयता से किया गया है जिम प्रसार तृ नारी नयाया म नायक नायिका का मिनता है। रुद्धिवाँ प्राय वही हैं अंतर इतना भी है कि एक आराध्य व प्रति पूज्य-मुद्धि तगाकर भावा का उपायन करता है तो दूसरा नारी का रमणीयता का उदघाटन कर भोग तृप्ति की सम्बद्धता। भक्ति काल म अधिकतर नस्तिन वणन आराध्यत्वे का हुषा है चाह के राम हा या कृष्ण। भक्तिकाल के पूव हिंदी ता त म पुरुष का रूप या तस्यगिव वणन इतने विशाल

१ व स्तो २०१ त्रिपुरगुप्ती प्रातःस्मरणम्।

२ वही २४ त्रि स विजयास्तव।

३ कप रमजरी ११६

४ भवति वन्दनेना नागिकाभारद्वा अचिरतकुचयस्या दीधवेजो कृशांगी।

मदुवचनमशाना नयगानानरक्ता मरुततनमवता पत्तिनी पन्मगधा ॥

भवति रतिरमना नाति दीर्घा न यत्रां किन्दुमप्रमतासास्तिश्रेहीन्यतापी।

कठिनधनुचाक्षुषा शरीरी मा मजीता मरुतगणविविवा चित्रिणी चिह्नरक्ता ॥

-कवकोट रतिरहस्य।

रूप में नहीं प्राप्त होता। सुर के काव्य में ता चाह भी जिस अवस्था में वृष्ण दीस गए ह, कवि ने मात्म विभार हाकर उनकी छवि का अवन किया है। फिर भी व रूति मुक्त नहीं हो पाए हैं। अग व व हा उपमान वृष्ण क लिए भी प्रयुक्त हुए ह जिनका प्रयोग प्राय नारी क रूप चित्रण में कवि परंपरा करती आइ है।

### नवशिक्ष वणन

रौतिकवाय का नवशिक्ष वणन बहुत कुछ कालिदासोत्तर रुद्विबद्ध महाकाव्या, संस्कृत क शांभगास्त्रीय और कवि गि ना विषयक अथा और अपन पूर्ववर्ती हिंदी क काव्य-साहित्य से प्रभावित है।

कान्तिनाम की मौल्य चेतना जिम उगत और यापक भावभूमि पर प्रतिष्ठित है वह नमश मारवि माघ और श्रीहृष म दाय प्रस्त हो गई। कालिदास क परवर्ती कविया में मानव के बाह्य सौ दय और अंत सौंदर्य का परस्पर की मौलिक प्रतिमान रह गई। कुतला पावनी और इ दुमती के सौंदर्य का जिम यापक परिप्रेक्ष्य में नाना रूप रम से संकुलित और मौलिक प्रतिभा के आधार पर अवन किया गया है वह परवर्ती कविया की नमश विनासप्रवण दृष्टि से दूर हाता गया। बलात्कर अनुरजन की प्रधानता क कारण कवि स्वामाधिक स्फूर्ति और ताजगी को त्यागकर धर्मसाध्य बौद्धिक रूप जटिल और अलट्टत दीधकामा में सीमित हाता गया। इसका मूल कारण था लोक रति और युगानुराध।

यहां यह ध्यान देने की बात है कि यद्यपि वात्मीनि अश्वघोष भास कालिदास आदि कविया में भी रूप चित्रण में परंपरित उपमानों का प्रयोग किया है किन्तु उनमें एक ताजगी है जो अमलूत करने की अपा आह्लासित अधि करती है। परवर्ती कविया में आह्लादन की अपा अनुरजन की वृत्ति अधिक लक्षित होती है।

नवशिक्ष-वणन में कवि परंपरा नारी के अग्र प्रत्यक्ष चित्रण में जिस सूक्ष्मदर्शिता का परिचय देती आई है, उसका स्फुरण पुष्प पात्रों के चित्रण में दृष्टिगत नहीं होना। नारी अग की सुकुमारता वण कति आकार प्रकार कुतला की घनी श्यामा कशा का अनट्टत वियास, लटा की बकिमा वणी की लीधता और मच्चिकन दृग्गामा गताट की शुभ्रता और उत पर अति विभि न वण आकार के तिनक या विनी भौहा की बकिमा विनामूरित चपन जितवन कगा की वेधकता नना की श्वेत श्याम रक्तिम गामा उमम विलसित कजाच रेखा पतनी-नुसीरी नासिका मधु मुष्कानुवन कोमल रक्तिम अघर, छोटे तीक्ष और चमकदार दांत तिको चमकदार और नज्जारकत मुनीमल कपोल कपोन की गुराई पर तिन की कानी आमा मुडौल तीन रेगायुक्त श्रीवा, आनघ स्वध मुडार बाहु, आरक्त पाणित्त पुण आि ती मागाशा ग मुगामिन उन्नत पुष् और वतु ल वनाज मूम चामल रामगति त्रिवरीयुक्त उतर गभीर और आनयुक्त गामि भूम कटि स्थूय चनाकार तितम्ब चिकन मुगा उर अलतित मुल्फ जावकयुक्त चरण रक्तिम चरणतल, प्रभामय चरणनख विलासपूर्ण गति के साथ अनेक



स्तोत्रा में अधिकांश वणन सामग्र रूप में मिलते हैं जिनका परिचय पहले दिया जा चुका है। कुछ भक्त-कवियों ने 'चण्डी कुचपचाशिका' और 'विष्णुपादकेशान्त वणन' जैसे ग्रन्थों की रचना करके भक्ति कायधारा में रूप चित्रण की परम्परा पुष्ट की।

संस्कृत प्राकृत और अपभ्रंश साहित्य में नारी रूप चित्रण पर्याप्त मात्रा में मिलता है। इन सब ग्रन्थों में यद्यपि नारी के अंगों के उपमान प्रायः सीमित और रूढ़िवादी हैं फिर भी उनका संयोजन नवीन ढंग में किया गया है जिसमें कवि की चमत्कार प्रशंसनीय वृत्ति अधिक सत्रिय जान पड़ती है। माघ और श्रौहप के नखशिख-वणन प्रसंग इसके ज्वलंत उदाहरण हैं।

### शिख नख और नख-शिख

काव्यशास्त्रीय ग्रन्थों में नख शिख वणन की एक व्यवस्था दी गई है। कविकल्पलताकार ने लिखा है कि मानवी-नखशिख वणन में शिख से प्रारम्भ करके पद नख तक वणन करना चाहिए और दिव्य रूप वणन में इसके विपरीत पद नख से शिख तक का वणन करना चाहिए।<sup>१</sup> आचार्य केशवनाथ ने भी इस परम्परा का समर्थन किया है।<sup>२</sup> दिव्य आलोकन के वणन में नखशिख की परिपाटी तो मिलती है किन्तु अदिप्य आलोकन के वणन में शिख नख का वणन ही नख शिख के नाम पर किया जाता है।

फारसी-काव्य पद्धति में मारापा का वणन मिलता है। इसमें सरस पैर तक के वणन में शिखनख की ही परम्परा का निर्वाह किया जाता है। प० विश्वनाथप्रसाद मिश्र ने लिखा है 'उनके यहाँ दिव्यादिव्य की स्थिति नहीं है। दिव्य निगुण है निराकार है। डरत डरत उनके चरण और हाथ की उँगलियाँ तक की चर्चा किसी प्रकार की गई। अथ अंगों का प्रश्न ही नहीं'। इसी से वहाँ अदिप्य वणन ही चला। मारापा या शिवनख तो साहित्य में आया पर नखशिख नहीं। नखशिख का विभाग भारतीय संरक्षण है। जगन्नाथ केशव ने भी यह उनसे पूर्व सूरदास और तुलसीदास में भी दिखाई देती है। उन्होंने दिव्य और दिव्यादिप्य के वणन में वही क्रम रखा है अर्थात् नख से शिख का वणन ग्रहण किया है।<sup>३</sup>

रोहितमय में नखशिख वणन की परम्परा उससे पूर्व विनिर्मित काव्य में आई। कृष्णभक्त कवियों ने राधा और कृष्णदाना के अंगों का मरम वणन पर्याप्त मात्रा में किया है। सुफी प्रेमशास्त्रियों में नायिका के रूपावयवों का वणन सविस्तर किया गया है। विद्यापति ने कवल स्फुट अंगों का ही वणन किया परन्तु उनमें भी वे ही उपमान ग्रहण किए गए जो नखशिख की परम्परा में चिरकाल से प्रयुक्त होते आए थे। उनमें पूर्व में

१ मानवा भोजिता यथा देवाश्चरणत पुन ॥ -कविकल्पलता १। १५७

२ नख से शिख की वरनिधि देवी कीपति देखि ।

शिख से नख से मानवा बभ्रवदास विसर्पि ॥ -क प्रि १५१३

३ केशव प्रघावरी तृतीय भाग मयादकीय पृ १३



श्रीर अथप्रश के कवियों ने नखशिल्प की परिपाटी को समृद्ध किया। चन्द्र का नखशिल्प वणन रुद्रियों से प्रस्त है।

इस प्रकार नखशिल्प वणन की परम्परा पूण रूप से रूटिया पर आधारित है। सम्प्रति नखशिल्प वणन के प्रसंग में प्रत्येक अंग के परपरित उपमाना का परिचय दिया जा रहा है।

वेश

नायिका के रूप की स्वर्णाभा वाले चिक्ने और घुघराले वेशा की पच्छभूमि में और भी अधिक निम्न आती है। वेश की दीघता सघनता, कुटिलता नीलिमा और मृदुता सौंदर्य और सौभाग्य के प्रतीक माने जाते हैं।<sup>१</sup> वेशव मित्र ने उन्नत गुणा के व्यक्त उपमाना की सूची दी है। उसमें उनकी दयामना पर विशेष बल दिया गया है जैसे तम बादल भ्रमर यमुना-तरंग नीलमणि और धूम। इनमें वेशा का सघनता को व्यक्त करने वाले उपमान मुख्य रूप से बादल शवाल चामर तम और आकाश माने जा सकते हैं। दीघता का आभास मयूरपिच्छ से मिलता है।<sup>२</sup> चिक्नाहट और चमर की व्यञ्जना यमुना की तरंग और नीलमणि एवं गंध की यजना नीलमल से होता है। कोमलता का गुण प्रायः सभी उपमानों में पाया जाता है।

वेश का वणन कई रूपों में किया गया है। वही तुल वेशा की सघनश्यामलता वर्णित है तो वही वेशी की सुनीघता तो वहा पुष्प और मानाश से सुसज्जित जूड़े की मोहकता का उल्लेख मिलता है। वक्षि परवरा नंटेरी और चवस लटा का भी वणन अनक अस्तुता द्वारा किया है। कविकल्पलताकार के अनुसार वेशा की उपमा सप्त अक्षि और भ्रमरपक्षि स तथा समत वेश (जूड़े) को उपमा राहु से दी जाती है।<sup>३</sup>

साहित्य में प्राप्त वेश के मुख्य उपमान भ्रमर या भ्रमर समूह<sup>४</sup> मयूर पिच्छ<sup>५</sup> चमरी की पछ या चामर<sup>६</sup> पुञ्जीभूत अधरार<sup>७</sup> मेघ<sup>८</sup> राहु<sup>९</sup>

१ वक्षव दी-श्री-यम-विद्वयना-ना। वक्षव मित्र धनकार मोक्षर ५२

२ तम शवान पाशा-व-भ्रमरचामर।

यमुनावीचिनीवाग्मना-ना-ना-भ्रमर मम वक्ष ॥ वक्ष ५११३

इति धूमनायमसि-वाग्मम्। वक्ष ५ ५२

३ वक्षो सर्पा-निभ-गा-या-धम्मिल्ल-रथ-विपु-भु-ना। वक्ष ५ ५१

४ का-६ म० ३२८८ मात १२१२५५ म रा० २१३० छि वा १६ पक्ष ५४११०१

क जि० १ क र २१० म म २०४ पक्षमरण २३

५ रण० ६१६३ मय० २१५१ मय० २१ ३ ७२० २२ वि० १३२३ मीन १२१२६६ का

क ५१५ का वि १०२६

६ नैव ११२५ २१२० का-६ म ३२८८ मात १२१२५५ वि ५० ५११

७ मय० ७२१ का-६ म ५२१ वि ५ १०१० क० जि १ पक्षमरण २१ २३

८ वि० १ १८६ का-६ म ३ २३ मात ७११२२ १११२२६ वि० ५ १६१६ क र० २१०

का वि ५१२६ पक्षमरण २३

९ वि ५ १२१० पक्षमरण ५५५ १ ११३ मूर १ ११ ३६ विनाग ६८६

शवाल<sup>१</sup> भगवतूल<sup>२</sup> और जल-बालाल<sup>३</sup> प्राप्त हान है। इनके अतिरिक्त काम पाश,<sup>४</sup> काम धूम<sup>५</sup> आदि का भी प्रयोग अप्रस्तुत के रूप में किया गया है। वणी की उपमा भुजगी,<sup>६</sup> कचन खम पर नाग<sup>७</sup> या चंद्रलता पर नाग<sup>८</sup> नवशृंगलार्क,<sup>९</sup> अलि कलाप,<sup>१०</sup> कामरूपी ब्रह्मसप,<sup>११</sup> यमुना या यमुना तरंग<sup>१२</sup> सभी गर्द है। अलक व लिए कुबेनी (बसी),<sup>१३</sup> अहि गिधु<sup>१४</sup> सप<sup>१५</sup> अलि<sup>१६</sup> राहु की छाया<sup>१७</sup> के अतिरिक्त उसके समान प्रभाव व कारण फद<sup>१८</sup> और वापा<sup>१९</sup> का भी प्रयोग अप्रस्तुत के रूप में किया गया है।

### माग

रीतिबानीन कवियों ने माग का वणन बहुत कम किया है। संभव है कि अप्रकाशित नसदिस के ग्रंथों व प्रकाश में आन पर उनमें माग व श्री वणन मिले।

कन के बीचों-बीच की माग को बविवल्पलताकार व रास्ता और लण्ड स उपमित करने की व्यवस्था दी है।<sup>२०</sup> बणरलाकर में चतुरस्य चतुरगुल, कनक पट्टिका मुदर, निराल, स्पुट सरल आदि ललाट के गुण धाकार के वणन व साथ सहश (सि) दुर दित (=सि) कानकृत सीमन्त का भी उल्लेख किया है।<sup>२१</sup> माग के लिए साहित्य में

- १ वि० प० १६।३ व० शि० १ पन्नाभरण ३६
- २ के शि० १ का० नि० ६।२
- ३ स० रा २।३१
- ४ वलि ८२
- ५ कु० म० ४४
- ६ श्रीक० ८।३४ पञ्चमचरित्र ३८।३ सूर० १।२ ७६ पदम ३।६ १०।१ ४१।४ का० नि० ३।४७
- ७ पृ० रा० ६।२८ ३६।२०१ ४७।७३ ६१।३४६ सूर० १।११६७ ८० २ २।७
- ८ प० ग० २५।३१०
- ९ श्रीक० ६।३६
- १० श्रीक० ६।३ शादगं ३३७८ पद्म ४१।४
- ११ श्रीक० १५।४५
- १२ पन्ना ४१।४ बनि० ८५ व० २० २।७ जग० वि० १३
- १३ २ सा १६४
- १४ सूर० १।२१३३ का नि० ४।१६
- १५ सूर० १०।११६६ का० नि० ६।८
- १६ कु० म० १ ६ सूर० १।१२०६
- १७ कु० म० १०६
- १८ सूर० १०।२२७२
- १९ वनी
- २० सीमन्तस्थावकवण्डो च। -अ श पृ ५१
- २१ बणरलाकर, त्रितीय बल्लोल पृ० ६ २०क

जिन अग्रस्तुता का प्रयोग किया गया है व मुख्यतः नर्तिका—यमुना म मरस्वती या यमुना में गंगा का स्रोत<sup>१</sup> मुग्धा की सरिता<sup>२</sup> आरागंगा,<sup>३</sup> गंगा,<sup>४</sup> या पय<sup>५</sup> निरण<sup>६</sup> दामिनी,<sup>७</sup> रेखा<sup>८</sup> आदि पतली और चमकदार चीजें ही हैं।

मूग्धास ने माग व लिए काम धाम की सरणि<sup>९</sup> का अग्रस्तुत विधान किया है। समस्त इमीस प्रभावित होकर भिवारीनात ने धणी व लिए गुरलाक की सीने<sup>१</sup> की उत्प्रेषा की है।

## ललाट

ज्योतिरीश्वर ठाकुर ने ललाट के आकार प्रकार की चर्चा करते हुए लिखा है कि इसे चौरस चार अंगुल का मुदर निराल और स्फुट हाना चाहिए। इसकी उपमा कनकपट्टिका से दी जानी चाहिए।<sup>११</sup> सामुद्रिक लक्षणा व अनुसार ललाट का समतल होना सौभाग्य का सूचक होता है।<sup>१२</sup> इसकी उपमा प्रायः अष्टमी के अथचंद्र से दी जाती है।<sup>१३</sup> वही वही केवल चंद्र से ही उपमा दी गई है, अथचंद्र या चंद्रकला का उल्लेख नहीं किया गया है किंतु यह प्रवृत्ति सस्कृत काव्य में नहीं दृष्टिगत होती। ऐसे प्रयोग प्रायः हिंदी कवियों ने ही किए हैं।<sup>१४</sup>

अधिकांश कवियों ने उपयुक्त आकार प्रकार को ध्यान में रखकर उसमें सुशोभित तिलक या बिंदु पर अनेक प्रकार की उत्प्रेक्षाएँ की हैं। तिलक या बिंदु के अध्ययन से सस्कृत प्राकृत से लेकर रीतिकाल तक अनेक प्रकार के तिलकों का परिवर्तन

१ पद्मावत १०।२

२ के० शि० छ० २

३ बलि० ८५

४ प० रा० ४७। ६ सूर १०।१०७६

५ पद्मावत १।२ छि० वा १६६

६ सूर १।२११५

७ पद्मावत १०।२

८ वही

९ सूर० १।२१८५

१० मध्य सप्तम से है ब्रह्मादि सौ लोग कहैं सुरलोक निसेनी। -वा० नि ८।६२

११ वर्णरत्नाकर त्रितीय कस्तोर प ६ २० क

१२ बहुलहिता ७ ८

१३ अन्कार शहर ५।१।५ एव नव० ७।२३ ७।५३ शाड ग० ३५२१ पद्मा ३।६ विहारी ४८७

१४ प० रा ४५।१०५ पद्मा १०।३ ४१।६ डोला० ४६६ विहारी ४८६, वा० नि० ८।५२

मिलता है। इसमें मुख्य रूप से वस्तु, १ चन्दन, २ सिंदूर, ३ बेर, ४ गुनाल, ५ अन्न, ६ रारी ७ आदि के तिलक और त्रिणी का उल्लेख मिलता है। तिलक की शोभा वण और आकार के आधार पर कवियां न अनेक प्रकार की उद्गृहण की हैं जिनमें कुछ में तो वस्त्र वण-ग्राम्य या वण विराध का प्ररट किया गया है, जम गार लनाट पर वस्तुरी का तिनक वण-वपय्य व कारण अरिह आनयक लगता है ता सिंदूर रारी गुनाल आदि दीप्ति का दुगुनी करन में सहायक मिद्ध हाता है। अग्रस्तुना में वस्तुरी तिलकित भाल के लिए चद्र वक्क या चद्रमण्डल में राहु, रारी या सिंदूर बिदु सशोभित भाल के लिए चद्रमा पर बालमूय, ६ शिवोत्र १ दीप-योनि, ११ मगन १२ बुध १३ और चदन बिदु के लिए चद्र १४ आदि की योजना की गई है। तिलक की प्रेमी या द्रष्टा के चित्र को घायल करनेवाला और लताघ्रा के बीच होने के कारण धनुष पर चने वाम बाण १५ से या मल्ली से दी गई है। १६

यद्यपि रीति का पक्ष में ग्राम्य जीवन उनक रहन सहन खान-पान वसभूषा आदि का वणन कम मिलता है। इसमें आभिजात्यवर्गों के चमक दमक अधिक है फिर भी कवियां ने विशेषतः विहारी १ ग्राम्य तरुणियां के तिलक की रूढि से भिन्नता प्रतिपादित की है। कोई गवारि (ग्राम्य) एतन की भाङ लगती है १७ वा कोई सानकिरवा का १८ मतिराम की नायिका मसूर की बिदी से भी कम शोभित नहीं होती। १९

- 
- १ भाङ पं० ३२६४ ब्रह्मव पुराण ४।२८।६५ मूर० १।११६ बोना ४६६ ज वि० ४४०
  - २ ब्रह्मवर्णन पुराण ४।२८।६६ गात० ११।२२।६ मूर १०।२११७ बलि० ८७ विहारी ५१३
  - ३ ब्रह्मवक्त्र ४।२८।६५ प रा० ४५।११५ वि प १२।८ विहारी ४८६
  - ४ मूर १०।१७ २ विहारी ४६६
  - ५ ज वि० ४३६
  - ६ विहारी ४४
  - ७ ज वि० ५८४
  - ८ भाङ पं० ३२६४ मूर० १०।११६३
  - ९ पं० रा० ४५।११५ वि० प १२।८ मूर० १।११ ४३ विहारी ४८६
  - १० बलि ८७
  - ११ म स १०६
  - १२ का नि० १८।१६ विहारी ४८७
  - १३ का० नि १८।१६ विहारी २७८
  - १४ ब्रह्मवक्त्र० ४।२८।६६
  - १५ भाङ पं० ३२६४ मूर० १।१२०४ १।२४४६ विहारी १३४ ३५७
  - १६ वामे तालमनखेय घान मल्लीव राजने ।  
भूलनावापमाहृष्य न विद्म क हृनिष्यति ॥ भाङ पं० ३२६३
  - १७ पं० रा० तन गोरटी एतन भाङ तिलार । विहारी १३६
  - १८ विहारी १५६
  - १९ पं० रा० १२३



को प्रशस्त कहा है जो नीलकमल की छुति का अपहरण करने वाले हैं।<sup>१</sup> इनके विशेष गुणा में स्निग्धता, विनालता, चञ्चलता, भ्रमरा का लीधता, नालता प्रातभाग की अरुणिमा, श्वनता बरीनिया की निरिन्ता आदि ता वगैरि गिना जाते हैं।<sup>२</sup> उक्त गुणा के आधार पर हमके उपमान मृग, मृगतत्र, रमन, रमन पत्र में स्थ, गजा चकार तथा केतक, भ्रमर और कामराग मान गए हैं।<sup>३</sup> कविकल्पनावृत्तार न आहार-साम्य के कारण चकोर को भी नत्रा का उपमान माना है।<sup>४</sup> परंतु इसका प्रयोग प्रायः प्रमी के नत्रा की रूपासक्ति के कारण होता है। उक्त उपमानों में मृगात्रा में दीघता चञ्चलता और मानापन है कमल में स्निग्धता कोमलता रक्तिमा और आहार साम्य है मत्स्य में सजलता चञ्चलता और आहार साम्य आदि गुण हैं। यजन में भी चञ्चलता, श्वत श्यामता आदि विशेषताएँ हैं।

कवि-परंपरा के अनुसार नेत्रा के उपमानों में सबसे अधिक कमल का प्रयोग किया गया है। किन्तु भ्रमरा मृग<sup>५</sup>, यजन<sup>६</sup> चकोर या चक्रवाल<sup>७</sup>, चकोरी<sup>८</sup>, मीन<sup>९</sup>,

१ बृहत्संहिता ७०.७

२ नत्रे स्निग्ध विनालत्वे सानताश्यामलीधता।

नीलता प्रातलीहिय श्वेत्वं निरिच्छयता ॥ -प्र. शं० पृ० ५२

३ प्र. शं० ५११६.७

४ कविकल्पनावृत्ति पृ. १३६

५ शिवा ७।२६ नप० २।२३ ७।३२ शीक० ६।३१ ७।१२ १५।४१ विक्र० ८।८४ शाठ व० ३३०१ ३२६६ ३४४६ ३४३ गीत० ५।११।६ ७।१६।१ प० १३४ शती० २ पृ० रा० ४।१।१८ के शि० ७ का नि २१।६ र सा० २३१ ज वि० ५२३

६ नप० २।२१ ७।३२ शीक० ६।२८ ६।७ विक्र० ८।३३ शां व० ३ ६२ ३४३२ गीत० प० १ ८ शती० १ १२।२।३३ प० रा० ४।१।१०४ वि० प० १२।१ पद्मा० ४।१।३ मूर० १० ११६७ के शि० ७ बलि० ८८ क० २० २।१ विहारी ५२ १३४ ४४३ ६२३ का० नि० ८।७८ ११।२७ र सा० १६४ २५८ ज वि० ८६ १४१

७ का० ५।१२ नप० २।२३ शाठ व० ३३०१ गीत० ११।२।१।४ पृ. रा ४।७।३३ प्रा० प्र० २।१।३३ वि प १५।४ पद्मा० ४।४ १०।५, मूर १०।१।१६७ के० शि ७ क० २० २।१ का नि ६।८ १ १२४ २२।१७ विहारी २१ ४४१ ५६३ ज० वि० १ ६ प प्र० ३६ ३७ पद्माभरण २६ ३५

८ शिवा ६।४८ विक्र० ८।४२ १३।६१ शीक० ६।६ ६।३६ नप ७।३२ गीत० १०।१।६।१ प रा ४।५।६२ वि प० १४।२ मूर १ १२।१।३३ क शि० ७ क० २० २।४६ विहारी, ६७७, का नि १६।१६ र सा १६२

९ शीक १३।८७ का नि २२।१७

१ प रा ३६।१।६७ मूर १ १७।३६ क शि० ७ र र २।१ विहारी १६३ ६२३ का नि १०।२७ २२।४ ३४।४ र सा० ६७, २६७ ज० वि १४१ ४१८ प प्र० ३६ पद्माभरण, ११, २६

अमर<sup>१</sup>, गफरी<sup>२</sup>, तुरग<sup>३</sup>, कमल पत्र<sup>४</sup>, चानक<sup>५</sup> सारस<sup>६</sup>, कुमुद आदि पुष्पा और पशु पक्षियों का प्रयोग किया गया है। इनके अतिरिक्त अथ प्राकृतिक उत्पादाना म से कहीं-कहीं बादल से भी उपमा दी गई है। कुछ कविमान नेत्रों की बंधकता के कारण इनकी उपमा सर,<sup>७</sup> वृषाण<sup>८</sup> पनच<sup>९</sup> निपग<sup>१०</sup> आदि शस्त्रों से दी है, परन्तु इनका प्रयोग कटाक्षान्ति नेत्र व्यापार के लिए ही होता है। रूपसौ के विभिन्न अंगों पर अटकने और धीरे धीरे चलने से नेत्रों की कल्पना पथिक<sup>११</sup>, प्रेमसदग लाने या प्रेम को प्रकाशित करने के कारण दूत या पायन<sup>१२</sup> जामूस<sup>१३</sup> चुगल<sup>१४</sup> आपस म लडने के कारण मट<sup>१५</sup>, सामन्त<sup>१६</sup> चित्त को खुराने या खूटने के कारण चोर<sup>१७</sup> दटपरा<sup>१८</sup>, पश्यतोहर<sup>१९</sup> आदि के रूप में की गई है। अप्रस्तुता के अतिरिक्त नेत्रों के गुण धर्मों को दृष्टिपथ म रखकर अनेक विशेषणों का प्रयोग किया गया है जैसे सेनापति ने लिखा है—

दीरघ डरारे अनिमारे, नक रतनारे,  
कज से निहारे कजरारे तरे नन हैं।<sup>२</sup>

रीतिकवियों ने इन विशेषणों के अतिरिक्त नेत्रों के अनेक गुणों के अनुसार विशेषणों का प्रयोग किया है।

१ भागवत १०।१६।४३ शिशु० ६।४ वि० प० १०।८ सू० १०।१४१५ पद्मावत १०।५ म० स० ४६२ का० नि० ४।२४ ८।४३ बिहारी ६२३ पद्मावत २६७

२ श्लोक० ६।६ शाङ्क म० ३५२३ हू स० २।१ प० प्र० ४५

३ पद्मावत १०।५ म० स० ४६ १३३ ३४ का० नि० १।३५ बिहारी ६१३ पद्मावत १०६

४ श्रीक० १३।१ प० रा० ३६।२ १ का० नि० ८।१६ २२।५

५ वि० प० ४५।३

६ का० नि० ८।२६ १६।२६ २०।१३

७ कु० म० १८४ बलि० ८६ का० नि० १०।२७ ११।२५ २२।४ २० सा २५४ बिहारी २४  
३१८ ६६४

८ का० नि० २१।५६

९ सू० १।१२०४

१० प० रा० ४५।६२

११ मय० ७।६ रत्ना० १।१ २।१ बिहारी २५५

१२ क० २ २।२४ बिहारी ४३३

१३ बिहारी ६१६

१४ बिहारी २८

१५ सू० १०।२२८७ ८८ म० स० ३२६ का० नि० १।४ ११।४, बिहारी ४००

१६ म० स० २३८

१७ सू० १०।२२७१ बिहारी १७८

१८ सर० १०।२२८५ बिहारी १७८

१९ का० नि० १।३७

२० सेनापति कवित्त रत्नाकर २।५

नायिका के रूप वणन और तक्षसिख चित्रण म कवियों ने सबसे अधिक वणन नेत्रा का ही किया है, इसके बाद कुचा का।

### नेत्र-व्यापार

कटाक्षपात या अपागवीक्षण (चितवन) म उनके विश्वोमक प्रभाव सम्मोहनादि का विशेष रूप से वणन किया जाता है। कटाक्ष की उपमा विषामृत, वाण और मदिरा से दी जाती है।<sup>१</sup> इसीलिए केशवदास ने लिखा है —

मिलत जिवाइचे कौं बिछुरत मारिचे कौं।

वान ये पिपुय विप औरके कटाए हें ॥<sup>२</sup>

रीति-कविया द्वारा इन गुणा के कारण ही कवि-परंपरा के अनुसार कटाक्ष या चितवन की उपमा बछी<sup>३</sup> बाण या कामशर<sup>४</sup>, तलवार<sup>५</sup>, कटक,<sup>६</sup> बिचू के डक<sup>७</sup> आदि वेषक वस्तुमा से दी गई है। प्रपञ्च की नायिका को इसीलिए कविम दृष्टि करने से मना करती हुई कोई बहनी है कि एसी दृष्टि हृदय में पठकर फलदार मल्ली की तरह घायल करती है।<sup>८</sup> इसी प्रकार की अमिष्यकिया काव्य परंपरा म बराबर पाई जाती है।<sup>९</sup> प्रिय की दृष्टि प्रेमी को अपन वश म कर लेती है इसलिए कही इसकी उपमा बाज<sup>१०</sup> पक्षी से दी गई है तो कही चँपु<sup>११</sup> ( लामा ) से। इसके प्रभाव को दृष्टि म रखकर इसकी तुलना विप<sup>१२</sup> से की जाता है। प्रेमी की दृष्टि बगवर प्रिय की ओर लगी रहनी है इसलिए किबलेनुमा<sup>१३</sup> स भी उसकी उपमा दी गई है।

१ कटाक्षो यमुनावीचिम गावनिविषामृत। ष० मं० ५।१।१७

२ केशवदास शिष्यनख छ ७

३ म स ६८६ विहारी २५८

४ म भा ६।१० शाङ्ग ३२६६ ३३०० ३३०३ ३७८ ३५०२ वी ३।७।१४ वि० प० ३५।१२ प्रा० प्र० २।१।२६ सूर १।१६८६ बनि ८६ म० स ६८ का० नि० ११।४६ विहारी १७४ ६१

५ का० नि १।४ ११।४६ विहारी ४३३

६ क र० २।२५

७ विहारी २३१

८ विहिए मद् भणिय तुहु मा तुह वंका दिट्टि।

पुति सवण्णी भनि त्रिव मारइ णिइ पण्णिडि ॥ -हेमच प्रा० व्या० ४।३३०।३

९ पनी विरछीही मीनि रीति नरवोही कुल

कारिसकुचोही मेताएनि व्याग त्रिय की ।

मक भरसोही प्रम रस वरसोही चुषी

चित म हूगोही चितवन ताही लिय की ॥

-पद्मपति, क० र २।३

१० विहारी ३७१

११ विहारी ४४१

१२ शाङ्ग ३३ २

१३ विहारी ६५०



। दशन लालापित नेत्री की चपन गति के कारण इसकी उत्प्रेक्षा 'बदनधार' श्वेत कमल की माना<sup>१</sup> दुःप्रवाह<sup>२</sup> कुवलयवन की गोमा का निगामा म प्रसारण<sup>३</sup> आदि स की गई है। नना व गिान पर प्राप्त होने वाले नवजीवन शीतलता और गुण व कारण इसकी उपमा 'अमृतवर्षी मेष', मुवा<sup>४</sup> दज ना चांद और रतिरस निपय द<sup>५</sup> से दी जाती है।

## कपोल

कपान मनिस्करण स्वच्छ गौर कोमल, उमरे हुए और चमकदार होते हैं इस- लिए इसकी उपमा चंद्रमा और गीग स ली जाती है।<sup>६</sup> वगन रुदिया व अनुसार इसके उपमान मुतुर या मणि मुतुर<sup>७</sup> कम्बु<sup>८</sup> मधूक<sup>९</sup> गनि<sup>१०</sup> और वचनगिता<sup>११</sup>, दाडिमकुसुमगुच्छ<sup>१२</sup>, परिसावकदत<sup>१३</sup> नारग<sup>१४</sup> वमन<sup>१५</sup>, स्वण तवक<sup>१६</sup> आदि पाए जाते हैं।

## मुख

सामान्यत मानवीय सौंदर्य की परख मुख से ही की जाती है। इसकी सुकुमारता, गान प्रसन्नता आदि का वणन किया जाता है। मुख पर हृदय के भावा की स्पष्ट छाप पडती है, अत नारी व मधुर कोमल व्यवितत्व की भलव वविया ने उसके मुख

- १ रघु १११५
- २ मा०मा० ३१९
- ३ मा० मा० ३१९
- ४ प्रिय २१५
- ५ काद व ४२६ मा०मा० ३१९
- ६ क०र २११
- ७ कपूर० २१४१
- ८ काट पु०४२६
- ९ चन्द्राश्री कपानस्य अनकार मधुर ५११४
- १० काद० पु ५२६ व गि ११ का नि ३१७ वा४२ का व १ १५१
- ११ का नि ५६१२
- १२ गाथा० ७१३६ शा० म २६२० व गि ११ म ग २७४ का नि ६१२
- १३ गाड म ३ १६ ३२१५
- १४ शाडु म २३ ६
- १५ स रा० २१३४
- १६ हल०ना १११६
- १७ पन्मा १ १११ ६१ १४
- १८ वही ४११४
- १९ वे गि ११

वर्णन में दी है। मुख की उपमा चंद्रमा कमल या लपट से दी जाती है।<sup>१</sup> मुख मण्डल व वर्णन में कही कही कश ललाट वपात नासिका, नेत्र, अधर आदि व भी गुण व्यापारा का वर्णन किया गया है।

मुख के अममत्व दीप्ति और औज्ज्वल्य आदि व कारण ही इसकी उपमा चंद्र से दी जाती है।<sup>२</sup> स्निग्ध-कोमलता, रक्ताभा और भाधुरी के कारण कमल और चिकनाहट चमक और उज्ज्वलता के कारण लपट इसके उपमान माने गए हैं। स्वतः मुख का सौम्य पर्याप्त प्रभावापादक होता है किंतु हाव भाव हला सात्त्विक अनुभाव आदि की दृष्टि से मुखमण्डल को महत्त्वपूर्ण नहीं कहा जा सकता। योगच्छासुत्र के प्रम व्यापारा को व्यक्त करने के लिए प्रमुख रूप से आवा की प्रमोदीपक त्रियाया का खूब वर्णन हुआ है जिसमें गान भौह आदि की चटाया का भी उपयोग किया गया है।<sup>३</sup>

कवि-परंपरा के अनुसार नायिका के अंगों में उपमानों की निवृष्ट चोचिन करने के लिए उमके छिन, नष्ट होने या मलिन होने का वर्णन प्रायः किया जाता है। शाडू गधर पद्धति में ऐम अनेक श्लोक मशुहीत हैं जिनमें उपमेय की उकृप्ता चोचिन की गई है। उदाहरण के लिए निम्नादधृत श्लोक दया जा सकता है—

तस्या मुखस्यातिमनोहरस्य कतु न शक्त सदन प्रियाया ।  
अद्यापि शीतद्युतिरात्मबिम्ब निर्माय निर्माय पुनर्भिनत्ति ॥<sup>४</sup>

तथा —

ओ गौरी मुह निग्जिअइ बहलि लुककु मयकु ।

अमुनि जो परिहविथ तणु सो किव भवइ निसकु ॥<sup>५</sup>

और गौरी के मुख की ज्योति तो ऐसी है कि वह अधकार में भा दख लेती है।<sup>६</sup>

इसके अतिरिक्त विशिष्ट स्थितियों में मुख की विशेष शोभा भगिमाया की भी कवियों ने निपुणता से अंकित किया है। वर्णन रूढिया व अनुसार सबसे अधिक मुख की उपमा चंद्रमा से दी गई है। वह भी सामान्य चंद्र से नहीं निष्फल

१ मुखस्य चन्द्रजल्पणा । अश १।१।५

२ पूर्णिमाक बाद अमलपूरन अइमन महु । —वर्णनकारणिका ५०५ ।

३ शाडू वर्णन सिद्ध रीतिकालात् कवियों की प्रम-व्यवस्था ५ १५५ ।

४ शाडू ग ३३२

५ प्राकृत व्याकरण ४४ १।२

६ निम मुह करणि विमुद्ध कर अघारइ पन्थिकअइ ।

सगि मडल उदिमए पणु काइ दूर दखइ ॥ — प्रा व्या० ४।३५८।१

तुल पत्राहा निधि पाल्यत वा धर व चहु पाठ ।

नितपूति पूयो रहै ध्यान भोप उनाम ॥ —विगरी २६

७ वा रा अरण्य ५६।११ शीव ६।३६ ६।२३ शाडू ग ३ ६२ ३७२ महामुखाण ७०।११।६, गीत ३।७।१६ १।१६।१ प्रा ५ ११२ २।६६ ५ रा ३६।७ १ ६।१ ७२ वि ५ १२।८ १७।२ पद्मा ४।४ बलि २२ छि वा० १७ ४ ६७ के० गि १५ विहारी २१ २७८ का नि ३।१४ ४८ ४२६ ज० वि २४ १४६ ५ अ० ११ २८ २७

चन्द्र,<sup>१</sup> गरुदचन्द्र<sup>२</sup> या पूर्णिमा के चन्द्र से। कमल या तो प्रत्येक अंग के उपमान होने की क्षमता रखता है पर विशेषतः उससे मुख की उपमा दी गई है।<sup>३</sup> धारसी को उपमान के रूप में कम कवियां न प्रयुक्त किया है।<sup>४</sup>

### हास (मुस्कान)

नायिका के मुख की अनुरागव्यञ्जक हँसी और मुस्कान का वर्णन कवियां ने बड़े मनोयोगपूर्वक किया है। ज्योतिरीश्वर ठाकुर ने उसे कामदेव वं गव का प्रसंगक, आठा सात्त्विक भावा का भाण्णर और काम के पाचा बाणा की सघान गक्ति से पूण मानकर इसकी महत्ता का प्रतिपादन किया है।<sup>५</sup> हास में आकषण श्वेताभा उज्ज्वलता, स्निग्धता कोमलता और शीतलता आदि गुण पाये जाते हैं अतः इसकी उपमा ज्योत्स्ना इन्द्र-पुष्प पीयूष, फेन और कुमुदिनी आदि से दी जाती है।<sup>६</sup> वणरत्नाकर के अनुसार उसके उपमान कुमुद कुद वदम्ब, कास, भास कलास कपूर और पीयूषकाति के प्रसार आदि उज्ज्वल और स्वतः पदाय माने गए हैं।<sup>७</sup>

हास या मुस्कान नायिका के मुख का स्वाभाविक गुण माना जाता है। इसके प्रभाव को दृष्टिपथ में ही रखकर प्रायः उपमान निश्चित किए गए हैं। वणरत्नाकर के अनुसार हृदयाह्लादक होने से हास या मुस्कान के लिए तद्वि, "फुलभन्दी,<sup>८</sup> ज्योत्स्ना<sup>९</sup> मिठाई<sup>१०</sup> अमृत विस्तार<sup>११</sup> चन्द्र<sup>१२</sup> विकसित पुष्प समूह<sup>१३</sup> चमेली<sup>१४</sup> कमल विवास<sup>१५</sup>

१ वि प १७१२ १७१२ का नि १११२६

२ का नि० १५१५६ प० अ २८

३ शीक ६१२६ नप ११२३ शाड ग ३३२२ ३५३ गीत ३७७५ १५ ३१९६१२ १ १९६११

प्रा प २१६६ पु रा २५१२६ ६११३७२ वि० प० १३११ पद्या ३६ का नि १२६ ३०

६११६ ज० वि० १४६

४ का० नि० ८१७८ १०११

५ वणरत्नाकर द्वि व प० ७ ।

६ ज्योत्स्ना-दुपुष्पपापुष्पनरत्नरत्नम । -अ० श ५१११७

७ वणरत्नाकर नि० क प० ७

८ पद्मा ३६१११ ४११२ का नि ३१४७ ८१२६ १०१३२

९ वही ४११३ म स ४१५

१० नप ७१४ नि प १२ बलि २२ क १० २११२ म स ३१४

११ र रा १

१२ शाड ग ३३७१ नि प० ३५११ का० नि० १५११७

१३ शीक० १११२ नप ११२४

१४ का० प ५२६

१५ का नि २११

१६ पु रा० ४५१८

पीयूष विषयुक्त,<sup>१</sup> मिठासमय गार,<sup>२</sup> विष<sup>३</sup> आदि अप्रस्तुता का प्रयोग किया गया है।

### नासिका

नासिका के दोनों युग्म का समान होना सौभाग्य सूचक माना जाता है।<sup>४</sup> इसकी तिल प्रसून स उपमा दी जाती है।<sup>५</sup> रागादीपक होने के कारण कविया ने इसका वर्णन म तिल प्रसून,<sup>६</sup> काम-तूणीर<sup>७</sup> तिलप्रसून विनिर्मित काम तूणीर,<sup>८</sup> कीर,<sup>९</sup> चपककती,<sup>१०</sup> किंशुक,<sup>११</sup> खडग,<sup>१२</sup> दीपशिखा,<sup>१३</sup> आदि अप्रस्तुता का प्रयोग किया है।

### अधर

वाच्य-प्रयोग अधरों की मधुरिमा कोभङ्गा, स्फोति और तालिमा वर्णित की गई है। गावदन ने भी अधर के उक्त गुणों की चर्चा की है।<sup>१४</sup> सामुद्रिकशास्त्र में बधुजीव के समान लाल और अमासल (पतल) अधर को गुम माना गया है।<sup>१५</sup> इन्हीं गुणों के कारण इनकी उपमा प्रवाल, विम्बा पत्र, बधूक-शुष्प, पल्लव तथा मधुर पत्तियों से दी जाती है।<sup>१६</sup>

अधरों की सुवर्णता, मधुरता कोमलता आदि गुणों के उत्कृष्ट चोदन के लिए कवियों ने अनेक प्रकार के समावनामूनक अप्रस्तुता का विधान किया है। ऐसा ही

१ म० स० ३३६

२ वही ६७२

३ मूर० १ ७४७

४ ब० स० ७० ७ एव वरं पुराण अध्याय ६४

५ तिलप्रसून नामाया । अलङ्कार शब्दर ।

६ शां० ग० ३६१८ व० रा० ४५१९२ पदमा ४१६ १०१२१८४ के० शि० १० का० नि० ६१४१ १३१६

७ विक्र० ८१७१ शां० ग० ३३०४, के० शि० १०

८ नय ७१३६

९ व० रा० २५१४४ [१६१२०१, ४५१११३ ६११२४६ वि० व० १११८ पदमा० ३१६ ३६१० मूर० १ ७३३६ बलि० ६८ का० नि० ३१४७ ८१४२ ६१८ २२१७७ २० शां० २१६ व० वि० ६०२ पदमाभरण १६

१० मूर० १०११०७६ ब्रिहाटी २०६

११ का० नि० ६१४१ का० २० ८१२४

१२ प० मा० ३६१११ ४११६

१३ बलि० २२

१४ अष्टादश्यान्तमाधुयमुच्छ्वासत्वं मुरस्त्रता । -अलङ्कार शब्दर व० ५२ ।

१५ बहुलछाहिना ७० ६

१६ प्रवालविम्बवधूकपल्लवरघरोष्णौ ।

वन्शी माधुयमाश्रिययावमधुवेम्भुभि । -अलङ्कार शब्दर, ५१११७-८

साधुसंगस्य परिहास्यते विद्वान्निवासः एतत्प्रकारस्य परमो भवेत्

सधुसंगस्य च मरेणो मधुमति मा चया ।  
 मधुमतिश्च प्राप्तवत्यस्य प्रयत्नस्य फलम् ।  
 मधुमतिश्च मधुमतिश्च मधुमतिश्च मधुमतिश्च ।  
 इत्यु मधुमतिश्च मधुमतिश्च मधुमतिश्च ॥

यद्यपि च प्रकृतं तस्य । विद्वान्निवासो यो मधुमतिश्च मधुमतिश्च मधुमतिश्च मधुमतिश्च ।

संग

संगस्य विद्वान्निवासो यो मधुमतिश्च मधुमतिश्च मधुमतिश्च मधुमतिश्च ।

- १ मधुमतिश्च २३१०
- २ विद्वान्निवासो यो मधुमतिश्च मधुमतिश्च मधुमतिश्च मधुमतिश्च ।
- ३ मधुमतिश्च मधुमतिश्च मधुमतिश्च मधुमतिश्च ।
- ४ विद्वान्निवासो यो मधुमतिश्च मधुमतिश्च मधुमतिश्च मधुमतिश्च ।
- ५ मधुमतिश्च मधुमतिश्च मधुमतिश्च मधुमतिश्च ।
- ६ मधुमतिश्च मधुमतिश्च मधुमतिश्च मधुमतिश्च ।
- ७ मधुमतिश्च मधुमतिश्च मधुमतिश्च मधुमतिश्च ।
- ८ मधुमतिश्च मधुमतिश्च मधुमतिश्च मधुमतिश्च ।
- ९ मधुमतिश्च मधुमतिश्च मधुमतिश्च मधुमतिश्च ।
- १० मधुमतिश्च मधुमतिश्च मधुमतिश्च मधुमतिश्च ।
- ११ मधुमतिश्च मधुमतिश्च मधुमतिश्च मधुमतिश्च ।
- १२ मधुमतिश्च मधुमतिश्च मधुमतिश्च मधुमतिश्च ।

## शृंगार और उसके प्रमुख पक्ष

दाने)<sup>१</sup> कुन्<sup>२</sup> माती,<sup>३</sup> हीरा<sup>४</sup> और दामिनी<sup>५</sup> हैं। इनके अतिरिक्त कुछ कवियों ने तारे<sup>६</sup> का भी प्रयोग किया है।

## वाणी

गोवर्द्धन के अनुसार वाणी में माधुर्य और स्पष्टता होनी चाहिए।<sup>७</sup> केशव मिश्र ने हसावली 'गुक्' चिन्तर, वणु वीणा, कोकिल आदि के स्वर और मधुर पदार्थों को इसका उपमान माना है।<sup>८</sup> कवियान् मुख्य रूप से कोयल<sup>९</sup> सुधा,<sup>१</sup> और वीणा<sup>११</sup> से इसकी उपमा दी है। मधुर पदार्थों में रस, माध्वीक मधु द्राक्षा, मिश्री आदि से इसकी उपमा दी जाती है।<sup>१२</sup>

## कठ

गोवर्द्धन के अनुसार कठ में दीप्तता और त्रिरत्ना होनी चाहिए।<sup>१३</sup> इसके उपमान कबु और कपात हैं।<sup>१४</sup> वाराहमिहिर ने कम्बुवन् कठ को सौभाग्य का सूचक माना है।<sup>१५</sup> वणरत्नाकर के अनुसार इस तूल (रक्त वण) कोमलप्राय और तीन रत्नाओं से समन्वित होना चाहिए।<sup>१६</sup>

१ प रा० ६११२५ ४७३६ वि० प० १२१८ सूर० १०१२४५ पद्मा० स १६ के० शि०  
१३ का नि ८४२ १६१२६ पद्माभरण १८

२ शाङ्ग ग० ३६५८ प रा० ४५११२ क० र २११

३ मन्वपुराण ७ १११५ सु० च ४३ का नि ३४७

४ पद्मा ३६ ३६११ ४११० छि वा० १७५ के० शि० १३

५ कु म ४७ प रा० २५१४२ ३६१२०१ पद्मा० ४४ के शि १३

६ वेनि २२ के शि० १३

७ अन्वकार शब्दर प ५२

८ वही ५११६

९ रा० म धरण्याव ७० ६६७ विक्र ७२७ श्रीक ८१८ ८३ नप० ३६० शाङ्ग ग०  
३ ६३ सूर० १ ७३८ १० ११६७ का० नि० १७१२६ ज० वि० ५२२

१ रा म अरण्य ६६७ गीत ३७१५ १२१२३३ क र० २४८ म० स ३६७ का०  
नि० ४१९६ १५४६

११ वा० प ५२८ नप ३६ ७५ का नि ६१८

१२ शाङ्ग ग ३३७३ विहारी १६३ का नि० १६१२१ ज० वि० ७२ २६७

१३ अलकार शब्दर प ५२

१४ वही ५११६

१५ बह्महिता ७ ७१

१६ वर्ण० नि० क० पृ ४ १६ छ

बधिया न दाग,<sup>१</sup> बपोत<sup>२</sup> विक<sup>३</sup> मार<sup>४</sup> घाति<sup>५</sup> दसह उरमाना का प्राय प्रयाग बिया है। बठ की पारम्भाका का भा वणन बही-बही मितता है।<sup>६</sup>

बाहु

गोवद्धन ने बाहु व मृदुता और समता आदि गुण माना हैं।<sup>१</sup> दसका वर्णन कमलनाल विद्युतमालिका और मृणाल व समान करना आश्रित।<sup>२</sup> इसके उपमान बविकल्पलता म लता लहरी पाग और पागा मान गए हैं।<sup>३</sup> यणरत्नाकर म भी विगालता, बलितत्व, त्रिपलताकारत्व आदि इमर गुण मान गए हैं।<sup>४</sup> भुजा की तुलना कामन्दक के पाग और बेंत की साट म की गई है।<sup>५</sup>

बधिया न बाहु व उपमाना म मुख्य रूप म मृणाल या मृणाल लता,<sup>१</sup> पाग, लता पाग या वरुणपाग,<sup>२</sup> लता<sup>३</sup> और डान<sup>४</sup> मान है।

वर

गोवद्धन के अनुसार इसम मधुता क्षीतलता और पूरे हाथ म रक्षिता आदि गुण होने चाहिए।<sup>१</sup> इसीलिए इसकी उपमा कमल पल्लव और विद्रुम से दो जाती

१ विक० ८१२२ श्रीक० १११९६ शा० ग ३०६३ गु ५० ४३ गग० रा० वदा० अड १११  
वि० ५० १८१५ पद्मा १०१९३ छि० वा० १७६ सूर० १ १२११७ के० ति १६ वा० नि०  
८४४२

२ ५० रा० २५१४१ पद्मा ४१ १५ सूर० १ १३३६ व ति० १६ वा० नि० २२११७

३ ५० रा० ३६१२०१ का नि० २२११७

४ ५० रा ४७१७० पद्मा० १०१९३ वा० नि० २२११७ पद्मामरण ४४

५ पुनि सेहि टाव परी तिति रेया ।

घूट जो पीक सीक सब देया ॥ -पद्मावत १ १९३

सुल०-घरी लसति गोरे गरे धसति पान की पीक ।

मनी गुलुवद लाल की लाल लान दुति सीक ॥ -बिहारी १२८

६ मधुना समता भुज । -मलकार शिखर १० ५२

७ बाहुबिसेन विष इल्लिमणाल । बही ५११११

८ बल्लरी लहरी पाग शाघा बाहुम्यस्य व । बही ५० ५१

९ वण०, द्वि० व० ५० ४ १६ ख

१० कामदेवक पाग भद्रसन बाहु । अतक साट भद्रसन वा । बही ५ ५

११ वाद० ५० ५३६ विक ८१६४ नय २१२७ ७१६८ ६६ शाड ग ३ ६३ ३३७८ कु० म

५०, गीत० ७१५१४ सु० व० ४३३ स० रा २१३५ वि० ५ २०१६ पद्मा १०१९४ ४११९६

छि० वा० १७६ सूर० १०१११५७ के० ति० १८ क० र २१४३ वा नि ८४४२ व वि

४५

१२ शाड ग ३३३० ४४३७ प्रा० पं २१२६ वि० ५० २३१७ बलि २३ के ति० १८

१३ शाड ग० ३३३१ व० र० २१२५

१४ वा० क ३६७ वा नि० ८४७८

१५ क्तेति मधुनामत्य सबभाग व घोणता । -म० शै०, ५० ५२

है।<sup>१</sup> हथली का मुमम होना सीनाग्रराज्य होता है।<sup>२</sup> वरणाकर म हाया के मुकुमार, अनुकन निमन, तलिन और रत्तागोत्राग्र प्रादि गुणा का चक्र ही गइ है।<sup>३</sup> सामुद्रिक ग्रथा म हाथ की अगुनिवा की दृष्टता का जोभाग का ताण माना गया है। इसके मुख्य उपमान कमल<sup>४</sup> और पत्रव<sup>५</sup> है। नही नही दृष्टता उरमा काम क पाव बाणा से दी गइ है।<sup>६</sup>

### वक्षोज

नारी क प्रधान आरण्य-ने नाम का नाम मश अरि महेत्त्व बुचा का है। शृ गारप्रधान काव्या म नारी क वनाजा का दण्ड पमान मात्रा म प्राप्त होता है। इमक आकार, गुण और प्रभाव का नकर रविद्या न अन्त प्रकाश क अग्रान्तो का विनियोग किया है। गावद्धन न वक्षोजा क औचय श्यामाप्रता विस्त्रि दृष्टता और पाण्डुता आदि आवश्यक गुण मान हैं।<sup>७</sup> वाराहमिहिर न दनुवाकार पत्र अविपम और कठिन उरोजा को गुम माना है।<sup>८</sup> हस सदा की टीका म उद्धन निम्ननिम्न श्लोक स भी इस वान की पुष्टि होती है—

पदमवोगप्रतीकागो सुवणकलनोपमा ।

सतनावविरलो यस्य सा शतमहिषो भवत ॥

वणरत्नाकर म भी वाराहमिहिर के द्वारा दिए गए वनाका क गुणा का उल्लेख किया गया है।<sup>९</sup> स्तना के उपमान प्राय आकारमाम्य और वणमाम्य ही चोतिन करत हैं। विभिन्न रूपाकार के वक्षोजा की उपमा पूमफन (गुपागी) कमल कमलकोरक विल्व ताल, गुच्छ करिकुम पहाड, पत्र गिव चनवाक मोवीर जम्बीर बीजपूर समुग्गडालग और पत्र आदि मान गए ह।<sup>१०</sup> कविया न अविक्तर करिकुम,<sup>११</sup>

१ करस्तुपदमन । पल्लवविमकाभ्याम् । अ म १/११८१

२ बहमहिता ७ ४

३ वण नि० क० प ४ (१६ ख)

शां ग २ ६ गीत ७११५ ७१६५ १२१२३। अ म १/११८ वी० दे० रा० ११३ के नि० १६ का नि० १ १३२ विदारी २१

५ विक्र ८५४ नप ७७१ शां ग ३३३२ ३७०६ मु न ८ क म २१२५ का नि० ८१२०

६ नप ७७० वनि० २२ म स ६७

७ स्तन श्यामप्रतानविविम्बारत्नपाश ता । -अनकार शयन १

८ बहमहिता ७ ६

९ वणरत्नाकर नि० क० प ४ (१६ ख)

१० गुणादन्तरोक्तविल्वनालग उमकुम्भादिप्रशक्त ।

गौवार जंबीर चनवाकपूरममगटाउगपनमग्राज । अ म १/११११

११ गाया १६ विक्र १ ८५४ नीव १४११६ नप ७७०८ शां ग ३३२८ २५ ० २५६ गीत० पृ ६४ श्लो २ १ ११६५ मूर १ १११६७ वनि २४ के० नि २०, म स ५ १ का नि० ८१६६



श्रीफल,<sup>१</sup> बलग,<sup>२</sup> गिरि,<sup>३</sup> कमल,<sup>४</sup> पद्म कमल<sup>५</sup> चन्द्रबाह,<sup>६</sup> तालफल<sup>७</sup> गारग या नव  
रग,<sup>८</sup> गिव,<sup>९</sup> कान गिव,<sup>१०</sup> शुभ<sup>११</sup>, मगनपत्र,<sup>१२</sup> बोरु<sup>१३</sup> शतदुग,<sup>१४</sup> मेरु,<sup>१५</sup> बटुन या  
नवरग बनन बटुन,<sup>१६</sup> कमल तोरु<sup>१७</sup> स्वर्ग फलन,<sup>१८</sup> बीजपूर,<sup>१९</sup> बदरी<sup>२०</sup> आदि क  
प्रयोग मुचा के उपमान क रूप म किया है।

## रोमराजि

उदर के मध्य नागि से स्तन तट पयन लम्बित रोम पवित्र का वणन कविया ने  
बड़े मनोयोगपूर्वक किया है। गोवद्धा न रोमावली म मादक, सुभ्रमता, श्यामता और

- १ का० रा० अरण्य० ६।१३ नव १।६४ ७।७६ प० रा० ४१।१११ वि० प० ८।४ पद्मा०  
२७।१० सूर १०।११६१ के शि० २ का० नि० ६।२ ८।८६ ज० वि १०० पद्याभरण  
१४०
- २ का० प० ३६४ नव० ७।७५ शाड ग० ३५३२ ३७०४ गीत० ६।१८।२ १२।२३।४ पु० रा०  
३६।२ १ वि० प० ७।८ ३०।१२ क० र० २।१२ का० नि० ८।८६
- ३ हनु० २।५ सूर० १०।१०७६ क० शि० २० क० र० ३।४४ विहारी १०७ १६८ का० नि०  
४।२६, ८।८६ र० सा० १६५ पद्या ४४
- ४ गीत प० १८२ पत्रो० ५ पु० रा० ६६।२०६ वि० प० १२।६ सूर० १०।६८६ म० स० ५०१  
क० र० २।१ का० नि ६।२ ज० वि० १०६।
- ५ श्लोक १५।२२ सूर० १।१२०१
- ६ सु० वा० पु २८ नवपत्र० १।३२ ७।७७ शाड ग० ३३४८ पु रा ६१।११६८ वि० प०  
२३।५ सूर १०।१४१५, के० शि० २० का० नि० ८।३० ८।८६
- ७ का० रा० अरण्य० ४६।१६ ६।२० नव० ६।७४ गीत० ६।१८।२ के० शि २० का० र  
५।३६
- ८ पु० रा० ३६।२०१ ४।६७ वि० प ४।१०, पद्मा० १०।१५ का र० ७३
- ९ प० रा० २५।३१५ ३६।१७४ के० शि २० क० र० २।२३ का० नि० ३।४८ १५।३०  
१७।२६ १८।७ ज० वि० ४५ २६८ ४०३
- १० वि प० ८।१ १८।५
- ११ रण० १२।३२ का नि० ८।८६ ज वि० ३५
- १२ शाड ग० ३५३० गीत० १२।२४।१ के० शि २
- १३ श्लोक० ६।४४ शाड ० ग ३५२१ का० नि० ८।४२ पद्याभरण २१।
- १४ शाड ग ३६३६ विहारी १६८ ५६५
- १५ पु० रा २५।३१५ वि प० १।२ सूर १०।१ ८३ के० शि २० २२ वलि २५ म  
स ४७५ का नि १।२२ र० सा० २६१ पद्याभरण ५६
- १६ श्लोक ६।२७ का नि ८।८६
- १७ स्व० वा प २८ वि प २०।५ के० शि० २० का नि ३।५१ ८।२० ८।८६ प० प्र  
४६
- १८ सूर १०।११४५ के० शि २१ क० र० २।३७, म० स ५०१, पद्माभरण ६३
- १९ वि म० ८।४ पद्मा० १०।१५
- २० वि० प० ४।१०

नाभिपयतता आदि गुणा का वणन किया है।<sup>१</sup> इसके अनुसार रोमावली की उपमा शवाल, धूम ( रेखा ) म गावलि, लला आदि स दी जाती है।<sup>२</sup> रोमराजि यौवनागम के साथ साथ सघन और स्फुट होन लगती है अत कविया ने शशव-यौवन की विमाजक रेखा<sup>३</sup> पति के लिए सुरक्षित अर्द्धांग की सीमारखा,<sup>४</sup> यौवन थी व द्वारा काम शासन लिखत समय गिरी रोशनाई की धारा<sup>५</sup> या रसरज स्याही से लिखी यत्र पवित के घन अशर<sup>६</sup> आदि से इसकी उत्प्रेक्षा की है। कालिंदी की धारा<sup>७</sup> शवालमजरी,<sup>८</sup> धूमशिला<sup>९</sup> मधुपाली<sup>१०</sup> लोह शृ खला<sup>११</sup> रस्सी<sup>१२</sup> अघकार की रेखा<sup>१३</sup> भुजगा<sup>१४</sup> वृषाण<sup>१५</sup> तटिनी<sup>१६</sup> शृ गारलता,<sup>१७</sup> पिपोलिकापक्ति<sup>१८</sup> आदि इसके उपमान कवियों द्वारा प्रयुक्त हुए है।

नाभि

वणरत्नाकर म नाभि के गुण गभीरता और दक्षिणावतमंडलाकृतित्व बतलाए गए हैं।<sup>१९</sup> विवर और कमल<sup>२</sup> के अतिरिक्त इसके उपमान रसातल, आवत, सरोवर, कूप और नद आदि माने गए हैं।<sup>३</sup> कविया ने इसकी उपमा कूप या कुंड या हृद<sup>४</sup> गुहा,<sup>५</sup>

१ रोमत्या मादव सौम्य स्वामता नाभिगामिता । -अलकार शशर पृ० ५२

२ रेखाकाराश्लिसुष्यामा रोमाविस्तेन तादशै ।

शैवानधूपमु गानितताद्य खमीयने । वही ५।१।१२

३ नप० २।३० का० व० ३।७०

४ नप० ७।८३

५ विक्र ८।३१

६ का० नि० २०।१२

७ पद्मा १।१६ मूर १।२४४७ का नि० ११।२०

८ शाह ग २३४८ प रा ६१।३७३ मूर १०।२४४७ के० मि २३

९ शाह ग ३३४६ का क ८।४६

१० पद्मा १।१६ क मि० २३ का० नि० १७।२६

११ विक्र ८।२७ नप० ७।८५ सु० च ४।२

१२ विक्र ८।२८ ८।३३ नप ७।८४

१३ विक्र ८।२४ मूर १।२४४७

१४ सु च० ४।२ मि प १५।६ का० नि १८।७ १६।४३

१५ म म० ३४६

१६ मूर० १०।२१८४

१७ का० नि १६।४३

१८ पठम च ३८।२ पृ० रा २५।१३६ ४७।६६

१९ वर्णरत्नाकर मि र प० ४ (१६ ख)

२० घर्णरार शशर कवितान्यत्रता का उद्धरण प० ५१

२१ घनकार शशर ५।१।१

२२ विक्र ८।३३ शाह ग० ३३४८ नु म० १८७ जी० च २।३५ पद्मा० १०।१६ के० मि०

२५ का नि० १३।३५

२३ श्रीक० ६।३४

रक्ष मा वि धर ' जगत् यो न म त्पात्र न भी ' १।

### त्रिवली

उत्तर म भागर्था गया न कारण वन्या ही तान रेणाभा का त्रिवली बहन है । इसका हाना मीमांसाग्रन्थ माना जाता है । ' एतां उपमा त्नी और उमक ममान रूपवाली चीजा स' तथा ती तत्र ममान और नि ध्रणी म दी जाती है । ' कविवा न अधिकान तीन सत्तान ' ' एतां उपमा ती ' ' तम - त्रिवली ' त्रिभुवन विजय रेणा ' त्रिपथ ' त्रिभवा ' एता ती रया । ' एत न अनिरित्त प्रमुतिया क निशान ' ' सापान ' ' एत और ' एता ' ' आति ' एत न प्रप्रमुता का प्रयाग विया गया है ।

### पीठ

डा० हजारीप्रसाद ' एता त्रिवली ' पीठ का वर्णन प्राय कविया म प्रसिद्ध नहीं है साधारणत एया न अग्रभाष ' ' मीमांसा का वर्णन ही प्रसिद्ध है पर अवस्था विशेष म (जम मान न मम म म पिराएर वती हुई अवस्था म) पीठ की उपमा वर्णन पट्टिका मे दी जाती है । ' ' एत मि एत न भी वर्णनपट्टिका ' ' को इसका उपमान माना है । ' इसके अतिरिक्त पान स भी पीठ की उपमा दी जाती है । ' १८

१ शाठ म ३ ४ ५ १ व ५ १५१६

२ वि० ८५ १

कु म० १८७

४ वाराहमिहिर ४८ गो ३३ ७

५ कवी तटिया त्त प । प्र म २१११३

६ वीचिसोयाननि एतां त्रिवली एता वीचिसोयाम् । वा व ५१

७ मलि० २५

८ शाठ म ६६

९ न क ५१६ शा म ६६

१० के सि २६

११ मय ३१ ४ १ ११०८ व सि

१२ वि० ८३५ ३६ वजा १- व सि २६

१३ सूर १ १२१८४ के सि ६ व नि ८३२ १३१३२

१४ वि० ५ १५१६

१५ डॉ हजारीप्रसाद त्रिवली हिा मांसाय की भूमिका प २६६

१६ मय ७१८७

१७ पठ काचनपट्टक । प्र म २१११३

१८ का ति २ ११२

कटि

r

वणरत्नाकर म कटि को क्षीण, सुकुमार, बलित तथा मुष्टिग्राह्य माना है।<sup>१</sup> इसके उपमान सूक्ष्मनावोधक पदाथ मान गए हैं जस सुई की नाक, सूय अणु, वेणी, सिंह की कटि आदि।<sup>२</sup> कविया ने मिहू या मिहूकटि<sup>३</sup> मुरार (मणालतनु),<sup>४</sup> नम<sup>५</sup> छडी,<sup>६</sup> मवतूल-साग<sup>७</sup> दो नपा की सीमा<sup>८</sup> काम कमान का मध्यभाग<sup>९</sup> चार के अक के समान<sup>१०</sup> क्षपा (शीतकालीन),<sup>११</sup> आदि अप्रस्तुत वा इसके लिए प्रयोग किया है।

नितम्ब

योवनावस्था म मुख्यरूप म विकसित होनेवाले अगा म स्तन और नितम्ब हैं।<sup>१२</sup> यही कारण है कि हैबलाक एलिस आदि मनोवज्ञानिका ने यौन उपादानो म इन अगा का विशेष महत्त्व दिया है।<sup>१३</sup> ज्यानिरीश्वर ठाकुर न पीन मासल और कूमपच्छाकार होना इसकी विशेषता मानी है।<sup>१४</sup> इसके उपमान पीढा प्रस्तर भू चक्र आदि माने गए हैं।<sup>१५</sup> कविया ने नितम्ब की उपमा रथचक्र,<sup>१६</sup> शिलाल <sup>१७</sup> कामदेव का पादपीठ <sup>१८</sup> यादवा<sup>१९</sup> आदि स दी है।

१ वणरत्नाकर नि क प० ४ (१६ ख)

२ मूष्यप्रनलशूयाणुवेणीमिहा भि सम ।

मुष्टिग्राह्यो भवमध्य

॥ -अ को० ११११४

३ सु च ४१२ प० रा० ४११७२ ६१२५३ नि प १२१४ मूर० १ १७२९ १ १११९७  
डोना ६५४ का नि १८१७ २४१४ र सा० २६

४ का० नि १२११८

५ का नि ८०

६ प-माकर प्रकीणक ४६

७ ज वि १८७

८ पू रा २६११७६

९ प० रा २१११३८

१० का नि ८१२

११ विहारी २४१ ४४४

१२ विहारा १४

१३ द अँ घ-चन मिहू रीनिवागीत कविया की प्रम-यजना प १ ८

१४ वणरत्नाकर नि क प ४ (१६ ख)

१५ पीठप्रस्तरभूचक्र नितम्ब परिवन्धत । -अ स ११११२

१६ नप २१३६ ७१८८ प रा० ६११७८ क सि० २७ का क० ३१७६

१७ का० प० ५२८ कु० म ११४

१८ श्रीक० ११११२ क नि० २७

१९ र सा २८

उरु

गोवद्धन के मतानुसार उरुमा म काति वस्तानुपूजता नातिगीपता अयन्त मदता और गीतवतामि गुण होय चाहिए ।<sup>१</sup> वण रत्ताकरकार भी इसी मत का समर्थन करते हैं ।<sup>२</sup> इस उरुमान हाथी की सूड बदली और करम हैं ।<sup>३</sup> काव्य प्रथम इगरी उपमा रमा<sup>४</sup> हाथी की सूड<sup>५</sup> बदली राम<sup>६</sup> आदि स दी गई है ।

चरण

ज्योतिरीश्वर ठापुर के मतानुसार चरणा का उरुवन कामल चान्ति सम, सुतल और सालकार हाना चाहिए ।<sup>७</sup> धाराहर्मिहिर ने स्निग्ध उरुन प्राग वापत लाल नाखून वाले सम उपचित और गुप्तर गुप्तगुल्फ समवित अगुनियां सगी इइ और कमल की काति वाते चरणतल जिस कुमारी के हा उससे विवाह करने वाते पुण्य रा राज्य सुखमोक्ता बतलाया है ।<sup>८</sup> उरुन गुणा के अनुसार चरणा के उपमान पल्लव कमल स्थल कमल और प्रवाल आदि माने गए हैं ।<sup>९</sup> उरुन उपमाना म चरणा के वण, आकार और कीमलता को ध्यान में रखकर स्थान कमल<sup>१०</sup> या अरण्य कमल<sup>११</sup> रिगलय<sup>१२</sup> अगा पल्लव<sup>१३</sup> केवल वण को दृष्टि में रखकर सिंदूर या मूगा<sup>१४</sup> अनार पुष्प गुलाब गडहल या बधुजीव का प्रयोग किया गया है ।<sup>१५</sup>

१ कान्तिव तानुवत्व जपयोर्नातिदीर्घता ।

अयन्तमदता शल्य ॥ -म० शो० पृ० ५२

२ वणरत्ताकर ि० क पृ० ४ (१६ छ)

३ उहस्तु करिहस्तेन बदल्या करभण च । --म० शो० १११/१५

४ श्रीक० १५/२५ नप० २/३७ शाड ग० ३०६६ ३३२१ सु च ४/२ कु म ११५ गीत०

पृ १६ श्लो० ७ स० रा २/३८ पृ रा ३६/१७८ २०१ वि प १२/४ १३/४ मूर०

७३६ बलि २६ डोला ४५४ का नि० १८/७

५ वा रा अरण्य ४६/१८ विक्र ८/१६ नप ७/६४ पन्मामरण ११३

६ विक्र० ८/१५ श्रीक ११/४६ शाड ग ३५२१ छि० वा १८१ बलि० २६ वा० नि

८/२ ४२

७ वण ि० क पृ० ४ (१६ छ)

८ बहस्तहिता ७ १

९ अलकार शब्द १/१/१६

१ विक्र ८/७ ८/१ गीत १०/१६/६ कु० म ५६ वि० प० १३/४

११ शाड ग० महापुराण २८/१२/८ म च ४/२ गीत १२/२३/१ वा नि ३/४४ बिहारी

२१

१२ विक्र० ८/११ नप० ७/६८ गीत० ७/१५/६ १२/२३/१ वि० प० १२/४

१३ जी० व० ३/४४

१४ नप ७/६६ वा० नि ३/५४ बिहारी १२/४

१५ वा नि ३/५४

नख

नखा की उपमा पूर्णेंद्रु से दी जाती है।<sup>१</sup> कविया ने इसकी उपमा रत्न या रत्न राजि<sup>२</sup>, तारे<sup>३</sup> चन्द्र<sup>४</sup>, दीपमालिका<sup>५</sup> जलकण<sup>६</sup> दपण<sup>७</sup> और अथ चमकदार एवं लाल रंग के पदार्थों से भी है।

गमन

नारी के गमन की मदता मनाहरता और मगिमा के कारण इसकी उपमा गज और हंस व गमन से दी जाती है।<sup>८</sup> सामुद्रिक लक्षणा के अनुसार जिसका गमन हंस की तरह होता है वह राजरानी होती है।<sup>९</sup> गमन के साथ ही अधिकतर नूपुरध्वनि का भी बणन होता है। इसका उपमान हंस और सारस का शब्द है।<sup>१०</sup>

डा० हजारीप्रसाद द्विवेदी ने गति मदता का कारण नित्य की गुफता मानी है।<sup>११</sup> कविया न गमन की उपमा हंस<sup>१२</sup> मत्तगज<sup>१३</sup> सारस<sup>१४</sup> आदि से दी है।

प्रस्तुत विवेचन से रीतिकान्य में वर्णित नखशिख की रुद्धिबद्धता का अनुमान लगाया जा सकता है। रीतिकान्य का प्रेरणा देन म उक्त विवेचन व अतगत आण शास्त्रीय और साहित्यिक ग्रंथों का महत्त्व अक्षुण्ण है।

रीतिकविया ने उत्प्रेक्षाघ्रा म जा कुछ नवीनता का परिचय दिया है उसका भी आवार बहुत कुछ बणन की परंपरा रही है जिसका संकेत वाल्मीकि रामायण से लेकर नपथचरित तक बराबर मिलता आया है। इस प्रसंग में कतिपय नूतन अग्रस्तुतों

१ अलकार शब्दर ५।१।१६

२ वाच ५ ५३७ विक्र० ८।६ शब्द ग ३३२२ गीत ७।१५।१ छि वा १८२ बनि २७

३ महापुराण २८।१२।६ स च ५।२ बनि २७

४ शब्द ग ३८६२ प रा० ४५।१ ५ वि ५ ३।१२ बनि० २७

५ के शि० २८

६ बनि० २७ क शि २८

७ जी० ख ३।४४ प रा ६१।३६६

८ गमन ह्यमहस्तिबत् । -अ० श ५।१।१६

९ ह्यस्यवपनियस्यास्ताधिरानी पविष्याति । (हम सत्य की टीका से उद्धृत।)

१० ह्यसारसशाब्दाभ्या वण्यत नूपुरध्वनि । - अलकार शब्दर ५।१।१८

११ हिंदी साहित्य की सूचिका पृ० २६७

१२ विक्र ८।१२ १।३२ श्रीक ६।३७ शब्द ग ३ ६६ कु० म० ५७ प च० ३८।३ म०  
प ४।१ प रा २५।१३३ ४ ३६।१८६ ४१।३६ ६१।२५५ पन्ना २७।१३ ३६।११  
सूर १।१ ४८ व० २० २।४ का० वि० २२।१७ प प्र ३६

१३ विक्र ८।१ श्रीक ६।३६ नप ७।१०१ शब्द ग ३ ३३६१ ३८६४ ६५ कु म ५७ प्रा  
प १।१३२ प० रा ४५।७२ वि० प १२।४ पन्ना १।६ २७।१३ सूर० १।१०।४८ होता  
४५४ क २० २।१७ का वि० ४।१६ १८।७ २१।५३ ज० वि० २४ १६१ २३५ पन्ना

१४ पृ १० ३६।२ १

का वणन प्राग क प्रथम म किया जाया ।

नगणित वणन या रूप चित्रण ताहा भाति प्रवृत्ति चित्रण या वणन वणन म भी रुढ़ि निर्वाह की ही प्रवृत्ति रीति किया म पाई जाता है ।

### पङ्क्तु और वारहमासा

रीतिमान म अधिकांश कविया न कनुप्रा ता वणन स्वयंत्र प्रया म किया है । इनम प्रवृत्ति का उद्दीपक रूप ही किया गया आनवन नहा अर्थात् प्रवृत्ति को स्वयंत्र रूप मे न लेकर रुढ़ और विगण सभ म हा गण किया गया ।

संस्कृत साहित्य म प्रकृति क नाना रूप मिलत है । वह अपनी गरिमा और आनवन के कारण भी कविया क द्वारा वर्णित चित्रित हूइ । संस्कृत महाकाव्य म प्रवृत्ति क नाना रूपा का मनोरम चित्रण हुआ है । आदि कवि न हमरा कनु ता वणन ही विम्वग्राही वणन किया है । आनाय रामचन्द्र गुवन ने इग सभ म किया है विम्वग्राहण वही हाता है जहाँ कवि अपन सूक्ष्म निरीक्षण द्वारा वस्तुप्रा के अग प्रयोग वण आदृति तथा उसक आस पास की परिस्थिति का परस्पर मरिण्ट चित्रण कर । यन् समझता चाहिण कवि कवि न वाह्य प्रकृति को आलवन क रूप म ग्रहण किया है ।<sup>१</sup> प्राचीन महारा या म यत्र तत्र ऐसे सरिलिष्ट खण्ड चित्र पाए जात है । उम प्रवृत्ति क समा रूपा का मामिक अवन हुआ है । कवि प्रकृति को भी यापक परिप्रदय म लेता है । उसके सौम्य सम्पन्न रूप के चित्रण म जितनी तल्लीनता मिलती है उतनी ही तल्लीनता उमक विपन और बडोल रूप के अवन म भी । किन्तु कालिगसात्तर महाकाव्य म जमे जसे रुढ़िबद्धता आती गई कवि का दृष्टिकान सीमित हाता गया । प्रकृति की स्वतंत्र सत्ता का लोप होता गया और मानव के वासनात्मक राग क उद्दीपन म सहायक रूप का प्राधाय होता गया । परवर्ती महाका यो म इसीलिए प्रवृत्ति का विम्वग्राही वणन नहीं मिलता । गिस प्रकार नखसित वणन या रूप चित्रण म बधी ब्रथाई परपरा का निवाह कवि प्रौढोक्ति सिद्ध रूपनाति शयान्तिया क प्रयाग द्वारा होन लगा था उसी प्रकार प्रकृति चित्रण भी कतिपय वस्तुप्रा की परिगणना मात्र कर क किया जाने लगा था । शुनत्रजी ने इस और सतत करत हुए लिखा है कि स्वयं वणन म ता वस्तु वणन की सूक्ष्मता कुछ जिनो तक बती ही बनी रही पर ऋतु वणन में चित्रण उनता आवश्यक नहीं समझा गया जितना कुछ इनी गिनी वस्तुप्रा का कथन मात्र करके भावा के उद्दीपन का वणन ।<sup>२</sup>

इस गती मे प्रवृत्ति का अवन भारवि भाष आश्वीहप क महाकाव्य म पयाप्त मात्रा म मिलता है । इन कविया ने प्रवध के अतगत यद्यपि प्रवृत्ति के नाना रूपो का अवन किया है पर नु उसम इनको दृष्टि उसके यापक रूप को ग्रहण करने म उतनी समथ नहीं हुई है जितनी वि गान्त्वानुमोदित परपरित रूप को ग्रहण करने मे । इनम

१ आचार्य रामचन्द्र जवन रूप मीमाणा प १

२ विनामवि द्वारा भाष ( १ २ ०२ वि ) प २१

व्यक्तिगत पयवर्षण शक्ति का परिचय उतना नहीं मिलता जितना परंपरा का निर्वाह। प्रकृति का नायक नायिका की रागादीपक पृष्ठभूमि का ही रूप में अनिल विभा गया है। इस प्रकार के चित्र कानिगत के अनुसंहार में मिलते हैं। उसमें कवि ने ऋतु-मुखद वस्तुप्रा की वगना उमी रूप में की है जिसका विनास सेनापति और परवर्ती रीतिकविषा पक्षाकर श्वात आदि में दिखाई पड़ता है।

गो शिवप्रसाद सिंह का अनुमान है कि छग पातवा शनादगी से प्रकृति चित्रण का दूसरा ऋतु प्रकार एक अलग का रूप (पोगटिक 'काम') के रूप में विकसित हुआ।<sup>१</sup> इसमें प्रकृति के स्वतंत्र प्रकाश के स्थान पर उनका मानवीय भावोदीपक के रूप में चित्रण होना गया। वह आकषण और सादर की अधिष्ठात्री होने के कारण स्वयं वषण न रह गई। इसमें बहुत कुछ योग लिया आचार्यों द्वारा निर्मित प्रकृति वर्णन के नियमों और कवि समय ने। प्रकृति का वह भाग जो मानव भावना को व्यापक बनाता है इन परवर्ती कवियों की दृष्टि में ओभय सा हो गया। आवाप गुहन ने लिखा है भूमि पवत चट्टान नी नाव तीव्र मैगन समुद्र आकाश मय नभय इत्यादि की रूप गति आदि से भी हम सौंदर्य मायुष्य भीषणता भयता विविधता उगसी उदारता सम्पन्नता इत्यादि की भावना प्राप्त करते हैं।<sup>२</sup> किन्तु परवर्ती रूतिग्रस्त सस्कृत महाकाव्य में कवियों की दृष्टि विनास या शरीर-सुख की ही सामग्री प्रकृति में दूती रह गई। उनमें उस रागात्मक सत्त्व की कमी है जो यका सना मान के साथ एता की अनुभूति में लीन करके हृदय का व्यापकत्व का आभास देता है।<sup>३</sup> रीतिकाल में भी प्रकृति का इसी संकुचित रूप में ग्रहण किया गया। इसकी विषय चचा अगल अथाय में की जाणगी। सम्प्रति पडकृतु की रणिया से रीतिकवि सिने प्रभावित हुए हैं और उनके ऋतु वर्णन के स्रोत क्या थे इसका ही परिचय दिया जाएगा।

पहले रूतिग्रस्त ऋतु वर्णन के प्रसंग में कहा गया है कि कवियों को सस्कृत के काव्यशास्त्राय प्रथा से वषण वस्तु की बनी उनाई सूची मिल गई और उनी के अनुसार उहने वर्णन किया। ऋतु वर्णन की सामग्री का परिचय विश्वनाथ के साहित्यदपण में मिलता है। उहने शृंगाररस के अंतगत छहा ऋतुप्रा मूय चद्र, उनका उष्य और अस्त जल विहार वन विहार प्रभात मद्यमान रात्रि भीडा चलात्तियेपन, भूषण धारण आदि क वर्णन का विधान किया है।<sup>४</sup> इनके अतिरिक्त राजेश्वर जिनमन अमर दवदवर और बंगव मित्र ने अपने अपने शास्त्र प्रथा में पडकृतु और कवि समय

१ डा शिवप्रसाद सिंह मूखूब चक्रभाषा और उनका साहित्य प ३२

२ रम भीमागा प १०

वही प १३

४ उक्त श्यादनुषटक चलात्तियो तथोत्वास्तमय ।

जानके निवनविहार प्रभातमद्यपानयामिनीप्रमदि ॥

अनलपनभूषाया वाच्य शक्तिमध्यमयच्च ।

—साहित्यदपण ३१२१२-१३



की सानिचार्य उपस्थित की है।<sup>१</sup> शारदाताप र भावप्रसाधन म भी ऋतु-वर्णन की सानिचार्य दी गई है।

पदऋतु वर्णन प्रायः सयोग का प्रवस्था म उमक रागादीपक रूप म किया जाता है। वे ही ऋतुएँ, जो वियोग-रूपा म दुःख होती हैं सयोग की प्रवस्था म सुख हो जाती हैं। धावाप शुक्ल ने जागमती घोर पद्मावती की दृष्टि म भिन्न भिन्न मनोदशाभा म पायस क रूप की घोर सन्त करत हुए निगा है 'जागमती का जा बूँदें विरह दगा म बाण की तरह लगती है' पद्मावती का सयोग-रूपा म वे ही बूँदें कोंधे की चमक म सान की-सी लगती हैं।<sup>२</sup> पहले वियोग-वर्णन म इस प्रकार प्रकृति के सुखद घोर दुःख रूप की चर्चा की जा चुकी है। कवि परम्परा के अनुसार सयोग की स्थिति म प्रकृति के जिस उल्लसित घोर धान-रूपायक रूप का वर्णन अनक अप्रस्तुता द्वारा किया गया है वियाग म उनी वस्तुभा क दुःख रूप का वर्णन भी अनेक अप्रस्तुता द्वारा किया गया है। इन अप्रस्तुत योजनाभा म कविधा ने द्रष्टा या मोक्ता के मानसिक राग विराग की स्थिति का घोर भी स्पष्ट एवं सशब्द बना दिया है।

रीतिकाम्य म सुवनक की प्रधानता होन क कारण ऋतु-वर्णन प्रभिक घोर ब्योरवार रूप म नहीं मिलता। कही किसी दोह या छंद में सयोग की पृष्ठभूमि के रूप म प्रकृति आई है तो कही वियागदशा की व्यजना में सन्त रूप से किन्तु यदि इन स्पुट छंदा का अध्ययन किया जाय तो छंदा ऋतुओं के वर्णन इनम मिलेंगे। रीति कविधा ने प्रायः ऋतु वर्णन में रुडिया का ध्यान रखा है और उमका मय्यक निर्वाह किया है। जसा कि पहले कहा गया मुक्तक प्रधान काव्य होने से ऋतुभा का पूर्वापर क्रम नहीं रह गया है किन्तु अनेक ऐसे भी कवि हैं जिन्होंने अलग से पदऋतु और बारहमासे के ग्रंथ लिखे हैं। उन ग्रंथों में अधिकांश वर्णन वसंत या शीतल से प्रारम्भ किया गया है कुछ कविधा ने वर्षा से भी ऋतु वर्णन प्रारम्भ किया है।

वसंत

शारदातनय ने वसंत क रागादीपक विभावा म गंधपूरित वायु कुसुमित तरु लताओं भ्रमर, कोकिल भवन कामल शया सुरा इत्यादि की गणना की है।<sup>३</sup> कवि कल्पलताकार ने वसंत ऋतु म दोला काञ्चन पवन मूपगति (उत्तरायणत्व) वशी

१ रायशंकर काव्य भोगाना (दत्तान) धरारहवा अध्याय त्रिनक्षेन अनकार त्रितामनि प ७० भ्रमर काञ्चनपवनतामिति प्रतान प ३० दशरवर कविकल्पलता प ४ ४२ केशव मिथ प्रलकार गधर पष्ठ रत्न नि मराचि ।

२ जागमी प्रयावती भूमिका प ४६

३ गंधा मुरभवो वातास्तरव कुसुमाचिना ।

भ्रमरा कोकिलाहम्य मृदवीशय्या सुरासव ॥ -भावप्रसाधन पृ ०३ ०४

मनवीन भ्रतुरण मानती के अतिरिक्त अथ लनामा का पुष्पिन होना, माभ्रमजरी और भ्रमरा की भ्रमर व वणन की व्यवस्था दी है।<sup>१</sup>

मस्तुन प्राप्त क बाव्य प्रया म वसत ऋतु व उद्दीपक वणन म उक्त परम्परा का निवाह प्राप्त होता है।<sup>२</sup> मत्तूरिन वसत ऋतु की सुप्त सामप्रिया के वणन द्वारा आभिजात्य वर्गों जीवन का सफन चित्र अकित निमा है।<sup>३</sup> सदागसक म विरहिणी वसत के उद्दीपक रूप का हो वणन करती है। कवि ने प्रकृति की सम्पन्नता म विरहिणी की विषनावस्था का उडा ही माभिक उपादन किया है। वत्पथिक स कहती है वसत ऋतु म एक एक क्षण थम क कालपाग की तरह दु सह हा रहा है। मुग्धित मुन्दर पुष्पो स दसा बिगाए सुशाभित हैं। नई नई मजरिया इग ऋतु म निकली हुई है। ' इमी प्रकार रासी म विरह की गवा स व्याकुल इच्छिनी पृथ्वीराज का विदा जाने स रोकती हुई कहती है हे चौहानथठ ! इस ऋतु म चलने को न कहो। मैं जानती हूँ एस समय म प्रिय का प्रयाण प्राणा का प्रयाण होगा।' कवि न गणितता के वियोग की पृष्ठभूमि के रूप में भी वसत का वणन किया है।<sup>४</sup>

वसत ऋतु में प्रकृति के वसत का अवन करत हुए भी कविमा का ध्यान उससे उद्दीपन विरही या सयोगी की दसा की आर बराबर रहा है। मतिराम और पदमाकर ने रसाल क लाल पल्लवा और किमुक क लाल फूला पर विरहिणी के भावा का आरोप किया है।<sup>५</sup> इन चित्रों में चमत्कार के प्रदशन की वृति अधिक लपिन हाती है भावो का अवन वम। बिहारी न विरहिणी की प्रया का इनही प्रयेना सफन अवन किया है।

१ सुरभी दाशकीविनामास्तमूयगतिकल्पनाभ्रम ।

जानीतरपुष्पचयनाभ्रमजरीभ्रमरप्रकारा ॥ -कविलयता १।३।२६

२ वा० प० ४१२ १५ म० म० २६३३ साठ म० २७८६ शिग० ६।२२ गठ० छ० ७८८ ७६१ मोत० १।३।११, १।४।१११

३ भावाभ किल विविधेव दयितापार्श्वे विलासात्मक कर्ण कौकिलकामिनाकरव रमरो सतामण्डप ।  
गाथी सत्कविधि मम कतिपय सव्या निराशो बरा  
नस्याचित्तमयत्ययेहि हृदये चत विचित्रा शया ॥

-शृ० म० ३१

४ स० रा २१५

५ न रिनि मुन चहुवान वर अनन कहे त्रिन जोष ।

हा नानु पहिल चत प्रात प्रयात कि पीष ॥ -प० रा० ६१।३

६ प० रा० २१।१०७ ८

७ उडत और ऊप लस पल्लव लाल रमान ।

मन। समूष मनोज को धीज अलन की वात ॥

त्रिक अलन मेचक वरत गु जा बात्र समान ।

रिमुक मनो मनोज क कालकूट जुन बात ॥

-म० म० ५८६ ८७

किमुक मनाव कचवार धी मनाल की

कारन पै डोवन अगारन के पुज है ।

-ज० वि ३८२

। न की चात्नी वा उशीवा प्रमाद विरहिणी की घात विण डाना है ।<sup>१</sup>

यगत वर्णन में रीतिविद्या का भाव प्रायः ब्रीडा व हान्य परिणामगुण वातावरण को घातित कराने में अधिक रमा है। इसमें भी प्राचीन मारत रु ऋतु उत्पत्त्या की प्रेरणा का योगदान होने में परम्परा का ही अनुसरण किया गया। ऋतु उत्पत्त्या की चर्चा समाप्त पाता विनास ब्रीडाया व प्रयोग में ऋतु की जा चुकी है।

### श्रीष्म

यगत व वात् श्रीष्म ऋतु प्राची है। शास्त्रानुसंग ने प्राष्म ऋतु व रागोत्पीपत्त्या म उद्यात विहार जन ब्रीडा, कुजाति की छाया म विमलया स विनिर्मित गया द्वापशी, लयम कपूर हिमजल रत्न तात गृह पुरानी गराय धारागृह हिमगृह मृगातनुभ मणिकुट्टिम विभि तपुष्प मुक्तामाला गरिररूपित वस्त्र घाति की गणना की है।<sup>२</sup> विरहललता म भी प्राय ऋती वष्य वस्तुप्रा वा सक्त है।<sup>३</sup>

श्रीष्म ऋतु के वर्णन म कविया न प्राय ताप गमन करने वाल गीतल पदार्थों का वर्णन दिया है। इस परम्परा का सक्त ऋतुमहार से ही मिलता है।<sup>४</sup> कालिदास ने श्रीष्म की गीरण तान और उमते उपकाराय शीतल पदार्थों के सवन का उल्लेख किया है। रघुवंग व सोनहरों मग म श्रीष्म ऋतु ने अनेक महिलका चित्र मिलते हैं। परवर्ती कविया म प्रकृति व भीषण भयावह रूप का रगा स्वतंत्र भवन नहीं मिलता। भन हरि ने श्रीष्मऋतु की सुखत वस्तुप्रा व सवन करनेवाला भाग्यवानों का वर्णन किया है।<sup>५</sup> कपूरमजरी म श्रीष्म की तपन गीतल और रागोत्पीपत्त्या पदार्थों का सवन वर्णित है।<sup>६</sup>

सादेग रासन व विरहविष्मथा नायिका पथित से एक वष पून श्रीष्मऋतु मे

१ भी यह एमाई ममी जटा सुखत दुष्य देत ।

धन चात् की चात्नी डारत विण अचेत ॥

—विहारी ५६३

२ उद्यातमनित्रीडाध छाया विसागयास्तरा ।

तनातवगकपूर रत्निमाधम्बन्नाय ॥

सतागन्धि विजाणि पुराणाशचन शीघ्रव ।

धारागत् हिमगह मणा नमणि कुट्टिमे ॥

कुननेसरवहारपत्तेनीवरान्य ।

भक्त्यागणवती भया वासो गरिररूपितम् ॥

इत्याय स्य समला श्रीष्मे रागोत्पीपत्त्या ॥

—भा प्र प ८४

३ कविकल्पलता १।

४ कालिदास ऋतुमहार १।१ २८

५ मदी ह्यमोना यजापवपश्च इतिरिणा

पराग वामारा मलयजरज मीध विज्ञप्ता ।

जचि सोमोमग प्रतन वगत पकजम्बो

निगघार्ता ह्य तःसखमपलभन्ते मकुतिव ॥

—ऋ सा ३५

६ कपूरमजरी ४।१ ६

परदश गमन करनेवाले प्रियतम के विभोग में किस प्रकार उमने ग्रीष्म व्यतीत किया इसका बखान करती है। कवि अद्भुतमान ग्रीष्म ऋतु में उत्कृष्टिण चातक तथा आभ्रमार सनभ्र वधा का बखान करना हुआ विरहिणी की वातर श्रवस्था का मार्मिक बखान करता है।<sup>१</sup>

पृथ्वीराज रासो में पुडीरनी ग्रीष्म ऋतु की भोषणना और गृह सुख का वणन करके पृथ्वीराज को रोकती है। इस प्रसंग में सयोग मुख और विभोग दुःख का साथ साथ वणन किया गया है।<sup>२</sup>

जायसी ने यह ऋतुवणन शण्ड में पदमावनी के साथ मुखोपभोग करते हुए रत्नमन की ग्रीष्मकालीन मुख मामग्रा का वणन किया है। इस वणन में वे ही वस्तुएँ हैं जिनका उपयोग परम्परा से वर्णित होना आया है।<sup>३</sup> सेनापति ने भी इन्हीं मुखोपभोग की सामग्रियों का उल्लेख किया है।<sup>४</sup> सेनापति ने जठ के निकट आत हो खसखाने और तहखाने की मरम्मत और अंतर गुलाब की खरीद का ही उल्लेख किया है। रीतिकालीन कवि पद्यांतर की दृष्टि में राज भोग को उक्त सारी साज सज्जा अगूर से उबोहै कुछ के बिना फीकी है अतः उहोंने अगूर की टाटी की ओट बँधकर अगूर से ऊँचे कुचवाली के साथ अगूर की शराब और अगूर की ही गजक के उपभोग करने की व्यवस्था दी।<sup>५</sup>

## वर्षा

ग्रीष्म के बाद वर्षा ऋतु आती है। शृंगारपरक काव्या में रामाद्दीपक ऋतुश्लो म समत के बाद वर्षा का ही विशेष वणन मिलना है। प्रकृति की रगीनी इन्हीं दो ऋतुश्लो म विशेष रस में लिख गई पत्नी है।

शास्त्रानुसंग के अनुसार वर्षा ऋतु के उद्दीपक तत्त्व कन्ध्व केतकी, लोध्र, कल्पी कुन्क आदि के पुष्प, भयूर हरितभूमि इन्द्रवधू गिरि निभर तालाव, जलपूण

१ सप्तशतक १२२ ३४

२ पृ. रा. ६११६ २४

३ पदमावन २६१६

४ जठ नजिकाने सधरत खमखाने तल

ताख तहखान के मुधारि शारियन हैं।

होनि है मरम्मनि विविध जत जलन की

ऊँचे ऊँचे घटा त मुधा मुधारियन हैं।

सेनापति अंतर शराब अरगजा साजि

सार तार हार मोल न ल धारियन हैं।

ग्रीष्म के वासर बरान्त वी मोरे सज

राज भाग काज साज धी सहारियन है।

५ बारहू दरौन बीच बाधह तरफ तनी

अगूर ही की टाटी है।

—ब० २० ३११

—ज० वि० ३८४

रिचिये, मय बारिधारा मयमदत, मतगना की शोधा, गाय-व्या की प्राधान, उद्यम-  
कुशाभ मरा हरिण, द्यामन व प्रम, समर की रई की मया, धून बातागुद का  
मुगिधन पचराम मणिरा का बाभूयण द्यामि है।<sup>१</sup> नविस्त्वन्ता म भी उगपु का  
परतुषा की मरिस्त गुरी शी रई है।<sup>२</sup>

यर्षा प्रनु म मयगना मान मानिधिया व मानमग व रिण पया- है, फिर  
कम्ब व पून घोर मुगिधन यातावरण म मयूर की पुता- पया- की रत्न घोर धारा  
गार मृष्टि मणि का बहता ही क्या ?<sup>३</sup> मया की चमदन मगर ता मयागिधा काधय  
पू- जाना है रिच मिय म पू- रहनया री विधागिधिया की मया क्या विरिच न हो।<sup>४</sup>

कानिशाशा-र कपि परधारा म प्रनु मुग- मनुषा की परिगणा की परिगणी  
प्रचमित हा रई थी त्रिसहा विभाग रीतिराव्य म हुआ। मनु हरि व श्नुवणनारक  
मना- म यह वृत्ति प्राय प्रा- होनी है।<sup>५</sup>

यर्षा की उद्दीपन पृष्ठभूमि म कविधा न सयागिधा घोर रिचोगिधा की मिन  
मिन मन स्थितिया का बहा ही मानिध घ का रिया है।<sup>६</sup> कति ने क्या-वणन म कही  
फोत्र का रू- रिया है \* घोर वही राजा की- तो वही काम-र व राज्यामिपक की  
उत्प्रशा- की है। इ- मप्रस्तुत विधाना म भी मून म श्नु की उद्दीपकता का ही प्र-ान  
है। इन मप्रस्तुता व साथ ही कविधा ने बादल कम्ब, मयूर पवीहा मणि व विगपणा  
का भी प्ररी- रिया है। इन रिगपणा से भी सयोग या वियोग की दया म उनके प्रति  
मानवी मभावा का ही प्र-ान रिया गया है। ऐसे विगपणा घोर मप्रस्तुता की कुछ  
बचा पहल विगोय उणन में की जा चुकी है।

१ मा प्र० पु० ८४

२ कविस्त्वन्ता १। १३१

३ मिश ६।३८

४ मयागिधा मवति सधिनो ध्य-यथावति चत ।

बण्ठायेपप्रणविनि जने कि पुनदु रमस्ये ॥

-मय० १।३

५ तणावया क्षीपितकामा विकमितजानि पुष्यमगिध्र ।

उत्तनपीनयशधाघरभारा प्रावट तनुत वस्य न हयम ॥

-शृ ३० छ ३७

६ किरान १ । १९६ २३ शृ० म ३६ ४१ विक्र १३।१६ ६० रा म मु-र १ २३ न व  
३।४१।४३ मिशु० ६।२५ ३२ गडड० ३८३ ४१३ ६८६ ६४ कु० म ५८५ ६२ भागवतु स्कध  
१ मध्याय २ मा प १।१६६ १।१८८ २।३८ २।८१ ८६ २।१३३ १८१ प रा०  
२५।३४ ४६ ५७।१३८ ४२ ६१।२७ ३५ मूर० १ । ६८४ ८५ १०।११८८ ८६ १०।१६६ ६२  
म० स ४५३ ५ ६ ग क छ २२७ २३४ विहारी ४ ६ ४ ८ ४५६ ६६५ वा नि  
४।१७ ७।१८ ६।२६ १ । ३७ १७।३६ १८।३४ २२।१ ज० वि १३३ ३१६ ३८५ ८७  
प० प्र० ६२।६३

७ बाला २५५ प-मा २६।७

८ श्नु० २।१ ४ क्षीना १८।६९

९ न व० पु० ५३

वर्षा में प्रणयोजना की हिन्दोल श्रीडा का निराप रूप स वणन मिलता है जिसका उल्लेख यथास्थान पहले किया जा चुका है।

### शरद

वर्षा के बाद शरद ऋतु का वणन होना है। शारदातमय के अनुसार इस ऋतु में चन्द्रिका गीतल मद मुग्धित वायु मरालयुक्त पद्मिनी स्वच्छ जन तट प्रदेश, कमल कस्तूरी पद्म हस सारंग की मधुर ध्वनियां, मुक्तामणि और पके धाय, स्वच्छ पद्म, ललित समशीलाण गय्या मरकत बहूय आदि की मालामो, स्वच्छवस्त्र आदि का रागो उद्दीपक वणन होता है।<sup>१</sup>

सयोगिया का उक्त वस्तुएँ सुखवद्धक होती हैं किंतु वियोगिया के लिए दुःख का कारण। ऋतुसंहार में कालिदास ने चन्द्रकिरण हृम, नील-कमल और बधुजीव की विरहोद्दीपकता का वणन किया है।<sup>२</sup> भागवत में तो इस ऋतु में उद्दीपक वातावरण में रामलीला का मनोहर वणन प्राप्त ही होना है।<sup>३</sup> महाकाव्यो और खण्डकाव्या में इसके उद्दीपक वणन ही प्रायः प्राप्त होत हैं जो ग्रहन कुछ परम्परा के अनुसार है।<sup>४</sup> सेनापति ने शरद ऋतु वणन में प्रायः उद्दीपक पदार्थों का उल्लेख किया है जिसका निर्देश कवि शिखा की पुस्तकी में मिलता है।<sup>५</sup> मतिराम की शरद ऋतु की स्वच्छ चाँदनी में विकसित माधती कुज वामदेव के ज्योतिमय मुपग का पूज सा दिखता है।<sup>६</sup> पद्याकर ने शरद ज्योत्स्ना की व्यापकता का अनन्यत गली में वणन किया है।<sup>७</sup> इन वणनों में प्रकृति का उद्दीपन स्पष्ट ही लक्षित होना है।

### हेमन्त

शरद के पश्चात् हेमन्त ऋतु आती है। शारदातमय ने हेमन्त और शिशिर में

१ भा प्र प ८४ ८५

२ ऋतु ३१२४

३ भागवत स्वघ १ आन्याय २ पद्माकर ज वि ३८६

४ विद्या १०१२५ २७ गिरि ६१४२ ७१७४-७७ रा० म मन्त्र २६ ५७ प्रा० प २१२ ५,

प रा० २५१४४ ४६ ६१।३६ ४७ सूर १ १११३८ ढोना २६६ ३००

५ क र ३१३७ ४२

६ म स ४

७ तानन प ताल पेतगासन प मानन प

व दानन वाधिन बहार बसीवट प

वहै पद्माकर अखड राममन्त्र प

मडिन उमम महा कानिनी के तट प।

छिनि पर छान पर छाजन छनान पर

ललिन लनान पर लालिनी की नर प।

छाई मनी छाई यह मरुद्गुहाई जिहि

पाई छवि भाज ही कन्हाई के मुकुट प॥

ज० वि० ३८८

मुगलिया गन्ध, पुष्प, यन्त्राभूषण, और चम्या की रागादीयत बगनाया है ।<sup>१</sup> राज प्रथम पारितोषिक गन्धुमार मन्मन्तुन धनुषुन नायक नायिकाया व धामरुण, धामोन् प्रमाण धामि का बगना किया है ।<sup>२</sup> कवि त धाम-कथा का दमर उन्प्रेगा की है किमान। रमणिया व गु रन्तता का र्गन्त प्रमन्त दृष्ठा हेमन्त उनक त्रिमामा द्वारा उ ह पीडित हा। दुष्ण र्गन्त रा रता है ।<sup>३</sup> इस प्रकार प्राष्टित उपादाना पर मातवीय भावरोपण और मातवीय भाव पर प्रष्टित व उपादाना का भागेरण प्रा तीन परम्परा रही है । ऋतुगहार म घन्त स्मिता व द्वारा हणन्त म समाग की धनुषुन स्थिति का बगना किया गया है ।<sup>४</sup> मृदु हरि त धनु मुनम गुणागाम व साधना का सम्यक बणन किया है ।<sup>५</sup> धामन्त तो हमत को रमणिया व धृष्टिम कम्प सीतार और रोमी दग्ग का धामाग सिद्ध पर किया है ।<sup>६</sup> मन्तुन प्राष्टिन महात्माया म भी इस ऋतु की उद्दीपक गच्छभूमि म गयाग और वियोग की घयस्या म उन्प्रेगा हानवासी भावनाया का बगना किया गया है । पश्चीमजरागा म कूरम्मा हगत धनु की बड़ती हुई रात्रि व घपन कुछ घमा की वृद्धि और नि मान व धन्ते म घरो घग विगय की क्षीणता की तुलना करती हुई लव धार धनु की सभाग गुणन घयस्या का मवत करती है दूसरी ओर घपने यौवन के विरास की । बिहारी धामि कविया न भी इस प्रकार व साम्म स्वापन द्वारा नायिका का बणन किया है । यहाँ कूरमा का उन्प्रेग पश्चीराज की विदेग गमन स रोमना है ।<sup>७</sup> बिहारी ऋतु-मुष्ण का सवत मात्र करत है ।<sup>८</sup> धामन्त के वेवल

१ गच्छपुष्पाणि वागांगि भयष शयानि च ।

सकीर्णायनभूयते हेमन्ते शिशिरेणि च ॥ -मा० प्र ५ ८२

२ ऋतु ४।२६

३ धीनस्तना धान्नीधोपति शीतवान् ॥ -ऋतु ४।७

४ ऋतु ४।८ १७

५ हन्ते ऋधियुग्मगिरिगतामांजिष्ठकामोभून्  
काश्मीरद्वयमाञ्जिष्ठकपुष्प धिना विचित्र रत ।

धीनोस्तनवामिनीजनकृताधनेया गृहाम्यन्तरे  
साम्बन्धीदक्षपूगूरितमुख्या धार मय मेरने ॥ -इ श० ४३

६ शीतावह्वलिमोक्षय की चाराचायता गत ।

रोमोन्मन्मगुरुन्त्रीणां हेमत प्रत्यन्धयता ॥ -रा म धरण ५०५  
-तुल गृ श ४४

७ विराट १०।२८ २६ शिश० ६।५।६५ गडह २७० ७६

८ कुचवर जघ निरव निगा बहन्त धन बन्ती ।

सक छीन उर छीन छीन दिन धीन स चढदी ॥  
गिरिक दूर तप जुगति जामि जोगीमर मन ।  
ते लम्हे बनि चन्द वाम कामी रुर धन ॥ -५ रा ६१।२

९ ज्या ज्यो घडति विभाबरी त्या त्यो बन्त धनत ।

भोक भोक सब लोक मुख भोक लोक हेमन्त ॥ -बिहारी २४४

गीतऋतु के 'पापन प्रभाव का प्रलटन गीत में सञ्चल करत हैं ।<sup>१</sup> जायमी ने सम्भवत इसीलिए गीत का सीमाव्यन्तयन माना है कि इस ऋतु में भाग्यनिगन सुखद होता है ।<sup>२</sup> सेनापति ने भी हेमन्त के वणन में ऋतु सुखद धम्तुआ की परिगणना करके परम्परा का निर्वाह तो किया है, साथ ही अनक छदा में गीत की अधिवृत्ता के कारण मामाग्य जन की स्थिति का भी चित्रण किया है । एम स्वाभाविक चित्र अत्यन्त दुःख हैं ।<sup>३</sup> पद्माकर ने एक छद में वणन परम्परा के अनुसार भाग श्री सजाग हित मुरत हिमन्त ही में का प्रति-पादन किया है ।

## शिशिर

हेमन्त के पश्चात् शिशिर ऋतु आती है । हेमन्त और शिशिर में प्राकृतिक रमणी-यता उतनी नहीं रहती जितनी वसन्त या वर्षा में । इसलिए कवियां न इन ऋतुओं के वणन में विनय रुचि नहीं प्रदर्शित की ।

शिशिर ऋतु में कालिदास ने ऋतु-सुखद वस्तुआ—निर्वात निवास-स्थान, अग्नि मूय की धूप मोटे गरम वपड और नवयुवती की गणना की है ।<sup>४</sup> साथ ही वे ऋतु विरोधी पदार्थों का भी उल्लेख करते हैं, जस चन्दन, चन्द्र हम्पपण्ड, ठण्डी हवा और लम्बी रातें ।<sup>५</sup> कवि ने इस ऋतु में संयोग मुख का विस्तृत वणन किया है । नायक नायिका की विनाम क्रीडाया और शृंगार चष्टाया के अवन में कवि को पर्याप्त सफलता मिली है ।<sup>६</sup> शिशिर ऋतु की दीर्घ रात्रि प्रियाविरहित युवका के लिए बड़ी ही कष्टकारक हानी है । मत हरि न हमके कष्टकारकत्व का प्रलटन गीत में वणन किया है ।<sup>७</sup> पद्मोराज रासो में चन्दन ऋतु के उद्दीपक रूप का व्योरेवार चित्रण किया है ।<sup>८</sup> पद्मोराज को विदेशगमन से रोकती हुई रानी कहती है—

१ कियो सब जग काम बम जीने जिने भजइ ।

कुममपरहि सर धनुष कर भगहन गन् न देइ ॥ -विहारी १०२

२ घनि श्री गिउ मइ गीउ साहागा । दुइ ह भग एके मिनि लागे ।।

मन सा मन तन मा नन गहा । हिय तो हिय बिचहार न रहा ॥ -पद्मावत २६६

३ क २० २।४३ ४६

४ ऋतु ५।२

५ वनी ५।२ ४

६ ऋतु ५।५ १५

७ प्रादयध्रीदप्रियगण निमति विदन्तु माचद्विरेके  
वाने प्रा नवरातप्रबलविमिलोद्दाममन्दारराम्भि ।

येनां ना कण्ठान्ना क्षणमपि दुहितयोदरसा मुयाशी

तनमायापयाया यमसन्मभा यामिनी यानि यूनाम ॥ -शृ ग० छ ४६

८ पृ रा ६१ ६०-७२



आगम फाग अथत वत सुनि मित्त सनेही ।  
 सात अत तप तुच्छ होइ आनद सब ग्रेही ।  
 नरनारी दिन रनि मन मदमाते हल्ल ।  
 सकुच न हिय छिन एक वचन मनमाने बुल्ल ।  
 सुनो वत सुभ चित करि रयनि गवन किम जोजइय ।  
 कहि नारि पीय बिन कामिनी, रिति ससिहर किम जोजइय ॥<sup>१</sup>

इसी प्रकार प्रकृति की उद्दीपक पृष्ठभूमि में सदेशरसक की विरहिणी अपने यथापूर्ण कालयापन की वर्षा करती है। वहाँ वियोग की स्थिति में प्रकृति का वर्णन किया गया है शीत के शमन के लिए जायसी न भी वही उपचार बतलाया है जो परम्परा से वर्णित होता आया है।<sup>३</sup>

रीति कवि पद्माकर न शिगिर ऋतु के वर्णन में बिहारी<sup>४</sup> की भांति केवल धूप अग्नि और रजाई के होत हुए भी सिसिर शीत को तियनाह के बिन लपटे न मिटनेवाला ही नहीं बताया है। वे और भी एश्वयवादी दृष्टिकोण का परिचय देते हुए सुखोपभोग की सामग्री का योरेवार विवरण उपस्थित करते हैं—

गुलगुली गिलमे गलीचा हैं मुनीजन हैं  
 चादनी हैं चिके हैं चिरागन की माला हैं ।  
 कहै पद्माकर स्यों गजब गिजा हैं सजी  
 सेज हैं सुराही हैं सुरा हैं अरु प्याला हैं ।  
 सिसिर के पात्ता के न ध्यापत कसाला तिहैं  
 जिनके अधोन एते उबित मसाला है ।  
 तान चुक ताला हैं बिनोद के रसाला हैं  
 सुबाला हैं दुसाला हैं बिताला बिभ्रसाला हैं ।<sup>५</sup>

कवि की की दृष्टि अपने आश्चर्यता की एश्वय सामग्री पर रही है जबकि बिहारी ने सामान्य जन की स्थिति का पता दिया है।

विभिन्न ऋतुओं के उद्दीपन का परिचय तथा परम्परा के अनुसार देने के परवान सम्प्रति ऋतु-वर्णन की दूसरी विधा बारहमास का परिचय दिया जाएगा।

वाक्य-परम्परा के अनुसार बारहमासे का वर्णन वियोग की स्थिति को और भी

१ वही ६१ ६४

२ स० रा० ३।१६२ ६६

३ घाड़ गिरि ऋतु, तान न मीऊ । जहाँ माथ पावत पर पीऊ ॥

शोर सपती मन्दिर रानी । दगल पीर पहिरहि नहु भांती ॥ -पद्माकर ३६।१०

४ तान-नत्र तान-नत्र तान सुपाई मार ।

गिरि-मीन बसो ह न मि<sup>३</sup> बिन सपते निय-नाह ॥ -बिहारी २७०

५ पद्माकर ज० वि० छ० ३६१

सबका बताने के लिए किया जाता रहा है। रीतिकान्त्य मुक्तक प्रधान होने के कारण वारहमास की परम्परा का निवाह नहीं कर सका। कुछ कविमान पद्य रूप से पङ्क्तु की भाँति वारहमासा का भी वर्णन किया है। वास्तव में यह परम्परा गुच्छ रूप से लावणीतात्मक है जिसमें किसी विरहिणा के वष के प्रत्येक मास में अनुभूत दुःखा का वर्णन किया जाता रहा है। सम्भव है जायमी का लोचनीनाम वारहमास का वर्णन अधिक छिचकर लगा हा और उसका विनियोग उहान नागमती विरह वर्णन में किया हो। सस्टुत महाकाव्या में पङ्क्तु-वर्णन की व्यवस्था और परम्परा पाई जाती है किंतु वारहमास की नहीं।

हिंदी रीति परम्परा के प्रमुख आजाचाय कशवदास की प्रतिभा एवं सूझ बड़ी गभीर थी। उहान लावणीता की मुखबारी मधुरता में आकृष्ट होकर वारहमासे का संयोजन स्वतंत्र रूप से तो नहीं अलंकार-वर्णन के अंतर्गत किया है। आशुपलकार के एक भेद (शिखाक्षेप) के उदाहरण स्वरूप उहान वारहमास का वर्णन किया है। यह वर्णन बहुत कुछ चदवरदाई के पङ्क्तु वर्णन की ही तरह है। चद न जिस तरह विदेश-गमनोत्सुक पथ्वीराज को प्रत्येक ऋतु में राकनेवानी रानिया के मुख से तत्तद ऋतु की विशेषताओं संयोगानुसार सुख सामप्रिया और वियाग के दुःख का निर्देश करने हुए वर्णन कराया है उसी प्रकार वानदास ने भी वारहमासे के वर्णन में प्रत्येक मास में किसी न किसी नायक का विशेष गमन संवजन करती हुई नायिका काई न कोई बहाना बनाकर उक्त मास के उद्दीपन का वर्णन करती हैं। यह वारहमासा चत्र महीने से प्रारम्भ किया गया है।<sup>१</sup>

वारहमासे का वर्णन जहाँ जहाँ आपाह और कही चत्र महीने से प्रारम्भ किया जाता है। लगभग प्रत्येक जन भाषा में वारहमासा पाया जाता है।

प्रत्येक मास की प्रमुख विशेषता के साथ वियागिनी अपने प्रिय का स्मरण करके अपनी यथा का प्रकाशन करती है। प्रकृति के परिवर्तन के साथ उसकी प्रतीक्षा की अवधि बीतती जाती है और वह निराश होकर अपनी वातरता व्यक्त करती है। प्रकृति का चित्रण इन वारहमासा में कही विरहिणा के अनुभूत किया गया है कही प्रतिकूल। कही वह प्रकृति को सहदुःखमागिनी रूप में स्वरूप धय घागण करती है कही उसकी विपरीत दशा देखकर उपालम देनी है। जसा कि पद्य में निर्देश किया जा चुका है वियागिनी के ये उपालम बड़े मार्मिक होने हैं।

रीतिकान्त्य में जो वारहमास लिये गए उनमें जनगीतिया का स्वच्छन्द प्रवाह नहीं दृष्टिगत होता लगता है पङ्क्तु वर्णन की भाँति वारहमास के वर्णन में भी कविमान ने बनी-बनाई परिपाटी का अनुसरण प्रारम्भ कर लिया था।

रीतिकान्त्य में जसा निर्देश किया गया है ऋतु-वर्णन के लिए तो अवसर मिल भी गया है पर वारहमासा के लिए अवकाश नहीं मिल पाया।

ऋतु-वर्णन में रीतिकविया ने अपने पूर्ववर्ती भक्त कविया से पर्याप्त प्रेरणा प्राप्त की। इन भक्त कविया में कुमनदास चतुर्भुजदास और गोविन्ददास ने ऋतुओं, विशेषतः वसंत और वर्षा का व्यापक वर्णन किया है। इनमें भी हिंडोला और पाग का विशेष वर्णन पाया जाता है। ऐंद्रिक अनुभूति की जितनी छूट और शीड़ा कौतुक की जितनी प्रधानता उक्त वर्णनों में भक्त कविया विशेषकर पुष्टिमार्गीय कविया में पाई जाती है वह रीतिकविया से किसी भी ग्रंथ में कम नहीं है। इन कविया ने प्रकृति और जीवन के सामंजस्य और वपम्य को अनेक प्रकार के अप्रस्तुत विधानों द्वारा प्रकाशित किया है। रीतिकविया में चमत्कार और उद्धारमक उक्तिवन्तता अवश्य अधिक है पर उनके प्रेरणा स्रोत में पूर्ववर्ती भक्तकवि माने जा सकते हैं।

रीतिकविया ने ऋतु वर्णन में बिरहिणी की आशका अभिलाषा और उत्कंठा को तीखा बनाकर उसकी मानसिक और शारीरिक स्थितियों का अनेक अर्थ किया है प्रकृति का स्वतंत्र चित्रण कम। प्रकृति पर मानव भावना का आराप करके अलङ्कृत गली में रीतिकविया ने पर्याप्त चित्र उपस्थित किए हैं। ऐसे उद्दीपक आरापों से निर्मित प्रकृति चित्रों का किंचित अनेक पहले वियोग वर्णन में किया जा चुका है।

## अभिव्यक्ति के उपादान और माध्यम

### अलंकार और अप्रस्तुत विधान

रीति-व्यक्ति की मुख्य प्रवृत्तियाँ म अलंकार वृत्ति का महत्त्वपूर्ण स्थान है। रीति-व्यक्ति को अपने भावा का सीधे और सरल रूप में अभिव्यक्त करने की अपेक्षा उसे चमत्कारपूर्ण गली में उपस्थित करना अधिक प्रिय रहा है। इसके लिए उन्होंने अनेक प्रकार के अलंकारों का कभी अनायास और कभी सायास प्रयोग किया है।

मावाभिव्यक्ति का अलंकारपूर्ण और चमत्कारप्रवण बनाने की प्रवृत्ति केवल रीति-व्यक्ति में ही नहीं उनकी पूर्ववर्ती चिरकाल से प्रवाहित साहित्य धारा में भी पाई जाती है। समस्त मनुष्य सभ्यता के विकास के प्रारंभ से ही कला प्रिय रहा है। उसके जीवन को कलात्मक रचने में परिष्कृत और परिमार्जित भी किया है। आदिम जातियाँ म अपने शरीर का अलंकृत करने की प्रवृत्ति आज भी पाई जाती है। परिव्यक्ति और सामर्थ्य के साथ कलात्मक रचि भी परिवर्तित परिवर्द्धित होती रही है। मानव केवल अपने शरीर, वासस्थान, नगर आदि को ही नहीं अपितु अपनी अभिव्यक्ति का भी सज्जित और अलंकृत रूप में उपस्थित करने में रुचि रखता है। शन शन अभिव्यक्ति के जितने भी माध्यम चित्र, संगीत, स्थापत्य आदि थे, सब अलंकार की प्रवृत्ति बढ़ती गई। किंतु इसका सबसे उत्तम प्रकाशन काय कला में ही पाया जाता है। वैदिक ऋषियाँ भी अपने भावा का अलंकृत गीतों में ही अभिव्यक्त किया है। ऋग्वेद के हिरण्यगम सूक्त — कस्मै दवाय हविषा विवेम म यह ध्वनि निगलनी है कि अय देवता तुच्छ हैं केवल हिरण्यगम ही एक महान देवता ह जो हवि के अधिकारी हैं। यहाँ व्यतिरेकालंकार ध्वनित है। इसी प्रकार निम्नलिखित पद्य में रूपकानिग्याक्ति और विरोधाभास का अगामी सकार द्रष्ट य है —

नीचा वत त उपरि स्फुरत्यहस्तामा ह्मन्त त सहन् ।

दिव्या अगारा दूरिण युप्ता जाना सतो हृदय निदहति ॥<sup>१</sup>

उपयुक्त उद्धरण से यह सिद्ध होता है कि अलंकार केवल चमत्कार का ही सजन नहीं करते अपितु वष्य वस्तु का विम्ब ग्रहण और उसमें सन्निहित रम का सहज आस्वाद्य भी बनाते हैं। इसी प्रकार यदि अलंकारों को अभिव्यक्ति का सहज सहचर कहें

तो अनुचित न होगा। उत्तम काव्य में भावा के साथ स्वभाविक रूप से अन्कार आ जाते हैं अर्थात् कवि को अभिव्यक्ति के शृंगार के लिए अन्कार का बुद्धिपूर्वक नियोजन नहीं करना पड़ना। परन्तु सबत्र ऐसी बात नहीं है। कहीं कहीं अन्तर्गत करने का पृथक प्रयास भी लक्षित होता है। जहाँ सचेष्ट अन्कार का आरोपण अधिक होता है वहाँ भाव, संप्रेषणीय न होकर जटिल हो जाता है या उनका तिराभाव हो जाता है। इस दृष्टि से आनन्दबोधन में अन्कार का दो भेद माने जाते हैं—पृथग्यत्ननिवृत्त्य और अपृथग्यत्ननिवृत्त्य। पहल प्रकार का अन्कार का कवि भावा पर आरोपित करके पृथक प्रयत्न के द्वारा उपस्थित करता है किन्तु दूसरे प्रकार का अन्कार भाव सहजात हातों है।<sup>१</sup> अपृथग्यत्ननिवृत्त्य अन्कार रसाभिव्यञ्जन के उपकारक होता है रसात्मक बाध को जागृत करने में सहायक हात है। प० विश्वनाथप्रसाद मिश्र ने लिखा है, 'काव्य में अन्कार से हाकर जब किसी सगत भाव या तथ्य तक पहुँचा जाता है तभी वह काव्य होता है। यदि भाव या विषय अलग हो और अन्कार अलग तो अन्कार फालतू हो जाता है काव्य प्राय विगड़ जाता है।<sup>२</sup> इसी स्थिति में वह काव्य का आभाषायक न हाकर शोभा में बाधक हो जाता है।

किसी भाव का प्रभावोत्पादन शली में अभिव्यक्त करने का ही निम्न कवि अन्कार का आशय होता है। डा० नरेंद्र कर्णिक ने अन्कार का नियोजन प्रभावोत्पादन के लिए ही हाता है। ऐसा करने के लिए हम सदा लक्ष्मण वस्तुधास तुलना के द्वारा अपने कथा का स्पष्ट अन्कार उभ श्रोता के मन में अच्छी तरह बठाते हैं यात को बड़ा चढ़ाकर उमक मन का विस्तार करते हैं वास्तव्य वपम्य आदि का नियोजन करके उसमें आश्चर्य की उत्पत्ति कराते हैं। अनुभव अथवा शोचिन्त्य की प्रातिपत्ता करके उससे वृत्तियाँ को अचित करते हैं यात का घुमा फिराकर वक्रता के साथ कहकर उमकी जिज्ञासा उद्दीप्त करते हैं, अथवा बुद्धि की करामात विस्तार उमक मन में कौतूहल उत्पन्न करते हैं। अन्कार का ये ही मनोवैज्ञानिक आधार हैं। स्पष्टता विस्तार आश्चर्य, अचित जिज्ञासा और कौतूहल इनका मूल रूप है—आधम्य अतिशय वपम्य शोचिन्त्य वक्रता और चमत्कार (बौद्धिक)।<sup>३</sup> प० विश्वनाथप्रसाद मिश्र ने भी अन्कार प्रकार का अन्कार का प्राप्ति का मूल कारण नासा प्रहार की मानवीय वृत्तियों को माना है।<sup>४</sup> ये मानवीय रीतियाँ आन्वित हैं। इसलिये अन्कार भी आन्वित और सावभौम हैं। देवनागा के भक्त मन्त्र वास्तव रूप में चाहे जा परिवर्तन आया है। किन्तु मूल रूप में चाहे परिवर्तन नहीं आता था।

रातिकार्य तक अन्कार परिवर्तन और परिवर्तन का आत्मगत करनी हुई

१ रसाभिव्यञ्जनस्य अन्कार उपकारकम् ।

अनुभवनिवृत्त्य आन्वित इति उच्यते ॥ अन्वित १११०

२ प० विश्वनाथप्रसाद मिश्र रीतिकार्य व १३०

३ डॉ० नरेंद्र कर्णिक रीतिकार्य की परिभाषा प० ८२ ८३

४ रीतिकार्यस्य अन्कार अन्वित इति उच्यते ॥ २

अलंकारण वृत्ति निरंतर चलती रही। पहले कहा जा चुका है कि रीतिकाल के उपजीव्य दो प्रकार के ग्रंथ रहें—एक में शास्त्रस्थिति सम्मानन हुआ है दूसरे में नाना प्रकार की मानवीय वृत्तियाँ का बहुमती पृष्ठभूमि में धरना। एक में बुद्धि की प्रधानता रही है दूसरे में हृदय की। एक का शास्त्र की अभिप्राय प्राप्त हुई दूसरे का काय की। एक सुविचारित सुस्थ था तो दूसरा अविचारित रमणीय। जहाँ तक काय सम्पत्ति के रीतिकाल पर्यन्त अभिव्यक्ति विकास निरूपण का प्रश्न है पहल किया जा चुका है। सम्प्रति शास्त्र के प्रमुख अंग अन्तारा का अभिव्यक्ति विकास सकेतित किया जाएगा।

यह तो पहल ही कहा गया है कि कविकाल में हम अलंकार का प्रयोग मिलन लगता है जिसमें सिद्ध होता है कि चिरकाल से मानव-वाणी के आभूषण का सजावन करके अपने भावों को सप्रणयिता प्रदान करता रहा है। जो वस्तु या भाव उसका मन और बुद्धि पर जसी छाप छोड़ता है या जसा प्रभाव डालता है वह उस उसी प्रकार दूसरे सहज्य के मन और बुद्धि तक काव्य के माध्यम से संप्रेषित करने की चेष्टा करता है। इस चेष्टा का मुख्य आधार उपमा रूपक या उत्प्रेषण होती है। इनके माध्यम से वह अस्थिर भाव चित्र का शाश्वत रूप प्रदान करता है। मानव की इस जागरूक चेष्टा का शास्त्र में अप्रस्तुत विधान कहते हैं। जिस कवि की बना जिनकी परिष्कृत हागी उसका अप्रस्तुत विधान उतना ही स्पष्ट और निम्बग्रहण कराने में सक्षम हागा। अप्रस्तुत का चयन उसकी काव्य कला की कसौटी है। कवि अपनी प्रतिभा रचि और वातावरण के अनुकूल अप्रस्तुत का चयन करता है। डॉ० सावित्री सिन्हा ने लिखा है 'इस (अप्रस्तुत) के नियोजन के द्वारा काव्य में प्रभावोत्पादकता विद्यमानता तथा रसनीयता का समावेश किया जाता है। रमणीय अनुभूति के लिए रमणीय अभिव्यक्ति का अग्रगण्य हाती है क्योंकि अनुभूति और अभिव्यक्ति सौष्ठव के सन्तुलित समन्वय से ही आदर्श काव्य का निर्माण हाता है।' कवि का मौल्यवाध जितना व्यापक हागा वह उतने ही भावानुकूल रमणीय अप्रस्तुत का नियोजन कर सक्ता। चाणुप प्रत्यक्ष बाह्य विषयों के रंग रूप चेष्टा इत्यादि स्थूल गुणा तथा मानसिक प्रतियोगों की अनुभूति का व्यापक परिप्रेक्ष्य में सबंध चित्र अंकित करके रससिद्ध कवीश्वरों के लिए ही समर्थ है। मूल्य निरीक्षण के द्वारा व्यापक परिवर्तन से लिए गए अप्रस्तुत जितनी प्रचुरता में नालिनीय काव्य में उतने ही होते हैं उतने परवर्ती किता भी कवि के काव्य में नहीं मिलते। इसका मूल कारण है—कवि का दृष्टि शक्ति। उसकी स्वच्छन्द प्रतिभा को उमुक्त वातावरण में मिल सता। काव्य शास्त्रीय मायताओं की जड़बन्दी में प्रतिभा का अपव्यय चमत्कार प्रदान में अधिक किया जाने लगा परिणामतः जीवन का समग्र चित्र अपनी पूरी विविधता के साथ काव्य में अंकित होने में रहा, उसके स्थान पर पाणिन्य प्रदान के यामाई ने कवि को निरप्रमित करने की स्थिति बलक और शक्तिशास्त्र के नियम सिद्धांतों का प्रयोग

करके उसके काव्य को रसमय और मनीष्य की अपेक्षा बहुलता को बसोड़ी मात्र बना दिया। इस प्रवृत्ति का उत्तरोत्तर विकास किराताजुनीय से लेकर 'हरविजय तक देता जा सकता है। हिंदी में 'हर' पिछले लेख के महाकाव्य की ही परम्परा आई। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने इसीलिए खुद के साथ कहा है कि हिन्दी की कविता का उत्थान उस समय हुआ जब ससृष्ट काव्य लक्ष्यरूप्युत हो चुका था। इसी से हिंदी की कविताओं में प्राकृतिक दृश्या का वह सूक्ष्म वर्णन नहीं मिलता जो ससृष्ट की प्राचीन कविताओं में पाया जाता है।<sup>१</sup> रीतिकव्य तो बालिदासांतर महाकाव्य की चमत्कार प्रदर्शन शैली से पूर्णतः प्रभावित है। महाकाव्य ही नहीं ससृष्ट के मुक्ततः सग्रहण में भी ऐसे चमत्कार प्रधान अनेक छंद मिलते हैं जिन्हें रीतिकवि प्रेरणा स्रोत के रूप में देखा जा सकता है। इन छंदों में न तो कोई भाव ही स्पष्ट लभित होता है और न स्वरूप बाध ही। उदाहरण के लिए मनु हरिक कुछ श्लोक देखे जा सकते हैं—

मुखे चन्द्रकानेन महानील शिरोरुहै ।  
पाणिभ्या पद्मरागाभ्या रजे रत्नमर्थाव सा ॥<sup>२</sup>

या

गुरुणा स्तनभारेण मुखचन्द्रेण भास्वता ।  
शनश्चराभ्या पादाभ्या रजे ग्रहमयोव सा ॥

इसी शैली में सुबोधु कवि ने वासवदत्ता का भी वर्णन किया है—

भास्वतालङ्कारेण चन्द्रेण घनमण्डलन लोहितनाधरपल्लवन  
सोम्येनदशनेन गुरुणा नितम्बविम्बन विरुचेन त्रैलोक्यमलन शनश्चरण पादेन तमसा  
कशपागेन ग्रहमयोव ।<sup>३</sup> इसी परम्परा में रीतिकालीन कवियों की भी उक्तियां देखी जा सकती हैं—

रवी सिरफूल मुख ससिलूल महीसुत वदन बिंदु सु भाति ।  
पना बुध केसरि आड गुरी नकमातिय मुक कर दुग्गसाति ।  
सती है सिंगार वि मुतुद वार सज भक्केतु सप्र तन काति ।  
निहाग्ये लाल भरै सुखजाल बनी नव बाल नवग्रह पाति ॥<sup>४</sup>

यही तक नहीं नायिका के रूप चित्रण में धारणा रागियों को भी एकत्र कर दिया गया है—

सिंह करि मेपला ज्या कु भ कुच मियुन त्या,  
मुखवास अलि गूज भीहैं धनुलीर है ।

१ आचार्य रामचन्द्र शुक्ल रस भोगमा १० १२६

२ भक्त हरि शृंगार शतक १० ८१

सुबोधु वामवक्ता १०२० १

४ भिद्योतीनाम काव्य १८१६

वपभानु कया मीन नैनी सुवरन अगी,  
 नजरि-तुला मे तोसा रति सो रतीव है ।  
 ह्व है विलगात उर कनक बटाक्षन सो,  
 चाहिए गलग्रह ती लाग सुधरी कहै ।  
 कु डल मकरवारे सो लगी लगन अत्र,  
 वागहौ लगन को बनाव बयो ठीव ह ॥<sup>१</sup>

एक ओर इस प्रकार के चमत्कार के चक्कर में रूपक मुद्रा आदि अलंकारों के माध्यम से शास्त्र ज्ञान का प्रदर्शन किया जाना था दूसरी ओर कालिदास की विरहिणी यमिणी के चित्र—

तवी श्यामा शिखरिदशनापक्वविम्वाधरा<sup>१</sup>ठी  
 मध्ये क्षामा चकितहरिणी<sup>२</sup>प्रेक्षणा निम्ननाभि ।  
 श्राणीभारादत्तासगमना रतावनम्रास्तानाभ्या  
 या तत्र स्याद्युवतिविपवे सृष्टिराद्यैव धातु ॥

यें केवल उसका रूप रंग ही नहीं गुण धर्म भी स्पष्ट और भावपूर्ण है। इसी प्रकार रीतिकालीन कवि मतिराम का भी निम्नोद्धृत रूप वणन नायिका के ग्राह्य और आंतर सौंदर्य को पूर्ण रूप से उदघाटित करता है—

कुन्दन की रगु फीका लग भूलकै अति अगन चारु गुराई ॥  
 आखीन म अलसानि चितौ मे मजु बिलासन की सरसाई ।  
 को बिन मोल बिकात नही मतिराम लहै मुसकानि मिठाई ।  
 ज्यो ज्या निहारिये नेरे ह्व नननि त्या त्या खरी निखरै-सी निवाई ॥<sup>३</sup>

इन उद्धरणों से स्पष्ट है कि रीतिकाल ने पूर्ववर्ती संस्कृत साहित्य से केवल अत्र करण-श्रुति ही नहीं पाई कही कही मौलिक प्रतिभा और कवि सुनभ सहृदयता का भी परिचय दिया है। भन हरि के अलंकृत रत्नाकर रीतिकाल के अन्तर्गत अवश्य बने, मुग्धु की चमत्कार प्रधान गनी से प्रेरणा जरूर ली गई परन्तु हम स्थल वचन चमत्कार की चकाचौध ही उत्पन्न कर सके उसमें न नायिका के रूप की रंभा ही मिल सके न रस की बूद ही। यद्यपि ऐसे वणन युगानुरोध के कारण रीतिकाल में पर्याप्त माना म मिलते हैं किन्तु ऐसे सरस रसीले स्थल भी कम नहीं जिन पर बिन मोल सहृदय प्रिय शक्त है। मतिराम की कविता में अनारोपित अलंकारों की सुन्दर छग अनेकत्र लकी जा सकती है। ऊपर उद्धृत मध्या की अन्त में दा पत्रिनया म कवि न रूप के प्रभाव में वणन बड़ी कुशलता से किया है। सौंदर्य का नवनवत्व यतिरेव सम्पुष्ट हाकर द्रष्टा पर मोहक प्रभाव डालने में पूर्ण समर्थ है। "ज्या त्या निहारिय नेरे ह्व नननि

१ मिथारीदास का नि० २४४

२ कालिदास मयदूत २१९

३ मतिराम रमराज छ० ६



स्यो-स्या मरी तिवर मी तिराई को पदार्थ बरगम मन्तारि माप की उक्ति 'गण  
क्षणं यन्वतामु तित तय रूप रमणीयताया ताया' का ज्ञानी है किन्तु मतिराम की  
उक्ति म पूर्ण ताजगी है ।

### अलंकार-विधान

रीतिनायक कवि प्राणायामो त अन्न भक्षण निम्नतर श्या म ता प्राय सभा  
अनवारा त लक्षण उदाहरण निय है परन्तु रम ताविता भद तमगिन घोर क्रतु वणत  
सम्प्रधी एता म भी अनवारा ता प्रनुर प्रयोग किया है । यहाँ स्वाभाविक त कारण  
सभी अलंकार त भणोपभन् सहित उदाहरण ता नो तित जा सतत किन्तु कुछ मस  
अलंकार का निर्देश माय किया जाण्मा जिनगी प्ररणा पूर्ववर्ती सम्पन्न प्राप्त प्रपन्न  
क बाया म उट मिला और उलान तन्न अनवारा ही न । बहुत श्या म भार का  
भी ग्रहण किया । वहा का ता पय मह श्यापि त तना काि ए वि रीतिरविया म वस  
उदाहरण रता की समता नही थी । श गार रस क प्रतिश्रुजन मनाहर और मोलर  
चित्रा की रीतिनायक म कभी नही है किन्तु भी य रीति रवि ससृज वाय घोर साम्प्र  
स प्रभावित थ और उनर वाय म अनवारा की सधातता भा गसृजति प्राचीन भार  
तीय वायधारा स प्रभावित मनुप्ररित थी माय इतना ही उचित कराता उद्देश्य है ।

जिस प्रकार रसात्मक मुननता म इन कविया न पूव परम्परा का सहारा किया  
उसी प्रकार अलंकार क प्रयोग म भी पूर्ववर्तिनी वाव्य सरणि से प्ररित हुए हैं ।

### उपमा

अर्थालंकारा म उपमा का महत्वपूर्ण स्थान है । इसके प्रयोग द्वारा कविया ने  
नायिका के रूप का ही अवन नही किया है बल्कि भाव और अनुभाव के चित्रण म भी  
इसका सफल प्रयोग किया है । मतिराम की नायिका मनमोहन क रूप पर आसक्त होकर  
विरह म वसी हा विचरता का अनुभव करती है तभी रिजडे म बन् पक्षी किन्तु न तो  
पगा को मुक्ति मिलती है न मतिराम की नायिका का ही—

सजनी मरौ मन परयी मनमाहन के अग ।

छटपटात छूटत न ज्या पजर पर्यौ पतग ॥<sup>१</sup>

इसी प्रकार का चित्र गथासप्तशती की नायिका का भी अंकित किया गया है । सोना  
की जिवलता की यजना पजरगन प ती की उपमा से बो गई है—

एकनेक्कमवइवेठणविवरतरदिण्णतरत्तणअणाए ।

तइ वालत वालअ पजरसउणाइअ तीए ॥<sup>२</sup>

१ मतिराम सप्तशती २८८

२ गथा ३१२ । उक्त गथा का भाव और अन्वयसाम्य देव की निम्नोक्त पक्षिया म देवा ता  
सकता है—

दव ज द्वार किवारत हू अक्षरीन सरोपन शक्ति फिरी त्या ।

दान ज्या मान जरा की भई स फिर परव विजरा की फिरी त्या ॥ सु त० ६१

विहारी ने भी कुलागना की मानसिक और शारीरिक स्थिति का प्रत्यक्षीकरण इसी प्रकार के उपमा प्रयोग द्वारा किया है—

वहति न देवर की धुत्रत कुलतिय कलह डराति ।  
पजर गत मजार ढिग सुक-लों सूकति जाति ॥<sup>१</sup>

यहाँ उपमा के द्वारा विशेष भाव चित्र प्रस्तुत किया गया है। इसके अतिरिक्त नखशिख वणन में ता मुख्य आधार उपमा का ही लिया गया है।

प्रतीप

प्रतीप अलंकार के प्रयोग द्वारा कविया ने प्राय नायिका के रूप मौदय का प्रतिष्ठ उपमान। स उत्कृष्ट छातित किया है। नारी के सहज शृंगार की चर्चा करत हुए मन हरि ने उनक विभिन्न अंगों के उपमानों को उपमय से नीचा सिद्ध किया है—

वक्त्र उद्रविडम्य पक्त्रपरीहासक्षम लोचने ।  
वण स्वणमपावरिष्णुरलिनीजिष्णु कचाना चय ।  
वक्षाजाविभकुम्भविभ्रमहरी गुर्वा नितम्बस्थली ।  
वाचोहासि च मादव युवतिपु स्वाभाविक मण्डनम् ॥

इसी शली में निबद्ध रीतिकाल के पूर्ववर्ती कवि तुलसीदास ने भी सीता का रूप-वर्णन किया है—

का घूघट मुख मूदहु नवला नारि ।  
चाद सरग पर सोहत यहि अनुहारि ॥  
गरव कूरहु रघुनदन जनि मन माँह ।  
दसहु आपनि मूरति मिय के छाह ॥<sup>२</sup>

मतिराम ने नायिका की अगदीप्ति के वर्णन में प्रतीप का परम्परित प्रयोग किया है—

बेसरि बनक कहा चम्पक बनक कहा,  
दामिनी यो दुरिजात देह की दमक त ॥<sup>३</sup>

इसी प्रकार विहारी का भी नायिका की अगदीप्ति सर्वातिगायिनी है—

वहा कुसुम कह कीमुदी वितक आरसी जोति ।  
जाकी उजराई नख आख ऊजरी होति ॥<sup>४</sup>

और देव ने तो नायिका के केवल उपमानों को परिगणना ही नहीं की है बल्कि उसके रूप रंग रस सबकी अद्वितीयता का प्रतिपादन प्रतीप के प्रयोग द्वारा बड़ी सफलता से

१ विहारी ८५

२ शृंगार शतक श्लो २२

३ बरब रामायण बाल कांड छ० १६ १७

४ रसरत्न छ० १७

५ विहारी श्लो ८८

रिया है -

कान्त विनातु कम कुञ्ज ममात्त कीज  
 तप की विना<sup>१</sup> गीतों अग पटार त।  
 कमज म ता गोमाता माजद क  
 उर म उराज अति राजत उछर म।  
 मजज को फज कोत रागि म की कनी कला  
 चागत ही तयो पर मुषा गा अगज त।  
 तयो मिनागिनी अग मूञ्ज कपालति की  
 मिगिति मिगिति पर दीठि जिन पर ते ॥<sup>२</sup>

रूपक

रूपक अन्तार का प्रयोग प्राय नायिका की व्यवस्था या विनाय स्थिति व चित्रण म  
 मिलता है। भनहरि का गीत प्रारम्भ ता यजन मादन्तार व प्रयोग द्वारा किया है—

कामिनीकायवान्तर कुवपवतदुगम।  
 गा सञ्चार मन पाथ तत्राम्ने म्मरतम्भर ॥<sup>३</sup>

इसी प्रकार विहारी न भी (वाप्यलिंग म पुञ्ज) सागररर द्वारा इसी भाव का अमि  
 ध्यान किया है—

चलन न पावत निगम मग जग उपजी अति प्रास।  
 कुच उत्तम गिरिवर गह्यो मीना मन मवाम ॥<sup>४</sup>

अपह्नुति

विरहिणी को सतप्त करनमान चन्द्र व प्रति नायिका या उसकी सखी की  
 उक्तिया म हम्बपह्नुति का प्रयोग प्राय मिलता है। चन्द्र तो गीतल होता है पर विर  
 हिणी का वह तापत्याय माजूम पडता है इसलिए वह चन्द्र के चन्द्रत्व का निषेध करके  
 उस पर गूथ का आरोप करती है किन्तु रात्रि म गूथ का होना असम्भव है अत यह अग्नि  
 या अग्नि की बाना है ऐसा अनुमान करनी है—

नेदुम्तोश्रो न निश्यक सिधोरीवोऽह्यमुत्थित ॥<sup>५</sup>  
 डहकु न है उजियरिया निसि नहि धाम।  
 जगत जरत अस लागु मोहि विनु राम ॥<sup>६</sup>  
 जाह नही यह तम वह तिये जु जगत निकेत।  
 हात उद ससि के भयो मानो ससिहर सेत ॥<sup>७</sup>

१ सुपमागर तरग छ ५

२ शृंगार शतक श्लो ४२

३ विहारा दो २६८

४ अण्य नीशित कुवलयानन्द श्लो० २७

५ सुनसीदास व रा स की छ० २७

६ विहारी दो २३३

हेत्वपह्नुति का उदाहरण देने हुए कवि लछिराम की विरहिणी ने चंद्रमा को उसकी दाहकता व कारण बडवाग्नि माना है—

वाडव अनल विरहीन वारिव वा आज ।  
आसमान ऊपर अचाना उदै भयो ॥<sup>१</sup>

लछिराम का अप्रस्तुत उपरिनिमित्त अप्रयत्नीकृत क अप्रस्तुत का ही अनुवाद है ।  
उत्प्रेक्षा

नायिका के विभिन्न अंगों के अप्रस्तुता की सम्भावना के आधार पर उत्प्रेक्षा की गई है । कवि किसी विशिष्ट वस्तु या दृश्य को देखकर स्वयं जमा अनुभव करता है व उसका मामांय वस्तु या दृश्य से काल्पनिक साम्य दिमाकर उसे सहज सवेद्य बना देता है ।

बिहारी ने नील अचन म छिप और भनवते नायिका के मुख को देखकर यह सम्भावना की कि यदि कालिंजी व नीले जल में पूरा चान भनवे तो जसा उमका रूप होगा वसा ही उस नायिका का है—छिप्यो छबीलो मुख लम नीले अचल चीर । मनो कलानिधि कलमल कालिंदी के नीर ।<sup>२</sup> नीले अचल म दीप्तिमान मुख के लिए जिस दृश्य की सम्भावना की गई है वह नायिका के बाह्य रूप का ही बोधक है अन्तर धम का नहीं । इस प्रकार की वस्तुत्प्रेक्षाएँ परम्परा प्राप्त हैं । सस्कृत के एक श्लोक में इसी प्रकार की उत्प्रेक्षा द्रष्टव्य है—

नीलाचलेन सवृतमाननमाभाति हरिणनयनाया ।  
प्रतिविम्बित इव यमुना गभीर नीरातरणेणव ॥<sup>३</sup>

तुलनीय,

विहंसत नील दुकूल मे लसत वदन अरविदु ।  
भनवत जमुना रूप म मानो पूरन इदु ॥<sup>४</sup>

प्रिय मिलन को उत्कण्ठित वासकमग्जा क नेत्र इतनी आतुरता से द्वारा पर लगे हैं कि माना उसक व तनवार वध गए हैं—

सुदरि सेज सवारि के साजे सबल सिंगार ।  
दृग कमलन के द्वार पै वाधे वदनवार ॥<sup>५</sup>

नेत्रों के वदनवार रूप की सम्भावना एक और नेत्रों के गुण धर्मों का उदघाटन करती है दूमरी और नायिका की मनोदशा का भी । इसी प्रकार भानुपत्त की राधा वसन्त के भ्रम में द्वार पर चकित दृष्टि से देखती हुई नेत्र कमलो का तोरण सजा देती है—

१ लछिराम रावणश्वर कल्पतरु प २ छ ४

२ बिहारी दो० १६५

३ रस गयाधर प २५८

४ मराराम सतसई दो० ४७६

५ रपराम, दो० १७७

राधा मधाविभ्रममावहती कुर्वीत नेत्रोत्पलतोरणानि ।<sup>१</sup>

तुतनीय,

सीसी दिन चारिक ते तीसी चितवनि प्यारी  
दर कह भरि दृग देखति जितै-जित ।  
आछी उनमील नील सुभग सराजन की  
तरन तनाइयत तारन तितै तित ॥<sup>२</sup>

रीतिकविया ने अलंकार निरूपण करते हुए मस्कृत के काव्यशास्त्रीय ग्रन्थों से केवल लक्षण ही नहीं लक्ष्य भी लिए हैं। यद्यपि इन रीति-कवियां न प्रायः उदाहरणों को किंचित परिवर्तन व साध ही उपयुक्त किया है तथापि कहीं कहीं अनुवादमात्र से ही काम चलाया गया है जस आचार्य चितामणि ने उत्प्रेक्षा अलंकार के निम्नोद्धृत अंशों को सस्कृत ग्रन्थ से अन्याय करके रक्ष किया है—

हेतूप्रेक्षा

तुतनीय, बरसत अजन नभ मनो तम लीपत जनु अ ग ।<sup>३</sup>  
तिम्पतीवनमाऽङ्गानि वपतीवाजन नभ ।<sup>४</sup>  
सुन्दरि भूमि धरे मनो लाल तिहारे पाइ ।  
मुख समता इच्छा मनो विधु लखि कमल रिसाइ ॥<sup>५</sup>  
तुतनीय रवती तवाघ्री मृदुली भुवि विक्षपणादधुवम ।  
त्वमुखाभेच्छया नून पद्मैर्वैरायते शशी ॥<sup>६</sup>

असिद्धविषयाफलीत्प्रेक्षा का प्रयोग कवियां ने प्रायः नायिक, व अंगों से पराजित उपमानों के रूप करने की सम्भावना में किया है। भित्तीरास कहते हैं कि कुछ दिन तक खजरीट नहीं दिखाई देत वे मानों बाला के दृग की समता प्राप्त करने के लिए तपस्या करने चले गए हैं—

खजरीट नहिं लखि परत कछु दिन साची बात ।  
बाल दृगनि सम होन कौ, मनो करन तप जात ॥<sup>७</sup>

इसी प्रकार अनभ्र श कवि को भी सम्भावना है कि स्वर्ण वण कर्णिकार मानों गोरी मुख से पराजित हातर वनवास का संकल्प कर रहा है—

- 
- १ रमयजरी श्लो १२५  
२ सप्रमाणर तरण, छ २७१  
३ कविकुन कल्पतरु ३।७०  
४ कुवलयानन्द श्लो ३३  
५ कविकुनकल्पतरु ३।७१  
६ कुवलयानन्द श्लो ४  
७ काव्य निषय ६।१६

उग्र वणिग्रार पफुल्लिवग्रउ वन्वण वाति-पयासु ।  
गोरी वयण विणिज्जिग्रउ न सेत्रइ वण वासु ॥<sup>१</sup>

रीति कवि क दोहे में काफी हद तक इमना भाव साम्य पाया जाता है । इस प्रकार की उत्प्रेक्षाएँ प्रायः रुद्रिग्रस्त ही बही जाणगी इनमें कवि की मौलिक कल्पना का प्रस्तुरण नहीं लक्षित हाता ।

रीति कवि लछिराम न बादला को हाथी और बूटा को उनकी सूंड द्वारा छोड़े गए फुहार के रूप में उत्प्रेक्षित किया है—

ऊँचो वरि मु डादण्ड छाडत फुहारे भरे  
नारे मदवारे मही ऊपर चलत है ।<sup>२</sup>

### अतिशयाक्ति

रीति कवियों का अतिशयाक्ति बड़ी प्रिय थी । व किसी बात का चमत्कारपूर्ण बनाकर छूब बड़ा बनाकर कहत थे । रीतिकाल के पूर्व भी नायिका के सौकुमार्य माधुर्य आदि का अतिशयाक्तिपूर्ण वर्णन मिलता है । प्रशस्तिपरक काव्यों में तो इसकी सहायता के बिना कवि जैसे कुछ नही ही नही सधता ।

नायिका के बधोजो की कठिनता का वर्णन रूढि सा है । काठिय की अतिशयता का प्रदर्शन अनेक रूपों में किया गया है । महाकवि कालिदास की पावती के कुचो पर गिरकर प्रथम वर्षा के जल बिंदु चूर्णित हो जात हैं—स्थिना क्षण पद्मपु ताडिताधरा पयोधरोत्सधनिपातचूर्णिता ।<sup>३</sup> तो माघ की नायिका के कठिनकुचाग्र पर गिरकर वे सक्का टुकडो में विभक्त हो जात हैं—

प्रथममलघुमौक्तिवाभमासीच्छ्रमजलमुज्ज्वलगण्डमण्डलेपु ।  
कठिनकुचतटाग्रपाति पश्चादथ शतशकरता जगाम तासाम् ॥<sup>४</sup>

इसी प्रकार बिहारी की विरहिणी पर पावस की प्रथम वर्षा की बूँद तो नही पडती । हा आसू जरूर कुचा पर गिरते ह जो क्षण भर में ही छनछनाकर रह जाते हैं—

पलनि प्रगटि वरुनीनि वडि नहि कपाल ठहरात ।

असुवा परि छतिया छिनक छाछनाय छिपि जात ॥<sup>५</sup>

कालिदास वषा की बूँट के माध्यम से नायिका के विभिन्न अंगों के उतार चढाव और कोमलता-कठोरता की सूक्ष्म व्यञ्जना करते हैं किंतु माघ के वर्णन से नायिका का न तो कोई छिन ही उपस्थित होना है न भाव ही । बिहारी की भी उक्ति यद्यपि कालिदास से प्रभावित है पर वह भी वह बात नही पना कर सकी, बस छनछनाकर रह गई । न तो

१ कुमारसम्भव १।२४

२ लछिगम रावणस्वरकल्पन ६ प २७

३ कालिदास कुमारसम्भव १।२४

४ माघ शिशुपालवध ७।६६

५ बिहारी, दो० ३६६

कोई रूप, रंग हा उमार सक्ती, न सवन्ना ही जगा सक्ती ।

पदमावत म जापसो के पञ्चावती के पारदर्शी कठ का वणन द्रष्टव्य है—पुनि तेहि ठाव परी तिन रेखा । घूट जो पीर लीफ सब देखा ।<sup>१</sup> इसी प्रकार बिहारी की नायिका भी जब पान की पीक मूटती है तो वह गले म स्पष्ट दीलती है मानो उसने कृष्ण का लाल-लाल गुनूबद पहन लिया हो —

खरी लसति गारे गरे घसति पान की पीक ।

मनौ गुलबद लाल की लाल-लाल दुति लीक ॥<sup>२</sup>

बिहारी ने केवल उत्प्रेक्षा गर्भित अतिशयोक्ति का ही प्रयोग नहीं किया, द्वापर के कृष्ण का मुगलकालीन लाल गुनूबद भी पहना दिया है एस होता है युग का प्रभाव ।

रूपकानिश्चयोक्ति के द्वारा नायिका के रूप वणन की परम्परा रीतिवाल ने पूर्ववर्ती साहित्य म पूर्ण रूप स पार्श्व जाती है । ऐसे वणन मे चमत्कार और कौतूहलोत्पादन ही कवि का लक्ष्य लक्षित होता है । कुछ उदाहरण निम्नलिखित हैं —

कमनमनम्भसि कमले च कुवलये तानि कनकलतिकायाम ।

सा च सुकुमारमुभगत्युत्पातपरम्परा केयम् ॥<sup>३</sup>

तथा—तमस्तोम गूव तदनु सकल शीतकिरण—

स्तत काकद्वद्व तदनु न च किचित्पुनरभूत ।

अनम्भस्यावतस्तदनु वेदलोकाण्डयुगल

ततोवाचौ पद्यौ किमिदमिति चित्रव रचना ॥<sup>४</sup>

हिंदी के प्रादिकालीन कवि चंद ने जल भरनेवाली दासिया का रूपकानिश्चयोक्ति के प्रयोग द्वारा वणन किया है—

राह चंद इकलास । पास कादड कुरगा ।

कीर बिबफल जुगल । उभय भूतेस अनगा ।

मगराज गजराज । राज पिप्पिय एकत ॥<sup>५</sup>

इसी प्रकार डोना मारु रा दूहा म मारवाडी या रूप वणन भी द्रष्टव्य है—

मारु घूघट दिट्ठ मइ, एता सहित पुणिद ।

कीर, भगर, वाकिल, कमल, चंद, मयद, गयद ॥<sup>६</sup>

इस अलक्षित वणन-परम्परा का निर्वाह रीतिवालीन कवियों ने भी किया है । भिवारीदास के यतिरेकापुत्राणित रूपकानिश्चयोक्ति का एक उदाहरण द्रष्टव्य है—

१ जायमी प्रथावती पदमावत नवमिश्र मन् दो १३

२ बिहारी दो० १२८

३ का० प्र १०।४४६

४ शाह गद्यर पदनि ३५२१

५ चम्बरदाई पद्योराजरासो ६१।३३७

६ डोहा मारु रा दूहा छ ४३५

जग जाके प्रसाद लता पर सैल ससी पर पकजपन वसै ।

करि भानि अनेकनि यो रचना जु विरचि हुकी रचना का हसै ॥<sup>१</sup>

नायिका की विरह-दुःखलता का वणन अतिशयोक्ति से पूरा किया गया है। कुछ उदाहरण निम्नाद्धत हैं—

याम्यामीत्युदिते तव्या वलयो भवदूमिका ॥<sup>२</sup>

च्युते प्रलयसचये प्रवलरिक्तताद्वपण—

व्ययाय निहितामिकावलिरपि स्तलत्यजसा ।

निशम्य मुरलीवल सखि सकृद्विशाखे तनु—

स्तवासितचतुदशीशशिकला वृशत्व ययौ ॥<sup>३</sup>

इसी प्रकार प्राकृत अपभ्रंशान्ति काव्या म भी चपलातिशयोक्ति का वणन मिलता है—

वायमु उड्डावतिअए पिउ दिट्ठउ सहस त्ति ।

अद्धा वलया महिहि गय अद्धा फुट्ट तड त्ति ॥<sup>४</sup>

मिसारीवास की नायिका की भी उक्त स्थिति चपलातिशयोक्ति के द्वारा व्यजित की गई है—

दास कहै ता समै सोहागिनि को कर भया

वलया विगत दुहु वातनि प्रसग त ।

आधिक ढरकि गई विरह की क्षमता त

आधिक तरकि गई आनद-उमग त ॥<sup>५</sup>

एसे स्थला पर नायिका की शारीरिक स्थिति का ही परिचय मिलता है मानसिक दशा का नहीं।

भक्तकातिशयोक्ति के द्वारा नायिका की विशेष सुन्दरता कोमलता आदि का निरूपण किया जाता है। संस्कृत कवियों ने ही नहीं प्राकृत अपभ्रंश और परवर्ती हिंदी कवियां न भी प्रायः समान रूप से भक्तकातिशयोक्ति के द्वारा नायिका की शोभा को व्यजित किया है—

अथ देवागलावण्यमया सौरभसम्पद ।

तस्या पद्मपलाशाक्षया सरसत्वमलौकिकम् ॥<sup>६</sup>

१ काव्यनिगम ६।४३

२ कवलपानन क्लो० ४२

३ उ-वनतीलमणि प ४२३ क्लो २६

४ प्राकृत व्याकरण ४।३५२।१

५ काव्यनिगम ११। १२

६ माह्वियन्पण प ३२५



तथा — अण्णलडहत्तणअ अण्ण विय्या वा वि वत्तणच्छाया ।  
 सामा सामाण्णपआवइणो रेह च्चिअ ण होई ॥<sup>१</sup>  
 तथा अ-न ते दोहर लावण, अ-नु त भुअ जुअलु ।  
 अ-नुसु घणवण हार, त अ-नु जि मुहु वमतु ।  
 अ-नु जि वेसवलापु सु अ-नु जि हाउमिहि  
 जण विअम्बिणि घडिअ सु गुणु लाभ-न णिहि ॥

इसी प्रकार हिंदी कवि रहीम ने भी लिखा है—

आजु नयन के बजरा, और भाति ।  
 नागर नेह नवेलिया, मुदिने जाति ॥<sup>२</sup>

रीतिवालीन कविया म बिहारी मतिराम और मित्तारीदास आदि ने सौन्दर्य के नव-  
 नवोभेद और अनिवचनीयत्व का निर्देश किया है—

और आप कनीनिवनि गनी घनी सिरताज ।  
 मनी धनी के नेह की वनी छनी पट-लाज ॥<sup>३</sup>  
 और कछु चितवनि चलनि और मृदु मुसवानि ।  
 और कछु सुख देत है, सके न वैन बखानि ॥<sup>४</sup>  
 चित्रित बरगौ क्या चितेरो यहि चाहि काल्हि,  
 परी दिन बीतै दुति और और दौरई ॥<sup>५</sup>

### अत्युक्ति

आश्रयदाताआ की दानवीरता और कीर्ति का वणन कवियों ने अत्युक्तिपूर्ण  
 किया है। अण्णदीक्षित ने अत्युक्ति का जो उदाहरण दिया है उसकी छाया मित्तारी  
 दास के उक्त अलंकार के उदाहरण में देखी जा सकती है—

त्वयि दातरि राजेद्र । याचका कल्पशास्त्रिन ।<sup>६</sup>  
 सुलनीय—मगन तेरे को मगन सो कल्पद्रुम आजु है मागिबे लायक ॥<sup>७</sup>  
 नायिका की विरहावस्था के वणन में भी कवियों ने अत्युक्ति का प्रयोग किया

है—

- १ काव्य प्रकाश १०।४५३
- २ प्राकृत व्याकरण ४।४१।१
- ३ बरख नायिकाभेद छ १७
- ४ बिहारी दो० ५७
- ५ मतिराम सतसई दो० ४०४
- ६ का०नि० ११।४
- ७ कुवलयानंद श्लो १६३
- ८ काव्यनिर्णय ११।१८

पथिववधूजनलोचननदीमातकप्रदेशेषु ।<sup>१</sup>

तुलनीय—गोपिन के असुवनि भरी सदा असीस अपार ।

डगर डगर नै ह्वै रही बगर बगर क वार ॥<sup>२</sup>

इस प्रकार की अत्युक्तिपूर्ण उक्तिया सस्वृत प्राकृत अपभ्रंश और रीतिकाल के पूर्व हिंदी-वाक्य में भी पाई जाती हैं जिनके द्वारा नायिका के विरहशैवल्य का निरूपण किया गया है ।<sup>३</sup>

निदर्शना

कविया ने अपनी उक्ति के समथन में उसके सदृश भाव वाली अनेक उक्तियों का उल्लेख किया है । भूषण की सेवा वसी ही होती है जस अरण्यरोदन, जस शवशरीर पर सुगन्धि प्रयोग, स्थल पर कमल का लगाना, और ऊसर में वर्षा का हाना आदि—

अरण्यरुदित कृत शवशरीरमुद्धतित

स्थलेऽब्जमवरोपित सुचिरमूपरे वपितम् ।

इवपुच्छमवनामित वाधिरकणजाप कृता

धृतोऽन्धमुखदपणो यद्वुधो जन सेवित ॥<sup>४</sup>

इसी भाव का किंचित् भिन्न सदम में मिश्वारीदास ने भी निर्दर्शित किया है—

प्राण विहीन के पाइ पलाटयो अकेले ह्वै जाइ घने बने रोयो ।

आरसी अध के आगे धर्यौ बहिरे सौ मतो करि ऊतर जोया ॥

ऊसर में बरस्यो बहु बारि पपान के ऊपर पकज बोयो ।

दास वृथा जिन साहिब मूम के सेवन में अपना दिन खोयो ॥<sup>५</sup>

विरहिणी प्रिय के वियोग के कारण उत्पन्न अपनी विपत्तावस्था का वर्णन भलवृत्त गली में करती है—

वाहिव्व वेज्जरहिओ धणरहिआ सुअणमज्झवासो व्व ।

रिउरिद्धिदसणम्मिव दूसहणीआ तुह विआआ ॥<sup>६</sup>

इसी भाव को मतिराम ने निम्नलिखित दान्ते में निबद्ध किया है—

छाह बिना ज्यो जेठ रवि ज्या बिन औपधि रोग ।

ज्या पानी बिन प्यास यो तेरा दुसह वियोग ॥<sup>७</sup>

१ आर्षासप्तशती श्लो ५

२ बिहारी दो १५२

३ देखिए प्रस्तुत प्रबंध का चतुर्थ अध्याय

४ कुवलयानन्द पृ० ५६

५ काव्यनिर्णय ८१७५

६ गाथासप्तशती ५१६३

७ मतिराम सतसई दा ६६८

## व्यतिरेक

व्यतिरेक अर्थकारक प्रयोग द्वारा कवियों में उपमय में उपमा की विशेषता व्यक्तित्व का प्रतिपादन किया है। मुग की उपमा अर्थ में ली जाती है या कवय में विद्यु कवियों ने लोका को बोधपूर्ण अर्थकारक ताविका क मुग का मो-वा-र्य प्रतिपादन किया है—

णत मयतन्त गच्छ मनिगुण गच्छ गय यान्तु ।

मुहु मुदति न गमु भणगि जन्ता गन्तु गदन्तु ॥<sup>१</sup>

इसी प्रकार रहीम की ताविका भाषण प्रिय को बुद्धि पर तरंग लाती है जो उमरा विभुवन्ती कहा है

गीत मलिा विगभया, मीगुा तीत ।

माति तहत विभुवदती गिय मनि हीन ॥<sup>२</sup>

भिगारीदास को भी शान-वन्दन की समता में अन्तःश्लेषण होने में सुन्दर समता है—

घट वट्टे सखलर गति, सख जग तहै गगव ।

वाल वदा सम है नही, रव मयक एकर ॥<sup>३</sup>

बिहारी की नायिका ने न जाना कहा अनुविद्या की गिणा पाद है कि वह सामान्य निगाने को नहीं चंचल चित्त को बिना प्रत्यक्षा क भौहें कमात और वर विनोनि शान से वेग देती है—

तिय वित्त कमनेती पडी यिनु जिह भौह-वमान ।

चलचित्त बेभो चुवति नहि वव विलोतनि-धान ॥<sup>४</sup>

तुलनीय—मुग्धे धानुष्वता वेयमपूर्वा त्वयि दृश्यते ।

यया विध्यसि चेत्तासि गुणरव ना सायकं ॥<sup>५</sup>

मत् हरि की मुग्धा और बिहारी की नायिका दोनों सामान्य निगानेबाजों से विभिन्न हैं। एक बिना प्रत्यक्षा क चंचल चित्त को धपती है तो दूसरी केवल गुण (प्रत्यक्षा) से ही।

## सामासोक्ति

रीतिकालीन कवियों ने प्रस्तुत में अप्रस्तुत का मान करानेवाले शब्दों या श्लेषों द्वारा अनेक उक्तिया निबद्ध की हैं। ऐसी उक्तिया काव्य परंपरा में विरकाल

१ मुष्णत महापुराण ५५।१।१४ ११

२ रहीम बरख नायिकाभव छ० ३४

३ भिगारीदास काव्यनिर्णय १।८

४ बिहारी, श्ल० २७४

५ मत् हरि शृंगार शतक श्लो ८२

से अपनी 'वज्रकृता के कारण सहृदयानुरजन करती आई है। पुष्प और भ्रमर की मधु क्रीडा के द्वारा नायक नायिका की मधु क्रीडाभा का सन्त किया गया है—

पिब मधुप वकुलकलिका दूर रसनाग्रमात्रमाधाय ।  
अधरविलेपसमात्ये मधुनि मुधा वदनमपयसि ॥<sup>१</sup>

समासावित्त क द्वारा गायाकार न भा इसी भाव का वणन किया है—

जाव ण कोसविकाएँ पावइ ईसीस मालईकलिया ।  
मअरदपाणतोहित्त भमर तावच्चिअ मलेसि ॥<sup>२</sup>

विहारी ने भी इस भाव को एक दाह म निबद्ध किया है -

नहिं पराग नहिं मधुर मधु नहिं विकास इहि काल ।  
अली कली ही सो वध्वी आगे कौन हवाल ॥<sup>३</sup>

श्लेष

एक शब्द के द्वारा अनेक अर्थों के प्रकाशन से चमत्कार उत्पन्न करने वाले कविया का प्रिय अलंकार श्लेष रहा है। ११वीं १२वीं शताब्दी ईसवी के लगभग इत्यालकार का प्रयोग इतना अधिक बना कि पूरे के पूरे महाकाव्य म श्लेष पदा के प्रयोग से दो दो, तीन-तीन कथाभा का एक साथ प्रकाशन करने लगे। श्रीहप क 'नपथचरित' म तो एक ही सग म पञ्चनलिक प्रयोग मिलता है जिसम क्रमग इद्र<sup>४</sup> अग्नि<sup>५</sup> यम<sup>६</sup> वरुण<sup>७</sup> क वणन के साथ नल का भी वणन किया गया है तथा एक ही श्लोक म नल इद्र अग्नि, यम और वरुण का भी वणन मिलता है<sup>८</sup> किंतु उनक समसामयिक कवि कविराज कृत राघवपाण्डवीय महाकाव्य मे पूरा महाकाव्य ही दबयथक है। स्थानाभाव से यहा केवल यदुनाय (कृष्ण) और रधुनाय पर धन्ति होनेवाले एक श्लोक को उद्धृत किया जा रहा है—

य पूतनामारणलब्धकीर्ति काकोदरो येन विनीतदर्पे ।  
यशोदयालकृन्मूर्तिरुथान् नाथाभदूनामथवा रधूणाम् ॥

रीतिकालीन कवि पद्यकार ने अनेक वष्य श्लेष के उदाहरण स्वरूप उक्त सस्कृत श्लोक का अनुवाद ही प्रस्तुत कर दिया है—

१ आर्षामप्लशती श्लो ३६७

२ गाथासप्लशती श्लो ५१५५

३ विहारी दो० ३५६

४ नपथचरित सग १३ श्लो० ३६ २७

५ वही श्लो ६ १२ २८

६ वनू श्लो १५ १८ २६

७ वरुण श्लो २१ २५ ३०

८ दक पतिवित्पि<sup>१</sup> नपथराजरात्या निर्धोयिन न किमु न त्रियन भवत्या ।

नार्थ नच श्लव तथातिमहानतसमी यदीवमुत्पति वर. पत्रर. पुनस्त. १ -नपथ० १३।३३



विधाय वैर सामप नरोऽरौ य उदासते ।  
प्रक्षिप्योर्दक्षिण वक्षे शेरते तेऽभिमारुतम् ॥<sup>१</sup>

पद्माकर ने उक्त अलंकार के उदाहरण स्वरूप इसी श्लोक का अनुवाद प्रस्तुत किया है—

बड़े प्रवल सौ वैर करि करत न सोच विचार ।  
ते सावत वारुद परपट मे वाधि अगार ॥<sup>२</sup>

### व्याजस्तुति

रीतिकालीन कवियों ने अयमभोगदु खिना नायिका की दूती व प्रति उक्तिया म प्राय व्याजस्तुति का प्रयोग किया है जिसम सामान्यत तो दूती की प्रणया रहती है पर उससे निंदा की व्यजना होती है। उक्त नायिका दूती के दत्तवर्णिन अघर तथा नन्वाधान से वर्णित पयाधरा की प्रशंसा करती हुई कहती है—

किं त्व निगूहसे दूति स्तनौवकन च पाणिना ।  
खण्डिता एव शोभते गुराघरपयाधरा ॥<sup>३</sup>

इसम गुर अघर पयाधरा की प्रशंसा ता स्पष्ट है किन्तु दूती के विश्वासघात की व्यजना के कारण उसकी निंदा व्यंग्य है। बिहारी के निम्नोद्धत दोहे म उक्त श्लोक के भाव मुखर हैं—

पट की डिंग कत ढापियन साभित सुभग सुवेप ।  
हृद रद छद छवि दत यह सद रद छद की रेख ॥<sup>४</sup>

इसी प्रकार दूती के शीघ्र की प्रशंसा म निहित निंदा का भाव स्पष्ट है—

पादवाभ्या सप्रहाराभ्यामधरे व्रणखण्डिते ।  
दूति सग्रामयोग्यासि न योग्यादूतकमणि ॥<sup>५</sup>

साधु दूति । पुन साधु क्तव्य किमत परम् ।  
यमदर्थे विलूनासि दत्तरपि नखरपि ॥<sup>६</sup>

इसी प्रकार के भाव अय कवियों ने भी व्याजनिंदा के द्वारा व्यक्त किया है—

मैं पठयउ जिहि कमवा, आयसि साधि ।  
छुटिगो सीम को जुखा, कसि के वाधि ॥<sup>७</sup>

१ माघ शिशपालवध २।४२

२ पद्माभरण ११५

३ शाह गधरपद्धति श्लो २१०

४ बिहारी दा० ३८४

५ शाह गधरपद्धति श्लो ३५ ५

६ कुवलयानन्द श्लो ७१

७ बरन नायिकाभेद छ २८

हिनू न तो सी श्रीः तिय पियदि मत्तारत जाइ ।  
सह जुतू मा हिन सगी तम टात ते घाइ ॥<sup>१</sup>

दूती की ही गही नायक की भा रूति इसी प्रकार की गई है । गच्छिता नायिका कहती है -

तात्तानुरागतुराऽसि महाहराऽसि  
नाथाऽसि हि च तायीजनभविताऽमि ।  
इत्य निगद्य मुदगा वदत प्रियम्य  
नि इत्यम्य वाप्यनुनिता निहिता तगता ॥<sup>२</sup>

इसी प्रकार मतिराम की भी नायिका कहती है -

तुम सा बीज मान क्या, बहु नायक मन रज ।  
वात रहत या बाल व भरि आण दग वज ॥<sup>३</sup>

इन सभी उक्तियां म मुख्य अर्थ व्यक्त रहता है ।

### आशेष

प्रवत्स्यत्यतिना नायिकाओं यद्यपि प्रिय का विदेगमन चाहती नहीं किन्तु वे उम स्पष्ट मना भी नही कर सकती । उनकी उक्तियां यद्यपि प्रत्यक्षत स्वीकारात्मक होती हैं किन्तु उनमें निषेध गमित रहता है । मसृष्ट साहित्य में निषेध गमित प्रवत्स्यत्यतिनाया की अनक उक्तियां सुलभ है । रीति-विविधान प्रत्यक्षत नही तो परोक्षत इन उक्तिया से अवश्य प्रेरणा ली है । एक नायिका बिग्न जात हुए नायक से कर्ती है—

गच्छ गच्छसि चेत्कात पथान संतु ते शिवा ।  
मभापि जम तत्रैव भूयाद्यत्र गतो भवान ॥<sup>४</sup>

उक्त नायिका की ही स्थिति में वपानर की नायिका कृष्ण की गी में गुलाब का गजरा डालकर ही ऋतु की उद्घोषरुता और भविष्य में होनेवाले अपन वियोग कष्ट का संकेत करती है—

फट गही न गही बहिमा न गरा गहि गाविद गीन त फरो ।

गोरी गुलाब के फूलन को गजरा ल गुपाल की गल में गेरा ॥<sup>५</sup>

मतिराम की नायिका का चित्र उक्त सभी नायिकाओं का अपभ्रंश सबंध एव स्वामाविक्र है । कृष्ण से सखी कह रही है—

आई ऋतु सुरभि, सुहाई प्रीति वाके चित्त,

ऐसे म चलो तो लाल । रावरी बढाई है ।

१ पद्माभरण दो० १२८

२ रसमञ्जरी श्लो १४

३ रसरज दो० ४५

४ साहित्यरत्न प ३५०

५ जगदिनी छ० २५

सोवत न रैन-दिन, रोवत रहति बाल,  
ब्रूके त कहति मायके की सुधि आई है ॥<sup>१</sup>

### असगति

उपवन विहार म नायिका के नन म पराग पडकर उसे कष्ट देने लगा, नायक ने उसे फूक से हटाया चाहा तो दूसरी युवतिया के नेत्र राप से पृण हो गए —

विनयति सुद शो दृश पराग प्रणयिनि कौमुमभाननानिलेन ।

तदहितयुवतेरभीक्षणभक्षणोद्ध यमपि रोपरजोभिरापुपूरे ॥<sup>२</sup>

इसी प्रकार बिहारी के नायक न नवोडानायिका की आत्मा म पिचकारी म रग डाल लिया । यह देखकर दूसरी नायिका क नत्रा म रोचन के रग की लाली आ गई —

छिरके नाह नवोड-दग कर पिचकी जल जार ।

रोचन रग लाली भई विय तिय लोचन कोर ॥<sup>३</sup>

### विचित्र

नीतिपरक मुक्कका मे कविया ने विपरीत फल की इच्छा स उसके विरुद्ध आचरण का वणन किया है जत ऊचे उठन क लिण सिर को नीचा करना चाहिए और अमर होने क लिए मरना चाहिए -

प्रणमत्युन्नतिहेतार्जोवितहेतार्विमुचति प्राणान् ।<sup>४</sup>

एसी ही उक्ति रीतिकालीन कवि देव की भी है—

कौ मुनिक विनमोल बिकाय न बालन बोइको मोल नहैये ।

पैये अशीश लचैये जो शीश लची रहिए तव ऊँची कहैये ॥<sup>५</sup>

### उल्लाम

सीत्काराचितलोचना सरभस चैश्चुम्बिता मानिनी ।

प्राप्त तरमृत श्रमाय मथितो मूढे सुरे सागर ॥

जिन चाख्यी तिय अघर तिन पाई मुधा अपार ।

वृथा मूढ देवनि मथ्या श्रमहित पारावार ॥<sup>६</sup>

### शब्दालकार

रीतिकालीन कवियान शब्दालकारा के प्रयोग द्वारा नाद-व्यञ्जना का सफल

१ मतिराम रसराज छ २०६

२ शिशुपालवध ७।५७

३ बिहारी दो १६६

४ साहित्यरत्न पृ ३५४

५ मुषसागरतरंग छ ४४४

६ अमरकमलक श्लो० ३६

७ पद्माशरण दो २२३



प्रमास किया है। प्ययात्मन शक्ति की प्राप्ति के द्वारा छत्र म शिवाय समययता का सजन हुआ है। दाहे म ताद-व्यजना का उतना प्रवर्तन नहीं रहता त्रिनना प्रमासून बड़े छदा सयया मा कविता म रहता है। मरुटा प्राटून प्रौर प्रमभ ग म हाती हुई नाद-व्यजना की प्रयति रीतिकार्य म भी आई। कुछ उदाहरण निम्नलिखित हैं —

वीप्सा

भ्राम भ्राम स्थितया स्नह तव पयसि तत्र तत्रव ।  
 आवतपतितनौवायितमनया विनयमपनीय ॥<sup>१</sup>  
 फिरि फिरि चित्त उत ही रहत टूटी लाज की नाव ।  
 अग अग छवि भौर मे भया भौर की नाव ॥<sup>२</sup>

गोवधनावाय न नायिका के रूपासून तत्रा की स्विति का भौर म पढी नाव के प्रस्तुत द्वारा प्रत्यक्ष कर दिया है साथ ही भ्राम की वीप्सा द्वारा नाद प्रौर गति को भी चित्रित कर दिया है।

विहारी न उक्त विषय का तद्वत निबधन किया है। भौर प्रौर 'भौर के अनुप्रास द्वारा मन्द म धर छन्द लय म विषय गति प्रा गई है।

अनुप्रास

वचनानुप्रास के द्वारा हिंदी के सवया कविता म जसी मनोरम प्रौर स्फूर्तिपूर्ण नाद-व्यजना हाती है वसी सस्वृत म नहा हो पाती। उदाहरण के लिए दोना मापामा के छंद देखिए —

उमील-मधुगंधलुब्धमधुपव्याधूतचूतानुर  
 त्रीडत्वाकिलकाक्लीवलकलैरदगीणकणज्वरा ।  
 नीयते पथिक कथ कथमपि ध्यानावधानक्षण—  
 प्राप्तप्राणसमागमागमरसोत्लासरमी वासरा ॥<sup>३</sup>  
 जागुरी जगाव जगु जगुरी जगन  
 उजगे न जोति जगे हाति ही जो जग जगरी ।  
 द्वार की डगर डगरी परति काप डग  
 डग परी परतु डालु डाले डग डगरी ।  
 देव गुण आगरी उसास भर अगरी  
 दवाये दत अगुरी अचल अग अगरी ।  
 लक लगवगरी कलक लग वगरी  
 सुखीन सग वगरी सखीन सग सगरी ॥<sup>४</sup>

१ भार्यासप्तशती छ ४२२

२ विहारी दो० ४२७

३ साहित्यदपण प० २७६

४ देव मुखमाग्यतरण छ० ६०७

उपन छटा म घ, 'क', ल', 'प', म', 'ज ग, री की आवृत्ति के द्वारा ध्वनि उत्पन्न की गई है।

लाटानुप्रास के प्रयोग द्वारा कविषा न चमत्कार का सजन अधिक किया है भाव का प्रकाशन कम। मतिराम ने उरज 'कठोर' पद की आवृत्ति से उक्ति का समर्थन किया है—

•प्राणपियारो पग पूर्यो तू न लखति यहि ओर ।  
ऐसो उर जु कठोर तौ उचित उरजु कठोर ॥<sup>१</sup>

अब जरा मग शब्द की क्वायद देखिए—

मृगनयणी, मृगपति मुखी, मृगमद तिलक निताट ।  
मृगरिपु-कटि मुद्गर वणी, मारु अडहर घाट ॥  
मृगपति जित्यो मुनक सौं मृगलच्छन मृदुहास ।  
मृगमद जित्यो सुनेन सौं मृगमद जित्यो सुवास ॥<sup>२</sup>  
मन मृगया कर मृगदृगी, मृगमद-वदी भाल ।  
मृगपति-लव मृगाकमुखि, अक लिए मृगवाल ॥<sup>३</sup>

यमक

यमक क द्वारा स्वयं दूती का स्वामिप्राय नापन बड़ा ही वैदग्ध्यपूर्ण बन पड़ा है—

जन्तिअ गुल विमग्गसि ण अ मे इच्छाइ वाइसे जन्त ।  
अणरसिअ कि ण आणसि ण रसण विणा गुलो होइ ॥<sup>४</sup>

इसी प्रकार बिहारी की स्वयंदूती भी कहती है—

लाज गहौ बेकाज कत धेरि रह धर जाहि ।  
गोरस चाहत फिरत ही गोरस चाहत नाहि ॥<sup>५</sup>

•मतिराम क दाह का भाव निम्नलिखित श्लोक में दखा जा सकता है—

सतप्राया रात्रि इत्तनुमगी सायन इव  
प्रतीपोष्य निनावरमपमता धूणित इव  
प्रणामान्त कोपमन्वि न जहानि क्रुधमहो  
कुचप्रयागत्या हृदयमपि त मुञ्ज कनिम ॥  
पुरातन प्रबन्ध सप्त, प ११ कता ५१

१ मतिराम सतयत् ३४

२ शानामारु रा दूहा छ० ४६६

३ मतिराम मनतई ३४

४ काव्य-निगय ११।४६

५ सायासप्तशती ६।१४

६ बिहारी दो० ६१२

हाल की नायिका (गुड) 'गुन' बंनेवाने नायक के प्रति दिव्य 'शा' रम (ईश का रस और रगिकता) व प्रयाग द्वारा शक्तिप्राय प्रदान करता है और विहारी की नायिका गारस (दूध और इन्द्रिय रस) के द्वारा।

उपर के उद्धरण से स्पष्ट हो जाता है कि रीति कविमाने यद्यपि अर्थानकारा का अधिक प्रयोग किया है फिर भी अन्तर्गत उपनिगत नही रह। डॉ० नगत्र न लिखा है वास्तव में दोनों प्रकार के अन्तर्कारा का जितना प्रायुष्य इस काव्य में मिलता है उतना अर्थ नहीं। रीति काव्य एक तरह से अन्तर्कारा का समग्र काव्य है जिसमें बढिया स-बढिया और घटिया स घटिया नमून मिल सकते हैं। सम्य और सतुल्य शक्ति के कविमाने अन्तर्कारा का अत्यंत कोमल और सूक्ष्म-तरल प्रयोग मिलता है। वण मत्री तथा अर्थ और शा' के स्वास्थ्य के इतने सुंदर उदाहरण अर्थन दुर्लभ हैं।<sup>१</sup>

### अप्रस्तुत विधान

रीतिकालीन कविमाने भावाभिव्यक्ति में उनका द्वारा प्रयुक्त अप्रस्तुता का महत्वपूर्ण स्थान है। इस क्षेत्र में भी इन कवियों ने अपने पूर्ववर्ती भवत कविमाने से काफी प्रेरणा ली है। अंतर कथन इतना है कि भवत कवियों के भाव रीति कवियों की अपेक्षा अधिक सचेत स्वाभाविक और सरल हैं जबकि रीति कविमाने के भाव प्रायः रुढ़ि अनुमोदित और आरोपित हैं। मतिराम बिहारी देव भिवारीदास और पद्माकर आदि न नारी की तमयता विह्वलता अलङ्कार और न जाने कितनी ही भावा की व्यञ्जना अनेक क्षेत्रों से जुड़े गए उपमानों के द्वारा की है। इन अप्रस्तुतों का प्रयोग का मूल लक्ष्य पाठक या श्रोता का मानस पटल पर वण्य का भाव चित्र या स्वरूप चित्र अंकित करना है। व्यापक रूप में यही लक्ष्य काव्य कला का भी होता है। प० विश्वनाथप्रसाद मिश्र ने लिखा है काव्य में कर्ता का लक्ष्य या तो किसी तथ्य तक पहुंचना होगा या किसी अनुभूति या भाव तक अर्थन दोगे तक। काव्य वस्तुतः वही है जो किसी प्रकार की अनुभूति तक ले जाय। इसके लिए कर्ता केवल उन भावा को कह कर नहीं लेता उनका नाम भर नहीं लेता इसका लिए उसे किसी पद्धति, गली, माग का अवलंबन करना पड़ता है। इसी पद्धति शली या विधि विधान का नाम कला है।<sup>१</sup> अप्रस्तुत विधान इसका अंग है। रीति कविमाने केवल चमत्कारप्रवण गली या विधि विधान का महत्वपूर्ण आरापिन और रुढ़िप्रस्त अप्रस्तुता का द्वारा ही वस्तु या भाव की अभिव्यक्ति नहीं की है उ होने अनेक सचेत और सहज अप्रस्तुता का प्रयोग करके अपनी रसात्मकता वक्ति का उद्घाटन भी किया है।

प्रेम पाश में आच्छाद या प्रेम सागर में डूबती उतरासी नायिका की विवशता, व्याकुलता और तमयता का अनेक भावप्रेरित चित्र रीति काव्य में पाए जाते हैं—

१ डॉ० नगत्र रीतिकार्य की भूमिका

२ प विश्वनाथप्रसाद मिश्र बिहारी भूमिका पृ १५४

सजनी मेरो मन पर्यो मनमोहन के अग ।

छटपटात छूटत न ज्यो पजर पर्यो पतँग ॥<sup>१</sup>

पिंजड़े मे पडी चिडिया के अप्रस्तुत विधान द्वारा कवि ने नायिका की विवशता का ही नहीं मुक्ति कामना का भी संकेत कर दिया है। इसी प्रकार देव की पूर्वानुरक्त नायिका का भाव प्रसूत शून्य चित्र देखिए—

हूँ सपने तिय को पिय आय दई हिय लाय बनाय विरी त्यो ।

चुम्बन ही चख चौकि परी मुचितै चकि सेज ते भूमि गिरी त्या ।

देव जु द्वार किवारन हूँ भूभगीन भरोखन भाकि फिरी त्यो ।

दीन ज्या मीन जरा की भई सु फिरै फरक पिजरा की चिरी त्या ॥<sup>२</sup>

‘जरा की मीन’ और ‘पिजरा की चिरी’ इन दो अप्रस्तुतों के द्वारा नायिका की विह्वल किन्तु विवश दशा का अंकन किया गया है। गेप ऊपर की तीन पक्तियों में कवि ने पूरे वातावरण का ताटकीय चित्र प्रस्तुत किया है। घटनाएँ क्रमशः भाव को उन्वाधिन, प्रस्फुटित और सम्बद्धित करके एक-एक विदु पर पाठक को छोडती है कि पूरा वा पूरा मानसिक द्वन्द्व आला के सामने साकार हो उठता है। असमय ही निद्रा का भग नायिका की ग्लानि को तीव्र कर देता है। मतिराम के दाहे में वातावरण को साकार करने का अवकाश ही नहीं है अतः उसमें संवदना की सीढ़ियाँ उभर नहीं सकी। इसी प्रकार हाल की नायिका भी विह्वलता का अनुभव तो करती है पर सामाजिक मर्यादा का वजन उसे खिडकी की मजदूर मलावा की बोझ अनुपूरित नेत्रों से उमी प्रकार देखने भर की छूट देता है जिस प्रकार पिंजड़े में आच्छन्न पत्नी ललकपूर्ण दृष्टि से बाह्य प्रकृति को देखता है। प्राकृत की इसी सद्म की एक गाथा\* मतिराम और देव के लिए प्रेरणा स्रोत बने ही हो किन्तु उनकी वान अपनी है और उसे अपने ढंग से उहनि प्रस्तुत किया है।

अप्रस्तुत विधान में कविया ने कही मूल उपमय के लिए मूल उपमान का प्रयोग किया है वहीं अमूल। इसी प्रकार अमूल उपमय के लिए वहीं मूल उपमान का प्रयोग किया है वहीं अमूल। यदि विश्लेषणात्मक दृष्टि में विचार किया जाय तो मूल के मूल और अमूल के अमूल उपमान अधिक प्रयुक्त हुए हैं। अमूल व अमूल उपमानों का समोजन कवि की सूक्ष्म पयवेशन शक्ति की अपेक्षा रखता है। मत के लिए मूल उपमान तो प्रायः प्रयुक्त हुए ही हैं। इनमें सबसे अधिक प्रयोग अमल के लिए मूल उपमानों का हुआ है।

### मूल के मूल उपमान

कवि जिन मूल पदार्थों का साक्षात्कार करता है उनका वर्ण, आकार और गुण

१ मतिराम सप्तम १० २६८

२ देव सखमाणतरंग छ० ६१

\* तुलसीदास—एकेश्वरमन्त्र-वेदणविवरन्तरिण्यतरलपधनाए ।

तह बोधने बारम पजरगउणाहम सीए ॥ गाथा० ३।२०

साम्य ने कारण प्राय मूत उपमानों के संयोजन द्वारा वर्णन करता है। वही वृत्ती पौराणिक उपमानों का भी प्रयोग मिलता है जैसे नायिका व रूपोत्सव को ध्यान म ररत्कर उसकी उपमा रति<sup>१</sup> लक्ष्मी<sup>२</sup> या किसी घण्टारा<sup>३</sup> जैसे उरशी, मजुपोषा आदि से दी गई है। इसी प्रकार नायिका के लिए फूला की माला लीपगंगा, मञ्जरी या लता का अप्रस्तुत प्रयुक्त किया है<sup>४</sup> इन प्रकृति श्रुत उपमानों के द्वारा उसकी दहकानि वर्ण और सुकुमारता आदि की व्यञ्जना की गई है। उक्त सभी उपमान मूत है और मूत उपमेय (नायिका) व लिए प्रयुक्त किए गए हैं। इनके अतिरिक्त अन्य प्रकार के उपमेय और उपमान नीचे दिए जाते हैं।

### मूत के अमूत उपमान

संस्कृत वाच्य परम्परा में मूत के अमूत उपमानों का प्रचुर प्रयोग मिलता है जस कुच के लिए तावण्य रागि (स्व० वा० प० २८) हृदय की एकत्रित कठोरता (वि० ० ८४३), रोमावली के लिए अधकार की रेखा (वि० मा० ८२४) हिंदी में मूरदास ने भी रोमावली की उपमा अधकार की रेखा से दी है (मूर० १०१ २४४७), कटि के लिए क्षपा (बिहारी २४१, ४४) नम (वा० नि० ८३०) कुच की क्रमश वद्धि व लिए जठ दिन मिति (बिहारी २४१) आदि के प्रयोग मिलते हैं।

### अमूत के अमूत उपमान

हास चन्द्र विरण<sup>५</sup> काम कीर्ति समूह का प्रवास<sup>६</sup> प्राण अवम तिथि,<sup>७</sup> यौवना गम वसतागम,<sup>८</sup> वय संधि दुराज,<sup>९</sup> आदि।

### अमूत के मूत उपमान

इसमें कामदेव के लिए प्रयुक्त सभी मूत उपमान लिए जा सकते हैं क्योंकि काम

१ वा रा० अरण्य० ४६।१७ कु म० २५७ वा० प ३८६ पउमतिरी चरिउ १।४।५८ प रा० २२।८ ४५।६१ वि प २२।८ मूर १।७ ६ व० २० २।११ ज वि ४५ ४३४

२ वा रा अरण्य० ४६।१७ वा० पु ३०६ प्रिय २।६ स व० ४।१ ज० व ३।३ वि० प २२।३ मूर १।७ ६ बिहारी ३४१ वा वि २१।५३ र सा १७

३ वा रा० अरण्य० ४६।१६ १७ पु० रा ३१।७७७ मूर० १।७ ६ बिहारी २८७ वा नि० १७।३०

४ व रा ६१।१६०४ ६१।५३४ सर १।१७ ७६ वा० १३५ ४७३ बिहारी ४५७ म स० २८ वा० नि० ८।२२ ६।२ ज वि १० ११५ १८३

५ नथ ७।४३ वि० प० ३।२ ज वि १५

६ म स ४८६

७ बिहारी दो० १४०

८ वि० मां ८।८५ ७७ नप० १।१६ २० प रा० ४७।४०

९ बिहारी ३११ वा० नि० ११।३ १२।२१

को पौराणिक आन्याय के आधार पर अमृत माना गया है। कुछ उपमान निम्नलिखित हैं—

महीपति,<sup>१</sup> नायिका का मजक,<sup>२</sup> व्याघ,<sup>३</sup>

इमो प्रकार लज्जा के लिए सगाम,<sup>४</sup> जैन,<sup>५</sup> नटी,<sup>६</sup> लाव<sup>७</sup> आदि का प्रयोग किया गया है।

रीतिकालीन कवियाँ पर अपने युग का प्रभाव काफी पडा है। इस उनके द्वारा प्रयुक्त विभिन्न अप्रस्तुत व अभ्ययन द्वारा मिद्ध किया जा सकता है। इसके अनिश्चित प्रकृति घर-गृहस्थी और ज्योतिष-वचक आदि शास्त्रीय प्रथा म भी उपमान लिए गए हैं।

विहारी आदि कवियाँ ने जड पदार्थों पर चेतनत्व का आरोप करके उसकी प्रभावमयता म वृद्धि की है। छाया जड वस्तु है किंतु कवियाँ ने उमम चेतनत्व का आरोप करके बड़ा ही भावव्यजक चित्र उपस्थित किया है। विहारी ताप की असह्यता और भीषणता की निर्देग छाया म चेतनत्व का आरोप करके करते हैं—

बठि रही अति सघन वन बठि सदन-तन भाह ।

निरखि दुपहरी जेठ की छाहो चाहति छाँह ॥

इस उक्ति पर अर्वाचि वर्मा के निम्नाद्धत श्लोक की छाया देखी जा सकती है—

दु सहातापमयादिव सम्प्रति मध्यस्थित दिवसनावे ।

छायामिव वाछन्ती छायापि गता तरुललानि ॥<sup>८</sup>

इसम स्पष्ट है कि रीतिकालीन कवियों ने अपनी अभिव्यक्ति के लिए जिन अप्रस्तुत का विधान किया है वे प्रायः परम्परित हैं। कुछ ही ऐसे हैं जिन्होंने सत्कालीन सामाजिक या राजनीतिक स्थितियाँ स प्रभावित होकर ग्रहण किया है। प्रस्तुत प्रवच के लघु कलेवर म उन सबका यथोचित समावेश सम्भव नहीं है अतः उनका सक्षत मात्र करके सन्तोष करना पडता है।

चित्र योजना

अप्रस्तुत विधान के द्वारा कवि कई प्रकार के शब्द चित्र प्रस्तुत करता है। इसम

१ शाह म ३७११ पृ. रा० ६२।६३ गीत १।३५, वि० प० २।५ मूर० १।२०२६ व० २० २।२६,  
म स ८७ ना नि ६।३५

२ मय० १ १२६ विहारी २ ३ २ सा १५६ का० वि ३

३ वि ५० ३७।२ मूर० १ १७७ २ म म० ६३५ विहारी १३४ ६१३

४ म स २१८

५ म स २३६

६ विहारी ४२७

७ विहारी दो ४८१

८ शाह म ३८२५

मुख्य रूप से या तो नायक या नायिका के व्यक्तित्व चित्र या आलम्बन चित्र होते हैं या अनुभावचित्र । उक्त दोनों प्रकार के चित्र वही स्थिर और वही गतिमय अंकित किए गए हैं । कवि चित्रा के द्वारा केवल रेखाश्रमा को ही नहीं अपितु रंग को भी उभारकर अमीर प्रभाव उत्पन्न करता है । व वणमय चित्र वहां अनुरूप वण-योजना द्वारा और वही प्रतिरूप या मिश्रित वण योजना द्वारा चित्रित किए गए हैं । सुविधा के लिए एक एक प्रकार के शब्द चित्रा का प्रमश परिचय दिया जाएगा और उन चित्रा व स्रोतों को मिला देने का यथासम्भव प्रयास किया जाएगा ।

रीतिकालीन कवियों की चित्र योजना पर पूर्ववर्ती भक्त-कविता विशेषतः वृष्ण भक्ति धारा के कवियों का प्रभाव देखा जा सकता है । शृंगार रस के प्रमुख पद्यों के बहाने निरूपण में पहले देखा जा चुका है कि रीतिकालीन सस्कृत प्राकृतादि साहित्य की एहिकता और आमुष्मिकतापरक शृंगारी काव्यधारा से अनुप्रेरित, काव्यशास्त्रीय विधि विधानों से अनुवर्धित और गुणगठित है । यहाँ उसके प्रमुख कवियों की चित्र योजना पर पूर्ववर्ती काव्य-परम्परा के प्रभाव पर विचार करना प्रसंग प्राप्त है ।

काव्य चित्र चाहे वे किस प्रकार के हों कवि की प्रतिभा और कल्पना शक्ति के सच्चे प्रतीक होते हैं । कवि के अन्तर्गत मस्तिष्क पर कितना परम्परा का प्रभाव है और कितना अपने युग का, इसका प्रतिफलन उसके काव्य चित्र बड़ी सफलता से करते हैं ।

रीतिकव्य में चमत्कार उत्पन्न करने की वृत्ति प्रायः सब जगह लक्षित होती है । मतिराम जैसे कुछेक कवियों ने चमत्कार की अपेक्षा मीधे-साधे सवेद्य भावामिव्यक्ति को प्रमुखता दी है । इस संबंध में उनके विषय में डा० महेश्वर कुमार ने लिखा है 'मतिराम के काव्य चित्र भाव प्रधान होने के नाते मुख्यतः रेखात्मक ही हैं, परन्तु इसके साथ ही उन्होंने विविध प्रकार के रमणीय चित्रों की भी उपयोग नहीं की । हाँ, इतना अवश्य है कि सरलता में बिश्वास रखने के कारण वे इनकी मूर्धनता की दृष्टि में और असाधारण नहीं बना पाए । इसीलिए उनके अत्यंत जागरूक रहने पर भी न तो इनमें दब का सा रंग बसव ही आ पाया है और न ही बिहारी की-सी नरकगी ही केवल स्वच्छ और मूर्धन रेखाओं में इनमें अंकित है जो व्यञ्जना के प्रकाश में चमक उठती है । बिहारी दब मिश्रारोपित और पद्यांतर अति काव्या में रमण्य की बहुतायत के साथ वण-वभव की भा प्रचुरता दृष्टिगत होती है । उनके यौन काव्य अर्थ ही न अति रम्य के साथ ही दुरंग तिरंग, चौरंग और त्रयी का कई रम्य के मिश्रित प्रयोग द्वारा अर्थ-व्यर्थ का अमन-दमन के साथ अंकित किया गया है ।

रीतिकालीन कवियों की चित्र-योजना बहुत कुछ तत्कालीन सामन्ती कालांतर से प्रभावित है । उस समय चित्ररत्ना में त्रिग प्रकार का मकीव और गायत्री धारणोक्त के अर्थ में उक्त चित्रण ही प्रयोग का परिचय मिलता है । कालिदास की व्यास भावभूमि और उमरु के अर्थ के लिए चमत्कार प्रकृति एवं मानव-जीवन के

विविध पन्ना से चुन गए अप्रस्तुत इन कविया की समुचित दृष्टि से परे ही रहे। काव्य शास्त्रीय जवडगदी के कारण रीतिकविया म बह बविध्य नही मिलता जो समग्र जीवन को प्रतिफलित कर सक। नायक नायिका और आशयदाताया की प्रगस्तिया के अतिरिक्त कुछ और दखने मुनने का इह अवसाग ही न था। इसक परिणामस्वरूप सस्वृत-प्राहत के वे तमाम काव्य चित्र इनक काव्या म चित्रित हान से रह गए। हा, इतना अवश्य कहा जा सक्ता है कि शृगार क क्षेत्र में नायिका की एक एक चपटा हाव भाव, मान मनुहार तथा उमक अग की काति-नीप्ति, वस्त्राभूषण अगयष्टि का चढाव उतार कोमलता-कठोरता आदि की बढी सूक्ष्मता और स्वाभाविकता क साथ अनेक झाडी तिरछी रेखाया और लाल-पाले-नीले-काले न जाने कितने रंग म चित्रित किए गए हैं।

### आलम्बन-चित्र

रीतिकव्य में शृगार का आनवन क रूप में पूर्वमध्यकाल के आराध्य श्रीकृष्ण और राधा का ग्रहण किया गया किंतु उनका रूप तत्कालीन वातावरण स प्रभावित होकर काफी बदल गया ह। यह परिवर्तन केवल रीतिकविया के काव्य में ही नही तत्कालीन भक्ति कविया में भी लभित होता है। डा० सावित्री सिंहा ने इस परिवर्तन की आर सकेत करते हुए लिखा है 'पूर्व मध्यकालीन भक्त-कवियों की रचनाया में मध्यकालीन मुगल वैभव के प्रभाव का स्पशमात्र हुआ था परंतु रीतिकालीन कविया ने अपने चित्रा में वगित कृष्ण के वैभव को किसी प्रकार भी बादशाही शान से नीचे नही आने दिया है।' रीतिकाल में राधा-कृष्ण सामाय नायक-नायिका क रूप में चित्रित किए गए हैं। बिहारी ने निम्नलिखित दोह में नायिका का सहज चित्र अंकित किया है—

वेंदी भाल तम्बोल मुँह, सीस सिलसिले वार ।

दग आजे राज खरी आई सहज सिंगार ॥<sup>१</sup>

उक्त दोहे म भीण रेखाया के द्वारा नायिका का सामाय रूप चित्रण बडा ही स्वाभाविक है। इस प्रकार के चित्र पूर्ववर्ती काव्य मे भी द्रष्टव्य हैं। डोला मारू रा दूहा म मालवणी का रूप बिहारी की नायिका से काफी मिलता जुनता है। राजस्थानी-कवि ने नायिका के रूप रंग अगो के उतार चढाव के साथ उसके गुणा का भी अकन किया है—

लक्षण बतीस माखी निधि, चद्रमा निलाट ।

काया कूँकूँ जेहवी, कटि केहरि सै घाट ॥

१ राजभाषा क कृष्ण भक्ति काव्य म प्रभिव्यञ्जना विल्य डॉ० सावित्री सिन्हा पृ० २४६

२ बिहारी ४७७



अहर, पयोहर, दुइ नयण, मोठा जेहा मरख ।  
ढोला, एही मारुई, जाण मीठी दरख ॥<sup>१</sup>

संस्कृत कविता ने भी नायिका के एम मनोच और सरल स्वामाविक चित्र अ कित किए हैं जो रीतिकविता के आलवन चित्र के स्रोत माने जा सकते हैं । विल्हण कवि ने अपनी प्रिया का जो कल्पना चित्र प्रस्तुत किया है उससे उसके रूप, रंग, स्पर्श, गंध, मादक, विलास आदि का जाग्रत चित्र पाठक के सम्मुख उपस्थित हो जाता है—

अद्यापि ता कनकचम्पकदामगौरी  
फुल्लारविदनयना तनुरोमराजोम् ।  
सुप्तोत्थितामदन विह्वलितालसागो  
विद्या प्रमादगलितामिव चितयामि ॥<sup>२</sup>

बिहारी ने नारी के सहज रूप का जसा चित्रण किया है वह बहुत-बहुत मत हरि के निम्नलिखित श्लोक से प्रभावित है किंतु जितना विवरणात्मक और अलङ्कृत शली का संस्कृत के कवि ने आश्रय लिया है उतना बिहारी ने नहीं । उसने रेखाभा के सीधे, तिरछे वक्र आदि अनेक प्रकार के प्रयोग द्वारा आकार को स्पष्ट और श्वेत, कृष्ण, रक्त, पीत आदि वर्णों के प्रयोग द्वारा वर्णमय चित्र को भावपक बना दिया है ।<sup>३</sup>

कविवर बिहारी की बाल बाधनवाली नायिका का आलम्बन चित्र यद्यपि हल्की रेखाभा द्वारा ही अ कित है परंतु इसकी ऐन्द्रिय उत्तेजक चेष्टा सीधी और अना रोपित होने के कारण सबमग्न है—

कर समेटि कच भुज उलटि खएँ सीस-नट टारि ।  
बाको मन बाधै न यह जूरो बांधिनिहारि ॥<sup>४</sup>

इसी प्रकार का एक चित्र माध कवि का भी द्रष्टव्य है—

सीमन्त निजमनुवधननी कराभ्यामालक्ष्य स्तनतटबाहुभूलभागा ।

भर्त्राया मुहुरभिलष्यता निदध्य नैवाही विरमति कौतुक प्रियभ्य ॥<sup>५</sup>

बिहारी की अनेका माध कवि का कवि अधिक उत्तेजक है । बिहारी म नायिका आलम्बन है किंतु माध म उमहा रूप उद्दीपक उपाया से समन्वित हो गया है । इससे भी अधिक सूक्ष्म और कविप्रपूण अ गा रेखाभा और ध्वनिभा से अ कित आलम्बन

१ ढोला मारु रा दूग छ० ५१६ ७०

२ श्रीरामायण का स्तो० १

३ कन्नड चरित्रकवि पद्मनाभरीशानगम शोधन

कथ स्वर्णमयारविस्वरनिनीत्रिण्यु कवता काय ।

कानोकादिमरु अचिप्रमहारी कर्षी निगम्बकपी

बाको हारि क मात्त कर्षीय स्वामाविक संहनम् ॥ शृ० क २२

४ बिहारी दो० ७८

५ तिलकापकथ ८१६

चित्र ससृष्ट काय परम्परा में प्राप्त हात है ।<sup>१</sup>

### अनुभाव चित्र

रीतिकालीन कविया ने आश्रय व अनुभावा द्वारा प्रेम की विभिन्न स्थितिया का सफल अंकन किया है । डा० बच्चन सिंह ने लिखा है, "अनुभाव का सम्बन्ध मन में होने के कारण इसके द्वारा अंकित चित्रों में मन की विविध दशाएँ स्वतः अभिव्यक्त हो उठती हैं ।<sup>२</sup> वे आगे इस और स्पष्ट करते हुए लिखते हैं "इनमें खीम व्यथा, उत्कंठा आदि मानसिक दशाओं को इस प्रकार अंकित किया गया है कि 'गद' स्पष्ट गद्य आदि का उनमें स्वतः सन्निवेश हो गया है ।<sup>३</sup> रीतिकालीन कवि विहारी न स्नानोपरान्त बाला को समीप करती हुई श्रिया विदग्धा नायिका की प्रियदर्शनेच्छा का सफल अंकन किया है—

वजनयनि मजन किएँ, बैठी व्यौरति वार ।

कच अंगरिन विच दीठि दै, चितवनि नन्दकुमार ॥<sup>४</sup>

नन्दकुमार को बाला के बीच उँगलियाँ से अवकाश बनाकर देखनेवाली नायिका का चित्र यद्यपि स्थिर-सा है किन्तु इससे उसके मानसिक श्रोत्सुक्य अभिलाषा की व्यञ्जना कम शक्तिशाली नहीं । कवि ने बाले लम्बे बालों में गोरी उँगलियाँ व बीच-बीच चंचल दृष्टि का अंकन समीप वर्णों और हल्की रेखाओं के स्पर्श से किया है । इसी भाव को गोवर्द्धनाचार्य ने अपेक्षाकृत अधिक वर्णों और रेखाओं के प्रयोग से चित्रित किया है ।

चिकुरविसारणतियक नतकण्ठी विमुखवृत्तिरपि बाला ।

त्वामियमगुलकल्पितचावकाशा विलोकयति ॥<sup>५</sup>

इसी चित्र को और भी सूदम रेखाओं से दूसरे ससृष्ट कवि ने अंकित किया है । प्राकृत काव्य गायत्रिस्तोत्र की नायिका के अनुभाव चित्र और भी सजीव गति और भावोद्बोधक है । प्रिय प्रदत्त वस्तु प्रेमी के लिए कितनी महत्वपूर्ण होती है और उससे उससे रागात्मक सम्बन्धों में कितनी घनिष्ठता आ जाती है इस प्रमाणित करने के लिए विहारी का नायिका का अनुभाव चित्र पर्याप्त होगा —

१ जानभ्यामपविश्य पीठनिहिन शोणामरा प्रो नम  
श्लोकान् । नमदु नमः कुचतनी दीपद दग भावता ।  
पालिभ्यामपधूय कण्ठवणत्तारावतारोसर  
बाना नक्षति कि निजात्रकभरं किंवा मदीय मन ॥

२ रीतिकालीन कविया की प्रेम यजना प० ३८६

३ वही प ३६

४ विहारी दो ६१

५ धार्मिकपत्राली, पृ० २२१

छला छवीले लाल की नवल नेह लहि नारि ।  
चूमति चाहति लाभ उर पहिरति धरति उतारि ॥<sup>१</sup>

नायिका पत्र पाने पर भी ऐसी ही चेष्टाया द्वारा अपने हृष प्राकुलता, उत्सुकता, लज्जा आदि संचारिया का प्रकाशन करती ह—

कर लँ चूमि चढाय सिर उर लगाय भुज भेटि ।  
लहि पाती प्रिय की लखति वाचति धरति समेटि ॥<sup>२</sup>

इस प्रकार के अनुभाव चित्र ससृष्ट प्राकृत्यादि काया में प्रभूत परिमाण में मिलते हैं। वेदांतदेशिक क हस मदश म सीता की चेष्टाए विहारी की नायिका की सी अ कित की गई है—

भूयोभूय करसरसिजे न्यस्यरोमाचितागो  
मौलीचूडामणिविरहिते निविशती निधाय ।  
अतस्तापादधिगतरजोरादरादपयती  
पर्यायेण स्तनकलशयोरगुलीय मदीयम ॥<sup>३</sup>

विहारी ने छदानुरोध के कारण सीमित चेष्टाया क द्वारा मनोगत भावा की अभिव्यजना की है किन्तु वेदांतदेशिका ने अपेक्षाकृत बड़े छंद के प्रयोग द्वारा सीता की विरहावस्था म शारीरिक और मानसिक स्थितिया का भी अ कन किया ह। भक्ति कालीन कवि सेनापति न पूरे वातावरण के साथ इसी भाव का अ कन निम्नलिखित सवय में किया है—

नैन नीर बरसत, देखिबे को तरसत,  
लागे काम सरसत पीर उर अति की ।  
पाण न सदेसे तात अधिक अस बदे,  
सोचै सुकुमारि पै न कहै मन गति की ।  
ताही समे काहू औचकाही आनि चीठी दीना,  
देखत ही सेनापति पाई प्रीति रति की ।  
माथे ल चढाई, दोऊ दृगनि, लगाई,  
चूमि छाती लपटाई राखी पाती प्रानपति की ॥<sup>४</sup>

उपयुक्त छंदा म एक ही सदम म नायिका के अनुभावा का चित्रण किया गया है किन्तु विहारी के चित्र म वातावरण का आंगेय पाठक को करना पटना है जबकि वेदांतदेशिक म उमका किंचित सकत दलोक म ही मिल जाता है। सेनापति ने उक्त वातावरण के निमाण म सवया की दो पक्षितया का प्रयोग किया है साथ ही अनुप्रास के

१ विहारी दो १८८

२ वही दो ७६

३ हमसंगे २१९

४ सेनापति भक्ति रत्नाकर तरण २ छ० ६०

द्वारा नाद व्यञ्जना भी कराई गई है।

मुग्धा की मलज्ज चष्टाया के प्रकाशन में कवियां न बची ही स्वामाविक और मार्मिक क्रियाया का अवन किया है। मतिराम की मुग्धा खण्डिता का एक चित्र देखिए—

लिख करक नख सी पग का रख सीम नवाय के नीचे ही जोवै ।  
वाल नवेली न रसना जानति भीतर भौन मसूसनि रोवै ॥<sup>१</sup>

हाथ न नख स पर के नख का बुग्नेनी हुई फिर नीचा करक नीचे देवती हुई नवेली वाला का चित्र उसकी विवग वेत्नापुण मनास्थिति को स्पष्ट करने में बड़ा ही सगत है। इसी प्रकार का एक चित्र भक्तिवादी कवि रहीम का भी देखिए

सीस नवाय नवलिया, निचवइ जोय ।  
छिति खनि छोर छिगुनिया सुसुकति रोय ॥<sup>२</sup>

विद्योगवस्था की अपेक्षा मयागावस्था के चित्र कम ममस्पर्शी नहीं है। सयोगवस्था में तमयता की स्थिति इस तरह की होती है कि प्रथी सब-कुछ भूत जाता है। कवि पश्चात्काल का गा दोहन कम विचित्रतापूर्ण नहीं है और न नायिका की तमयता ही—

बछर खरो प्याव गऊ तिहि का पदमाकर को मन ल्यावत है ।  
तिय जाति गिरया गही वनमाल सु एच लला इच्यो धावत है ॥  
उलटी करि दाहनी मोहनी की अगुरी धन जानि के दावत है ।  
दुहिवो औ दुहाइवो दोउन को, सखि देखत ही वनि आवत है ॥<sup>३</sup>

भला वतनाइय भ्रम का एसा उदाहरण और कही मिल सकता है ? उक्त छंद में कोई भाव ही स्पष्ट होता है और न अनुकूल मवन्ता ही जागती है। इसकी अपेक्षा मूरगम का चित्र कही अधिक स्वामाविक और भावपूर्ण है—

रोता माठ विलोवई चित जहा क हाई ।  
उनक मन की कहा कही ज्या दष्टि लगाई ।  
लैया नाई वृषभएँ गया तिसराई ॥<sup>४</sup>

यद्यपि मूर में भी मात्र की समुचित तमयता नहीं आ पाई है किन्तु वह उदात्तता स्पष्ट नहीं है। इसकी अपेक्षा नायिकाया का मविम में तमपरिहाम वाच चित्र कही अधिक मार्मिक है। मतिराम की नायिका का उदाहरण देते हैं। का२ मन्त्री उम कवन का चित्रवा पहचानी हुई मजाक करती है यह प्रियतम क वाता के ममीप सना बजती

१ मतिराम रगरात्र छ १२३

२ रहीम बख नायिकाय छ ४०

३ पश्चात्काल जगन्निष्ठ छ ४४२

४ मूरगाय १ १०१२

रही । 'इत गाथ की गुजर गाथिना उम कसन स मारता पाहती है पर मारती नहीं—

गोत के शीत निगारत का मतिराम गहनिता ता गुनुआयो ।

गता के त्रिहुता परिगारा प्यारी गगी परिहाम रझायो ।

पीतम गीत गमीय सार्द्ध बज्या कर, या कति य परिहारायो ।

मामिति गोत तनावति को कर ऊती तियो प नन्यो त पलायो ॥'

यहाँ मतिराम की चुनत घोर गाथिना की तन्त्रा शोभा का बड़ा ही स्वाभाविक प्रकाश हुआ है । यद्यपि इस विधा में रंगाभा का ही प्रधानता है, पर भी स्वामाविक उक्तियाँ व द्वारा उम पर्याप्त प्रभावमयता है । मतिराम की गाथिना की ही तरह पावनी की भी मतिराम उम परिहाम करती है घोर व उही भयताम द्वारा उमता उतर दती है जिनाक द्वारा मतिराम की गाथिना त विना है—

पत्यु गिरदाद्रा नामान गृोति मय्या परिहासपूर्वम् ।

सा रजयित्वा चरणौ गृनाशीमात्यन ता निजान जघान ॥'

उपयुक्त रंग में नाथिना व तिच्योत हाथ की स्वामाविक मनाहला का विनायक प्रस्तुतीकरण इलाध्य है । इसी प्रकार विनायक हाथ व विषय म गाथिना की बाह्य शोभा घोर प्रातखि सरसता का सूक्ष्म रंगाभा घोर रंग के द्वारा प्रकाश कवि की कला के उत्कृष्ट उदाहरण है—

विनिनी कलित कल नूपुर ललित ख,

गोन सरो देसिक सकतु करि गीन का ।

मृदु मुखवानि मुखचद चाफ चाँदनी सौ,

राह्या व उज्यारी अभिराम द्वार भौनको ।

सहज सुभावनि सौ भौहनि के भावनि सौ,

हरति है मन मतिराम मनरौन तो ।

रूपमद छाकी आजु छवि सौँ छबोली देति,

तिरछी चितौनि मन बरछी सौ कौन को ॥<sup>३</sup>

मतिराम ने उक्त कवित्त में ध्वनि वर्ण घोर रंगाभा के संयोग से नाथिना का प्रभावपूर्ण चित्र अंकित किया है । अंतिम पंक्तियो में पूरे छन्द का प्रभाव सिमट गया है । अमरक का चित्र यद्यपि ध्वनि और वर्णों के प्रयोग से भटकीला नहीं है किन्तु उसमें नेत्रा के सौंदर्य और प्रभाव का सूक्ष्म अवन बड़ा ही उत्तेजक है—

अलसवलित प्रेमाद्राद्रि मुहुमु कुलीवृत्

क्षणमभिमुखलज्जालो तनिमेपपराडमुख ।

हृदयनिहित भावाकृत वमदभिरिवेक्षणै

१ मतिराम रसराम छ २९६

२ बालिदास कुमारसम्भव ६१९

३ मतिराम रसराम छ २५४

वथय सुकृती वोऽय मुग्धे ! त्वयाद्य विलोक्यते ॥<sup>१</sup>

मतिराम और अमरक दोना कविया ने लज्जा हृष और सुक्यादि से सबलित नत्र व्यापार का चित्रण बड़ी कुशलता से किया है।

प्रेम विह्वल नायिका की सहमा उत्पन्न सधम की विशिष्ट स्थिति के कारण किञ्चित् व्यविमूढता का चित्र उसकी अ. तरिक धेदना नराश्य ग्लानि आदि की व्यजना म पूर्ण सक्षम है। कवि देव न विप्रलब्धा की द्विविधाप्रस्त स्थिति का निम्नलिखित चित्र प्रस्तुत किया है—

एकहि वार ग्ही जकि ज्योकि त्यौ भौहन तानि कै मानि महा दुख ।  
देव कछू रद बीरी दबी री सु हाथ की हाथ रही मुख की मुख ॥<sup>२</sup>

इसी प्रकार दूसरा भी चित्र खिण—

देव सकेत मिलै न इतै पर चित्त मे सोच सकोच समाया ।

लाज कस्यौ हियरा उकस्यौ कछु चाहै हस्यौ कछु आवत रोयो ॥<sup>३</sup>

उपरिलिखित विवेचन स यह स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है कि रीति कवियों की अनकरण-सामग्री या अप्रस्तुतों के चयन का क्षेत्र सङ्कुचित था। प्रकृति की प्राय वे ही बातें गृहीत की गई जो परम्परा प्राप्त थी। इसी प्रकार जीवन स भी व ही तत्त्व लिए गए जो उनके चतुर्दिक "वाप्त वातावरण से स्फुरित हा सके। इसका एक प्रमुख कारण यह भी था कि उनकी जीवन दृष्टि भोगपरक थी और उसके आभोग म जो चीजें आ सकी उनका ही उपयोग किया गया। डॉ० नगेन्द्र ने लिखा है "रीति काल के कविया ने नवीन प्रयोगा द्वारा नवीन रुचि और नवीन सौदय-बाध जागृत नहीं किया, समृद्ध उपमाना के प्राच्यु से जगमगाहत् उत्पन्न की है। प्रतीका का प्रयोग रीति कविता म अत्यन्त निरल है। जो प्रतीक प्रयुक्त हुए हैं वे रू- हैं और वने व सभी स्वीकृत रूप म काम प्रतीक हैं।"<sup>४</sup> इन काम प्रतीकों का विलगुन उमी रूप म प्रयोग हिन्दी और उसके पूर्व की अथ मायाभा की काय परम्परा म मिलता है। यदि तुलनात्मक दृष्टि स विवेचन किया जाय तो रीति कविया के प्रतीक प्राय वे ही मित्रों जो सस्कृत के गान्धीय महा काया या मुसक कविताओं म प्रयुक्त होते आए हैं।

अब तक अभि यकिन के प्रमुख उपादानों—प्रकार योजना, अप्रस्तुत विधान और चित्र योजना—की चर्चा की गई। इसके बाद अभि यकिन के माध्यम के अ नगत माया की चर्चा की जाएगी।

१ अमरकतक श्लो ५

२ देव मुग्धतावतरण छ० ६५६

३ वही छ० ६६२

४ डॉ० नगेन्द्र रीतिकाल्य की भूमिका पृ० १६७

## भाषा

अभिप्रेतिका का प्रमुख माध्यम भाषा है। कवि अपने मनोगत भावा का तन्तुबद्ध भाषा के द्वारा सबजन सबेद और प्रपणीय बनाना है। प० कल्याणति त्रिपाठी ने भाषा की कवि के बला कम म प्रमुख उपकरण माना है। व लिखत है, 'कवि की अथवा किमी भी साहित्यकार की अर्थाभिप्रेतिका का साधन सवलपनाया (इमेजेज) भाव चिन्ता और स्वरूप मूर्तिया के अभिव्यजन का नाथ भाषा के द्वारा सपन्न होता है। भावा और विचारा की वाहिका भाषा ही है। उसी के समुचित विनियोग और प्रयोग से भावबोध सबेदनीय और प्रपणीय बनता है।' इस अभिप्रेतिका के प्रमुख माध्यम की समृद्धि शब्द भंडार और शब्दाथ बहुलता से हाती है। व्याकरण से इसमें परिभाजन और निश्चितता आती है। ईप्सित अथ की अभिप्रेतिका के लिए शब्दगत और अथगत मोक्ष का होना आवश्यक होता है।

रीतिकाय में जिस भाषा को काव्याभिव्यक्ति का माध्यम चुना गया वह ब्रजभाषा थी। उसकी शब्द संपत्ति और अर्थ संपत्ति के त्रिपय में विचार करने के पूर्व उसका सामान्य परिचय प्राप्त करना उपयुक्त होगा।

## ब्रजभाषा परिचय

अथ भारतीय आयभाषाया की तरह ब्रजभाषा का भी आदिमात वदिक भाषा रही है। वदिक या छांदस के बाद संहृत प्राकृत पालि अपभ्रंश आदि से विकसित होती हुई यह भारतीय संहृति और कलात्मक अभिव्यक्तियों के वशिष्ट्य को आत्मसात कर अत्यन्त समृद्ध और सम्मानित काव्य भाषा के रूप में शताब्दियों तक मध्यदेश में प्रचलित प्रसरित रही है। डा० शिवप्रसादसिंह ने ब्रजभाषा के जिस रिक्त क्रम का शकेत दिया है, उसका विश्वास वदिक भाषा से लौकिक संहृत पालि शौरसेनी प्राकृत शौरसेनी अपभ्रंश की सुदीर्घ परम्परा से माना जाता है। इस अविच्छिन्न परम्परा के साथ ही ब्रजभाषा को जो आपकता और समृद्धि मिली उसका बहुत कुछ उत्तरदायित्व उसकी भौगोलिक स्थिति पर है। वह मध्यदेश की भाषा है। मध्यदेश का महत्त्वपूर्ण निर्देश करत हुए डा० शिवप्रसादसिंह ने लिखा है 'इसका पूर्व एक हजार के आस पास संपूर्ण उत्तर भारत में आय जना के आवागमन के समय से आज तक मध्यदेश की भाषा संपूर्ण देश के लिए जना के विचार विनिर्णय का स्वीकृत माध्यम रही है। समय और परिस्थिति के अनुसार तथा भाषा के आंतरिक नियमों के कारण मध्यदेशीय भाषा ने कई रूप ग्रहण किए वदिक या छांदस के बाद संहृत, पालि शौरसेनी प्राकृत और अपभ्रंश आदि इस प्रयोग की भाषाएँ हुईं किंतु यह रूप-परिवर्तन भाषा भेद नहीं बल्कि भारतीय आयभाषा के विकास की अटूट शृंखला बनत करता है।' डा० हजारीप्रसाद

१ मदनमोहन मालवीय की कवि माला पृ० १३३

२ मूलपूर्व ब्रजभाषा और जयका साहित्य पृ० १५

द्विवेदी ने डा० सिंह की मायता को पुष्ट करते हुए लिखा है ' एक हजार ईसवी के आस पास शौरसेनी अपभ्रंश की अपनी ज मभूमि से जिस व्रजभाषा का उदय हुआ आरम्भ में उसका सिर पर साहित्यिक अपभ्रंश की छाया थी और रक्त म गौरसेनी भाषाया की परम्परा तथा सामाजिक सत्ता का भ्रोज और बल था। यह भाषा चौदहवीं शताब्दी तक अपभ्रंश बहुल सजाशब्दा और प्राचीन काय प्रयोगों के आवरण से ढकी रहने के कारण परवर्ती व्रजभाषा से भिन्न प्रतीत होती है पर भाषा वैज्ञानिक कसौटी पर वह निस्संदेह उसी का पूवरूप सिद्ध होती है।'<sup>१</sup> डॉ० शिवप्रसादसिंह ने शौरसेनी अपभ्रंश का परवर्ती रूप की विशेषताओं का बीजावुरण बर्दिक या छादस भाषा में भी निदिष्ट किया है। उनका मत है कि 'भाषा निर्माणकी कुछ स्थितियाँ जो १७वीं शताब्दी की व्रजभाषा की विशेषताएँ कही जाती हैं बर्दिक भाषा में ही वर्तमान थी। स्वरानुसंग, स्वर भक्ति, 'र' का विकल्पत लोप तथा 'र' 'ल' की परम्पर विनिमयता वाक्य विन्यास में कना कम, त्रिया की पद्धति भी बर्दिक भाषा से ही मिलती है। ऋ का अ, इ, ई, उ ए, आ आदि में परिवर्तन अशोक के शिलालेखों की भाषा से ही शुरू हो गया था। इसी भाषा में आदि 'अ' का लोप, अत्यंत अ का आ में परिवर्तन तथा न का ण क रूप में परिवर्तन भी दिखाई पड़ता है।

व्यजन समीकरण स्वरसंकोच, स्वर भक्ति र ल की विनिमयता तथा अस्तु धातु के विभिन्न रूपा के सहायक क्रिया के रूप में प्रयोग की प्रवृत्ति, जिसे हम नव्य भाषाओं के विकास में सक्रिय देखते हैं पालि में ही शुरू हो गई थी।

महाराष्ट्री प्राकृत मायदेश की भाषा थी। यह मध्यदेशीय शौरसेनी की बनिष्ठा थी। ह्रस्व सन्धीय और दीघ से ह्रस्व में परिवर्तन की स्वरप्रक्रिया यही से शुरू हुई। मध्यग व्यजनों का लोप तथा श्रुतिया का प्रयोग बढ़ने लगा। कारका की संख्या में यूनता, सम्बन्ध-सम्प्रदान का एकीकरण भाषा में अश्लिष्टता का प्राधान्य रामायण व ए दत्तम् जैसे रूपों में परसर्गों के आविर्भाव के सकत इस भाषा में मिलते हैं।<sup>२</sup> इसी प्रकार चाद के परिवर्तन का भी विवेचन करते डा० सिंह ने व्रजभाषा के विकास क्रम को स्पष्ट किया है। उन्होंने ध्वनि प्रक्रिया की दृष्टि से व्रजभाषा को पुष्ट प्रमाणा के आधार पर शौरसेनी अपभ्रंश से प्रभावित सिद्ध किया है।<sup>३</sup> यही नहीं कारक विभक्तियाँ का तीन श्रेणियाँ में विभाजन, युक्तविभक्ति पदों का लोप परसर्गों के विभिन्न रूप सवनामा के विकारी रूपा की वृद्धि त्रिया और काय रचना में नई प्रवृत्तियाँ—वृत्ता सहायक त्रियाओं का विधान आदि—का अपभ्रंश के ही अनुसंग व्रजभाषा के विकास को सिद्ध किया है।<sup>४</sup> इस प्रकार डॉ० सिंह ने प्राकृतसंगत मदनगरसक और प्राकृत व्याकरण तथा अपभ्रंश के छे के ध्वनि त्रय एव रूपाँ स व्रजभाषा के ध्वनि-सत्त्व और

१ डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी मूलपूर्व व्रजभाषा और उसका साहित्य भूमिका पृ ५

२ मूलपूर्व व्रजभाषा और उसका साहित्य पृ ३४७-४८

३ वही पृ ३९ ३७

४ वही पृ ३७ ३८



रूप-सत्त्व का विकास प्रथम विवचनापूर्ण शला म निश्चित किया है। इससे मिक होता है कि व्रजभाषा ने अपने पूर्ववर्ती भाषाओं की साहित्यिक विशेषताओं और प्रवृत्तियों को ही नहीं ग्रहण किया अपितु उनकी अति प्रकृत के माध्यम-भाषा को भी ग्रहण किया और उसे अपने अनुरूप बनाया।

कोई भी जीवित भाषा अपने देण-काल से अप्रभावित नहीं रह सकती। व्रजभाषा और उसके पूर्ववर्ती गौरसेनी आदि पर भी देण काल के प्रभाव की अति छाप देखी जा सकती है। इसका इतना विस्तृत भूभाग में प्रचार प्रसार था कि सत्र एक-रूपता न रह सकी। प० विश्वनाथप्रसाद मिश्र ने लिखा है 'राजपूताने में काव्य भाषा में इसी का व्यवहार होता था और वहाँ के लोग प्रादेशिक भाषा से अलग करन के लिए इम पिगल नाम से पुकारते थे और प्रादेशिक भाषा को डिगल नाम से। बुदेलखड, गुरसन देश और अवध के कवि काव्य भाषा में व्रजी का व्यवहार करते थे, पंजाब के पूर्वी प्रांतों में यही काव्य भाषा थी। बिहार बंगाल मध्यभारत, महाराष्ट्र और गुजरात में भी यही सवमाय काव्य भाषा थी।' बंगाल की 'व्रजबुलि' में तो व्रजभाषा की ही सीमित परिवर्तनों के साथ स्वीकृति है। बुदेलखड में जब इसका प्रयोग बना तो इसमें बुदेलखडी नाम और धातुओं का अनायास ही समावेश हो गया। इसी प्रकार अवध की क्षत्रीय काव्यभाषा के रूप में व्रजभाषा के विकसित होने के साथ ही उसमें अवधी का प्रभाव आ गया। इतना ही नहीं राजनीतिक परिवर्ण का भी व्रजभाषा पर प्रभाव पडा। इसका प्रभूत साहित्य दरवारा में लिखा गया जहाँ उस समय विदेशी भाषा—अरबी, फारसी का बोलवाला था। सामांय जनता में भी ये विदेशी शब्द व्यवहृत होने लगे थे। अतः दरवारों की व्रजभाषा—कविता में तो अरबी फारसी के शब्द आए ही सामांय जनता के बीच प्रचलित अति काव्य में भी इनका प्रभाव बढ़ने लगा। अतः आदिकालीन ही काव्य में ही अनेक प्रकार की भाषाओं का सम्मिलन शुरू हो गया। इसीलिए चंद ने लिखा है—

ससृष्ट प्राकृत चैव राजनीति नव रस ।

पड भाषा पुरान च कुरान कथित मया ॥

बाबू जगन्नाथदास रत्नाकर ने अनुमान लगाया है कि चंद की पडभाषा में ससृष्ट प्राकृत राष्ट्रिय या नागर अपभ्रंश तथा उस समय की डिगल पिगल अति तीना भाषाओं का मेल हो गया है। इतना होने पर भी गौरमनी की अरनी मूल लियाए और विभक्तिया उसमें सुरक्षित हैं। चंद के कुरान का तात्पर्य उस समय की प्रचलित अरबी फारसी भाषा से ही है। रीतिकाल के आचार्य कवि भिक्वारीदास ने भी छह प्रकार की भाषाओं का मेल का संकेत करत हुए लिखा है—

भाषा व्रजभाषा श्चिर कहैं सुमति सब कोइ ।

मिल ससृष्ट पारस्यो, पै अति प्रगट जु होइ ॥

ब्रज भागधी मित्रे अमर, नाग जमन भापानि ।  
सहज पारमी हूँ मिल, पट विधि कवित्त यखानि ॥<sup>१</sup>

अर्थात् इस जीव त भापा ने देशवानानुबूत अनेक भापाओं के नाम और धातुओं को अपने म समाहित कर लिया। यह बात कवन ब्रजभापा के लिए ही नहीं कही जा सकती, ब्रजभापा का काव्य भी विगुद्ध ब्रजभापा भापा म ही नहीं लिखा गया। गोस्वामी तुलसीदास ने अपनी अभिव्यक्ति का सबजन-बाधगम्य बनाने के लिए इसी उदारता का आश्रय लिया। उन्होंने भी प्रसंगानुबूत अरबी फारसी के शब्दों का प्रयोग किया है। जायसी तो मुसलमान थे ही उन्होंने जिस प्रेम की पीर की कवित्त की है उसकी अभिव्यक्ति म देशी विदेशी सब प्रकार की प्रचलित भापाएँ ली गई हैं। बल्लभ सम्प्रदाय के श्रेष्ठ कवि मूरदास तथा अय अष्टछापों वैष्णव कविया की भापा भी मिली जुली ही है। डॉ० सावित्री मिह्रा ने कृष्ण भक्ता की भापा का विवेचन करते हुए मूरदास कुमनदास परमानन्ददास कृष्णदास चनुभुजदास, छीतस्वामी हरिदास और ध्रुवदास के काव्य अथा से अरबी फारसी के शब्दों को चुनकर स्पष्ट कर दिया है कि भापा को व्यावहारिक बनाने के लिए इन कविया ने निःसर्कोच विदेशी भापा के शब्दों का अपनाया है।<sup>२</sup>

रीति परम्परा के प्रमुख आचार्य केशवदास ने भी अपनी भापा म विदेशी शब्दों का लुलकर प्रयोग किया है।<sup>३</sup>

रीति कविया ने साहित्यिक अभिव्यक्ति के माध्यम के रूप म धिरप्रचलित ब्रजभापा को उसकी सारी विशेषताओं के साथ प्राप्त किया अर्थात् जिस रूप म यह प्रयुक्त होती आई थी उसी रूप म रीति कवियों न भी इसे प्रयुक्त किया।

### शब्द समूह

शब्दों को मुख्यत पाच श्रेणियों म विभक्त किया जा सकता है—(१) तत्सम जो शुद्ध सस्कृत क है। (२) अद्धतत्सम जो सीध सस्कृत स हिंदी मे आए हा (३) तद्भव, जो ऐतिहासिक विकास क्रम के अनुसार सस्कृत प्राकृत अपभ्रंश से हिंदी म आए हा (४) दशी जो क्षेत्रीय बोलचाल की भापा से लिए गए हा, (५) विदेशी। हिंदी के प्रथम ज्ञात महाकवि च दवरदास स लेकर रीतिकालीन कवि पचाकर तक सभी कविया ने इन समस्त प्रकार के शब्दों का व्यवहार किया है। यहा स्थानामाव के कारण प्रत्येक शब्द की उक्त परम्परा निर्देश करना सम्भव नहीं है। अनेक अनुसंधायकों ने उक्त कविया की भापा के अध्ययन मे ऐसे शब्द समूहों का पृथक् पृथक् अध्ययन किया है।<sup>४</sup>

१ काव्य निर्णय ११५-१५

२ डॉ० ब्रजभापा के कृष्ण भक्तिकाव्य म अभिव्यक्ति शिल्प प ७७ ७८ ९७

३ डॉ० हीरालाल दीपिन आचार्य केशवदास प १९ ९१

४ कृष्ण भक्तिकाव्य म प्रयुक्त तत्सम और अद्ध तत्सम शब्दों का परिचय के लिए अधिष्ठ डा सावित्री मिह्रा ब्रजभापा के कृष्ण भक्ति काव्य मे अभिव्यक्ति शिल्प, प० ६१-७१ ९१-९५

## विहारो

तरसम	अद्ध तरसम	विदेशी
राका (८६)	स्रुति (श्रुति) (५)	इजाफा (१४)
मञ्जन (५६३)	छितिपाल (भित्तिपाल) (४६)	जार (२५)
अलीक (६२)	मानिक (मानिक्य) (४८)	गुलाब (५५)
कनक (६६)	उरवसी (उवशी) (४८)	गिरह (५०)
अगराग (७४)	खेम (क्षेम) (१७)	गुलाला (६४)
पजर (८५)	तरौना (ताटक) (५)	कालवूत (६८)

## भिखारी काव्यनिर्णय

अक (१०११)	अतरजाभि (अतर्जाभि) (२५१४४)	अनेस (८१२७)
अग (१११३)	अमु (अग) (२११६१)	अवूत (५१७)
भव (२१३१०)	अमरा (अमर) (२११२६)	आमित (१२१२१)
अघ (५११५)	अकथ्य (अकथ्य) (१६१४६)	इलाज (१७१३६)
अट (४१३५)	अज्जा (आर्जा) (२१६५)	कहर (१५११७)

## पदमावर जगद्विनोद

अक (५४५)	अकुस < अकुग (१५७)	अरज (१६५)
अगराग (२२३)	अमरा < अमर (३०३)	अव (२०६)
अवर (१२)	अग < अग (७१०)	इलाही (७०८)

## तद्भव शब्द

अन < अयग < अन्न (विहारी १८)
अन < अलभ < अलय (विहारी २३)
सायन < लोभन < नाशन (विहारी २६)
मीनु < मिनु < मृषु (विहारी ७६)
अध्यार < अषकार < अषकार (का० नि० ६१६८)
ईड < इड < इड (का० नि० ३१५४)
(ज० वि० ६५५)

उपरोक्त उद्धरणों से स्पष्ट है कि रीतिकामीन कवियों ने हर प्रकार के शब्दों का उपाय किया किन्तु इनमें सर्वाधिक अद्भुत-सम शब्दों का प्रयोग हुआ। तत्सम और रीतिकामीन प्रमुख कवियों के वाक्यों से कवियोग उदाहरण निम्नलिखित हैं। सुविधा के लिए विशेषी शब्द भी दिये गए हैं—

तत्त्वमव गन्ता का प्रयोग कम हुआ है। अरबी और फारसी शब्दों को भी डा कविया ने ब्रजभाषा की प्रकृति व अनुसूल ध्वनियाँ में परिवर्तित करके ही प्रयुक्त किया है। 'विष्णो गन्त' प्रायः दोर रसामक कविताया या सामंती वातावरण व चित्रण में प्रयुक्त हुए हैं। जहाँ शृंगार की धारा प्रवाहित होती है वहाँ अधिराज तत्त्वमव या उसके अर्थ विवर्तित रूपा को ही प्रदर्शित किया गया है। मूर, तुलसी आदि पूर्वमध्यकालीन कवियों ने विनय-सम्बन्धी उचितया में ही अरबी फारसी के शब्दों का प्रयोग किया है।

दोरी गन्ता में अवधी बुदेलखण्डी व ही शब्द लिए गए हैं। त्रियाण्डाम बुदेलखण्डी प्रत्यय 'वी' का प्रयोग प्रायः दखा जाता है।

कौन भाति रहिहै विरद अब देखवो मुरारि ।

वोधे मोसो आनि के गोधे गीर्धाहि तारि ॥<sup>१</sup>

कठु और उपाय करै जनिहो इतने दुख सा सुख सो भरिवी ।

फिर अनक सा विन कत वसत सुआवत जीवत ही जरिवी ।

वनवीरत वीरि ह्वै जाउगो देव सुने धुनि कोकिल की हरिवी ।

जब डोलिहै औरै अवीर भरी सु हहा कहि वीर, कहा करिवी ।<sup>२</sup>

एता सखि कोवी यह आममौर दीवी,

अरु कहिवी वा अमरैआ राम राम कहो है ।

ऊव की उसासन को पूरो परगास सा तौ

निपट उदाम मौनहू तैं पहिचानवी ।

नैनन को ढग मो अभग पिचकारिन तैं

गातन को रग पीरे पातन मे जानवी ॥<sup>३</sup>

ब्रजभाषा में अवधी त्रियाण्डा का प्रयोग भी प्रायः देखा जाता है। लीन, कौन दीन, कीहो ली हो दोही आदि व प्रयोग मूर नन्ददास परमानन्ददास, चतुर्भुजदास आदि सभी ब्रजभाषा व भक्त कवियों के काव्य में यत्न-सत्तन पाए जाते हैं।<sup>४</sup> इन प्रयोगों व हेतु रूप में कही तो तुक का आग्रह स्वीकार किया जा सकता है पर चरण मध्य में इनका प्रयोग तो कवि की म्बन्धा ही सिद्ध करता है। रीतिकाल में भी ऐसे प्रयोग बराबर देखे जा सकते हैं।

अनुरणनात्मक शब्दों का भी प्रयोग रीतिकाल के पूर्ववर्ती कृष्ण भाक्तकाव्य में मिलता है। ऐसे शब्द चंद विद्यापति आदि आदिकालीन कवियों व छंदों में भी दूढ़े जा सकते हैं। इन शब्दों के प्रयोग द्वारा कवियों को वातावरण के निर्माण में बड़ी सहायता

१ त्रियाण्डा दो १२२

२ देव मुखमागर तरंग छ ५३७

३ भिन्नारीदास का नि १५१

४ कथाकर जग छ १२२

५ दे ब्रजभाषा के कृष्ण भक्ति काव्या में प्रभिव्यक्ति काल पृ ७६ ८१

मिनी है। गर्त पाणि क यगता म तो घाभ घ क विया ने भी इन की का प्रयोग किया है।

### मुगजर घोर सागणिया

सागणिया घोर मुहाबरे भाषा को बनन गया क निग ही नही प्रयुक्त होने है वरि इते डाग भाषा म प्रवाह घात है। बर भावहारिणा क निरु घानी है घोर गवग बइरर या तो यह है रि उतरी बरना गति बइ जाती है। बात मीधी कही जाय ता उता घमर गी करी, सति मुहाबरा क प्रयोग स जब उगम बरिमा घा जाती है ता उगता घमर कुछ घोर हा हाता है। यह बरिमा सागणिक प्रयोग द्वारा घाती है। य सा गिर प्रयोग प्राय रूड हात है तिनघ घव प्रीति त ररा घाती है। तसुत-कविया ने एम सागणिक प्रयोग पर्याप्त परिमाण म किए है। यही वाच्यानी प्राकृत घोर घभ घ म हानी हुई हिने म घार्द रिनु मसुत क मुावरे घनन है प्राकृत घभ घ क घन घोर हिने क घने। मर सातोय है भाषा क परिवतन घोर गति क गाप इन मुहाबरा म भी परिवतन हाता रर। इस परिवतन क स्वरूप घोर वारणा का घषघन एव स्वतंत्र विषय है। हिने म मुहाबरा का प्रनतन बहुत कुछ विन्गी प्रभाव (धरवी पारगी) की सार हुआ। हिने कविया न विन्गी मुहाबरों पर भी रग चकार उह घनी भाषा की प्ररुति क अनुन कर दिया। अधिक स्वामाविक घोर प्रचलित मुहाबरा का प्रयोग कृष्ण मन्ना की गापिया न किया है। कृष्ण गापी या उधव गोपी सवाद क स्थता को एम मुहाबरा स घनरुत पाया जाता है। रीतिवाच्य म भी मटिटा या मानवती की उस्तिया म एम मुहावर भरे पड है।

गोस्वामी तुलसीदास न विन मान विकाना का एर स्थल पर बडा ही सटीक सागणिक प्रयोग किया है—

उठति वयस, ममि भीजति, सलोने सुठि  
सोभा देखवया त्रिनु वित्त ही विव है।<sup>१</sup>

इसी प्रकार मतिराम भी कहत है —

यो विन माल विवात नही मतिराम लहै मुसवान मिठाई ॥<sup>२</sup>  
ससुत की लोकोक्ति प्रगुलिगाने भुज गिलति<sup>३</sup> का विहारी ने बडा ही सटीक प्रयोग किया है—

छव छिमुनी पहुचो गिलत अति दीनता दिखाय।  
बलि घामन को व्योत सुनि को बलि तुम्ह पत्याय ॥<sup>४</sup>

१ तुलसीदास गीतावली अयो० ३७।२

२ मतिराम रसरज छ० ६

३ गोवधनाचार्य भाषासिप्लगती श्लो० ३३६

४ विहारी दो० २०२

इसी प्रकार तमाम मुहावरे और लोकोक्तियों के प्रयोग द्वारा रीति-कविया ने अपनी भावामिप्रेक्षित को सबल और प्रेषणीय बनाया है। ये मुहावरे और लोकोक्तियाँ सामान्य जनता और काव्य साहित्य में चिरतन काल से प्रयुक्त होती रही हैं। विद्वान् अनुमधित्सुघ्रा ने प्राचीन कवियों के काव्य में प्रयुक्त इन मुहावरों और लोकोक्तियों का अपने शोध ग्रन्थ में अत्यन्त परिचय दिया है। डॉ० सावित्री सिन्हा ने कृष्ण भक्त कवियों द्वारा प्रयुक्त मुहावरों और लोकोक्तियों की विस्तृत चर्चा की है।<sup>१</sup>

## छन्द

रीतिकानीन कवियों ने सगीत और लय से युक्त अनेक मात्रिक और वर्णिक छन्दों का प्रयोग किया है। य छन्द भी हिंदी काव्य-परम्परा में अपभ्रंश से आए। अपभ्रंश का अपना विशिष्ट छन्द ढूँहा है। ढूँहा से ही दोहे की उत्पत्ति मानी जाती है। प्राकृत का प्रसिद्ध छन्द गायत्री है। संस्कृत तो अपनी छन्द-सम्पत्ति के लिए प्रसिद्ध ही है। समय-समय पर नवीन छन्दों की उत्पत्ति और विकास का कारण लोक-जीवन की रुचि और आग्रह माना जा सकता है। संस्कृत प्राकृत और अपभ्रंश के छन्दों का भी प्रयोग हिंदी कवियों ने किया है, किन्तु उन्होंने उसके अपने विशिष्ट छन्द दोहा, छप्पय, सवैया सौरठा कुडलिया आदि मात्रिक और कवित्त जैसे वर्णिक छन्दों का प्रचुर प्रयोग किया है।

शास्त्रम्यतिसम्पादन के प्रसंग में रीति कवियों ने पिंगल ग्रन्थ का भी पृथक् निर्माण किया है। छन्द शास्त्र के निर्माण में इन कवियों ने अपने पूर्ववर्ती संस्कृत प्राकृत-अपभ्रंश के शास्त्रीय ग्रन्थों का अनुगमन किया है। इसकी प्राचीन परम्परा और विकास क्रम का अध्ययन विवेचन भी किया गया है। डॉ० जानकीश्यामसिंह 'मनोज' ने 'द कट्टीब्लूशन ऑफ हिंदी पोएट्स टू प्रोसोडी' नामक अपने शोध प्रबंध में हिंदी छन्द परम्परा का सम्यक् विवेचन किया है।

इन शोधों ने यह सिद्ध कर दिया है कि हिंदी की छन्द परम्परा पुरानी है। पिंगल ग्रन्थ के निर्माण का क्रम भरत पूर्व पिंगलाचार्य से प्रारम्भ होता है। पिंगलाचार्य इसके आचार्य माने जाते हैं। उनका भी पूर्व शेषनाग ने छन्द शास्त्र का निर्माण किया था। नाट्यशास्त्र के १५वें अध्याय में छन्दों का सम्यक् निरूपण किया गया है। भरत मुनि के उपरांत वेदारमठ का वृत्तरत्नाकर, हमचन्द्र का छन्दोनुशासन और अपभ्रंश का 'प्राकृत पंगलम' इस परम्परा के सर्वाधिक श्रेयलिलब्ध ग्रन्थ हैं।

डॉ० महेंद्रकुमार ने रीतिवाच्य में प्रयुक्त अनेक छन्दों के लक्षण निर्धारण में उक्त ग्रन्थों के योगदान का निरूपण किया है।<sup>१</sup>

१ डॉ० सावित्री सिन्हा ब्रजभाषा के कर्ण भक्ति काव्य में अभिव्यक्तिनामिका पृ. १५, ११५

२ डॉ० महेंद्रकुमार अनिराम कवि और भाषाविद् पृ. ३१३, ३२५

हिंसे काय प्रयास प्रमुख विभिन्न प्रसिद्ध छन्दों का निष्पन्न करा हुआ है। हीरानाम का प्रयोग रीति का माहिरक प्रारम्भक काल की बात का प्रमाण रचनाओं में दृष्टात का प्रमाण मिलता है। इमर बाद 'गृष्णीतत्रसो घाति यार पाया म उपाय दूरा गायर या र गाग घोर घाति घाति उग समय क प्रसिद्ध छन्द प्रमुख छन्द है। रीतिकाल के निष्पन्न सत कवियों में कबीर घाति न छन्द में फिर परिचित दाह का अधिक प्रयोग किया है। काल के समकालीन अष्टछन्द कवियों में अधिकतर पर निम्न है। गुरुगण नानागत परमान नाम घाति कुछ कवियों ने कुछ स्थानों पर दोहा चौपही रोना छन्द गार घोर सरगा घाति छन्द का प्रयोग किया है। हा, बेधन के समकालीन कवियों में एक महारवि तुलसीदास प्रमुख ऐसे हैं जिन्होंने काल के पूर्व काले अधिक छन्दों का प्रयोग किया है।'

रीतिकाल में उपाय का छन्द परम्परा मध्य जीवित रही किन्तु उनका विवचन निष्पन्न प्रायः विगत प्रयास ही रीति-कवियों ने किया। व्यावहारिक रूप से तो पूर्वी लिखित कवियों प्रमुख छन्दों का ही प्रयोग होता रहा। दोहा में प्रायः रीति-कवियों ने लगन प्रस्तुत किए और कवित्त सवया में उदाहरण। मर्यादावच (मनगई शतक, पचासवा घादि) प्रयास दाह का ही अधिक प्रयोग मिलता है।

शृंगार रस के अनुभूत मर मपर-अतिमुक्त सवया छन्द ही पडा। रीति-कवियों ने सवया का सर्वाधिक प्रयोग शृंगार-व्यंग्य प्रसंग में किया है। कवियों के द्वारा अधिकतर वीर प्रशस्ति कवित्त या घनागरी छन्द में लिखी गई।

उन सभी छन्दों का सम्यक विद्वेषण स्याताभाव के कारण सम्भव नहीं।

प्रस्तुत अध्याय में अमिष्यक के उपादानों और माध्यम के परिचय देकर यह स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है कि रीतिकाल में महिनी और उसके पूर्ववर्ती अमिष्यक के उपादानों का ही आश्रय लिया गया है। इस क्षेत्र में भी रीतिकाल में कोई मौलिक विशेषता नहीं आई।

भाषा के सम्बन्ध में इतना अवश्य कहा जा सकता है कि रीतिकाल में उमकी सामान्य यद्धि में महत्वपूर्ण योग दिया, किन्तु जो परिवार आवश्यक था वह न हो पाया। विन्दी प्रभाव के कारण रीतिकाल में यद्यपि भरबी फारसी के शब्द गृहीत हुए किन्तु उन्हें तत्सम की अपेक्षा तदभव रूप में ही ग्रहण किया गया जो ब्रजभाषा के अधिक निश्चय है।

भाषा के सम्भावित परिवार की कमी की और संकट करते हुए आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने लिखा है रीतिकाल में एक बड़े भारी प्रभाव की पूर्ति हो जानी चाहिए थी, पर वह नहीं हुई। भाषा जिस समय सफा कविता द्वारा परिभाषित होकर प्रौढ़ता की पट्टी उसी समय यारण द्वारा उसकी व्यवस्था होनी चाहिए थी जिससे उस च्युत सृष्टि दोष का निराकरण होता जो ब्रजभाषा-काव्य में थोड़ा-बहुत

पाया जाता है।<sup>१</sup> आचार्य शुक्ल द्वारा सकेतित दोष का परिमाजन कई कारणों से नहीं पाया। उस समय यह भाषा अनेक क्षेत्रों में काव्य भाषा के रूप में गृहीत थी। प्रथम तो उसमें स्थानीय प्रयोगों के कारण सुस्थिरता नहीं आ सकी दूसरी रीति कवियाँ भी अपनी भाषा के प्रति अपेक्षित जागरूकता नहीं थी क्योंकि वे व्याकरण का विद्वान नहीं थे। विश्वी शब्दों के प्रचलन और प्रयोग के कारण शब्दों के निश्चित रूप निर्धारण में भी शिथिलता आई और दशै विदेशी शब्दों के मूल से कुछ ऐसे भी शब्द बने जो न हिंदी के क्षेत्र में थे न अरबी फारसी के ही उनका रूप ही विचित्र रहा जिस पर्याय द्वारा प्रयुक्त गजपौहर (ज० वि० २१३)। इसमें सस्कृत गज के साथ फारसी 'पौहर' को जोड़कर एक नया ही शब्द बनाया गया है।





## सहायक ग्रंथ सूची

(संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश)

- |                            |   |
|----------------------------|---|
| १ अग्नि० अग्निपुराण        | व्यास   |
| २ अ० शा०, अभिज्ञानशाकुन्तल | कालिदास (राजस्थान संस्कृत कातेज, काशी स० १९९०)                        |
| ३ अयोधित क्षतक             | वीरेश्वर मट्ट (काव्यमाला, गुच्छक ५<br>निणय सागर प्रेस बम्बई, १८८६ ई०) |
| ४ अमर०, अमरशातक            | अमरक कवि, (नि० सा० प्रे० बम्बई<br>१९५४ ई०)                            |
| ५ अ० शे० अलवारशास्त्र      | केशव मिश्र  |
| ६ आर्या० धार्यासप्तगती     | गोवधनाचाय (नि० सा० प्रेस, बम्बई<br>१९३४ ई०)                           |
| ७ उ० नी०, उज्ज्वलनीलमणि    | रूपगोस्वामी (काव्यमाला बम्बई)   |
| ८ उ० रा० उत्तररामचरित      | मवभूति (चौखम्बा संस्कृत सीरीज, काशी)                                  |
| ९ ऋतु० ऋतुसंहार            | कालिदास   |
| १० कपूर० कपूरमञ्जरी        | राजगणेश   |
| ११ क० क०, कविवल्यलनाट्टित  | गोवधन   |
| १२ का० का०म्बरी            | बाणभट्ट (चौ० स० सीरीज काशी,<br>१९५६ ई०)                               |
| १३ का० मू० काममूत्र        | वास्यायन (चौ० स० सीरीज १९०९ ई०)                                       |
| १४ का० प्र०, काव्यप्रवाण   | मम्मट (डा० हरिश्चन्द्र शास्त्री, मेरठ<br>२०१७ वि०)                    |
| १५ काव्या०, काव्यालकार     | मामह (काशी संस्कृत सीरीज बनारस,<br>१९८५ वि०)                          |
| १६ काव्यशास्त्रमूत्र       | वामन  |

१७ किरात०, किरातार्जुनीय	भारवि (चौ० स० सीरीज बनारस)
१८ कु० म०, कुट्टनीमतम	दामान्तर गुप्त (दलाहाबाद १९६१ ई०)
१९ कु० न०, कुवलयानद	अप्य दीक्षित (नि० सा० प्रेस बम्बई)
२० काटि विरह	नारायण भट्ट (वाच्यमाला गुच्छक ५, बम्बई)
२१ गउड० गउडवहो	वाक्पतिराज (सपा० एन० धी० उत्पीकर )
२२ गग० गगमहिता	
२३ गाथा०, गाथागप्तशती	हाल (चौ० स० सीरीज बनारस १९६१ ई०)
२४ गीत० गीतगाविद	जयदेव (नि० सा० प्रेम, रम्बई १९४९ ई०)
२५ घटखपरकाव्य	कालिदास ?
२६ चनुवगसग्रह	क्षेत्र (काव्यमाला गुच्छक ५ बम्बई)
२७ चन्द्रालोक	जयदेव (चौ० स० सीरीज बनारस)
२८ चौरपचाशिका	विह्वल (वेंकटेश्वर प्रेम, बम्बई)
२९ जी० च०, जीवधर चम्पू	हरिश्चन्द्र (भारतीय ज्ञानपीठ, काशी १९५८ ई०)
३० दशरूपक	धनजय (चौ० स० सीरीज, काशी, १९५५)
३१ ध्व-या०, ध्व-यालोक	आनंदधन
३२ न० च०, नलचम्पू	त्रिविक्रमभट्ट (नि० सा० प्रेस, बम्बई, १९०३ ई०)
३३ नागा०, नागानद	हृषिकेश
३४ ना० शा०, नाटयशास्त्र	भरत (गायकवाड ओरियण्टल सीरीज, वडोदा)
३५ न० च० या नपथ० नपथचरित	श्री हृष (चौ० स० सीरीज बनारस)
३६ पचसती	मूक कवि (वाच्यमाला गुच्छक ५, बम्बई)
३७ प० च० पउमचरिउ	स्वयंभू (सिधी जन ग्रथमाला बम्बई)
३८ पउमसिरीचरिउ	धाहिल (विद्याभवन बम्बई २००५ वि०)
३९ पवन० पवन दूत	धोयी (संस्कृत साहित्य परिषद कलकत्ता)
४० पाम चरिउ	पद्मकीर्ति
४१ पुरातन प्रबन्ध संग्रह	सपा० मुनि जिनविजय (सिधी जन ग्रथमाला, बनकत्ता, १९३६ ई०)
४२ प्र० न० यशो०, प्रनाप रुद्र यशोभूषण	विद्यानाथ
४३ प्रा० पै०, प्राकृत पैंगलम	सपा० डा० मोनागर व्यास (प्राकृत टेक्स्ट सासाइटी, बनारस, १९५९)

- ४४ प्रा० व्या०, प्राकृत व्याकरण हेमचंद्राचार्य (बम्बई संस्कृत सीरीज, १९३६ ई०)
- ४५ प्रिय० प्रियदर्शिका हृषिकेश (नि० सा० प्रेस, बम्बई, १८८४ ई०)
- ४६ ब्रह्म०, ब्रह्मवदनपुराण व्यास (मनसुखनाल मोर कलकत्ता)
- ४७ बृहत्संहिता वराहमिहिर (बकटेश्वर प्रेस, बम्बई, २००६ वि०)
- ४८ बृहत्स्तोत्ररत्नाकर
- ४९ भविस्यत्तवहा धनपाल
- ५० भागवत श्रीमद्भागवतपुराण व्यास (गीता प्रेस गोरखपुर २०१० वि०)
- ५१ भाव प्रकाश शारदातनय (श्रीरियण्टल इस्टीट्यूट बडौना १९३० ई०)
- ५२ भोजप्रबंध
- ५३ भा० भा०, भालनीभाष्य भवभूति (चौ० स० सीरीज, बनारस, १९५४ ई०)
- ५४ भालवि० भालविकाग्निमित्र कालिदास (, १९५१ ई०)
- ५५ भेष० भेषदूत कालिदास निणय सागर प्रस, बंबई)
- ५६ रघु० रघुवंग कालिदास
- ५७ रतिरहस्य कवचोक
- ५८ रत्ना०, रत्नावली हृषिकेश (नि० सा० प्रेस बंबई)
- ५९ र० ग० रसगंगाधर पंडितराज जगन्नाथ (चौ० स० सीरीज)
- ६० र० त०, रसतरंगिणी भानुदत्त
- ६१ र० म०, रसमञ्जरी भानुदत्त (चौ० स० सीरीज, १९५८)
- ६२ राजेन्द्रवर्णपुर कवि शम्भु (वाच्यमाना गुच्छ ५, बम्बई)
- ६३ र० सु०, रसाणव सुपाठर गणेशमूर्पाल
- ६४ राधासुधानिधि हितहरिवंश
- ६५ रा० म० रामायणमञ्जरी शोभद्र (नि० सा० प्रग बम्बई १९०३ ई०)
- ६६ रावणवह महाकाव्य प्रवरमन (सपा० डॉ० राधागार्गि वसाव, कलकत्ता १९५६ ई०)
- ६७ वक्राक्षित्रीवित कुतब
- ६८ वज्रा०, वज्रात्मग जयचामन
- ६९ व० र० वग रत्नाकर ज्योतिरीश्वर ठाकुर
- ७० वा० रा०, वान्मीति रामायण वामीनि (चौमन्त्रा विद्यामवन बागलगी, १९५७ ई०)
- ७१ सु० वा०, वामवन्ना सुबधु (जीवानंद विद्यामगर, कलकत्ता, १९०७ ई०)

७२ वि०, विष्णुदेवचरित

७३ विक्रमो० वि०मोवगीय

७४ शृ० प्र० शृ गारप्रकाश

७५ श्रीक०, श्रीवठचरित

७६ शाह ग० गाड गधर पद्धति

७७ शाण्डिल्य भक्तिमूत्र

७८ शिशु० शिशुपालवध

७९ शृ० श०, शृ गारमनक

८० स० रा० सुदशरामक

८१ सनतकुमार चरित (नमिनाथ चरित)

८२ स० क०, सरस्वती कठामरण

८३ महूदयानन्द

८४ सा० द०, साहित्यदपण

८५ सु० च० सुगानचरित

८६ स्व० वा० स्वप्नवासवदत्ता

८७ ह० स० हस सदश

८८ हनु०, हनुमनाटक

१ अकपरी दरवार क हिन्दी कवि

२ मपभ ग साहित्य

३ धनकार मङ्गला

४ अष्टछाप घोर कलम सप्रणय

५ आग्य और कविगण

६ कविधुन कलकत्ता

७ क० र०, कवि रत्नाकर

विल्हण (बासी हिन्दू विद्वविद्यालय वाराणसी)

कालिदास (चौ० स० सीरीज कार्शी, १९५३ ई०)

मोजदेव

मल्लक (नि० सा० प्रेस, बम्बई १९०० ई०)

शाण्डिल्य

शाण्डिल्य

माध (साहित्य सम्मेलन प्रयाग)

मल हरि (नि० सा० प्रेस, बम्बई, १९३६ ई०)

अब्दुल रहमान

हरिभद्र

मोजदेव

राजानकाम्यक (वाक्यमाला गुच्छक ५, बम्बई)

विद्वनाय (गातग्राम गारत्री, १९५६ ई०)

भास (त्रिवेन्द्रम मल्लक सीरीज १५ १९१५ ई०)

वेदातन्त्रिक

दामादर मिश्र

हिन्दी

डा० सरसुमामा अग्रवाल लखनऊ

डा० हरिवंश नाछड (दिल्ली) स० २०१३ वि०

याला भगवानदीन (इलाहाबाद स० २०१७ वि०)

डा० दीनानाथ शुक्ल (नि० सा० सम्मेलन प्रयाग २००४ वि०)

जवाहरलाल चतुर्वेदी

चित्रामणि (गवर्धनी गौर प्रस लखनऊ, १८७१ ई०)

सनापति (स० उमागकर गुप्त प्रयाग १९३६ ई०)

- ८ ९० प्रि० बर्गोप्रसा  
 ९ ११० व० वाटवामनापर  
 १० ११० वि० वाटवामनापर  
 ११ वाच्यविभाग  
 १२ वाच्य प्र० सा (तीना भाग)  
 १३ व० वि०, वाच्यविभाग विगनन  
 १४ ग० व० गग वचि  
 १५ मनाना और स्वच्छ वाच्यपारा  
 १६ छि० वा०, छितार्द मार्ग  
 १७ छीत स्वामी  
 १८ ज० वि० जगदिनोद  
 १९ जा० प्र० जायसी प्रथावली  
 २० जीवन के तत्व और वाच्य  
 २१ डोला०, डोला मारु रा दूहा  
 २२ तुलसी प्रथावली  
 २३ न० प्र० गणनास प्रथावली  
 २४ पद्यावत  
 २५ पद्याकर प्रथावली  
 २६ पद्या०, पद्यामरण  
 २७ पृ० रा० पद्यीराजरासा  
 २८ प० प्र० प्रतीपक  
 २९ प्रकृति और काव्य (दोनों भाग)  
 ३० प्राचीन भारत के बलात्मन विनाद  
 ३१ प्राकृत प्रपञ्च श साहित्य और  
 उमराव द्विती साहित्य पर प्रभाव
- वाच्यविभाग (वाच्यविभाग प्रथावली  
 प्रथावली)  
 गुमाद मित्र  
 भिगाराविभाग (भिगारीविभाग प्रथावली ना०  
 प्र० स० वा० स० २०१८ वि०)  
 प्रथावली  
 स० विरवापप्रगा मित्र (विष्णुना  
 लक्ष्मी दनाहास १९५८ १९५५  
 १९५९),  
 वाच्यविभाग प्रथावली  
 गग (ग० बटेरुण गा० प्र० स०, वागी  
 २०१७ वि०)  
 डॉ० मनोहरलाल गो (ना० प्र० स०,  
 वागी)  
 नारायणदाम (ना० प्र० स० वागी)  
 विद्या विभाग, वाकरीनी  
 पद्याकर (पद्याकर प्रथावली)  
 स० प० रामचन्द्र गुप्त (ना० प्र० स०  
 वासी स० २०१३ वि०)  
 श्री लक्ष्मीनारायण गुप्तगु'  
 स० नरोत्तम स्वामी (ना० प्र० स०,  
 वासी, १९९७ वि०)  
 ना० प्र० स० वागी २००४ वि०  
 स० ब्रजरत्नरास (ना० प्र० सभा,  
 वागी २०१४ वि०)  
 जायसी (जायसी प्रथावली)  
 स० प० विश्वनाथप्रसा मिश्र (गा०  
 प्र० स० वागी २०१६ वि०)  
 पद्याकर (पद्याकर प्रथावली)  
 चद (ना० प्र० स०, वासी)  
 (पद्याकर प्रथावली)  
 डॉ० रघुवरा (प्रयाग, २००५ वि०)  
 डा० हजारीप्रसा द्विवेदी  
 डॉ० रामसिंह तोमर (इलाहाबाद,  
 १९६४ ई०)

- ३२ बरव रामायण  
 ३३ प्र० कृ० आ० ब्रज भापा के कृष्ण  
 मवित काव्य म अभिनयजना शिल्प  
 ३४ बिहारी  
 ३५ भागवत सप्रणय  
 ३६ भारत की चित्रकला  
 ३७ भिव्वारीदास ग्रथावली  
 ३८ भूपण  
 ३९ मतिराम कवि और आचाय  
 ४० मतिराम ग्रथावली  
 ४१ मतिराम ग्रथावली  
 ४२ म० स० मतिराम सतसई  
 ४३ मध्यकालीन धमसाधना  
 ४४ महाकवि मतिराम और मध्यकालीन  
 हिंदी कविता म भ्रलकरण वति  
 ४५ मा० का० भाधवानल कामकला  
 ४६ मुक्तक काव्य परपरा और बिहारी  
 ४७ रसपीयूष निधि  
 ४८ रस रतन  
 ४९ रस रहस्य  
 ५० र० रा० रसराय  
 ५१ रस मिद्धात स्वरूप विश्लेषण  
 ५२ र० सा० रस साराण  
 ५३ रहाम रत्नावली  
 ५४ राधावल्लभ सप्रणय सिद्धांत  
 और साहित्य
- तुलसीदास (तुलसी ग्रथावली)  
 डा० सावित्री सिहा (दिल्ली)  
 १९६१ ई०  
 स० प० विश्वनाथप्रसाद मिश्र (काशी,  
 २०१० वि०)  
 प० वलदेव उपाध्याय (ना० प्र० स०  
 काशी, स० २०१० वि०)  
 राय कृष्णदास (प्रयाग)  
 स० प० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र (ना०  
 प्र० स० काशी स० २०१४ वि०)  
 स० प० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र (काशी,  
 स० २०१० वि०)  
 डा० महेन्द्रकुमार (दिल्ली १९६० ई०)  
 स० कृष्णबिहारी मिश्र (गंगा ग्रथागार  
 लखनऊ स० १९६१ वि०)  
 (ना० प्र० स० काशी, स० २००१)  
 (मतिराम ग्रथावली)  
 डा० हजारीप्रसाद द्विवेदी  
 डा० त्रिभुवन सिंह (हिंदी प्रचारक,  
 वाराणसी, २०१७ वि०)  
 गणपति  
 डा० रामसागर त्रिपाठी (दिल्ली  
 १९६० ई०)  
 आचाय सोम नाथ  
 पुढकर (स० डा० गिवप्रसाद सिंह,  
 ना० प्र० स० काशी, २०२० वि०)  
 कुलपति  
 मतिराम ग्रथावली  
 डा० आनन्दप्रसाद दीक्षित (दिल्ली  
 १९६० ई०)  
 (भिव्वारीदास ग्रथावली)  
 स० मायागकर यानिक (लखनऊ)  
 डा० विजयदत्त स्नातक (दिल्ली)

- ५५ राम-श्या (उत्पत्ति और विराम)
- ५६ रामचरितमांस
- ५७ रामचरित मे रचित सप्रणय
- ५८ रीतिवाली कविता की प्रेम-भ्यजना
- ५९ रीतिवाली साहित्य की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि
- ६० रीतिकार्य की भूमिका
- ६१ स० ल०, सनित सनाम
- ६२ वि० प० विद्यापति पद्यावली
- ६३ बनि० बेनि तिसन दचमिनी री
- ६४ ग० रसायन
- ६५ श्री राधा का भक्तविकास
- ६६ ससृजत साहित्य का इतिहास
- ६७ " "
- ६८ सु० त०, सुखसागर तरंग
- ६९ सु० शृ०, मुन्दर शृ गार
- ७० सूरदास
- ७१ सूरप्रव भजमाया और उसका साहित्य
- ७२ सूर०, सूरसागर
- ७३ हरिवंश गोस्वामी, सप्रणय और
- दो० कामिन पुत्र (प्रयाग, १९६० ई०)
- मुसमीनाम (वाणिगाज मन्मथ प्रथम संस्करण)
- दो० मगतीप्रमाण गिह (बनरामपुर, २०१४ ई०)
- दो० बचन गि (ना० प्र० स० वागी, २०१५ ई०)
- दो० गिवनाम जोगी
- डा० गमः (हिन्दी १८६१)
- (मतिराम प्रयावनी)
- स० रामच० वेनीपुरी पुस्तक मंडार, पटना
- पध्वीराज (स० धानप्रसाद दीनित गोरगपुर १९५३ ई०)
- देव
- डा० रागभूषण दास गुप्त (हिन्दी प्रचारक वागी, १८५६ ई०)
- प० बलदेव उपाध्याय
- वाचस्पति मरोला (बी० स० सीरीज काशी १९६० ई०)
- देव, (लखनऊ प्रिंटिंग प्रेस १८९६ ई०)
- प० गोवर्द्धन लाल के सौत्रय स प्राप्त (टंकित प्रति)
- सुंदर (स० जगनाथ दास रत्नाकर १८९० ई०)
- डा० ब्रजेचर वर्मा (प्रयाग, द्वितीय संस्करण)
- डा० गिवप्रसाद सिंह (हिन्दी प्रचारक काशी १९५८ ई०)
- सूरदास (ना० प्र० स०, काशी २००६ वि०)
- ललिताचरण गोस्वामी

७८	हिन्दी काव्यवारा	राहुल सांकृत्यायन (प्रयाग १९५४ ई०)
७९	हिन्दी ग़ौर वण्णव बगानी कवि	डॉ० रत्नकुमारी
७६	हिन्दी भक्ति श्र गार का स्वरूप	डा० मिश्रिनस शक्ति
७७	हिन्दी भाषा और साहित्य	डॉ० श्यामसुन्दर दास
७८	हिन्दी महाकाव्य का स्वरूप विकास	डा० शम्भूनाथ सिंह (हिंदी प्रचारक, काशी १९५६ वि०)
७९	हिंदी मुक्तक काव्य का विकास	जितेंद्रनाथ पाठक
८०	हिन्दी साहित्य (उसका उत्पन्न और विकास)	डा० हजारीप्रसाद द्विवेदी (१९५२)
८१	हिन्दी साहित्य का अतीत (दोना भाग)	प० विश्वनाथप्रसाद मिश्र (स० २०१५ वि०)
८२	हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास	डा० रामकुमार वर्मा, १९५४ ई०
८३	हिंदी साहित्य का इतिहास	प० रामचंद्र शुक्ल (ना० प्र० स० काशी, ग्यारहवा सस्करण)
८४	हिंदी साहित्य का बहल इतिहास, पठ भाग	स० डा० नगेद्र (ना० प्र० स० काशी, २०१५ वि०)
८५	हिंदी साहित्य की भूमिका	डा० हजारीप्रसाद द्विवेदी (चतुर्थ सस्करण, बबई)

### पत्र पत्रिकाएँ

- १ आलोचना
  - २ नागरी प्रचारिणी पत्रिका
  - ३ सम्मेलन पत्रिका
  - ४ जनल आन द रायल एसियाटिक सोसायटी (बबई)
  - ५ खोज विप्लव
- हस्तलिखित हिन्दी पुस्तकों का त्रवार्षिक विवरण १९०० से लेकर १९४३ तक

### ENGLISH

- 1 A History of Indian Literature—H H Rowan
- 2 A History of Indian Literature—Dr M Winternitz  
Calcutta 1933
- 3 A History of Sanskrit Literature Dr A B Keith
- 4 Ancient Indian Erotics and Erotic Literature  
—Dr S K De, Calcutta, 1959



- 5 Aspects of Sanskrit Literature—Dr S K De Calcutta 1959
- 6 Encyclopedia of Religion and Ethics, Vol X, James  
Hestings London
- 7 History of Marathi Literature Dr Jayakant Misra
- 8 History of Muslim Rule in India
- 9 Influence of Islam on Indian Culture Dr Tarachand  
(Indian Press Alld 1963)
- 10 J B B R A S Journal of the Bombay Branch of the  
Royal Asiatic Society Vols 24 25 (1948-49)
- 11 Studies in Kam Sutra H C Chakaladar
- 12 Survey of Sanskrit Literature Dr C Kunhan Raja (Madras 1962)
- 13 Varna Ratnakara of Jyotirivara – Kaviscckharacarya  
—Dr S K Chatterji & Babua Misra  
Calcutta 1940

○ ○ ○

